तृतीय खण्ड

विमल मित्र

अनुवाद
पुष्पा बेधड़ा
जगत शङ्खधर

पृष्ठभूमि

1956 में एक दिन ब्रिटेन और फ्रांस अपने सारे हवाई जहाज और सारे बम लेकर सहसा इजिप्ट पर झपट पड़े। दूसरे देश की स्वतन्त्रता पर पाशविक बल जमाना चाहा था। पश्चिमी एशिया पर पश्चिम की दोनों बड़ी शक्तियों के इस आक्रमण और लालच की छाया दक्षिण एशिया के एक दूसरे उपमहादेश भारतवर्ष पर भी पड़ी। स्वतन्त्र भारतवर्ष के सामने उस समय बहुत-सी समस्याएँ थीं। जमींदारी-उन्मूलन की योजना उस समय बन गयी थी। हिन्दू-कोड बिल भी तब तक पारित हो चुका था और सामाजिक व्यवस्था में क्रान्ति लाने का सूत्रपात हो रहा था। और उसके बाद के वर्ष *1957* में ही फिर चुनाव होने थे। संक्षेप में, समस्त उपमहादेश नयी सम्भावनाओं की प्रतीक्षा में अस्थिर था। ऐसे समय यहाँ सदल-बल रूस के प्रधानमंत्री ख्रुश्चेव आये। और साथ-ही-साथ पृथ्वी की दो प्रमुख सत्ताओं—अमेरिका और रूस—ने दक्षिण एशिया का समस्त भू-भाग अपनी शक्ति-परीक्षा के कुरुक्षेत्र में परिणत कर इस उपमहादेश के लोगों का जीवन विपन्न कर दिया। उस समय प्रश्न उठा कि कौन हमारा प्रभु होगा, कौन बनेगा हमारा भाग्य-विधाता ? कौन होगा हमारा स्वामी, कौन बनेगा हमारा गुरु ? रशिया या अमेरिका ? रूबल या डॉलर ?

उन दिनों का यह राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और अर्थनीतिक वातावरण ही इस 'पति परम गुरु' उपन्यास की पृष्ठभूमि है।

कवि कालिदास की एक मालिन थी। वह उन्हें फूल लाकर देती। कालिदास गरीब ब्राह्मण थे, फूलों के दाम नहीं दे सकते थे। उसके बदले में अपनी कविताओं को पढ़कर सुनाते। एक दिन मालिन के पोखरे में एक विचित्र कमल खिला। मालिन ने उसे लाकर कालिदास को उपहार में दिया। कवि उसके पुरस्कार-स्वरूप 'मेघदूत' पढ़कर सुनाने लगे। 'मेघदूत' काव्य रसों का सागर है, किन्तु यह सब जानते हैं कि उसकी प्रारम्भिक कविताएँ कुछ नीरस हैं।

मालिन को वे अच्छी न लगीं। वह ऊबकर चल दी। कवि ने पूछा, 'क्यों मालिन, चल दी?'

मालिन बोली, 'तुम्हारी कविता में रस कहाँ है?'

कवि, 'मालिन, तुम कभी स्वर्ग न जा सकोगी।'

मालिन, 'क्यों?'

कवि, 'स्वर्ग जाने की सीढ़ियाँ हैं। लाख योजन सीढ़ियाँ चढ़कर ही स्वर्ग जाया जा सकता है। मेरा यह 'मेघदूत' काव्य स्वर्ग की सीढ़ी है—यह नीरस कविताएँ पहली सीढ़ियाँ हैं। तुम यह मामूली सीढ़ी न चढ़ सकीं, तो लाख योजन की सीढ़ियाँ किस तरह चढ़ोगी?'

मालिन ने ब्रह्म-शाप से स्वर्ग खोने के डर से तब 'मेघदूत' सुना। सुनने के बाद प्रसन्न होकर दूसरे दिन मदनमोहिनी नाम की अद्भुत माला गूँथ कर कवि के गले में पहना गयी।

मेरा यह सामान्य काव्य स्वर्ग भी नहीं है, और इसकी लाख योजन की सीढ़ियाँ भी नहीं हैं। रस भी कम, और सीढ़ियाँ भी ज्यादा नहीं हैं। नीरस परिच्छेद ही कुछ सीढ़ियाँ हैं। अगर पाठक-वर्ग में कोई मालिन-जैसे पात्र हों, तो उन्हें सावधान किये दे रहा हूँ कि वे इन सीढ़ियों पर चढ़े बिना रस में प्रवेश न कर सकेंगे।

बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

श्री विमल वावू की हिन्दी में प्रकाशित कृतियां

1. साहव वीवी गुलाम
2. खरीदी कौड़ियों के मोल
3. इकाई दहाई सैकड़ा
4. वेगम मेरी विश्वास
5. पति परम गुरु (तीन खण्ड)
6. आसामी हाज़िर
7. दायरे के वाहर
8. मैं
9. राजावदल
10. चरित्र
11. गवाह नम्वर तीन
12. वे दोनों और वह
13. नायिका
14. काजल
15. आख़िरी पन्ने पर देखिये
16. कन्यापक्ष
17. रोकड़ जो नहीं मिली
18. चलो कलकत्ता
19. चलते-चलते
20. वीच में है नदी
21. सुरसतिया
22. मृत्युहीन
23. चाकरगाथा
24. मन क्यों उदास है
25. स्त्री
26. परस्त्री
27. मुझे याद है
28. विमल मित्र की श्रेष्ठ कहानि
29. जन गण मन
30. कगार और फिसलन
31. हासिल रहा तीन
32. तपस्या
33. राग भैरव
34. सुवह का भूला

प्रकाशकीय

इस पुस्तक के मूल बंगला में प्रकाशित होने तक कथाकार श्री विमल मित्र की स्वरचित अथवा अनूदित 58 कृतियाँ (उपन्यास, नाटक, यात्रा-वृत्त आदि) प्रकाशित हो चुकी थीं, जबकि उनकी लोकप्रियता से नाजायज लाभ उठाने के लिए और इस प्रकार उनके पाठक-वर्ग को धोखा देने के लिए 'विमल मित्र' का नाम देकर इसी बीच अनगिनत अन्यान्य कृतियाँ लिखी गयी और प्रकाशित हुईं। श्री विमल मित्र की हिन्दी में अब तक प्रकाशित कृतियों की नाम सूची सामने के पृष्ठ पर दी गयी है, ताकि हिन्दी में पाठक-वर्ग को किसी पुस्तक पर उनका नाम पढ़कर इस प्रकार की किसी प्रवंचना का शिकार न होना पड़े।

उधर सुरेन बिलकुल बेचैन हो रहा था। बरानगर के एक मकान में देवेश ने उसे बिठा दिया था। उस घर में न तो था कोई साथी, न कोई काम। दिन बड़ी अशान्ति में बिता रहा था। देवेश आदि के ही ऑफिस की एक शाखा वहाँ खोलने की बात थी। मकान बहुत दिनों से किराये पर लिया गया था, लेकिन तब भी ऑफिस शुरू नहीं हुआ था। दोनों वक्त होटल जाकर सुरेन खाना खा आता और घर में चुपचाप लेटता या बैठे रहता।

बीच-बीच में देवेश आता।

पूछता, 'क्यों रे, कैसा लगता है ?'

सुरेन पहले तो कहा करता, 'अच्छा।'

लेकिन काम कुछ नहीं, दिन-भर चुपचाप बैठे रहना, यही चीज किसी दिन सुरेन ने चाही थी। लेकिन ऐसा बुरा लगेगा, वह कभी पहले सोच भी नहीं सका था। लेटे-लेटे माँ जी की बात याद आती; सुखदा की बात याद आती; याद आती पमिली की बात, टुलू की बात—सब ही जैसे उसके मन के आगे भीड़ लगाकर खड़े हो जाते। उसके बाद सोचते-सोचते जब नींद न आती, तो बीच रात में ही छत पर चढ़कर टहलता रहता।

उस दिन देवेश के आते ही सुरेन बोला, 'अब मुझसे नहीं होता भाई, मुझे कुछ काम दे, कैसा भी काम।'

'तू क्या काम चाहता है ?'

सुरेन बोला, 'कोई भी काम हो।'

देवेश बोला, 'कल हमारा एक जुलूस निकलेगा। उस में शामिल होगा ?'

सुरेन बोला, 'कैसा जुलूस ?'

'हम दफा 144 तोड़ेंगे।'

'किस तरह तोड़ेगा ?'

देवेश बोला, 'हम झंडा लेकर नारे लगाते-लगाते राजभवन के आगे पुलिस के घेरे को तोड़ेंगे।'

सुरेन बोला, 'तो जाऊँगा।'

देवेश बोला, 'लेकिन तेरे सिर पर लाठी पड़ सकती है। पुलिस पकड़-कर जेल में बन्द कर सकती है।'

सुरेन वोला, 'तो वन्द कर दें। न हो तो कुछ महीने जेल ही काटूँगा। मैं तैयार हूँ।'

देवेश वोला, 'तो उससे तेरी सेहत भी अच्छी हो जायेगी, यह कहे देता हूँ। तुझे फ़र्स्ट क्लास का वंदी वनाने का इन्तज़ाम कर दूँगा।'

सुरेन वोला, 'सो जो हो, देखा जायेगा; मैं जेल जाकर ही ठीक रहूँगा। यहाँ भी तो एक तरह से जेलखाने में ही हूँ, भाई।'

सुरेन फिर वोला, 'वही अच्छा है, इससे वही अच्छा है।'

देवेश ने पूछा, 'क्यों, यहाँ तुझे क्या असुविधा है ?'

असुविधा क्या हो रही है, वह किस तरह समझाये ? असल में तो कोई भी असुविधा होने की इस में वात नहीं है। कहीं भी कोई भी काम उसे नहीं करना पड़ता। यह मकान पार्टी की तरफ़ से सन्दीप-दा ने किराये पर लिया है। असल में सन्दीप-दा ही देवेश आदि के ऑफ़िस में सारी व्यवस्था करते हैं। विचित्र ढंग का आदमी है वह। ख़ुद नौकरी कर मोटी तनख्वाह लेता है। सारा रुपया पार्टी के लिए ख़र्च कर देता है। फिर कभी सामने नहीं आता। वाहर के लोगों की आँखों की ओट वैठकर चुपचाप काम करता जाता है। जो वात पूर्ण वावू के मन में भी नहीं रहती, वह सन्दीप-दा के मन में रहती है। कहाँ किसे रुपयों की ज़रूरत है, किसके पास से कितना रुपया मिलेगा, कव कितना रुपया ख़र्च करना होगा, कौन खा रहा है, कौन नहीं खा रहा है—सव हिसाव रखना सन्दीप-दा का काम है। यह वरानगर में किराये का मकान ले रखना भी सन्दीप-दा का ही प्लान है। जव मेम्वर वढ़ेंगे तव यहाँ एक कम्यून ऑफ़िस वनेगा। अभी ज़रूर ख़ाली रखा है, लेकिन फिर कुछ दिन वाद ही देवेश के ऑफ़िस के कुछ मेम्वर यहाँ रहेंगे। इस अंचल के काम-काज में आस-पास रहने से कार्यकर्ताओं के साथ मेल-जोल घना होगा।

लेकिन इसलिए नहीं। असल में अकेले रहकर ही जैसे सारा जीवन-चक्र वार-वार उसकी आँखों के आगे घूम-फिर जाता। छुटपन से ही कलकत्ता आकर इस मौजूदा वक़्त तक मानो हर कोई उस पर हमला करने ही आते रहे हैं। सिर्फ़ यह कहते रहे हैं—यह नहीं, यहाँ से भागो, इस काम के लिए तुम पैदा नहीं हुए हो...।

उस टूलू के घर जिस दिन गया था उस दिन से ही लगा था कि इस दुनिया में सव-कुछ वेक़ायदा है! जिसे सुख में, स्वच्छंदता में रहना चाहिए वह सुख में नहीं है। जिसे सज़ा मिलनी चाहिए, वह आराम से रह रहा है। टूलू आदि की हालत देखकर वह ताज्जुव में पड़ गया था। एक घड़ा पानी लाने के लिए आधा मील दूर पर सड़क के नल से ढोकर

खाना पड़ता है। आँखों के लिए चश्मे की जरूरत होने पर रुपये उधार लेना पड़ते हैं या भीख माँगना पड़ती है। और पुण्यश्लोक बाबू के घर रुपयों का पहाड़ जमा होता चलता है। माधव कुण्डु लेन की माँ जी का ऐश्वर्य अगाध है! उस ऐश्वर्य का हिस्सा पाने के लिए कालीकान्त विश्वास और नरेश दत्त का षड्यन्त्र चल रहा है।

'जुलूस कब निकलेगा ?'

देवेश बोला, 'कल।'

कहकर थोड़ा रुककर फिर बोला, 'अपनी माँगें बताने के लिए हम पद्मजा नायडू से मिलने जायेंगे। लेकिन पुलिस जाने नहीं देगी। वह रास्ते को घेरकर रखेगी। लेकिन हम घेरे को तोड़कर आगे बढ़ने के लिए जिद करेंगे। तब पुलिस हम पर लाठियाँ चलायेगी।'

'लाठी क्यों मारेगी ? लाठी मारे बिना भी तो जेल भेज सकती है।'

देवेश बोला, 'लाठी मारने से ही तो हमें फायदा है, रे!'

सुरेन ताज्जुब में पड़ गया। बोला, 'क्यों, उसमें तेरा फायदा कैसे है ?'

देवेश बोला, 'लोग देखें कि विधान राय किस तरह देश के लोगों के दुश्मन हैं। हम तो विधान राय की मिनिस्ट्री को ही हटाना चाहते हैं। लोग विधान राय पर जितना खफा होंगे उतना ही हमारी पार्टी का फायदा है। यहाँ विधान राय और दिल्ली में नेहरू—यही हैं देश के दुश्मन...।'

'लेकिन इस तरह पुलिस की मार खाने से ही क्या वे लोग हट जायेंगे ?'

देवेश बोला, 'लेकिन आगे तो चुनाव आ रहा है, तब तेरे विधान राय हों या वह नेहरू ही हों, सबको ही वोटरों के दरवाजों पर दस्तक देना पड़ेगी। अब अगर ये हमारे जुलूस पर लाठी चलाते हैं तो तब उस चुनाव के समय लोगों को अपना मुँह कैसे दिखायेंगे ?'

सुरेन चुपचाप कुछ सोचने लगा।

देवेश बोला, 'कहता क्या है, काम नहीं है ? कल सवेरे बाहर से लोगों का आना शुरू होगा। एक-दो आदमी नहीं, लाखों आदमी। उनके खाने-रहने की व्यवस्था करना पड़ेगी। तेरे इस घर में भी कल पाँच-सौ आदमी तो रहेंगे ही।'

'पाँच सौ आदमी यहाँ अँटेंगे ?'

'एक-पर-एक करके किसी तरह रहेंगे। रहना पड़ेगा। इसी तरह बिखर-बिखरकर सब जगह रहेंगे।'

'खाना ?'

देवेश बोला, 'खाने के इन्तजाम के लिए ही तो मुझे अभी निकलना

पड़ेगा। बस्ती के लोगों के घर-घर जाकर कहना पड़ेगा। हर घर पीछे एक सौ-दोसौ रोटी बनाने को कहूँगा। टुलू आदि तीन सौ रोटियाँ बनायेंगी।'

'तीन सौ रोटी? इतना आटा कहाँ से मिलेगा?'

देवेश बोला, 'जहाँ से भी हो, इकट्ठा करेंगे। लोगों को तो हमारे दल से सहानुभूति है। सभी तो कांग्रेस के जुल्म से परेशान हैं। छिप-छिपकर सभी हमारी मदद कर रहे हैं।'

उसके बाद जैसे याद आया हो इस तरह बोला, 'चलूँ, तू ठीक वक़्त से आ जाना।'

'मैं किसके साथ जाऊँगा? कहाँ जाऊँगा?'

देवेश बोला, 'वह तुझे सोचने की जरूरत नहीं है। देखेगा, कल सवेरे से ही यहाँ लोग आकर जुटना शुरू करेंगे। वे यहाँ रहेंगे, खायेंगे। उसके बाद तीसरे पहर चार के वक़्त सभी क़तार बाँधकर जुलूस में निकलेंगे। तू भी उनके साथ चले आना।'

'तू नहीं आयेगा?'

देवेश बोला, 'मेरा कुछ ठीक नहीं है। मैं कल कहाँ रहूँगा, अभी नहीं कह सकता। मैं आऊँ या न आऊँ, तुम कोई फ़िक्र नहीं करना।'

'तो राजभवन के सामने तो तुझसे मुलाक़ात होगी?'

देवेश बोला, 'धत्, वहाँ उस वक़्त कौन किसकी खबर रखेगा? मार-पीट, काट-कूट में मैं कहाँ रहूँगा और तू कहाँ रहेगा, उसका कोई ठिकाना है?'

'और टुलू? टुलू जायेगी?'

देवेश बोला, 'टुलू ने कल से ही मुझसे कह रखा है कि वह जायेगी। मैंने रोका, सहदेव-दा ने भी रोका था। बीमारी से नयी-नयी उठ रही है, अभी न जाना ही ठीक रहता। लेकिन किसी तरह नहीं मानती। वह जरूर जायेगी।'

सुरेन बोला, 'उसे तू मत आने देना भाई, इस सब गड़बड़ी में लड़कियों का जाना क्या अच्छा है?'

देवेश बोला, 'वह किसी की बात नहीं सुनेगी। बहुत जिद्दी लड़की है।'

'लेकिन अगर उसके सिर पर लाठी-आठी पड़े तो? फिर अगर सिर पर लगे तो कौन देखेगा?'

देवेश बोला, 'वह यह नहीं सुनेगी। वह कहती है कि कांग्रेस अगर गद्दी पकड़े रहे तो उसका जिन्दा रहना ही बेकार है।'

सुरेन ने जैसे कुछ सोचा। उसके बाद बोला, 'मैं अगर न रहूँ तो किसी का कोई नुकसान नहीं है। कोई मेरे लिए न रोयेगा। लेकिन उसके सिर पर तो बूढ़े बाप का, छोटी-छोटी बहनों का दायित्व भी है, उन्हें कौन देखेगा?'

देवेश बोला, 'वह सब सोचने से पार्टी का काम नहीं चलता। देश का काम करने चलने पर जिन्दगी देना ही पड़ेगी, जिन्दगी देने के लिए तैयार रहना पड़ेगा। क्या सोचा है कि विधान राय आसानी से गद्दी छोड़ देंगे? मैं चलूँ...।'

सुरेन देवेश के साथ बाहर सड़क पर निकल आया। सड़क पर घना अँधेरा और धुआँ हो रहा था। पार्टिशन के बाद से बरानगर के शरणार्थियों की भीड़ बढ़ गयी है। जितने दिन बीतते जाते है उतनी ही भीड़ बढ़ती जाती है। कल इस वक्त राह-घाट की दूसरी शक्ल होगी। इस घर में चार-पाँच सौ आदमी आकर ठहरेंगे। औरतें भी रहेंगी, आदमी भी रहेंगे। बस्ती में शोर मच जायेगा। सभी मिलकर आसमान फाड़कर चीखेंगे—'हमारी माँगें मानना होंगी, नहीं तो गद्दी छोड़ना होगी, छोड़ना होगी।'

'तू अब क्यों आ रहा है, अब जा...।'

सुरेन बोला, 'हाँ रे, तेरे ऑफिस में मेरे मामा मेरी खोज-ओज में गये थे?'

देवेश बोला, 'कहाँ, कुछ तो नहीं सुना।'

सुरेन बोला, 'जरूर गये थे। तू शायद उस वक्त रहा नहीं होगा।'

'शायद।'

सुरेन बोला, 'पुण्यश्लोक बाबू भी शायद खोजते होंगे। शायद माधव कुंडू लेन के घर तलाश करने लिए आदमी भी भेजा था! मैंने अचानक जाना बन्द कर दिया था न!'

बात कहते हीं माँ जी की बात याद आयी। माँ जी को बीमार छोड़कर आया था। माँ जी के लिए धनंजय डॉक्टर को बुलाने गया था। उसके बाद क्या हुआ, कुछ पता नहीं।

'तू और क्यों चला आ रहा है?'

सुरेन बोला, 'न, अब लौट रहा हूँ।'

'हाँ, कल सवेरे उठकर तैयार हो जाना। सवेरे से ही धीरे-धीरे लोग आना शुरू कर देंगे। दोपहर को मैं आऊँ या कोई और आये, तू सबको लेकर जुलूस बनाकर कलकत्ता की ओर ले जाना।'

देवेश जल्दी-जल्दी चला गया। सुरेन उस ओर कुछ देर तक देखता रहा। उसके बाद फिर लौट आया। रास्ते से ऑफिसों से लौटते झुंड-के-झुंड

पड़ेगा। वस्ती के लोगों के घर-घर जाकर कहना पड़ेगा। हर घर पीछे एक सौ-दोसौ रोटी बनाने को कहूँगा। टुलू आदि तीन सौ रोटियाँ बनायेंगी।'

'तीन सौ रोटी ? इतना आटा कहाँ से मिलेगा ?'

देवेश बोला, 'जहाँ से भी हो, इकट्ठा करेंगे। लोगों को तो हमारे दल से सहानुभूति है। सभी तो कांग्रेस के जुल्म से परेशान हैं। छिप-छिपकर सभी हमारी मदद कर रहे हैं।'

उसके बाद जैसे याद आया हो इस तरह बोला, 'चलूँ, तू ठीक वक़्त से आ जाना।'

'मैं किसके साथ जाऊँगा ? कहाँ जाऊँगा ?'

देवेश बोला, 'वह तुझे सोचने की ज़रूरत नहीं है। देखेगा, कल सवेरे से ही यहाँ लोग आकर जुटना शुरु करेंगे। वे यहाँ रहेंगे, खायेंगे। उसके बाद तीसरे पहर चार के वक़्त सभी क़तार बाँधकर जुलूस में निकलेंगे। तू भी उनके साथ चले आना।'

'तू नहीं आयेगा ?'

देवेश बोला, 'मेरा कुछ ठीक नहीं है। मैं कल कहाँ रहूँगा, अभी नहीं कह सकता। मैं आऊँ या न आऊँ, तुम कोई फ़िक्र नहीं करना।'

'तो राजभवन के सामने तो तुझसे मुलाक़ात होगी ?'

देवेश बोला, 'धत्, वहाँ उस वक़्त कौन किसकी खबर रखेगा ? मार-पीट, काट-कूट में मैं कहाँ रहूँगा और तू कहाँ रहेगा, उसका कोई ठिकाना है ?'

'और टुलू ? टुलू जायेगी ?'

देवेश बोला, 'टुलू ने कल से ही मुझसे कह रखा है कि वह जायेगी। मैंने रोका, सहदेव-दा ने भी रोका था। बीमारी से नयी-नयी उठ रही है, अभी न जाना ही ठीक रहता। लेकिन किसी तरह नहीं मानती। वह जरूर जायेगी।'

सुरेन बोला, 'उसे तू मत आने देना भाई, इस सब गड़बड़ी में लड़कियों का जाना क्या अच्छा है ?'

देवेश बोला, 'वह किसी की बात नहीं सुनेगी। बहुत जिद्दी लड़की है।'

'लेकिन अगर उसके सिर पर लाठी-आठी पड़े तो ? फिर अगर सिर पर लगे तो कौन देखेगा ?'

देवेश बोला, 'वह यह नहीं सुनेगी। वह कहती है कि कांग्रेस अगर गद्दी पकड़े रहे तो उसका जिन्दा रहना ही बेकार है।'

सुरेन ने जैसे कुछ सोचा। उसके बाद बोला, 'मैं अगर न रहूँ तो किसी का कोई नुकसान नहीं है। कोई मेरे लिए न रोयेगा। लेकिन उसके सिर पर तो बूढ़े बाप का, छोटी-छोटी बहनों का दायित्व भी है, उन्हें कौन देखेगा?'

देवेश बोला, 'यह सब सोचने से पार्टी का काम नहीं चलता। देश का काम करने चलने पर जिन्दगी देना ही पड़ेगी, जिन्दगी देने के लिए तैयार रहना पड़ेगा। क्या सोचा है कि विधान राय आसानी से गद्दी छोड़ देंगे? मैं चलूं...।'

सुरेन देवेश के साथ बाहर सड़क पर निकल आया। सड़क पर घना अँधेरा और धुआं हो रहा था। पार्टिशन के बाद से वरानगर के शरणार्थियों की भीड़ बढ़ गयी है। जितने दिन बीतते जाते हैं उतनी ही भीड़ बढ़ती जाती है। कल इस वक्त राह-घाट की दूसरी शक्ल होगी। इस घर में चार-पांच सौ आदमी आकर ठहरेंगे। औरतें भी रहेंगी, आदमी भी रहेंगे। बस्ती में शोर मच जायेगा। सभी मिलकर आसमान फाड़कर चीखेंगे— 'हमारी माँगें मानना होंगी, नहीं तो गद्दी छोड़ना होगी, छोड़ना होगी।'

'तू अब क्यों आ रहा है, अब जा...।'

सुरेन बोला, 'हां रे, तेरे ऑफिस में मेरे मामा मेरी खोज-ओज में गये थे?'

देवेश बोला, 'कहां, कुछ तो नहीं सुना।'

सुरेन बोला, 'जरूर गये थे। तू शायद उस वक्त रहा नहीं होगा।'

'शायद।'

सुरेन बोला, 'पुण्यश्लोक बाबू भी शायद खोजते होंगे। शायद माधव कुंडू लेन के घर तलाश करने लिए आदमी भी भेजा था! मैंने अचानक जाना बन्द कर दिया था न!'

बात कहते हीं मां जी की बात याद आयी। मां जी को बीमार छोड़कर आया था। मां जी के लिए धनंजय डॉक्टर को बुलाने गया था। उसके बाद क्या हुआ, कुछ पता नहीं।

'तू और क्यों चला आ रहा है?'

सुरेन बोला, 'न, अब लौट रहा हूँ।'

'हां, कल सवेरे उठकर तैयार हो जाना। सवेरे से ही धीरे-धीरे लोग आना शुरू कर देंगे। दोपहर को मैं आऊँ या कोई और आये, तू सबको लेकर जुलूस बनाकर कलकत्ता की ओर ले जाना।'

देवेश जल्दी-जल्दी चला गया। सुरेन उस ओर कुछ देर तक देखता रहा। उसके बाद फिर लौट आया। रास्ते से ऑफिसों से लौटते झुंड-के-झुंड

आदमी आ रहे थे। उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। देश के सिंहासन पर कौन बैठा है, इसे लेकर किसी को सिर-दर्द नहीं है। विधान राय रहें, या नेहरू रहें या पूर्ण बाबू ही रहें—उससे उन्हें कुछ आता-जाता नहीं है। पाँच बरस में एक बार वोट देना होता है, वही देना है। किसे वोट देना है, यह भी वे नहीं सोचते। जो भी आये उससे उनको कोई भी फ़ायदा-नुक़सान नहीं होने वाला है। उन्हें मेहनत करके ही खाना होगा। कोई भी उन्हें बैठे-बैठे खिलाने नहीं आयेगा। चीज़ों के दाम जिस तरह बढ़ रहे हैं, वे बढ़ते ही रहेंगे; उसका मानो कोई भी प्रतिकार नहीं है। एक बार 1952 के वर्ष में चुनाव हुआ था, इतने दिनों बाद फिर चुनाव आ रहा है। इस बार कौन जीतेगा? विधान राय या पूर्ण बाबू का दल? उन्हीं की लड़ाई कल राजभवन के सामने होगी।

सुरेन फिर सदर दरवाज़ा खोलकर घर के अन्दर घुस गया।

सुखिया स्ट्रीट के घर के सामने आते ही पमिली की गाड़ी ज़रा रुकी। गेट बन्द था। दरबान के चटपट भागकर गेट खोल दिया और सलाम करके हट-कर खड़ा गया।

गाड़ी के पोर्टिको के नीचे जाकर खड़े होते ही पमिली उतरी। उतरकर सीधे ऊपर की ओर चली जा रही थी, लेकिन ठिठककर रुक जाना पड़ा।

प्रवेश अकेला खड़ा था। उसके चेहरे और आँखों पर शर्म छायी हुई थी। पमिली को देखकर समीप ही खिसक रहा था।

लेकिन पमिली ने उसे रोक दिया।

बोली, 'क्या हुआ? तुम फिर आये हो?'

प्रवेश सेन ज़रा घबरा गया। बोला, 'तुम कहाँ गयी थीं?'

पमिली बोली, 'मैं जहाँ तबीयत होगी जाऊँगी, लेकिन तुम फिर क्यों आये?'

प्रवेश बोला, 'मिस्टर राय ने बुलाया है।'

'तुम्हें बुलाया है?'

मानो बात पर यक़ीन न हुआ हो। बोली, 'सही कह रहे हो कि बाबा ने तुम्हें बुलाया है?'

प्रवेश बोला, 'विश्वास न हो तो मिस्टर राय के घर आ जाने पर उनसे ही पूछ लेना।'

पमिली बोली, 'लेकिन मैंने तो बाबा को तुम जैसे गुंडे को घर बुलाने से रोक दिया था।'

प्रवेश बोला, 'देखता हूँ कि मुझ पर तुम्हारा गुस्सा अभी तक उतरा नहीं है, पमिली। और मैंने तुम्हारा क्या नुकसान किया है, यह आज तक नहीं जान सका। बता सकती हो, मेरा कसूर क्या है?'

उस बात का जवाब न देकर पमिली सीधे ऊपर जा रही थी। प्रवेश थोड़ा आगे आ गया। बोला, 'पमिली, एक बात सुनो।'

मुँह फेरकर पमिली ने कहा, 'क्या?'

प्रवेश सेन बोला, 'तुमने जिस तरह मेरा सत्यानाश किया, उसी तरह किसी दिन अपना भी सत्यानाश करोगी।'

'मतलब?'

प्रवेश बोला, 'हाँ, यह बात याद रखो, सब दिन हमेशा किसी के एक समान नहीं रहते।'

पमिली बोली, 'तुम ही तो इसके प्रमाण हो। किसी दिन रास्ते के कुत्ते थे, अब पालतू कुत्ते हो।'

प्रवेश बोला, 'मुझे तुम कितनी ही गालियाँ दो, मैं बिलकुल बुरा न मानूंगा। तुम्हारे पिता के निकट मैं आभारी हूँ। आज मैं जो कुछ हूँ वह तुम्हारे पिता के ही कारण हूँ। था कांग्रेस का वालंटियर, आज हो गया हूँ गजेटिड ऑफिसर। या शायद उससे भी बड़ा। लेकिन वह चूहे और शेर की कहानी याद है? चूहा सिंह का उपकार कर ही धन्य हुआ था!'

पमिली बोली, 'तो तुम शायद चूहे हो! तुम आज सिंह पर उपकार करने आये हो?'

प्रवेश बोला, 'मैं कुछ नहीं करना चाहता! मैंने सिर्फ़ तुम्हें कथामाला की उस कहानी की याद दिलायी है।'

पमिली बोली, 'इसके मतलब कि तुम हमें डरा रहे हो। या तुम कम्युनिस्टों के दल में जा भिड़े हो।'

प्रवेश बोला, 'उसका तो रास्ता नहीं है। फिर उसके सिवा वे लोग मुझे अपने दल में लेंगे भी नहीं। मैं ब्रांडिड कांग्रेसाइट हूँ। कलकत्ता में सभी जानते हैं कि मैं पुण्यश्लोक बाबू का स्टूज हूँ।'

पमिली बोली, 'यही अगर जानते हो तो इतनी बातें क्यों बना रहे हो? जो कहना हो साफ़-साफ़ कहो।'

प्रवेश बोला, 'साफ़ ही तो कह रहा हूँ। पुण्यश्लोक बाबू ने फिर मुझे

बुला भेजा है।'

'क्यों बुला भेजा है ?'

प्रवेश बोला, 'और क्यों ? कम्युनिस्ट लोग फिर सिर उठा रहे हैं।'

'उससे क्या बाबा डर गये हैं, यह कहना चाहते हो ?'

प्रवेश बोला, 'न, न, यह नहीं कह रहा हूँ। लेकिन इस बार उन्नीस सौ बावन साल वाला चुनाव तो नहीं है। इस बार पहिया घूम गया है। यह छप्पन का साल है। कांग्रेस में भी टूट-फूट हो रही है, यह तो सभी को मालूम है।'

'तो वह बात बताने क्या यहाँ आये हो ?'

प्रवेश बोला, 'न, तुमसे मिलने भी आया हूँ।'

'मुझसे क्या काम है ?'

प्रवेश बोला, 'मिस्टर सान्याल के बारे में एक खबर मिली है। सुना हैं यहाँ रोज़ आते हैं, कांग्रेस की हिस्ट्री लिख रहे हैं...।'

'हाँ।'

'लेकिन सुना है कि वे फिर कम्युनिस्ट पार्टी के साथ मेल-जोल बढ़ा रहे हैं। लेकिन यहाँ से अगर वेतन लेते हैं तो उनके यहाँ फिर क्यों जाते हैं ?'

पमिली बोली, 'वह सब लेकर मैं दिमाग़ परेशान नहीं करती। वह सब तुम बाबा के पास जाकर कहो।'

प्रवेश बोला, 'लेकिन फिर मैंने क्या क़सूर किया है ? मुझे हटाकर ..र सान्याल का अपॉयंटमेंट हुआ, और सारा क़सूर मेरा।'

अचानक गेट के सामने गाड़ी की आवाज़ हुई। प्रवेश ने देखा कि पुण्यश्लोक बाबू की गाड़ी अन्दर आ रही है। गाड़ी के पोर्टिको के आगे आते ही प्रवेश बढ़ गया। पुण्यश्लोक बाबू गाड़ी से उतरे। उतरकर प्रवेश को देखते ही बोले, 'क्या हुआ, कब के आये हो ?' कहकर अपने कमरे की ओर जाने लगे।

प्रवेश सेन भी पीछे-पीछे चलने लगा। उसके बाद जाकर कमरे में घुसा। हरिलोचन मुंशी अपने मन से ही काम कर रहे थे। पुण्यश्लोक बाबू के कुर्सी पर बैठते ही हरिलोचन ने कई चिट्ठियाँ सामने लाकर रख दीं।

पुण्यश्लोक बाबू प्रवेश की ओर देखकर बोले, 'बैठो।'

पुण्यश्लोक बाबू को देखकर प्रवेश के मन में आया कि वे बहुत परेशान हैं। सामान्यत: वे ऐसे परेशान नहीं दिखायी देते थे। प्रवेश समझ गया कि पार्टी के मामले में वे बहुत चिन्तित हो गये हैं। पहले भी यों ही बहुत बार उनको हुआ था। जिस दिन से पुण्यश्लोक बाबू कांग्रेस में आये हैं उसी दिन

से कोई-न-कोई बात लेकर उन्हें परेशानी रहती है। पहले जब प्रदीप इस घर में आया करता था तब पुण्यश्लोक बाबू उससे सब बातें बताते थे। सलाह चाहते थे। लेकिन आजकल बात बदल गयी है। वही जिस दिन पत्नी पुलिस के हाथों पकड़ी गयी थी, उस दिन से ही उन दोनों के सम्बन्धों में जैसे एक रुकावट आ गयी थी।

अचानक जैसे पुण्यश्लोक बाबू के मन में कुछ आया। हरिलोचन की ओर देखकर पूछा, 'हरिलोचन...!'

हरिलोचन ने हाथ के काम को रोककर मुँह फेरा, 'जी।'

'आज वह सुरेन नहीं आया?'

हरिलोचन बोले, 'जी, कहाँ, आया तो नहीं है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तो तुमसे जो एक बार उसके यहाँ जाकर उससे मुलाकात करने को कहा था? मकान मिला? शायद बीमार-बीमार पड़ गया हो।'

हरिलोचन बोले, 'जी हाँ, मकान ढूँढकर मैं वहाँ गया था। बीमार नहीं है...।'

'बीमार नहीं है, फिर? ठीक है?'

हरिलोचन बोले, 'जी, सुरेन बाबू अब उस मकान में ही नहीं रहते। घर छोड़कर चले गये हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू को ताज्जुब हुआ। बोले, 'घर छोड़कर चला गया के मतलब? झगड़ा हो गया है? या कहीं और नौकरी मिल गयी है? तुम्हारी बात किससे हुई थी? घर छोड़ने की बात किसने कही?'

हरिलोचन जरा दुविधा करने लगे। उसके बाद बोले, 'वहाँ एक गन्दा आदमी है।'

'गन्दा आदमी? गन्दा आदमी माने? जो कहना है ठीक-ठीक समझ कर बताओ। आदमी कौन है?'

हरिलोचन बोला, 'जी, वह आदमी उस घर का दामाद है। मुझे एक-दम तंग कर दिया था। छोड़ना नहीं चाहता था। बस यही कहता था कि एक नौकरी दिलवा दो।'

'क्यों? वह क्या करता है? बेकार है? घर-जमाई है?'

हरिलोचन बोला, 'मुझे तो यही लगा। बेचारा जमाई शायद घर-जमाई बनकर उसी घर में रहता है।'

इस बीच प्रदीप सामने बैठा सारी बातें सुन रहा था। अब बोला, 'मैं एक बात कहूँ, पुण्य-दा?'

'हाँ, कहो।'

बुला भेजा है।'

'क्यों बुला भेजा है?'

प्रवेश बोला, 'और क्यों? कम्युनिस्ट लोग फिर सिर उठा रहे हैं।'

'उससे क्या बाबा डर गये हैं, यह कहना चाहते हो?'

प्रवेश बोला, 'न, न, यह नहीं कह रहा हूँ। लेकिन इस बार उन्नीस सौ बावन साल वाला चुनाव तो नहीं है। इस बार पहिया घूम गया है। यह छप्पन का साल है। कांग्रेस में भी टूट-फूट हो रही है, यह तो सभी को मालूम है।'

'तो वह बात बताने क्या यहाँ आये हो?'

प्रवेश बोला, 'न, तुमसे मिलने भी आया हूँ।'

'मुझसे क्या काम है?'

प्रवेश बोला, 'मिस्टर सान्याल के बारे में एक खबर मिली है। सुना है यहाँ रोज आते हैं, कांग्रेस की हिस्ट्री लिख रहे हैं...।'

'हाँ।'

'लेकिन सुना है कि वे फिर कम्युनिस्ट पार्टी के साथ मेल-जोल बढ़ा रहे हैं। लेकिन यहाँ से अगर वेतन लेते हैं तो उनके यहाँ फिर क्यों जाते हैं?'

पमिली बोली, 'वह सब लेकर मैं दिमाग़ परेशान नहीं करती। वह सब तुम बाबा के पास जाकर कहो।'

प्रवेश बोला, 'लेकिन फिर मैंने क्या क़सूर किया है? मुझे हटाकर [illegible] सान्याल का अपॉयंटमेंट हुआ, और सारा क़सूर मेरा।'

अचानक गेट के सामने गाड़ी की आवाज़ हुई। प्रवेश ने देखा कि पुण्यश्लोक बाबू की गाड़ी अन्दर आ रही है। गाड़ी के पोर्टिको के आगे आते ही प्रवेश बढ़ गया। पुण्यश्लोक बाबू गाड़ी से उतरे। उतरकर प्रवेश को देखते ही बोले, 'क्या हुआ, कब के आये हो?' कहकर अपने कमरे की ओर जाने लगे।

प्रवेश सेन भी पीछे-पीछे चलने लगा। उसके बाद जाकर कमरे में घुसा। हरिलोचन मुंशी अपने मन से ही काम कर रहे थे। पुण्यश्लोक बाबू के कुर्सी पर बैठते ही हरिलोचन ने कई चिट्ठियाँ सामने लाकर रख दीं।

पुण्यश्लोक बाबू प्रवेश की ओर देखकर बोले, 'बैठो।'

पुण्यश्लोक बाबू को देखकर प्रवेश के मन में आया कि वे बहुत परेशान हैं। सामान्यतः वे ऐसे परेशान नहीं दिखायी देते थे। प्रवेश समझ गया कि पार्टी के मामले में वे बहुत चिन्तित हो गये हैं। पहले भी यों ही बहुत बार उनको हुआ था। जिस दिन से पुण्यश्लोक बाबू कांग्रेस में आये हैं उसी दिन

मे कोई-न-कोई बात लेकर उन्हें परेशानी रहती है। पहले जब प्रवेश इस घर मे आया करता था तब पुण्यश्लोक बाबू उससे सब बातें बताते थे। सलाह चाहते थे। लेकिन आजकल बात बदल गयी है। वही जिस दिन पमिनी पुलिस के हाथों पकड़ी गयी थी, उस दिन से ही उन दोनों के सम्बन्धों मे जैसे एक रुकावट आ गयी थी।

अचानक जैसे पुण्यश्लोक बाबू के मन में कुछ आया। हरिलोचन की ओर देखकर पूछा, 'हरिलोचन...!'

हरिलोचन ने हाथ के काम को रोककर मुँह फेरा, 'जी।'

'आज वह सुरेन नही आया?'

हरिलोचन बोले, 'जी, कहाँ, आया तो नही है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तो तुमसे जो एक बार उसके यहाँ जाकर उससे मुलाक़ात करने को कहा था? मकान मिला? शायद बीमार-बीमार पड़ गया हो।'

हरिलोचन बोले, 'जी हाँ, मकान ढूँढकर मैं वहाँ गया था। बीमार नहीं हैं...।'

'बीमार नही है, फिर? ठीक है?'

हरिलोचन बोले, 'जी, सुरेन बाबू अब उस मकान में ही नही रहते। घर छोड़कर चले गये हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू को ताज्जुब हुआ। बोले, 'घर छोड़कर चला गया के मतलब? झगड़ा हो गया है? या कहीं और नौकरी मिल गयी है? तुम्हारी बात किससे हुई थी? घर छोड़ने की बात किसने कही?'

हरिलोचन जरा दुविधा करने लगे। उसके बाद बोले, 'वहाँ एक गन्दा आदमी है।'

'गन्दा आदमी? गन्दा आदमी माने? जो कहना है ठीक-ठीक समझाकर बताओ। आदमी कौन है?'

हरिलोचन बोला, 'जी, वह आदमी उस घर का दामाद है। मुझे एकदम खतम कर दिया था। छोड़ना नहीं चाहता था। बस यही कहना था कि एक नौकरी दिलवा दो।'

'क्यों? वह क्या करता है? बेकार है? घर-जमाई है?'

हरिलोचन बोला, 'मुझे तो यही लगा। बेकार जमाई शायद घर-जमाई बनकर उसी घर में रहता है।'

इस बीच प्रवेश सामने बैठा सारी बातें सुन रहा था। अब बोला, 'मैं एक बात कहूँ, पुण्य-दा?'

'जी, कहो।'

प्रवेश बोला, 'मैं भी सुरेन बाबू की बात बताने आया था। आपने भी मुझे बुलवाया था।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मैंने तो यह खबर जानने के लिए ही बुलवा भेजा था। सामने चुनाव आ रहा है, सोचा कि उसके पहले अगर एक किताब निकल जाये। कांग्रेस का असली इतिहास तो किसी ने लिखा नहीं। तुमसे भी कितनी ही बार कहा, सो तुम्हारी तो उधर तबीयत ही नहीं है। फिर कांग्रेस के बारे में एक सही इतिहास के छपने की जरूरत है। किस तरह एक छोटी-सी संस्था से धीरे-धीरे कांग्रेस ने ब्रिटिश गवर्नमेंट को देश से भगा दिया, किस तरह देश को स्वतन्त्र करवाया, उसका तो एक रिकार्ड रहने की जरूरत है।'

प्रवेश मन लगाकर पुण्यश्लोक बाबू की बातें सुन रहा था। बोला, 'सो तो है ही।'

'सो तुमसे इतनी बार कहा, तुमने कुछ किया? जीवन में तुमसे कुछ भी न होगा। यही सब सोचकर तो सुरेन से मैंने काम कराना शुरू कर दिया था। लेकिन देखता हूँ कि वह भी तुम्हारी ही तरह है।'

प्रवेश बोला, 'मेरी तरह क्यों कहते हैं? मैं तो कांग्रेस छोड़कर चला नहीं गया। लेकिन सुरेन बाबू ने तो दल ही छोड़ दिया है।'

'दल छोड़ दिया है माने?'

प्रवेश बोला, 'सुना है कि वह पूर्ण बाबू की पार्टी में है।'

'यह क्या?'

पुण्यश्लोक बाबू मानो आसमान से गिर पड़े। बोले, 'पूर्ण बाबू के यहाँ जाकर मिल गया है? तुमसे किसने कहा?'

प्रवेश बोला, 'बहुत लोगों ने बताया। हमारी कांग्रेस से पहले ही कुछ लड़के पूर्ण बाबू की पार्टी में चले गये थे, उन्हीं ने बताया। उनके बहू-बाज़ार के मकान की जगह पूरी नहीं पड़ रही थी। इसीलिए उन लोगों ने फिर बरानगर में एक बड़ा मकान किराये पर लिया है।'

पुण्यश्लोक बाबू ने बात सुनी। सुनकर कुछ देर गुम रहे। उसके बाद बोले, 'ताज्जुब है! और देखो उस पूर्ण बाबू को जब खाने को नहीं मिलता था, सड़कों पर चक्कर लगाया करता था, तब मैंने ही ओरिएंटल इंस्टी-ट्यूशन में बंगला के लिए मास्टर की नौकरी लगवा दी थी। कोई आदमी ऐसा नमक-हराम भी होता है!'

हरिलोचन तब फिर अपने टाइप-राइटर पर काम करने में लग गये।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम्हें किसलिए बुलाया है, सुनो। तुम्हें

चुनाव में इस बार अच्छा-खासा हिस्सा लेना पड़ेगा। कर सकोगे ?'

प्रवेश बोला, 'क्यों न कर सकूँगा, पुण्य-दा ? आप जो कहेंगे वही करूँगा। लेकिन तब फिर आपकी किताब कौन लिखेगा ? चुनाव के पहले निकल जाने से अच्छा न होता ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वह तो अच्छा होता। पर जब सम्भव न हो सका तो क्या किया जाये ?'

प्रवेश बोला, 'आप उसके लिए कुछ फिक्र न करें, पुण्य-दा। कांग्रेस को हराने की ताकत किसी में नहीं है, यह आपसे कहे रखता हूँ।'

'तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?'

प्रवेश बोला, 'इसमें जानने को क्या है ? सभी यह बात कहते हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'फिर भी कहा नहीं जा सकता, समझे। मैं इस बार हरेक वोटर के घर-घर जाऊँगा। इस बार खतरा नहीं मोल लूँगा। क्योंकि पूर्ण बाबू आदि ने अभी से जुलूस आदि निकालना शुरू कर दिया है। उनके नारे सुने हैं ? 'गरीब को मारकर मन्त्री पालने से नहीं चलेगा।' जैसे हम बैठे-बैठे ही वेतन लेते हैं ! हम मानो कभी कोई काम ही नहीं करते !'

प्रवेश बोला, 'हाँ पुण्य-दा, मैंने भी सुना है कि वे बड़ा भारी जुलूस निकालेंगे। हमारे सुरेन सान्याल बाबू उनके दल में मिल गये हैं।'

'तुम्हें किसने बताया ?'

पुण्यश्लोक बाबू ने उत्सुक होकर पूछा।

प्रवेश बोला, 'एक आदमी ने उसे उनके अड्डे पर आते-जाते देखा है।'

पुण्यश्लोक बाबू को जैसे विश्वास न हुआ हो।

पूछा, 'तुम्हें ठीक मालूम है ?'

प्रवेश बोला, 'जिसने मुझे बताया, उसकी बात पर अविश्वास नहीं कर सकता।'

'लेकिन बताओ तो वह गया क्यों ? मेरी तरफ से तो कोई कमी नहीं हुई। मैं तो बराबर हर महीना उसे डेढ़ सौ रुपये नगद देता था।...क्यों जी हरिलोचन, तुम रुपये देते थे न ? हर महीने कायदे से देते थे ?'

हरिलोचन बोले, 'हाँ सर, मैं तो ठीक महीने की पहली तारीख को ही देता रहा, जैसा आपने कहा था...।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तो क्या पमिली ने उससे कुछ कहा था ? पमिली को तो हर एक को जो मन में आता है कह देने की आदत है।'

प्रवेश बोला, 'पमिली अगर कुछ कह भी दे तो आपसे तो उसे कहना चाहिए ? उसे आपसे तो बताना चाहिए था।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वह नहीं कहा जा सकता, तुम ज़रा जाकर पमिली से पूछ तो आओ। जाओ, पूछो कि उसने तो उससे कुछ नहीं कहा ?'

प्रवेश ने फिर देर न की। कमरे से निकलकर एकदम सीधे ऊपर चढ़ गया। बरामदा पार कर पमिली के कमरे के सामने खड़े होकर पुकारा, 'पमिली...!'

अन्दर से पमिली की आवाज़ आयी। बोली, 'कौन, प्रवेश ?'

प्रवेश कमरे में गया। बोला, 'मुझ पर ख़फ़ा मत होना। मिस्टर राय ने ही मुझे तुम्हारे पास आने को कहा है।'

पमिली बोली, 'मुझसे तुम्हें शायद डर लगता है ?'

प्रवेश को अब जैसे थोड़ी हिम्मत हुई।

बोला, 'डरूँगा नहीं ? तुमसे कौन नहीं डरता, यही बताओ ? तुम्हारे डर से मिस्टर सान्याल तक यह घर छोड़कर भाग गये।'

पमिली बोली, 'कौन ? सुरेन ? सुरेन मेरे डर से भाग गया ? किसने कही यह बात ?'

प्रवेश बोला, 'मिस्टर राय तो यही शक कर रहे हैं। नहीं तो महीने में डेढ़ सौ रुपया पाता था, अचानक क्यों आना बन्द कर दिया ? तुम्हारे साथ ज़रूर कोई बात हुई है।'

पमिली बोली, 'यह क्या ! उसके साथ मेरा क्या सम्बन्ध है ? वह मेरा कौन है जो मुझसे डरेगा ?'

'लेकिन तुम्हें नहीं मालूम है कि अब वह यहाँ नहीं आता ? पता नहीं है कि वह पूर्ण बाबू की पार्टी में जाकर मिल गया है ?'

पमिली ने पूछा, 'तुमसे किसने कहा ?'

प्रवेश बोला, 'मैंने अच्छे भरोसे के आदमी से ही सुना है।'

पमिली बोली, 'जिसे जिस पार्टी में मिलने का मन होगा उसमें मिलेगा ही, उसमें किसी का जोर नहीं। उसके लिए मैं क्या कर सकती हूँ ? उसके सिवा हम लोगों के रंगढंग शायद उसे अच्छे नहीं लगते थे।'

'हमारे रंगढंग कैसे हैं ?'

पमिली बोली, 'यही, हम लोगों का शराबखोरी करना, सिगरेट पीना, यह सब बात शायद उसे पसन्द नहीं है। वह गाँव का लड़का है, दूसरी तरह से पला है। उसे रुपये की कमी थी, नौकरी थी नहीं। शायद यह भी हो सकता है कि उसे कहीं और नौकरी मिल गयी हो। नौकरी मिलना ही उसके लिए बड़ी बात है। जिस तरह तुम हो। बाबा ने तुमको नौकरी दिला दी, इसीलिए तो अभी कांग्रेस में हो। नौकरी न मिलने पर कांग्रेस में तुम्हारी निष्ठा बनी रहती ?'

प्रवेश अब कुर्सी पर बैठ गया। बोला, 'पुण्य-दा ने नौकरी दिला दी, क्या इसीलिए मेरी यह निष्ठा है ?'

पमिली बोली, 'उसके सिवा और क्या है ? तुमने जो चाहा वह तुम्हें मिल गया।'

'मैंने क्या चाहा था ?'

'तुमने नौकरी चाही थी, घर चाहा था, गाड़ी चाही थी, इसीलिए बाबा के पास बने रहे। वह सब तुमको मिल गये।'

प्रवेश बोला, 'मैंने क्या सिर्फ यही चाहा था ? और कुछ नहीं चाहा ?'

'सुनूं तो और क्या चाहा था ?'

'लेकिन मैंने तो तुम्हें भी चाहा था, पमिली। तुम्हें क्या मैं पा गया ?'

पमिली ने सीधे-सीधे प्रवेश की ओर देखा। बोली, 'मुझे अकेला पाकर तुम्हारी हिम्मत बहुत बढ़ गयी है, प्रवेश ! तुम्हारी क्या फिर मेरे हाथों थप्पड़ खाने की तबीयत हुई है ?'

प्रवेश ने अपना मुंह पमिली की ओर बढ़ाकर कहा, 'तुम मेरे गाल पर थप्पड़ मारो, यह तो मेरा सौभाग्य है, पमिली। मारो, थप्पड़ ही मारो मुझे, जितने चाहे थप्पड़ मारो।'

कहकर पमिली का हाथ पकड़कर खींचा।

बोला, 'तुम मेरा प्राण लेकर जो चाहे करो पमिली, मैं तुमसे कुछ न कहूँगा।'

पमिली बोली, 'फिर वही हरकत कर रहे हो ? आज भी क्या तुम पीकर आये हो ?'

'पीता तो मैं रोज ही हूँ, पमिली। तुम सहसा नयी बात क्यों कह रही हो ? तुमने ही तो मुझे पीना सिखाया। तुमको याद नहीं है ?'

पमिली बोली, 'पीना तो सिखाया, लेकिन इस तरह नशे में होश गँवाना भी क्या मैंने सिखाया ? और पीना क्या मैंने तुम्हें सिखाया या तुमने मुझे सिखाया, यह कौन बतायेगा ?'

प्रवेश बोला, 'आज उस बात पर झगड़ा करना नहीं चाहता, पमिली। मान लो, मैंने ही तुम्हें सिखाया। लेकिन तुम और मैं क्या अलग हैं ?'

पमिली बोली, 'देख रही हूँ कि आज तुम्हारी तबीयत बहुत मौज में है। बात क्या है ?'

प्रवेश बोला, 'तुम्हारे पास आते ही मेरे मन का पंछी पर तोलने लगता है, पमिली। लगता है कि मुझे स्वर्ग मिल गया है। चलो, कहीं चलें दोनों। जहाँ भी हो...।'

पमिली बोली, 'मैं अभी सिनेमा देख आयी हूँ। अभी मुझे कहीं भी

जाना अच्छा नहीं लगता।'

प्रवेश बोला, 'देखोगी कि बाहर निकलते ही अच्छा लगेगा। इस शाम को कमरे में बैठकर बरबाद करने की तबीयत नहीं होती है।'

पमिली बोली, 'लेकिन अगर उस दिन की तरह फिर हो ? तुम पर अब विश्वास नहीं रहा...।'

प्रवेश बोला, 'उस दिन तो बोतल-बोतल मिल नहीं पा रही थी, आज तो वैसा नहीं है। और आज पीयेंगे भी नहीं। सिर्फ़ बातें करेंगे। मैं तुमसे और तुम मुझसे बातें करोगी।'

पमिली बोली, 'लेकिन कलकत्ता में वैसी अकेली जगह कहाँ मिलेगी ?'

प्रवेश बोला, 'हम गाड़ी में ही बैठे रहेंगे। या गाड़ी लेकर चले जायेंगे कलकत्ता के बाहर जैसोर रोड पकड़कर। वहाँ मैदान में गाड़ी पार्क कर गप-शप करेंगे।'

अचानक नीचे गाड़ी के इंजन की आवाज़ हुई। अब फिर कौन आया ?

पमिली बोली, 'लगता है, नीचे बाबा के पास कोई आया है।'

प्रवेश ने आवाज़ सुनी थी। सहसा रघु भागता-भागता आया। बोला, 'दीदी, बाबू ज़रा आपको बुला रहे हैं।'

नीचे से पुण्यश्लोक बाबू की आवाज़ सुनायी पड़ी। पुकार रहे हैं, 'पमिली...!'

पमिली ने बाहर निकलकर आते ही देखा कि बाबा सीढ़ियों के नीचे खड़े हैं। वहीं से खड़े-खड़े ही पूछ रहे हैं, 'प्रवेश कहाँ है ?'

प्रवेश निकलकर आ रहा था। बोला, 'मुझे बुला रहे हैं ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, तुम आओ, मेरे साथ तुम्हें ज़रा चलना है। अभी फ़ोन आया था।'

प्रवेश बोला, 'कहाँ, पुण्य-दा ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'सुना है कल कम्युनिस्ट लोग असेम्बली हाउस की ओर जुलूस बनाकर जायेंगे। एक लाख आदमी कलकत्ता आयेंगे। हमारी पार्टी के ऑफ़िस में इसके प्रतिरोध का तौर-तरीक़ा तय होगा—तुम भी चलो मेरे साथ। उनका जुलूस तोड़ना होगा।'

तभी प्रवेश नीचे उतर आया। पुण्यश्लोक बाबू के साथ वह भी गाड़ी पर बैठ गया। बैठकर पूछा, 'लेकिन पुण्य-दा, हमारे पुलिस-कमिश्नर तो हैं...।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वह रहें, लेकिन डॉक्टर राय कहते हैं कि गवर्नमेंट जो करे सो करेगी, लेकिन पार्टी के स्तर पर भी कुछ करने की ज़रूरत है। हमारे वालंटियरों को भी कुछ करना होगा।'

'वे बेकार किस तरह क्या करेंगे ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'उसकी बहुत तरकीबें है। हमारे कुछ वालंटियर उनके जुलूस मे घुस सकते हैं। इतने दिनों से तमाम पैसा खर्च कर जिनको पाला जाता है, वह किसलिए ?'

पुण्यश्लोक बाबू की गाड़ी भर्र-भर्र कर आगे बढ़ने लगी।

बहुत तड़के मे ही देवेश आदि के बरानगर के घर मे लोगों ने आकर जमा होना शुरू कर दिया था। सुरेन की उस वक्त भी ठीक से नींद नहीं खुली थी। सदर दरवाजे की कुंडी खटकने की आवाज सुनते ही नौकर ने दरवाजा खोल दिया था।

सुरेन ने देखा कि एक झुंड आदमी मैले कपड़े-लत्ते पहने घर मे आ घुसे है। साथ में औरतें भी हैं। लगा कि सभी कुली, मजदूर या किसान वर्ग के लोग हैं। ट्रेन पर सवार होकर सुबह-सुबह आ पहुँचे है। आकर सभी ने नल के पास भीड़ लगा दी है। हाथ-पाँव धोकर बरामदे मे जमा हो गये है। उनके खाने का इन्तजाम पार्टी के लोगों ने किया है। बाल्टी-भर चाय आ गयी। साथ में एक-एक पाव वजन की डबल रोटी। सभी उसे बड़े चाव से खा रहे है, मानो बहुत दिन से उनमे से किसी को खाने को न मिला हो।

एक झुंड के बाद फिर दूसरा झुंड आया। उसके बाद फिर एक झुंड।

एक आदमी को नजदीक पाकर सुरेन ने पूछा, 'तुम लोग कहाँ से आ रहे हो, जी ?'

वे बोले, 'इटिंडा घाट से।'

'और तुम लोग ?'

'हम आ रहे है उलुबेड़िया से।'

'तुम क्या काम करते हो ?'

उनमे से एक आदमी बोला, 'हम जूट मिल मे काम करते हैं।'

दोपहर दो बजे तक पूरे दिन-भर उनका नहाना-खाना चल— जैसे कि कोई उत्सव हो। सभी दूर-दूर से आये हैं। तीसरे प— करके निकलेंगे। और जो लोग नजदीक से आ रहे हैं वे दोप

या दो की ट्रेन से ही चलेंगे। कोई टिकिट लेगा, या कोई टिकिट नहीं भी लेगा। आज के दिन कोई नियम नहीं, क़ानून नहीं। आज के दिन सिर्फ़ अभियान है—लक्ष्य पर पहुँचने का अभियान। जिस तरह से हो, लक्ष्य पर पहुँचना ही होगा। आज दस बरस से कांग्रेस के राज के अत्याचार से साधारण आदमी के प्राण निकलने को हो रहे हैं। वे मुक्ति चाहते हैं। वे शोषण का अन्त देखना चाहते हैं। वे चाहते हैं, मनुष्य के संसार में मनुष्य होकर जीवित रहें। तुम जो जहाँ हो, आओ। आकर हमारा साथ दो। हमारा साथ दो। हम कलकत्ता के चारों ओर से जाकर राजभवन के राज-द्वार पर मिलेंगे। एक स्वर से अपनी माँग पेश करेंगे। हम कहेंगे: हमारी माँग न मानने पर तुम्हें गद्दी छोड़नी होगी। चलो, चलो, कलकत्ता चलो।

देवेश बीच में आ गया। वह सबके आराम के बारे में जाँच करने आया था। सब तैयार हैं न? सब ठीक हैं न? किसी को कोई असुविधा तो नहीं है?

सुरेन को देखकर बोला, 'क्यों रे, तू चल रहा है न हमारे साथ?'

सुरेन बोला, 'हाँ, चल रहा हूँ।'

'तुझे डर तो नहीं लग रहा है?'

सुरेन कुछ बोला नहीं। डर होगा तो देवेश उसका डर दूर कर देगा। और डर लगे ही तो वह क्या कर सकता है?

देवेश बोला, 'तुझे कोई डर नहीं है। अगर कांग्रेसी सरकार गोली चलायेगी तो क्या होगा, बहुत होगा तो दो-चार लोगों की जानें जायेंगी।'

देवेश के लिए दो-चार लोगों की जान जाना जैसे कुछ ख़ास माने न रखता हो। आदमी मानो देवेश के निकट बिलकुल बेजान खिलौने हो गये हों। जिस तरह खेल-खेल में खिलौने टूट जाते हों, आदमी भी शायद वैसे ही हैं।

देवेश ने फिर कहा, 'अरे, देश के आदमियों के लिए न हो तो मानो जान ही दे दी! जान तो ऐसे भी निकल रही है, इस बार न हो तो गवर्नमेंट की गोली से ही गयी...।'

देवेश को ज़्यादा बातें करने का वक़्त नहीं था। और भी बहुत-सी चौकियों पर उसे जाना होगा। सिर्फ़ क्या बरानगर लेकर सिर खपाने से उसका काम चलेगा? और भी बहुत आदमी बाहर से आ रहे हैं। वे हावड़ा और सियालदह स्टेशन से आना शुरू करेंगे। आ ही पहुँचे हैं।

सुरेन बोला, 'लेकिन पुलिस अगर जुलूस को तोड़ दे?'

देवेश बोला, 'तुझे वह सब नहीं सोचना होगा। पूर्ण-दा, सन्दीप-दा वह सब सोच रहे हैं। पुलिस जुलूस तोड़ देगी तो तोड़ दे। इसलिए तो हम

चुप करके बैठ नहीं सकते।'

कहने के बाद न रुका। भागकर निकल गया।

थोड़ी देर में ही तीन बजे। तभी यात्रा का आरम्भ था। जुलूस शुरू हुआ।

बीच की एक जगह पर जाकर सुरेन खड़ा हो गया। उसके बाद शुरू हुए नारे। कलकत्ता शहर को कँपाते हुए पांच सौ आदमी नारे लगाते-लगाते चले :

हमारी माँग मानना होगी।
नहीं तो गद्दी छोड़ना होगी,
छोड़ना होगी॥

सुरेन पहले नहीं चिल्लाया। आवाज में आवाज नहीं मिलायी। लेकिन जब देखा कि सड़क के दोनों ओर घर-घर में लोगों की श्लाघनीय दृष्टि उन पर है तो लगा कि वह भी उस प्रशंसा का अधिकारी है। वह मानो सचमुच एक अच्छा काम करने चला है। वह भी जैसे लोगों की आँखों में बड़ा हो गया है। वह मामूली आदमी की तरह घर के कोने में निरापद आश्रय लेने के लिए पैदा नहीं हुआ है। वह भी विपत्ति के आगे कूद सकता है। वह भी जीवन को तुच्छ मानकर मृत्यु के सामने आगे बढ़ सकता है। वह डरपोक नहीं है। वह डरपोक नहीं, डरने वाला नहीं, वह आदमी है। वीर की भाँति वह पुलिस की गोली के सामने सीना खोल देगा।

साथ-ही-साथ उसने भी घूँसा तानकर आवाज लगायी :

हमारी माँग मानना होगी।
नहीं तो गद्दी छोड़ना होगी,
छोड़ना होगी॥

उसके बाद आदमियों की अक्षुण्ण धारा रास्ते पर चलती हुई और भी आगे बढ़ने लगी। भीड़ और घनी हो गयी। आस-पास से और भी जुलूस आकर बड़े जुलूस में मिलने लगे। तब पूरा जुलूस लम्बा हो गया था। और, और भी लम्बा। जुलूस की शुरुआत पर नजर डालकर देखने से उसका आखिरी हिस्सा दिखायी नहीं पड़ता था।

माधव कुडू लेन के मोड़ के पास आते ही सुरेन ने देखा, वहाँ भी बहुत भीड़ जमा है। उनमें किसी को पता नहीं था कि सुरेन भी इसमें है। सहसा दिखायी पड़ा कि अर्जुन खड़ा है—वही दुखमोचन का बेटा अर्जुन।

उसी अर्जुन ने अचानक सुरेन को देख लिया। देखते ही भागा आया। पुकारा, 'भाजे बाबू, आप ?'

सुरेन बोला, 'क्या रे, क्या देख रहा है ?'

अर्जुन बोला, 'इतने लोगों की भीड़ को देख रहा हूँ ।'

'माँ जी कैसी हैं ?'

अर्जुन बोला, 'अच्छी हैं । मैनेजर बाबू आपको ढूँढते थे । पुलिस में ख़बर दी है ।'

सुरेन ने कहा, 'तू मेरी बात कहना मत किसी से, समझा ?'

'लेकिन आप रहते कहाँ हैं ?'

सुरेन की समझ में न आया कि क्या कहे । जुलूस उस समय भी क़दम-क़दम बढ़ रहा था । चलते-चलते ही बातें हो रही थीं ।

'बताइये न, आप कहाँ रहते हैं ?'

सुरेन बोला, 'वह जानने से तुझे क्या फ़ायदा ? मैं अब फिर तुम लोगों के यहाँ लौटकर नहीं आऊँगा ।'

अर्जुन बोला, 'लेकिन सब लोग आपकी बातें करते हैं ?'

'मेरी बातें करते हैं ? क्या कहते हैं ?'

'कहते हैं, भांजे बाबू घर छोड़कर क्यों चले गये ? कोई कुछ समझ नहीं पा रहा है कि आप क्यों चले गये ? सचमुच आप चले क्यों गये ?'

सुरेन बोला, 'तू घर जा ।'

अर्जुन बोला, 'सच, बताइये न, आप चले क्यों गये ?'

सुरेन बोला, 'बूढ़े बाबू कैसे हैं ?'

'वैसे ही हैं । बूढ़े बाबू अब ज्यादा दिन न जियेंगे ।'

बूढ़े बाबू की बात उठते ही सुरेन जैसे अजीब-सा कोमल हो आया । बोला, 'न जियेंगे माने ? बीमार हो गये हैं क्या ?

अर्जुन बोला, 'बीमार नहीं हुए । लेकिन अब खा नहीं पाते । केवल चुपचाप अपने कमरे में लेटे रहते हैं, और बड़बड़ करते रहते हैं ।'

मन अजीब-सा आर्द्र हो उठा । बोला, 'लगता है, कोई उनका ख़याल नहीं रखता ?'

'कौन रखेगा ? किसके पास उन्हें देखने का वक़्त है ? सभी तो अपने-अपने धन्धे में लगे हैं !'

सुरेन बोला, 'वह तो है ही ! और जमाई बाबू ?'

'जमाई बाबू भी हैं । आराम से हैं । खाते-पीते हैं, सोते हैं और सबको डाँटते रहते हैं । बीच-बीच में मैनेजर बाबू के साथ भी खूब झगड़ा होता है ।'

'किस बात पर झगड़ा होता है ?'

'और किस बात पर, रुपये-पैसे पर ! मैनेजर बाबू उनको रुपया दें नहीं । बीड़ी-सिगरेट के लिए तो रुपये चाहिए ।'

'लेकिन रुपये क्यों नहीं देते ?'

अर्जुन बोला, 'रुपया क्यों देंगे ? और कितना देंगे ? जमाई बाबू के नशे का रुपया जुटाना क्या मामूली खर्च है ? माँ जी से भी इसी बात पर खूब झगड़ा होता है।'

'किससे माँ जी का झगड़ा होता है ?'

'जमाई बाबू का। बस, डर दिखाते हैं कि चला जाऊँगा। रोज ही कहते हैं, दीदी को लेकर घर छोड़कर चले जायेंगे, लेकिन जाते नहीं। बताइये तो, जायेंगे कहाँ ? क्या खायेंगे ? टेंट में तो रुपया-पैसा कुछ है नहीं।'

सुरेन ने चलते-चलते अर्जुन की बातें सुनी।

बोला, 'अब मैं तुम्हारे यहाँ नहीं आऊँगा, अर्जुन। मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। सभी सोचते हैं कि मैं भी दूसरों की तरह रुपये लूटने के लिए पड़ा हूँ। वहाँ रहने पर मेरी बरबादी हो जायेगी। वहाँ रहने पर मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगता। तुम जाओ। किसी से कुछ बताना नहीं।'

अर्जुन चला गया। सुरेन फिर दल के साथ अपने आप चलने लगा। बस-ट्राम-गाड़ियाँ—सभी सड़क पर रुक गयी। कुछ देर बाद ही लोग ऑफिस से घर की ओर लौटेंगे। तब देर तक कोई घर न जा सकेगा। उस समय सड़क पर भीड़ बनाकर वे चलते-फिरते रहेंगे, छटपटाते रहेंगे। सारे शहर का काम-काज ठप्प पड़ जायेगा। जीवन-यात्रा उलट-पलट हो जायेगी, उसी में तो जुलूस की सार्थकता है। लाइन ठीक रखकर चलते-चलते बहुत-सी बातें सुरेन के मन में उठने लगी। इतने दिनों दूर से बाहर खड़े रहकर उसने कितने जुलूस देखे हैं। अब लाइन में घुसकर बाहर की ओर बार-बार देखने लगा। वे लोग इनके सम्बन्ध में क्या सोचते हैं, वह भी मानो उसे मालूम हो। कोई तमाशा देख रहा है, किसी को प्रेरणा मिल रही है, और कोई चिढ़ रहा है। यह सब क्यों है ? अच्छे-खासे बेफिक्र थे, सबेरे ऑफिस जाना और शाम को ऑफिस से लौटने की व्यस्तता लिये जिन्दगी किसी तरह कटी जा रही थी—उसमें फिर यह लोग झंझट को क्यों खड़ा करने जा रहे हैं ? ये लोग क्या इंसान को आराम से न रहने देंगे ?

अचानक देवेश वहीं से आ पहुँचा। वह बहुत उद्विग्न था, बहुत बेचैन। चिल्लाकर बोला, 'लाइन ठीक रखो, लाइन ठीक रखो।'

मानो सारा सिरदर्द उसी का हो। जैसे कि देश के उद्धार का व्रत अकेले उसी ने ले रखा हो।

सहसा सुरेन की ओर नजर पड़ गयी। बोला, 'तू आ गया ?'

सुरेन बोला, 'अभी तक तू कहाँ था ?'

बिस्तर पर शरीर फैलाकर हलकी लाल बत्ती के नीचे पमिली एक हलका-फुलका अँग्रेजी उपन्यास पढ़ रही थी। शाम को सिनेमा देखकर आयी तो उसे बहुत थकान लग रही थी।

सहसा रघु ने आकर कहा, 'कोई सज्जन आपसे मिलने आये हैं।'

'मुझसे? मुझसे क्यों? कह दे, बाबू घर पर नहीं हैं।'

रघु बोला, 'वे आपसे ही मिलना चाहते हैं।'

'मुझसे क्या जरूरत है?'

'वह नहीं बताया। कहते हैं कि इस घर की दीदी से जरा मिलना चाहते हैं।'

रघु पूछने चला गया। लौटकर बोला, 'सुरेन बाबू की तलाश में आये हैं। कहते हैं कि सुरेन बाबू उनके भाजे हैं।'

पमिली के मन में पता नहीं क्या आया। इस वक्त सुरेन की तलाश में यह आदमी क्यों आया है? बोली, 'नीचे के कमरे में बिठा, मैं आ रही हूँ।'

भूपति भादुड़ी बैठक के कमरे में जाकर बैठे। कुछ देर बाद ही पमिली कमरे में आयी।

भूपति भादुड़ी ने खड़े होकर पमिली को नमस्कार किया।

बोले, 'जी, बेवक्त आकर आपको तंग किया, बेटी। लेकिन बहुत लाचार होकर ही आया हूँ। मेरे बिना माँ-बाप के भाजे सुरेन को आप जरूर जानती होंगी। उसकी तलाश में ही मैं आपके पास आया हूँ।'

पमिली बोली, 'लेकिन हमारी बात आप से किसने कही?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अपने भाजे के मुँह से ही आपकी बहुत बातें सुनी हैं। आपकी बात दिन-रात ही करता था, इसी से सोचा, आपसे शायद उसका कुछ पता लगेगा।'

पमिली बोली, 'उसको क्या हुआ है?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हुआ कुछ भी नहीं। मैं मामा होने पर बाप की तरह हूँ। इसी से बीच-बीच में गुस्से से उसे दो-चार बातें कह देता था। बड़ा जिद्दी लड़का है, किसी की बात नहीं सुनता। एक दिन मैं जाने क्या-क्या कह बैठा, तभी से घर छोड़कर चला गया। फिर उसके बाद से उसका कोई

देवेश बोला, 'मुझे सभी तरफ़ संभालना पड़ता है। उधर कांग्रेस गवर्नमेंट ने चौरंगी पर हथियारबन्द पुलिस तैनात कर रखी है।'

'क्यों देवेश-दा, क्या वे गोली चलायेंगे ?'

किसी ने उधर से पूछा।

देवेश बोला, 'चलायें न, ज़रा गोली चलाकर देखें ! गोली चलाकर अगर गद्दी सलामत रहती, तो फिर अँग्रेज़ सरकार हिन्दुस्तान छोड़कर न चली जाती।'

तभी जुलूस धरमतल्ला के मोड़ पर आ पहुँचा था। दूर से दीख पड़ता था कि उधर लाठी लेकर और बन्दूकें ऊँची कर पुलिस का एक जत्था रास्ता रोके खड़ा है। वे जैसे इतनी देर से इसी जुलूस की राह देख रहे हों। लेकिन वे किधर संभालेंगे ? उधर सेंट्रल एवेन्यू की ओर से एक और बड़ा जुलूस नारे लगाते हुए आ रहा है। और ठीक उसकी उल्टी दिशा चौरंगी से एक और जुलूस बढ़ा आ रहा है। क्षण-भर में सारी जगह जैसे उलझकर रह गयी हो। आस-पास ऑफ़िसों की खिड़कियाँ-बरामदे-छत—सब आदमियों के चेहरों से भर गये। चार-मंज़िले मकानों की छत से किसी ने एक बड़ी-सी कुर्सी सड़क पर पुलिस को निशाना बनाकर मारी।

पुकार फिर उठी :

हमारी माँग मानना होगी।
नहीं तो गद्दी छोड़नी होगी,
छोड़ना होगी॥

चौरंगी की ओर से जो लोग आ रहे थे उनके आगे की पाँत में कुछ औरतें थीं। सहसा सुरेन को टुलू दिखायी दी। टुलू बिलकुल आगे पहली पाँत में थी। लाल कपड़े का झंडा हाथ में थामे थी। और तेजी से स्लोगन दे रही थी :

हमारी माँग मानना होगी।
नहीं तो गद्दी छोड़ना होगी,
छोड़ना होगी॥

साथ-ही-साथ पूरे चौरंगी के चौराहे में जैसे एक लहर उठी हो। नारों के चिल्लाने और भाग-दौड़ से चारों ओर शोर मच गया। लगा कि कोई चीज़ फट पड़ा हो; 'मारो सालों को, मारो...!'

बिस्तर पर शरीर फैलाकर हलकी लाल बत्ती के नीचे पमिली एक हलका-फुलका अँग्रेजी उपन्यास पढ़ रही थी। शाम को सिनेमा देखकर आयी तो उसे बहुत थकान लग रही थी।

सहसा रघु ने आकर कहा, 'कोई सज्जन आपसे मिलने आये हैं।'

'मुझसे? मुझसे क्यों? कह दे, बाबू घर पर नहीं हैं।'

रघु बोला, 'वे आपसे ही मिलना चाहते हैं।'

'मुझसे क्या जरूरत है?'

'यह नहीं बताया। कहते हैं कि इस घर की दीदी से जरा मिलना चाहते हैं।'

रघु पूछने चला गया। लौटकर बोला, 'सुरेन बाबू की तलाश में आये हैं। कहते हैं कि सुरेन बाबू उनके भाजे हैं।'

पमिली के मन में पता नहीं क्या आया। इस वक्त सुरेन की तलाश में यह आदमी क्यों आया है? बोली, 'नीचे के कमरे में बिठा, मैं आ रही हूँ।'

भूपति भादुड़ी बैठक के कमरे में जाकर बैठे। कुछ देर बाद ही पमिली कमरे में आयी।

भूपति भादुड़ी ने खड़े होकर पमिली को नमस्कार किया।

बोले, 'जी, बेवक्त आकर आपको तंग किया, बेटी। लेकिन बहुत लाचार होकर ही आया हूँ। मेरे बिना माँ-बाप के भाजे सुरेन को आप जरूर जानती होंगी। उसकी तलाश में ही मैं आपके पास आया हूँ।'

पमिली बोली, 'लेकिन हमारी बात आप से किसने कही?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अपने भाजे के मुँह से ही आपकी बहुत बातें सुनी हैं। आपकी बात दिन-रात ही करता था, इसी से सोचा, आपसे शायद उसका कुछ पता लगेगा।'

पमिली बोली, 'उसको क्या हुआ है?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हुआ कुछ भी नहीं। मैं मामा होने पर बाप की तरह हूँ। इसी से बीच-बीच में गुस्से से उसे दो-चार बातें कह देता था। बड़ा जिद्दी लड़का है, किसी की बात नहीं सुनता। एक दिन मैं जाने क्या-क्या कह बैठा, तभी से घर छोड़कर चला गया। फिर उसके बाद से उसका कोई

देवेश बोला, 'मुझे सभी तरफ़ संभालना पड़ता है। उधर कांग्रेस गवर्नमेंट ने चौरंगी पर हथियारबन्द पुलिस तैनात कर रखी है।'

'क्यों देवेश-दा, क्या वे गोली चलायेंगे?'

किसी ने उधर से पूछा।

देवेश बोला, 'चलायें न, जरा गोली चलाकर देखें! गोली चलाकर अगर गद्दी सलामत रहती, तो फिर अँग्रेज सरकार हिन्दुस्तान छोड़कर न चली जाती।'

तभी जुलूस धरमतल्ला के मोड़ पर आ पहुंचा था। दूर से दीख पड़ता था कि उधर लाठी लेकर और बन्दूकें ऊँची कर पुलिस का एक जत्था रास्ता रोके खड़ा है। वे जैसे इतनी देर से इसी जुलूस की राह देख रहे हों। लेकिन वे किधर संभालेंगे? उधर सेंट्रल एवेन्यू की ओर से एक और बड़ा जुलूस नारे लगाते हुए आ रहा है। और ठीक उसकी उल्टी दिशा चौरंगी से एक और जुलूस बढ़ा आ रहा है। क्षण-भर में सारी जगह जैसे उलझकर रह गयी हो। आस-पास ऑफ़िसों की खिड़कियाँ-बरामदे-छत—सब आदमियों के चेहरों से भर गये। चार-मंजिले मकानों की छत से किसी ने एक बड़ी-सी कुर्सी सड़क पर पुलिस को निशाना बनाकर मारी।

पुकार फिर उठी:

हमारी माँग मानना होगी।
नहीं तो गद्दी छोड़नी होगी,
छोड़ना होगी॥

चौरंगी की ओर से जो लोग आ रहे थे उनके आगे की पाँत में कुछ औरतें थीं। सहसा सुरेन को टुलू दिखायी दी। टुलू बिलकुल आगे पहली पाँत में थी। लाल कपड़े का झंडा हाथ में थामे थी। और तेजी से स्लोगन दे रही थी:

हमारी माँग मानना होगी।
नहीं तो गद्दी छोड़ना होगी,
छोड़ना होगी॥

साथ-ही-साथ पूरे चौरंगी के चौराहे में जैसे एक लहर उठी हो। नारों के चिल्लाने और भाग-दौड़ से चारों ओर शोर मच गया। लगा कि कोई चीख़ पड़ा हो; 'मारो सालों को, मारो...!'

बिस्तर पर शरीर फैलाकर हलकी लाल बत्ती के नीचे पमिली एक हलका-फुलका अँग्रेजी उपन्यास पढ़ रही थी। शाम को सिनेमा देखकर आयी तो उसे बहुत थकान लग रही थी।

सहसा रघु ने आकर कहा, 'कोई सज्जन आपसे मिलने आये हैं।'

'मुझसे? मुझसे क्यों? कह दे, बाबू घर पर नहीं हैं।'

रघु बोला, 'वे आपसे ही मिलना चाहते हैं।'

'मुझसे क्या जरूरत है?'

'वह नहीं बताया। कहते हैं कि इस घर की दीदी से जरा मिलना चाहते हैं।'

रघु पूछने चला गया। लौटकर बोला, 'सुरेन बाबू की तलाश में आये हैं। कहते हैं कि सुरेन बाबू उनके भांजे हैं।'

पमिली के मन में पता नहीं क्या आया। इस वक्त सुरेन की तलाश में यह आदमी क्यों आया है? बोली, 'नीचे के कमरे में बिठा, मैं आ रही हूँ।'

भूपति भादुड़ी बैठक के कमरे में आकर बैठे। कुछ देर बाद ही पमिली कमरे में आयी।

भूपति भादुड़ी ने खड़े होकर पमिली को नमस्कार किया।

बोले, 'जी, बेवक्त आकर आपको तंग किया, बेटी। लेकिन बहुत लाचार होकर ही आया हूँ। मेरे बिना माँ-बाप के भांजे सुरेन को आप जरूर जानती होंगी। उसकी तलाश में ही मैं आपके पास आया हूँ।'

पमिली बोली, 'लेकिन हमारी बात आप से किसने कही?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अपने भांजे के मुँह से ही आपकी बहुत बातें सुनी हैं। आपकी बात दिन-रात ही करता था, इसी से सोचा, आपसे शायद उसका कुछ पता लगेगा।'

पमिली बोली, 'उसको क्या हुआ है?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हुआ कुछ भी नहीं। मैं मामा होने पर बाप की तरह हूँ। इसी से बीच-बीच में गुस्से में उसे दो-चार बातें कह देता था। बड़ा जिद्दी लड़का है, किसी की बात नहीं सुनता। एक दिन मैं उसे क्या-क्या कह बैठा, तभी से घर छोड़कर चला गया। फिर उसके बारे में उसका कोई

भी पता नहीं है।'

पमिली बोली, 'तो मैं इस मामले में क्या कर सकती हूं?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'बेटी, आप चाहें तो सब-कुछ कर सकती हैं। अपने बाबा से कहकर अगर खोज करायें तो मुझे इस बुढ़ापे में कुछ शान्ति मिलेगी।'

पमिल बोली, 'इसके पहले भी कभी इस तरह गया था?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हां, एक बार गया था। सो उस बार मैं उसे सड़क पर से पकड़ ले आया था। देखा कि एक लड़की के साथ सड़क पर घूम रहा है।'

'लड़की?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हां बेटी, एक शरणार्थी क़िस्म की लड़की।'

'शरणार्थी लड़की? उसके साथ उसका क्या सम्बन्ध?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'सो पता नहीं, बेटी। मैं कहता, तुझे किस बात की फ़िक्र है? तुझे नौकरी नहीं करना है, कुछ नहीं। हमारे घर की मां जी उसे बहुत प्यार करती हैं न, अपना बहुत-सा रुपया-पैसा उसे दे जायेंगी। और ब्याह? मैंने कहा कि मैं तेरे लिए सुन्दर-सी लड़की देखकर शादी करा दूंगा। सो उधर कान नहीं! वह क्या सोचता है, किसी तरह कुछ नहीं बताता।'

सहसा बाहर गाड़ी की आवाज़ हुई। पमिली ने खिड़की से देखा कि बाबा आये हैं, और उनके पीछे प्रवेश है। बाबा गाड़ी से उतर सीढ़ियों से ऊपर चले गये। और प्रवेश पोर्टिको के नीचे खड़ा रहा।

भूपति भादुड़ी सहसा बोले, 'शायद कोई आया है? तो आज मैं उठूं, बेटी।'

'अच्छा, आप चलें।'

सहसा बाहर से प्रवेश की आवाज़ सुनायी दी, 'पमिली!'

तभी भूपति भादुड़ी घर से निकल बाग़ीचा पार कर सदर गेट से बिलकुल दरवाज़े पर पहुंच गये थे। बाहर जाकर भूपति भादुड़ी ज़रा खड़े हुए। उसके बाद पीछे घूमकर मकान को बहुत बारीकी से देखने लगे। इतना बड़ा मकान! सिर्फ़ बड़ा ही नहीं, फ़ैशनेबुल भी है। यहीं उनका भांजा सुरेन आता था। यहीं सुरेन आकर हर दिन इस लड़की से मिला करता था। अगर मिला ही था तो अब क्यों नहीं मिलता? क्यों नहीं आता?

फिर अच्छी तरह पूरे घर की ओर मुंह बाये देखने लगे। कलकत्ता का एक मन्त्री। मामूली आदमी नहीं। उसके पास कितने लोग आ सकते

हैं ? कितने लोग उससे मिल सकते हैं ? यहाँ आ सकने पर तो आदमी धन्य हो जाता है ! और उसने यहाँ आना बन्द कर दिया। पश्चिम की ओर से एक गाड़ी आ रही थी। उसे देखकर भूपति भादुड़ी हटकर खड़े हो गये। उसके बाद गाड़ी के चले जाते ही फिर चलने लगे पश्चिम की ट्राम-सड़क की ओर।

सहसा एक आदमी को देखकर भूपति भादुड़ी जरा ठिठककर खड़े हो गये। चेहरा जैसे पहचाना हुआ लगा। वह आदमी भी बार-बार भूपति भादुड़ी की ओर देख रहा था।

भूपति भादुड़ी आगे बढ़े। पास जाकर बोले, 'भाई, तुम बड़े पहचाने हुए-से लगते हो ? कहाँ देखा है ?'

लड़का बोला, 'मुझे सुरेन के साथ देखा है। सुरेन के साथ मैं स्कूल में एक ही क्लास में पढ़ता था।'

'तुम्हारा नाम क्या है ?'

'देवेश।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम्हारा ही नाम देवेश है ? तुम्हारा नाम तो मैंने अपने भांजे के मुँह से बहुत बार सुना है। तुम्हारा नाम तो सुना, वह जो मन्त्री पुण्यश्लोक राय हैं, उनके बेटे सुव्रत राय का नाम सुना है, उनकी बेटी पमिली का नाम सुना है। मैं ही सुरेन का मामा हूँ।'

देवेश को उस वक्त बहुत काम थे। दूसरे दिन पूरे कलकत्ता में जुलूस निकलेंगे। बरानगर से शुरू करके हावड़ा, सियालदह, यादवपुर, बहाला सब जगह से जुलूस आकर कलकत्ता की जीवन-यात्रा को थाम देंगे। उनका यही काम था। इस समय खड़े रहकर बातें करने की उसे फुरसत नहीं थी।

बोला, 'एक बहुत जरूरी काम है, अभी तो मैं चलूँ।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'एक बात है भाई, तुमने। मेरा भांजा कई दिन से घर नहीं आ रहा है। कहाँ है, बता सकते हो ? उसकी कोई खबर जानते हो ? मैं तो खोज-खोजकर हैरान हो रहा हूँ।'

देवेश बोला, 'सो वह घर से क्यों चला गया था ? क्या हुआ था ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'कुछ नहीं हुआ, भाई। और होगा भी क्या ? उसके तो बाप-माँ कोई है नहीं। मैं ही बाप हूँ, मैं ही माँ हूँ। यह जरा-सा था, तब से उसे बच्चे की तरह आदमी बनाया। और आज मैं उसका पराया बन गया। तुम ही बताओ भाई, मैं कुछ गलत कह रहा हूँ ?'

देवेश बोला, 'पहले भी तो एक बार वह घर छोड़कर चला गया था ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'उस बार तो मैं उसे रास्ते से पकड़ ले आया था। एक दिन अचानक देखा कि एक शरणार्थी-सी लड़की के साथ घूम-फिर रहा है। उसके बाद से ही मैं उसे अपनी आँखों के आगे रखता। लेकिन आजकल यहाँ नौकरी करने आता था। इन्हीं पुण्यश्लोक बाबू के घर पर। लेकिन उसे नौकरी करने की जरूरत क्या? उसे क्या रुपयों की कमी है, कि अभाव में पड़कर रुपयों के लिए नौकरी करना पड़े? मैं जब तक हूँ उतने दिनों तो उसे कोई फ़िकर नहीं थी।'

देवेश बोला, 'लेकिन आप हमेशा तो रहेंगे नहीं, तब? तब वह क्या करेगा?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो मैं नहीं ही रहूँ, हमारे घर की जो माँ जी हैं, वे तो उसे बहुत रुपये दे जायेंगी। दो घर तो वह पा जायेगा। उस घर की मिलकियत तो वह अकेले ही पा जायेगा। तब? तब उसे नौकरी करने का वक्त मिलेगा?'

देवेश भूपति भादुड़ी को सिर से पाँव तक अच्छी तरह देखने लगा।

बोला, 'लगता है, सुरेन बुद्धू है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'ठीक कहा, भाई। तुम्हारे साथ तो बहुत मेल-मुलाक़ात होती थी, तुमसे उसने कुछ कहा?'

देवेश बोला, 'नहीं।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मिलने पर तुम जरा समझाकर कहना, भाई। मेरी बात तो कभी नहीं सुनी, कभी सुनेगा भी नहीं। तुम उसके यार-दोस्त हो, तुम्हारी बात शायद सुन सकता है। यहीं अभी-अभी पुण्यश्लोक बाबू की लड़की से मुलाक़ात कर आया हूँ। उनकी लड़की पमिली से भी यही बात कह आया। कह दिया, मेरी भलाई की बात वह कभी न सोचे। लेकिन अपनी भलाई की बात तो आदमी समझे! यही बात तुम उसे समझाकर कह देना, भाई।'

बात कहते-कहते अचानक रुकावट पड़ी। कुछ लड़कों ने दीवार पर एक लिखा हुआ कागज़ चिपका दिया। कागज पर कुछ बड़ा-बड़ा लिखा था। भूपति भादुड़ी अच्छी तरह नाक पर चश्मा लगाकर पढ़ने लगे:

'कल तीसरे पहर,
जनता की माँगें मनवाने के लिए,
झुंड-के-झुंड जुलूस में शामिल हों।'

भूपति भादुड़ी बहुत देर तक सारा लिखा हुआ मन लगाकर पढ़ने लगे। बोले, 'यह सब क्या लिखा है, भाई? कैसी माँगें? ये कौन हैं?'

देवेश तब लड़कों से बातें कर रहा था। लौट आकर बोला, 'कल

जुलूम है न ! वही बात है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'कैसा जुलूस ?'

देवेश बोला, 'यह राजनीतिक जुलूस है, राजनीतिक।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो हड़ताल है क्या ? मैंने तो घर में कुछ खरीद-बरीद भी नहीं की है। चलूँ, कल हड़ताल होगी, यह पहले से मालूम होता तो सब काम निबटा लेता। चलूँ, घर चलूँ।'

देवेश बोला, 'नहीं, आप बेकार फिक्र कर रहे हैं, हड़ताल नहीं है...।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'यह एक ही बात है। हड़ताल और जुलूस तो कलकत्ता में लगा ही रहता है। बेटों के लिए कोई काम तो है नहीं, बस, जुलूस और हड़ताल। क्यों भाई, तुम्हें खा-पीकर कोई काम नहीं, बस हड़ताल और हड़ताल ? हारी-बीमारी, डॉक्टर, अस्पताल तमाम लोगों का कितने कामों का नुकसान होता है ? यह सीधी बात कोई समझेगा नहीं ?'

कहते-कहते भूपति भादुड़ी ट्राम-रास्ते की ओर बढ़ गये।

देवेश ने थोड़ी देर उधर ही देखा था। तमाम तरह के लोग दाहर में हैं। होगा, इनकी बातों पर गुस्सा करने से काम नहीं चलेगा।

भीड़ के एक छोटे लड़के ने कहा, 'वह आदमी कौन है, देवेश-दा ? तुम जानते हो ?'

देवेश बोला, 'उनकी बात छोड़ दो। चोर-बागान के रास्ते पर पोस्टर लगा दिये ?'

लड़का बोला, 'वही लगाकर तो यहाँ आ रहा हूँ।'

देवेश बोला, 'तो देख, एक काम कर, इन पुण्यश्लोक बाबू की दीवार पर दो-चार लगा दे, यह इस घर की दीवार पर।'

लड़का बोला, 'लेकिन वहाँ तो पुलिस चक्कर लगा रही है।'

देवेश बोला, 'धत्, तू पुलिस से डरता है ? पुलिस से डरने से कभी पार्टी चलती है ? वह पुलिस तो कांग्रेस की पुलिस है।'

लड़के को जैसे देवेश की बात से बड़ा जोश आया। लेही की बाल्टी और पोस्टर लेकर पुण्यश्लोक बाबू की दीवार की ओर बढ़ गया।

देवेश और न रुका। उसे और बहुत जगहों पर जाना पड़ेगा। आज रात को उसे नींद नहीं आयेगी। ऑफिस से जीप लेकर उसे पूरे कलकत्ता में घूमना होगा। उसके बाद कल सवेरे से ही बाहर के किसान-मजदूरों का आना शुरू होगा। उनके रहने-खाने का इन्तजाम है। उसके बाद है कल का जुलूस। बागबाजार की ओर का देखना हो गया है। श्याम-बाजार के चारों ओर भी पोस्टर लग गये हैं। अब हाथी-बागान होकर चोर-बागान। उसके बाद भवानीपुर। भवानीपुर के बाद कालीघाट। काली-

घाट के बाद ठकुरिया। ठकुरिया की ओर है टुलू। टुलू उधर देखेगी।
देवेश चलते-चलते चोर-बागान की ओर चलने लगा।

भूपति भादुड़ी के चले जाने के बाद ही पमिली बाहर आयी। देखा कि प्रवेश खड़ा है।

बोली, 'यह क्या, तुम तो अभी बाबा के साथ कहीं गये थे, अभी फिर लौट आये!'

प्रवेश बोला, 'वे सज्जन कौन थे?'

पमिली बोली, 'वह सुरेन का मामा है। भला आदमी भांजे को तलाश करने आया था। कई दिनों से वह मिल नहीं रहा है। घर छोड़कर चला गया है...।'

प्रवेश बोला, 'तुमने बता क्यों नहीं दिया, वह कम्युनिस्टों के दल में मिल गया है।'

पमिली बोली, 'मैंने कुछ भी नहीं कहा।'

प्रवेश बोला, 'क्यों, कहा क्यों नहीं? बताने से क्या नुक़सान होता?'

पमिली बोली, 'कहने से क्या सुरेन की इज़्ज़त बढ़ जाती?'

प्रवेश बोला, 'सुरेन की इज़्ज़त कम हो, यह शायद तुम नहीं चाहती हो?'

पमिली बिगड़ उठी। बोली, 'देखो प्रवेश, तुम्हारी बात का मतलब मैं समझती हूँ। लेकिन तुम्हारी तबीयत से तो मैं काम करूँगी नहीं। मेरी भी अपनी इच्छा-अनिच्छा नाम की चीज है। इसे मत भूलो।'

प्रवेश बोला, 'लेकिन पुण्य-दा की इच्छा नाम की भी तो एक चीज है, वह क्यों भूल जाती हो?'

पमिली बोली, 'बाबा की दुहाई देकर अपने मन के छुटपन को छिपाने की कोशिश न करो प्रवेश, यह दब्बू आदमियों की निशानी है।'

प्रवेश बोला, 'यह दब्बू, यह डरपोक आदमी कल क्या करेगा, देख लेना। तब समझोगी कि मैं दब्बू हूँ या सुरेन दब्बू है!'

पमिली ने पूछा, 'इसके मतलब?'

प्रवेश बोला, 'उसके मतलब आज नहीं बताऊँगा। कल ही समझ

सकोगी। और परसों के अखबार में देख सकोगी। जो जुलूस बनाकर लाट-साहब के घर की ओर जाकर छाती फुला नारे लगाते हैं उन्हें काबू में करने का हथियार कांग्रेस के पास तैयार है।'

पमिली बोली, 'तो जो तबीयत हो वह तुम लोग करो न! लेकिन उसके साथ उस बेचारे का क्या सम्बन्ध है?'

प्रवेश बोला, 'सम्बन्ध नहीं है, यह क्यों कह रही हो? इतने दिनों तक पुष्प-दा तो डेढ़ सौ रुपये महीना देते आये; कृतज्ञता नाम की भी एक चीज़ दुनिया में है!'

पमिली बोली, 'डेढ़ सौ रुपया बाबा के लिए क्या होता है? मैं तो कितने ही दिन बार में जाकर डेढ़ सौ रुपये उड़ा आयी हूँ। ठहरो, मैं बाबा से जाकर कहती हूँ।'

लेकिन पमिली के जाने के पहले ही ऊपर से रघु ने आकर प्रवेश से कहा, 'बाबू आपको ज़रा बुला रहे हैं।'

प्रवेश फिर न रुका। ज़ीने से ऊपर चढ़ गया। एकदम पुष्पश्लोक बाबू की निजी बैठक में जा पहुँचा। पुष्पश्लोक बाबू प्रवेश की ही राह देख रहे थे। प्रवेश के आते ही एक पुलिन्दा उसके हाथों में देकर बोले, 'यह लो, होशियारी से रख लेना।'

प्रवेश ने पैंट की जेब में पुलिन्दा भरकर पूछा, 'इसमें कितने हैं?'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'गोयनका जी चुनाव के खर्च के हिसाब से बहुत-सा रुपया दे गये थे। उसी में से ये रुपये दिये हैं। इनमें एक रुपये, पाँच रुपये के नोट मिलाकर कुल पाँच हज़ार रुपये हैं।'

'ठीक है,' कहकर प्रवेश चला आ रहा था।

लेकिन पमिली ठीक उसी वक़्त आकर कमरे में घुसी।

पुष्पश्लोक बाबू लड़की को आते देख ताज्जुब में पड़ गये। बोले, 'क्या हुआ, पमिली? तुमने खाना खा लिया?'

पमिली ने इस बात का जवाब न देकर कहा, 'बाबा, आज उस सुरेन का मामा उसकी तलाश में आया था। सुरेन की याद है न?'

पुष्पश्लोक बाबू को इस वक़्त बेकार बात सुनने का वक़्त न था। बोले, 'वह सब बात मैं बाद में सुनूँगा। तुम आज क्लब नहीं गयी?'

पमिली बोली, 'नहीं, आज मैं सिनेमा गयी थी।'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'सो सिनेमा जाओ तो नुकसान नहीं है, अच्छा है, लेकिन तुम क्लब क्यों नहीं गयी? मैंने तुमसे बार-बार कहा है कि शाम को क्लब जाकर वक़्त काटना। मैं अपने काम में व्यस्त रहता हूँ, हमेशा तुम्हारी ख़बर नहीं रख सकता, अकेले-अकेले घर में बैठे क्या करोगी?

ट के बाद ठकुरिया। ठकुरिया की ओर है टुलू। टुलू उधर देखेगी।
देवेश चलते-चलते चोर-बागान की ओर चलने लगा।

भूपति भादुड़ी के चले जाने के बाद ही पमिली बाहर आयी। देखा कि प्रवेश खड़ा है।

बोली, 'यह क्या, तुम तो अभी बाबा के साथ कहीं गये थे, अभी फिर लौट आये!'

प्रवेश बोला, 'वे सज्जन कौन थे?'

पमिली बोली, 'वह सुरेन का मामा है। भला आदमी भांजे को तलाश करने आया था। कई दिनों से वह मिल नहीं रहा है। घर छोड़कर चला गया है...।'

प्रवेश बोला, 'तुमने बता क्यों नहीं दिया, वह कम्युनिस्टों के दल में मिल गया है।'

पमिली बोली, 'मैंने कुछ भी नहीं कहा।'

प्रवेश बोला, 'क्यों, कहा क्यों नहीं? बताने से क्या नुक़सान होता?'

पमिली बोली, 'कहने से क्या सुरेन की इज्ज़त बढ़ जाती?'

प्रवेश बोला, 'सुरेन की इज्ज़त कम हो, यह शायद तुम नहीं चाहती हो?'

पमिली बिगड़ उठी। बोली, 'देखो प्रवेश, तुम्हारी बात का मतलब मैं समझती हूँ। लेकिन तुम्हारी तबीयत से तो मैं काम करूँगी नहीं। मेरी भी अपनी इच्छा-अनिच्छा नाम की चीज है। इसे मत भूलो।'

प्रवेश बोला, 'लेकिन पुण्य-दा की इच्छा नाम की भी तो एक चीज है, यह क्यों भूल जाती हो?'

पमिली बोली, 'बाबा की दुहाई देकर अपने मन के छुटपन को छिपाने की कोशिश न करो प्रवेश, यह दब्बू आदमियों की निशानी है।'

प्रवेश बोला, 'यह दब्बू, यह डरपोक आदमी कल क्या करेगा, देख लेना। तब समझोगी कि मैं दब्बू हूँ या सुरेन दब्बू है!'

पमिली ने पूछा, 'इसके मतलब?'

प्रवेश बोला, 'इसके मतलब आज नहीं बताऊँगा। कल ही सम

सकोगी। और परमों के अखबार में देख सकोगी। जो जुलूस बनाकर लाट-साहब के घर की ओर जाकर छाती फुला नारे लगाते हैं उन्हें क़ाबू में करने का हथियार कांग्रेस के पास तैयार है।'

पमिली बोली, 'तो जो तबीयत हो वह तुम लोग करो न ! लेकिन उसके साथ उस बेचारे का क्या सम्बन्ध है ?'

प्रवेश बोला, 'सम्बन्ध नहीं है, यह क्यों कह रही हो ? इतने दिनों तक पुण्य-दा तो डेढ़ सौ रुपये महीना देते आये; कृतज्ञता नाम की भी एक चीज़ दुनिया में है !'

पमिली बोली, 'डेढ़ सौ रुपया बाबा के लिए क्या होता है ? मैं तो कितने ही दिन बार में जाकर डेढ़ सौ रुपये उड़ा आयी हूँ। ठहरो, मैं बाबा से जाकर कहती हूँ।'

लेकिन पमिली के जाने के पहले ही ऊपर से रघु ने आकर प्रवेश से कहा, 'बाबू आपको ज़रा बुला रहे हैं।'

प्रवेश फिर न रुका। जीने से ऊपर चढ़ गया। एकदम पुण्यश्लोक बाबू की निजी बैठक में जा पहुँचा। पुण्यश्लोक बाबू प्रवेश की ही राह देख रहे थे। प्रवेश के आते ही एक पुलिंदा उसके हाथों में देकर बोले, 'यह लो, होशियारी से रख लेना।'

प्रवेश ने पैंट की जेब में पुलिंदा भरकर पूछा, 'इसमें कितने हैं ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'गोयनका जी चुनाव के खर्च के हिसाब में बहुत-सा रुपया दे गये थे। उसी में से ये रुपये दिये हैं। इसमें एक रुपये, पाँच रुपये के नोट मिलाकर कुल पाँच हज़ार रुपये हैं।'

'ठीक है,' कहकर प्रवेश चला आ रहा था।

लेकिन पमिली ठीक उसी वक़्त आकर कमरे में घुसी।

पुण्यश्लोक बाबू लड़की को आते देख ताज्जुब में पड़ गये। बोले, 'क्या हुआ, पमिली ? तुमने खाना खा लिया ?'

पमिली ने उस बात का जवाब न देकर कहा, 'बाबा, [illegible] का मामा उसकी तलाश में आया था। सुरेन की याद है न ?'

पुण्यश्लोक बाबू को उस वक़्त बेकार बात सुनने का [illegible]।

बोले, 'वह सब बात मैं बाद में सुनूँगा। तुम [illegible]'

पमिली बोली, 'नहीं, आज मैं सिनेमा नहीं जा[illegible]।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मो सिनेमा जाओ तो [illegible] है, लेकिन तुम क्लब क्यों नहीं गयी ? मैंने तुमसे [illegible] को क्लब जाकर वक़्त काटना। मैं अपने [illegible] तुम्हारी ख़बर नहीं रख सकता, [illegible]

क्लव हो आना ही अच्छा है।'

पमिली बोली, 'वाह रे, मेरी वात सोचने को किसने कहा ?'

पुण्यश्लोक वावू प्रवेश की ओर देखकर बोले, 'अब तुम क्यों खड़े हो ? तुमको वहुत काम हैं, तुम निकल पड़ो...।'

प्रवेश निकल गया। सचमुच उसे वहुत काम थे। आज रात में ही सारा कलकत्ता घूमना पड़ेगा। हर वस्ती में जाना पड़ेगा। सिर्फ़ वहू-वाज़ार घूमने से ही आधा काम हो जायेगा। उसके वाद राजा-वाज़ार। राजा-वाज़ार में भी उसकी चौकी है। ब्रिटिश ज़माने में भी वहाँ चौकी थी। पहले वहाँ गिरहकट, जेवकतरे घूमते थे। पकड़े जाने पर जेल काटते थे। खून-खरावी के अपराध में उनमें से वहुत-से पकड़े भी जाते थे। पकड़े जाने पर वहुतों को फाँसी की सज़ा भी होती थी। लेकिन उससे डरकर किसी ने अपना रोज़गार नहीं छोड़ा। उसके वाद जव आज़ादी आयी तो वे भी आज़ाद हो गये। तव कांग्रेस सरकार की जन-कल्याण-योजनाओं में किसी को शराव की दूकान का लायसेंस मिला, किसी को मिला मांस की दूकान का लायसेंस। सभी तरह-तरह की सुविधाएँ पाकर कलकत्ता शहर में वे जमकर वैठ गये। अव उन्हें अँधेरे में मुँह छिपाकर नहीं घूमना पड़ता। प्रकाश्य रूप से दिन के प्रकाश में छाती फुलाकर घूमना शुरू कर दिया।

वाहर आते ही दिखायी पड़ा तमाशा।

प्रवेश गाड़ी का ब्रेक खींचकर रुक गया। पुण्यश्लोक वावू के घर की दीवार पर लगे पोस्टर देखे। लाल-पीले वंगला अक्षरों में वड़ा-वड़ा लिखा हुआ है :

'कल तीसरे पहर,
जनता की माँगें पूरी कराने को,
झुंड-के-झुंड जुलूस में शामिल हों।'

पोस्टरों को देखकर प्रवेश गाड़ी से उतरा। सारी दीवार भर दी थी। दरवान को पुकारा। दरवान के पास आते ही पूछा, 'यह सव किसने लगाये, दरवान ? कव लगाये ?'

दरवान ने भी देखा। देखकर अचम्भे में पड़ गया। हिन्दी भाषी दरवान भाषा ही न समझ सका। सिर्फ़ यह समझा कि कोई खराव वात किसी ने लिख दी है।

वोला, 'हुज़ूर, मैं तो कुछ नहीं जानता।'

प्रवेश फिर घर के अन्दर गया। उसके वाद ज़ीने से ऊपर जाकर पुण्यश्लोक वावू के कमरे के सामने जाते ही सुन पाया कि मानो पमिली अपने पिता से कुछ कह रही है।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन तुम उन सब मामलों में क्यों पड़ती हो, पद्मिनी ? सारे देश की भले-बुरे की बात लेकर मुझे दिमाग लगाना पड़ता है, उसमें एक व्यक्ति मरे या जिये, वह लेकर सोचने का वक्त मुझे कहाँ है ? उसके सिवा मैंने तो तुम्हारी बात पर सब तरह की सुविधाएँ उसे दी थीं। उसे मैं डेढ़ सौ रुपये महीने क्या फालतू में देता था ? सिर्फ इसलिए कि तुमने कहा था। लेकिन देखो, राजनीति की तरह के मामले में दया-माया के लिए कोई जगह नहीं है। पार्टी मुझे जो हुक्म देगी वह मानने के लिए मैं बाध्य हूँ। सिर्फ मैं ही नहीं, हमारे मुख्यमन्त्री तक उसे मानने को बाध्य हैं।'

प्रवेश ने और देर न की। कमरे में घुस गया।

पुण्यश्लोक बाबू प्रवेश को फिर वापस आते देखकर आश्चर्य में आ गये। बोले, 'अब क्या हुआ ? क्यों लौट आये ?'

प्रवेश बोला, 'पुण्य-दा, देख रहे हैं ? वे आपके घर की दीवार तक पर पोस्टर लगा गये हैं।'

'कैसे पोस्टर ?'

'कल के जुलूस के पोस्टर। लिखा है—जनता की माँगें मनवाने के लिए झुंड-के-झुंड लोग जुलूस में शामिल हों।'

पुण्यश्लोक बाबू खफा हो गये। बोले, 'मेरी दीवार पर ? ड्यूटी पर कोई पुलिस नहीं है ?'

प्रवेश बोला, 'किसी को तो घर के सामने नहीं देखा।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हालत देखो ! पुलिस डिपार्टमेंट तक कम्युनिस्ट हो गया। कोई दिल लगाकर काम नहीं करता। मैं अभी पुलिस-कमिश्नर को टेलीफोन कर रहा हूँ। सब पोस्टरों को मेरे नौकरों से उखड़वा दो। क्या ताज्जुब है, इन लोगों ने मेरे घर पर पोस्टर लगाये हैं ! इतना साहस !'

कहकर उन्होंने टेलीफोन का रिसीवर उठा लिया।

प्रवेश झटपट फिर जिस तरह आया था, उसी तरह जीने से नीचे उतर गया।

भूपति भादुड़ी का माधव कुंडू सेन के घर में घुसते ही अचानक एक अनजान आदमी से सामना हो गया।

बोले, 'कौन हो ? किससे मिलना है ? कहाँ से आ रहे हो ?'

आदमी सहम गया। जवाब देने में उसे जरा देर लगी।

बहादुरसिंह दरवाजा खोले खड़ा था। बोले, 'बहादुर, यह कौन है ?'

छोकरा आदमी, पर कलफ़ लगी धोती और शरीर पर छींट की शर्ट पहने था। आदमी भूपति भादुड़ी को देखकर जैसे कुछ संकुचित हो गया हो।

भूपति भादुड़ी ने फिर पूछा, 'इस घर में कैसे आये ?'

छोकरा बोला, 'मैं बूढ़े बाबू से मिलने आया हूँ।'

'बूढ़े बाबू से ? इतनी रात को ? बूढ़े बाबू तुम्हारे कौन हैं ?'

छोकरा बोला, 'मेरे काका हैं। सुना है, वे बहुत बीमार हैं।'

भूपति भादुड़ी ने छोकरे को फिर एक बार सिर से पैर तक देखा। बोले, 'तुम रहते कहाँ हो ?'

छोकरा बोला, 'कांचरापाड़ा में...।'

भूपति भादुड़ी ने फिर पूछा, 'तुम्हारा नाम ?'

छोकरा बोला, 'सुधन्य, सुधन्य दत्त।'

भूपति भादुड़ी को फिर भी जैसे कुछ सन्देह हुआ—इतनी रात को लड़का मिलने क्यों आया है !

बोले, 'लेकिन इतनी रात में तुम मिलोगे, अब तो वे सो गये हैं। इस वक़्त मुलाक़ात क्या होगी ?'

सुधन्य बोला, 'मुझे अचानक खबर मिली न, इसी से आने में देर हुई, सबेरे ख़बर मिलने से और पहले आता...।'

असल में उस वक़्त बूढ़े बाबू सचमुच सो ही गये थे। लेकिन नींद पक्की नहीं थी। कोई भी काम-काज न रहने पर आदमी क्या करे ? लेट जायेगा। लेटे-लेटे जमीन-आसमान की बातें सोचना ही अच्छा है। बूढ़े बाबू कई दिनों से सबेरे-सबेरे कमरे में घुस जाते। कमरा—माने उनका एकमात्र ठौर-ठिकाना ! सिर पर एक छत और चारों ओर चार दीवारें होने से अगर उसे कमरा कहा जाये तो, वह कमरा भी न था। न तो बिस्तर, न गद्दा मसहरी। और न ही एक हरीकेन बत्ती। तमाम कलकत्ता में जब चारों ओर तरह-तरह के आन्दोलन हैं, तरह-तरह की बातें चल रही हैं, तब बूढ़े बाबू सारी दुनिया से कटे रहकर चुपचाप परलोक की ओर टकटकी लगाये वक़्त बिता देते।

ठाकुर एक दिन आकर पुकार रहा था : 'कहाँ हो बूढ़े बाबू, आप खाना खायेंगे नहीं ?'

जिन बूढ़े बाबू को खाने का इतना लोभ था, खाने के लिए दिन-रात छटपटाते थे, जरा-सा भात या दाल कम होने से रसोई-घर सिर पर उठा

लेते, एक गमछे के लिए बार-बार मैनेजर बाबू के पास प्रार्थना करते, माँ जी के पास तक पहुँचकर रोना रोया था, भाजे बाबू के निकट तक जाकर अर्ज की थी, उन्ही बूढ़े बाबू को आजकल कोई भी किसी तरह का उत्साह नहीं रहा था। खाने को मिले तो मिले, खाने को कुछ न मिले तब भी कुछ न कहते। 'मैं अब इस घर का कौन हूँ, मैं तो उस तरह का कोई नहीं हूँ, क्यों मुझे लेकर सोचते कोई परेशान हों ? जितने दिनों तक जिन्दा हूँ उतने दिन यहाँ रहूँगा, उसके बाद मैं देखने नहीं आऊँगा कि मर जाने पर तुमने मुझे मरघट ले जाकर जलाया या वहाँ फेंक दिया जहाँ मरे जानवर फेंके जाते हैं !'

सिर्फ ठाकुर ही नहीं, दुखमोचन भी आँगन में झाड़ू लगाते-लगाते कमरे में झाँककर देख आता कि बूढ़े बाबू जिन्दा हैं या मर गये।

बूढ़े बाबू जागते रहते तो पूछते, 'कौन ?'

गले की 'चीं-चीं' आवाज सुनकर दुखमोचन समझ जाता कि बूढ़े बाबू जिन्दा हैं।

कहता, 'मैं हूँ बूढ़े बाबू, मैं...।'

बूढ़े बाबू कहते, 'ओ, शायद दुखमोचन है ? जरा पानी देना भाई, बहुत प्यास लगी है...।'

दुखमोचन कहता, 'मेरे हाथ का छुआ पानी क्या पियेंगे, बूढ़े बाबू ? मैं तो जमादार हूँ।'

बूढ़े बाबू जरा हँसने का प्रयत्न करते। वह हँसी भी रोने की-सी सुनायी देती। कहते, 'धत्, तू भी अजीब है, प्यास के निकट क्या जात-कुजात चलती है, रे बाबा ! मैं कह रहा हूँ कि प्यास के मारे मरा जा रहा हूँ और तू कह रहा है कि तू जमादार है। दे बाबा, एक गिलास पानी ला दे। पहले जिन्दा रहूँ, उसके बाद तेरी जात के बारे में सोचूँगा...।'

सो इसी तरह बहुत दिनों से चल रहा था। कोई देखने भी न आता। कोई उनकी खोज भी न लेता। बीच-बीच में बूढ़े बाबू को पुरानी बातें याद आतीं। याद आते ही कलेजा डर से काँप उठता। उसके बाद फिर उन बातों के बारे में न सोचते। दिन-भर और रात-भर कान चौकन्ने रहते।

उस दिन सहसा किसी ने पुकारा। जैसे पहचानी आवाज हो।

बूढ़े बाबू इतनी रात को भी सोये नहीं थे।

'मैं सुधन्य हूँ, काका बाबू !'

बूढ़े बाबू का दरवाजा कभी बन्द नहीं रहता था। कमरा अँधेरा था। लेकिन सुधन्य पहले भी कई बार आ चुका था। पहचाना रास्ता था, जाना हुआ कमरा।

बूढ़े बाबू बोले, 'आ, आ बैठ...।'

सुधन्य तख्त के किनारे जाकर बैठ गया। बोला, 'क्या हाल है?'

बूढ़े बाबू बोले, 'हमारा और हाल? मेरा अब उठ जाना ही अच्छा है। तू कैसे है? बहू कैसे है?'

सुधन्य बोला, 'सभी अच्छे हैं। हमारे लिए तुम्हें सोचने की ज़रूरत नहीं है। दवा तुमने खायी थी?'

बूढ़े बाबू बोले, 'कौन खिलाये, बताओ तो। जब याद आयी, खा लिया...।'

सुधन्य बोला, 'वाह रे वाह, तुम्हारे लिए मैं डॉक्टर लाया, दवा लाया, कितने रुपये खर्च किये, और तुमने दवा नहीं खायी?'

बूढ़े बाबू बोले, 'मेरी फ़िकर मत कर रे, मेरे लिए बेकार और रुपये भी मत खर्च करना, मैं और कितने दिन का मेहमान हूँ!'

सुधन्य बोला, 'यही तो तुममें खराबी है काका बाबू, तुम इतना डर क्यों रहे हो? तुमको जिन्दा रहना ही होगा। नहीं तो मैं काहे के लिए हूँ?'

बूढ़े बाबू बोले, 'आदमी क्या हमेशा ज़िन्दा रहता है, रे सुधन्य? जब उसके मरने का समय होता है तब उसे कोई ज़िन्दा नहीं रख सकता।'

सुधन्य बोला, 'तुम कह क्या रहे हो, काका बाबू? तुमको मैं जिन्दा रखूंगा ही। तुम कुछ फ़िकर मत करो।'

बूढ़े बाबू अँधेरे में ही हँसे। बोले, 'उस तरह ज़िन्दा रहना भी पाप है, रे...।'

'तुम चुप रहो। वह सब बात मेरे सामने मत कहो। तुम्हें जो बनियान खरीदकर दी थी वह पहनी?'

बूढ़े बाबू बोले, 'पहनी।'

'तो इस वक़्त नंगे बदन क्यों लेटे हो?'

बूढ़े बाबू बोले, 'वह बहुत मैली हो गयी थी। धोयी नहीं गयी।'

'धोयी क्यों नहीं गयी? मैं जो रुपया दे गया था तुम्हारे दुखमोचन को। वह तुम्हारा क्या काम-वाम नहीं कर जाता है?'

बूढ़े बाबू बोले, 'उसके लिए तू उससे कुछ मत कहना। आखिर तेरे जाने के बाद मुझे तंग करेंगे।'

'सुधन्य बोला, 'यही तो तुम में खराबी है! तुम जिन्दगी-भर डरते ही रहे। इसीलिए तुम्हें कोई नहीं मानता।'

बूढ़े बाबू बोले, 'तू बुढ़ापे में मुझे सिखा मत, सुधन्य। मेरा यह जीवन इसी तरह कट गया। अगले जन्म में अगर भगवान की दया हुई तो फिर

देखा जायेगा।'

उस वक़्त रात बहुत हो गयी थी। बूढ़े बाबू बोले, 'इतनी रात को तू क्यों आया, बाबा? इस वक़्त काँचरापाड़ा कैसे लौटेगा?'

सुधन्य बोला, 'घर पहुँचते ही खबर मिली कि तुम्हारी बीमारी बढ़ गयी है। इसी से रुक न सका। साथ-ही-साथ चला आया।'

'अब लौटेगा कैसे?'

'पैदल।'

'पैदल माने? तू काँचरापाड़ा पैदल जायेगा?'

सुधन्य बोला, 'बस न मिली तो ट्रेन से जाऊँगा।'

उसके बाद थोड़ा रुककर बोला, 'आज तुम्हारे मैनेजर बाबू से मुलाक़ात हो गयी, पता है?'

'कहाँ?'

सुधन्य बोला, 'बेटा मुझे बिलकुल पहचान ही न पाया। इतने दिनों से आ रहा हूँ, फिर भी नहीं पहचान पाया। बिलकुल अनजान बन गया, समझे?'

बूढ़े बाबू बोले, 'उनसे तू कुछ मत कहना। नहीं तो मुझ पर डाँट पड़ेगी। मैं तो मैनेजर बाबू की आँखों का काँटा हूँ।'

सुधन्य बोला, 'मैं उसकी आँखों का काँटा निकाले देता हूँ, ठहरो न, मैं उसका क्या करता हूँ, वही देखना। उसने सोच रखा है कि मुझे कुछ मालूम नहीं है।'

बूढ़े बाबू बोले, 'मैनेजर बाबू का भांजा भी घर से चला गया है, यह पता है?'

सुधन्य मानो खुशी से उछल पड़ा। बोला, 'चला गया! सच कह रहे हो?'

बूढ़े बाबू बोले, 'हाँ।'

'और वह औरत? वही सुखदा या क्या नाम है, वह?'

बूढ़े बाबू बोले, 'उसका कुछ मालूम नहीं।'

'तो वह जमाई? वही हरामजादा कालीकान्त विश्वास?'

बूढ़े बाबू बोले, 'मुझसे तू यह सब बातें मत पूछ बाबा, मुझे इन सबकी खबर नहीं है। मुझमें इतनी खबर रखने की ताक़त नहीं है, रे।'

सुधन्य बोला, 'रहने दो, तुम्हें वह सब खबर न रखनी होगी। मैं खुद ही सब पता लगा लूँगा। मैं उन्हें उखाड़कर ही छोड़ूँगा, यह तुमसे कहे देता हूँ।'

बूढ़े बाबू बोले, 'मेरे मरने के बाद तू जो चाहे सो करना, उसके पहले

तुझे कुछ नहीं करना है।'

सुधन्य बोला, तुम्हें जिन्दा रहना ही होगा, काका बाबू। तुम न रहे तो मेरा सब ढह जायेगा। तुमको मैं जिन्दा रखूंगा ही। नहीं तो मैं एकदम मारा जाऊंगा।'

अचानक बाहर जैसे आवाज़ हुई हो। जैसे आँगन में कोई गाड़ी आ रुकी हो।

सुधन्य बोला, 'गाड़ी की आवाज़ सुनायी दे रही है, काका बाबू ? लगता है, जैसे कोई गाड़ी से मकान में आया है। इतनी रात को कौन आया है, बताओ तो ?'

बूढ़े बाबू ने उस बात का जवाब न दिया। इस घर में गाड़ी से आये या पैदल आये, उसके लिए परेशान होने को बूढ़े बाबू के तन-मन में ताक़त नहीं है। लेकिन सुधन्य को तो वैसा नहीं है। वह छोकरा है। उसके दिमाग़ में बहुत चीज़ें घूमती हैं। उसने कभी बहुत सुख के दिन देखे थे। अब फिर चरम दुःख के दिन भी आँखों के आगे देख रहा है। अब मानो दुख के समुद्र में डूबते-डूबते एक तिनके का सहारा लेकर जीना चाहता है।

बाहर आँगन की ओर कान लगाकर उसे जैसे कुछ सन्देह हुआ।

बोला, 'डॉक्टर है क्या ?'

बूढ़े बाबू ने उस बात का जवाब न दिया।

उसके बाद सुधन्य खुद ही बोला, 'जाऊँ, ज़रा दूर से देख आऊँ।'

कहकर कमरे से निकल गया। उसके बाद थोड़ी देर बाद लौटकर बोला, 'हाँ, जो कहा वही ठीक है। माँ जी को देखने के लिए डॉक्टर आया है।'

बूढ़े बाबू बोले, 'बीमारी ? फिर तबीयत ख़राब हुई है ?'

सुधन्य बोला, 'वह होगा नहीं ? मैं तो रोज़ ठन-ठन्न के काली-बाड़ी में अर्घ्य-पूजा कर रहा हूं, काका बाबू ! जय माँ काली !'

कहकर सुधन्य हाथ जोड़कर बहुत देर तक माथे से लगाये रहा।

बोला, 'बहुत रुपया माँ काली के पीछे खर्च किया है काका बाबू, तुम क्या समझते हो कि सब पानी में बह जायेगा ? कहना चाहते हो कि देवी-देवता झूठ हैं ? माँ जी के मरते ही तुम यह देख लेना। इतना पाप क्या ढँका रहता है ? पाप ठीक नहीं होता, काका बाबू। पाप कभी ठीक नहीं होता। पाप और पारा किसी दिन भी फूटकर निकल आयेंगे, नहीं तो देवी-देवता झूठे पड़ जायेंगे...।'

बूढ़े बाबू को ये बातें अच्छी नहीं लग रही थीं।

बोले, 'ये बातें तू मत कह, सुधन्य। मुझे सुनकर बहुत कष्ट होता है।'

सुधन्य बोला, 'हाँ कष्ट, ऐसा कष्ट होना अच्छा है। पता है, मैंने उस दिन अपनी कुंडली दिखायी थी; ज्योतिषी ने बताया था, अब मेरे अच्छे दिन आ रहे हैं।'

फिर भी बूढ़े बाबू ने कोई जवाब नहीं दिया।

सुधन्य बोला, 'तो अब उठूँ, काका बाबू। कल फिर कलकत्ता में गड़बड़ होगी।'

'कैसी गड़बड़ होगी ?'

सुधन्य बोला, 'सड़क पर आते-आते देखा था कि दीवारों पर तमाम पोस्टर लगे हैं, जुलूस निकलेगा।'

'कैसा जुलूस, रे ?'

सुधन्य बोला, 'और कैसा ? वही पार्टी का जुलूस। मतलब है बस और ट्राम की मौत ! आने के वक्त ऑफिस से पैदल लौटना पड़ेगा। इनके मारे सारा काम-काज बन्द हो जाता है। अगर हो सका तो परसों फिर आऊँगा।'

कहकर सुधन्य सचमुच अब उठ पड़ा।

बोला, 'तो दवाई याद कर ठीक से खाना। समझे, काका बाबू ? उसे खरीदने में बहुत रुपये लगे हैं। डॉक्टर को भी बहुत-सा रुपया दिया है। माँ काली के मन्दिर में भी बहुत-सा रुपया पूजा में चढ़ाया है। जय माँ काली !'

कमरे के बाहर आकर सुधन्य ने देखा कि उस वक्त भी आँगन की सारी बत्तियाँ जल रही हैं, और गाड़ी उस वक्त भी वहीं खड़ी है। एक बार मन में आया कि पता लगा ले कि माँ जी की हालत कैसी है। लेकिन बहुत देर करने से उधर वापसी की ट्रेन न मिलेगी।

'कौन ? आप कौन हैं ?'

सुधन्य ने नज़र उठाकर देखा कि वही लफंगा जमाई है। जमाई उसी की ओर बढ़ा आ रहा है। लुंगी की तरह कपड़ा पहने है। शरीर पर बिना बाँहों की बनियान है। जमाई मानो अच्छा-बुरा खाकर इसी बीच मोटा-ताजा बलि का बकरा बन रहा है। हलकी-हलकी-सी तोंद भी निकल आयी है।

सुधन्य बोला, 'मैं बूढ़े बाबू का भतीजा हूँ।'

'बूढ़े बाबू ? बूढ़े बाबू का भतीजा है तो इतनी रात को यहाँ क्यों ? इरादा क्या है ?'

सुधन्य बोला, 'काका बाबू की बीमारी सुनकर देखने आया था।'

'बीमारी थी तो क्या हुआ ? इतना भात खाने से बीमार न दूसरे का घर पाकर दिन-रात बस ठूँसेंगे ही, बीमारी तो होगी ही

काका बाबू को यहाँ से अपने पास ले जाओ न ! यहाँ क्यों रख छोड़ा है ?'

सुधन्य बोला, 'शरीर की इस हालत में किस तरह ले जाऊँ ? अभी तो हिलने-डुलने से रोगी जा सकता है।'

कालीकान्त बोला, 'तो बूढ़े होने पर तो सभी मर जायेंगे। बूढ़े आदमी को जिन्दा रखने से फ़ायदा क्या ? सिर्फ़ गृहस्थ के भात की बरबादी ! उन्हें तुम यहाँ से ले जाओ।'

सुधन्य को बड़ा गुस्सा आया। मन में आया कि एक थप्पड़ मारकर उसका मुँह टेढ़ा कर दे। लेकिन गुस्सा पीकर चुप रहा।

कालीकान्त बोला, 'फिर अगर किसी दिन इस घर में आते देखा तो मैं तुम्हें देख लूँगा, अब जाओ...।'

सुधन्य बोला, 'भला मैं अपने काका को देखने न आऊँगा ?'

कालीकान्त तेज़ी से लपककर सामने आया। बोला, 'न, फिर कभी मत आना।'

सहसा अन्दर की ओर से डॉक्टर साहब निकले। साथ में भूपति भादुड़ी। दोनों आपस में बात करने में लगे थे। उनकी बातें सुनकर सुधन्य को लगा, जैसे दोनों बहुत परेशान हैं। कालीकान्त भी उधर बढ़ गया। जाकर पूछा, 'क्या देखा, डॉक्टर बाबू ?'

सुधन्य फिर वहाँ न रुका। रुकने की तबीयत हो रही थी, लेकिन इधर घर जाने में भी देर हुई जा रही थी। उसके सिवा बुढ़िया तो मर के भी नहीं मर रही थी। मरने की तो रोज़ ही बीमारी लगी थी, और रोज़ ही जी उठती है। पता नहीं, क्या होगा ? काली-बाड़ी में इतनी पूजा चढ़ाने पर भी कोई फ़ायदा नहीं हो रहा है !

सुधन्य पाँव-पाँव कर ट्राम की सड़क पर जा पहुँचा।

पुण्यश्लोक बाबू के घर की दीवार के पोस्टर उखाड़ फिकवाकर प्रवेश गाड़ी लेकर सड़क पर आया। पॉकेट के अन्दर वे रुपये होशियारी से रखे था। बहुत दिनों के बाद फिर इस लाइन में उतरना पड़ा है।

प्रवेश गाड़ी लेकर बहू-बाज़ार की एक सड़क के सामने आकर रुका। उसके बाद गाड़ी लॉक कर एक पतली गली में जा घुसा।

उसके बाद एक घर के आगे जाकर पुकारा, 'बादल, ओ बादल !'

कोई जवाब नहीं।

प्रवेश ने फिर पुकारा, 'बादल, ए बादल !'

आजकल इन लोगों ने रात में घर लौटकर सोना सीख लिया है, नहीं तो पहले ये लोग निशाचर थे—यही बादल वगैरह। दिन के वक़्त ये

मिलते थे, लेकिन रात में कभी नहीं। रात को ही उनका सारा कारोबार होता था।

प्रवेश सेन बहुत दिनों का इनसे परिचित था। इन लोगों के साथ उसकी बहुत जान-पहचान थी। काम-धाम के वक़्त इन्हें हाथ में रखने के लिए पुण्यश्लोक बाबू की ओर से कभी बहुत-सा रुपया इन लोगों को दे गया था। तब अँग्रेज़ों का राज था। पार्टी के पीछे इन्हीं लोगों का सहारा था। ज़रूरत होने पर इन लोगों ने पार्टी के लीडरों को पुलिस के चंगुल से बचाया था। फिर ज़रूरत होने पर गवर्नमेंट के माल की लूट-पाट भी की थी। तब यही जनसाधारण थे। जनसाधारण ब्रिटिश शासन को पसन्द नहीं करता था—इन लोगों से लूटपाट कराकर यह सिद्ध किया जाता। साधारण लोग बन्दूक के डर से भाग आते, पर ये निडर थे। दो रुपयों के लालच से ये पुलिस का खून करने से भी नहीं हिचकते थे।

उसके बाद जब अँग्रेज़ चले गये तो ये लोग बेकार हो गये।

तब ये प्रवेश सेन के पास आये।

बोले, 'अब हम क्या करें, हुज़ूर? हमें कुछ काम दें।'

काम न दिया जाये तो ये फिर सेंध लगायेंगे, जेब काटेंगे, चोरी या छीना-झपटी करेंगे। लेकिन ज़्यादती करेंगे तो गवर्नमेंट की ही बदनामी होगी। पुलिस भी बदनाम होगी। पार्टी कष्ट में पड़ जायेगी। इन्हें अभी काम न दिया गया तो ये लोग गड़बड़ मचा देंगे। जो दैत्य उनकी खुद ही की सृष्टि थी वह दैत्य अब इनकी ही गर्दन पर बैठकर इनका ही खून चूसेगा।

तब सलाह कर निश्चय हुआ कि इन्हें काम देना होगा। क्या काम? सबको एक-एक कर लायसेंस दे दो। किसी को मिला टैक्सी का परमिट। किसी को शराब की दुकान, किसी को मांस की दुकान, किसी को बकरे का गोश्त बेचने का लायसेंस। उसी से उस वक़्त पार्टी की इज़्ज़त बची।

इस तरह बहुत अच्छा चल रहा था। बड़ी मज़बूती से तब पुण्यश्लोक बाबू आदि बहुत दिनों से बैठे थे। प्रायः मौरूसी पट्टे की ज़मींदारी थी। पार्टी के मालिक को खुश रखो, कोई-न-कोई हीला निकल ही आयेगा। मंत्रित्व हो, नहीं तो नौकरी, या एक्सपोर्ट-इंपोर्ट का लायसेंस! पार्टी को अपना दान-छत्र खोलना पड़ा। लेकिन देश में जब असंख्य लोग हों तो दान-छत्र खोलकर कितने लोगों को संतुष्ट करेंगे? दान-छत्र के भंडार की भी तो एक सीमा है। परमिट-लायसेंस की भी तो कोई सीमा और हद है!

तब जिन लोगों को इतने दिनों तक कुछ नहीं मिला उनको लेकर

सन्दीप बाबू और पूर्ण बाबू ने एक पार्टी बनायी। उनकी देखा-देखी और बहुत-सी पार्टियां कुकुरमुत्ते की तरह निकल पड़ीं। वे भी ठीक पुण्यश्लोक बाबू की पार्टी की तरह जुलूस-मीटिंगें करने लगीं।

तब फिर बादल आदि की पुकार पड़ी।

प्रवेश ने फिर पुकारा। दरवाज़े की जंजीर ज़ोर-ज़ोर से खड़काने लगा। बोला, 'क्यों रे बादल, घर पर है ?'

अचानक पीछे से एक आदमी आया।

'कौन, प्रवेश बाबू ?'

प्रवेश अँधेरे में ही पहचान गया। बादल बहुत मोटा हो गया था। चेहरा बहुत खिल गया था। बादल ने हाथ उठा नमस्कार कर कहा, 'सड़क के मोड़ पर आपकी गाड़ी देखकर ही समझ गया था।'

'सो कैसे है ? घर का तो हुलिया बदल डाला है।'

बादल हँसा। बोला, 'सभी ने घर बनवा लिये, और हमने ही किया तो क़सूर किया ? आपने भी तो घर बनवा लिया।'

प्रवेश वह प्रसंग टाल गया। बोला, 'वह सब बात छोड़, काम की बात करने आया हूँ। पुण्यश्लोक बाबू ने भेजा है।'

'बाबू कैसे हैं ? मंत्री होकर हमें बिलकुल भूल गये हैं !'

'तू कह क्या रहा है ! तुम लोगों के एहसान कभी कोई भूल सकता है ? तुम लोगों के लिए ही तो बाबू अब मिनिस्टर बने हैं। और उसके लिए कितना रुपया खाया है, बता तो ? फिर चुनाव आ रहा है, तब फिर कितना खायेगा, बता ?'

बादल सयाना और बदमाश आदमी था। कभी बादल के नाम से बहू-बाजार बस्ती के लोग काँपते थे। अब भी काँपते हैं। अब दूसरी वजह से काँपते हैं। तब काँपते थे राहज़नी के डर से, खून-खराबी के डर से। अब काँपते हैं कि उसके सिर पर मंत्री हैं, इसलिए।

बादल को याद आया। बोला, 'हाँ, आगे तो चुनाव आ रहा है। लेकिन इस बार दर बढ़ गयी है, प्रवेश बाबू। हाथ-खर्च का भाव अबकी बढ़ाना होगा। पुण्यश्लोक बाबू से पहले से कह रखियेगा।'

प्रवेश बोला, 'देख रहा हूँ कि तू नया आदमी हो गया है। अभी से एकदम शर्त लगा दी।'

बादल बोला, 'शर्त नहीं, हर चीज के दाम बढ़ गये हैं।'

प्रवेश बोला, 'तो दाम बढ़ गये हैं, उससे क्या ? तेरे लिए तो फोकट का पैसा है। तुझे तो मेहनत करके नहीं खाना होता है। लोगों की पॉकेट काटेगा और मज़े से खर्च करेगा।'

'क्या कह रहे हैं, प्रवेश बाबू ?' बादल मुँह टेढ़ा कर अवज्ञा के ढंग से बोला, 'वह ज़माना अब नहीं है। अब बाबू लोगों की जेब के पीछे एक और जेब रहती है।'

'वह रहे, पर अब तो माँग देखकर भी कुछ बन ही जाता होगा।'

बादल बोला, 'वह तो होना ही है, नहीं तो जी कैसे रहा हूँ ?'

प्रवेश बोला, 'इसीलिए तो तेरे पास अभी आया हूँ। बैठे-बिठाये कुछ रोज़गार करना हो तो बता, साथ में लाया हूँ।'

'क्या काम है ?'

प्रवेश बोला, 'कल शाम को पूर्ण बाबू आदि का जुलूस है, तुम लोगों को उसे तोड़ना होगा।'

'ठीक ! फिर ?'

प्रवेश बोला, 'पुलिस का पहरा होगा। बन्दूकें, रायफलें भी रहेंगी। लाल-बाज़ार की ओर हम संभाल लेंगे। लेकिन तुम लोग जुलूस के साथ मिलकर पुलिस की ओर ईंट फेंकोगे, सोडे की बोतलें फेंकोगे, तो उनसे पुलिस को कार्रवाई करने में आसानी होगी।'

'कितना देंगे ?'

'फी आदमी कितना चाहिए, बता ?'

'तो आप क्या नया दे रहे हैं जो पूछ रहे हैं ?'

'ठीक है।'

कहकर प्रवेश ने अपनी जेब में हाथ डाला। उसके बाद एक गड्डी नोट निकालकर अँधेरे में, मन-ही-मन गिनने लगा। एक-दो-तीन-चार-पाँच...।

उसके बाद एक निश्चित संख्या में आते ही गिनना बन्द कर दिया। बोला, 'ले।'

बादल ने लिया। उसके बाद वह भी गिनने लगा।

प्रवेश बोला, 'कम नहीं दिये हैं रे, कम नहीं दिये हैं।'

उसके बाद कुछ रुककर बोला, 'मंगल पांडे कहाँ है ?'

बादल ने इस बीच रुपया गिनकर खतम कर दिया था। खतम करके नोटों का पुलिन्दा सिर से छुआया। उसके बाद बोला, 'चलिये, मंगल शायद अभी घर लौटा है।'

इस तरह बादल के पास से मंगल। मगन के पास से और भी कई जगह प्रवेश को जाना पड़ा। कलकत्ता शहर में इसके पहले भी जुलूस निकले थे। पहले भी प्रवेश को इसी तरह रुपये बिखेरना पड़े थे। नया कुछ नहीं था। सभी ने जमा होकर सलाह-मशविरा किया। बादल के भी

शागिर्द हैं। उनके पास भी जाना पड़ेगा। वे भी अपना हिस्सा लेते हैं। प्रवेश रुपये देकर आधे अपने पास रखता। काम तो होना चाहिए। काम पूरा होने के बाद तब बाक़ी रुपया चुका देता।

जब प्रवेश अपने घर लौटा तो भोर होने को थी। कुछ देर बाद ही आसमान साफ़ हो जायेगा। अपनी गली में अचानक एक दीवार पर जाकर आँखें अटक गयीं। यहाँ भी उनका पोस्टर था। यहाँ भी सालों ने काग़ज़ चिपका दिये हैं। यहाँ भी लाल-काली स्याही से लिख दिया गया है :

'कल तीसरे पहर,
मेहनत-कश जनता की माँगें मनवाने के लिए,
झुंड-के-झुंड जुलूस में शामिल हों।'

प्रवेश ने वहाँ कुछ देर खड़े होकर पोस्टर देखे। उसके बाद गाड़ी गैरिज में रखकर वह अपने सूने घर में घुसा।

रात के अंत की ओर सहसा फिर माँ जी ने आँखें उठाकर देखा। पुकारा, 'तरला, तरला कहाँ है रे ?'

रात-भर जाग-जागकर तरला को ज़रा झपकी आ गयी थी। माँ जी की पुकार सुनते ही घबड़ाकर जाग गयी। माँ जी के पास जाकर बोली, 'क्या, माँ जी ? कुछ कहा ?'

माँ जी बोलीं, 'हाँ रे, वे सब कहाँ गये ?'

तरला बोली, 'कौन ?'

'वही जो आये थे।'

'कौन आये थे ?'

'क्या पता, सब कैसा उलट-पलट हो गया है। रात को भी डॉक्टर बाबू आकर देख गये थे। तब सभी सामने थे। जहाँ तक याद है, भूपति भादुड़ी ठीक पैरों के पास खड़े थे। और मुँह के सामने डॉक्टर बाबू थे। डॉक्टर बाबू को देखकर ज़रा सिर पर घूंघट खींचने की कोशिश की थी।'

'मुखदा कहाँ है ? उसने खाया है ?'

तरला बोली, 'हाँ।'

'उसे जरा बुला ला न, बेटी ।'

सुनदा भी उस समय वहीं खड़ी थी । उसने बढ़कर मुँह फुलाते हुए कहा, 'क्या कह रही हो ?'

माँ जी कुछ और न बोलीं । फिर उसके बाद सब चले गये । माँ जी भी फिर सो गयीं । बहुत गहरी नींद थी वह नींद । उसके बाद धीरे-धीरे बरामदा, सीढ़ी और आँगन की सब बत्तियाँ बुझ गयीं । कालीकान्त अन्दर की ओर जनानखाने में जा रहा था । कई दिनों से बहुत घबराहट में उसने दिन बिताये थे ।

सहसा जैसे पीछे से कोई आया । बोला, 'कौन ? छोटे-दा ?'

नरेश दत्त बोला, 'क्यों रे, क्या मामला है ? तेरी कोई खबर नहीं, आखिर मैं ही आ पहुँचा । तूने तो कहा था, रुपये देगा ?'

कालीकान्त बोला, 'इसी से कह रहा हूँ छोटे-दा, अभी भी बुढ़िया का कोई हिसाब नहीं हुआ ।'

'तो डॉक्टर क्या कहता है ?'

कालीकान्त बोला, 'डॉक्टर और क्या कहेगा ? बस धोखा देकर रुपये लूटकर ले जाता है ।'

'तो बुढ़िया को डॉक्टर को नहीं ही दिखाना चाहिए । बुढ़िया तो मरेगी ही, सिर्फ़ बीच में रुपये की बरबादी है ।'

कालीकान्त बोला, 'मैंने भी साले से यही कहा ।'

'किस साले से ?'

'उसी मैनेजर साले से । घरों के किराये के रुपये वसूल करता है और डॉक्टर और दवाओं के पीछे खर्च कर देता है ।'

'अब एक काम करो ।'

कालीकान्त ने समस्या के समाधान की खोज पाने की आशा से कहा, 'क्या ?'

'बुढ़िया का रुपया कहाँ रहता है ? रुपया-गहने सब-कुछ ?'

'और कहाँ रहेगा, सन्दूक में ।'

'सन्दूक की चाभी ?'

'बुढ़िया के पास ही रहती है ।'

'बुढ़िया के पास ही रहती है ? तो बुढ़िया तो इस वक्त मरने-मरने को हो रही है । आजकल में ही मरेगी । जब बेहोश पड़ी रहे, तो तेरी बहू ताला खोलकर गहने हथिया नहीं सकती ? देखता हूँ कि तेरी बहू किसी काम की नहीं है । बिलकुल निकम्मी । निकम्मों की

'छोटे-दा, आपने बात खराब तो नहीं सोची ।'

कालीकान्त बात समझने लगा। फिर बोला, 'लेकिन अगर पकड़ी जाये!'

नरेश दत्त बोला, 'पकड़ी कैसे जायेगी? अगर पकड़ी ही जाये तो बहू की अक़ल क्या? इतना आसान काम नहीं कर सकेगी? मेरे हाथ में एक पैसा नहीं, मेरा कैसे चलेगा, बताओ तो? शराब की दूकान का बहुत-सा बाक़ी हो गया है। और कितने दिनों उधार देगा?'

कालीकान्त बोला, 'मेरा भी तो वही हाल है, छोटे-दा।'

'तो माल किस तरह खा रहा है? या भूखा रहता है?'

कालीकान्त बोला, 'उसके सिवा और क्या? जिस दिन से बुढ़िया की बीमारी बढ़ी है उसी दिन से राम-भजन है।'

'तो बहू क्या कहती है?'

'बहू कहती है, अच्छा ही हुआ। मेरा शराब पीना वह फूटी आंखों नहीं देख सकती।'

नरेश दत्त बोला, 'धत्, तेरी बहू बिलकुल ही निकम्मी है।'

कालीकान्त बोला, 'तो तुमने ही तो उसके साथ मेरा ब्याह करा दिया। और मैं भी रुपयों के लालच में तुम्हारी बात में आ गया, अब पछता रहा हूं।'

नरेश दत्त बोला, 'तू क्या अकेला पछता रहा है? साथ-साथ मैं भी तो पछता रहा हूं। सब प्लान भुस हो गया। मैंने चारों ओर से ऐसा कुछ मतलब निकाला था और सब खतम हो गया! वसीयत भी तो बहू को देकर दस्तखत न करा सका।'

उसके बाद थोड़ा रुककर बोला, 'जाने दे, अभी उसे लेकर सोचने से क्या होगा? अभी उपाय है, तू चाभी तो हाथ में कर।'

'उसके बाद?'

'उसके बाद गहने निकाल ले।'

कालीकान्त बोला, 'वह कितना रुपया होगा? तुमने तो कहा था कि बुढ़िया के कोई नहीं है। सारे घर भी मुझे मिलेंगे।'

नरेश दत्त बोला, 'बुढ़िया के मरने पर तो तू ही पायेगा।'

'मैनेजर? मैनेजर का भांजा?'

नरेश दत्त बोला, 'वे तो पराये लोग हैं, रे—बिलकुल पराये! उनको घर-सम्पत्ति के मिलने का प्रश्न ही क्या है? जरा बुढ़िया को मरने तो दे...।'

कालीकान्त बोला, 'अगर [illegible] के भां[illegible] वसीयत कर जाये?'

'अभी तो नहीं की है। और जिस पर दस्तखत किये थे उन्हें तो मैंने गायब कर दिया है।'

कालीकान्त बोला, 'नये सिरे से भी तो वसीयत बन सकती है।'

'करे ! सो करे।'

कालीकान्त बोला, 'उसके मतलब ?'

नरेश दत्त बोला, 'मैं भी एक जाली वसीयत तैयार करूँगा। वसीयत जाली भी होती है, यह मालूम है न ? पैसा लेने पर जाली वसीयत बना देने वाले लोग कलकत्ता में हैं। पता है ? मैनेजर का बच्चा अगर वैसा कुछ करेगा तो मैं किसलिए हूँ ? मैं भी लड़ जाऊँगा। मुझे भी लड़ना आता है। तू अन्दर जा, आज रात को ही अपनी बहू से काम करने को कहना।'

'लेकिन छोटे-दा, मुझे बहुत डर लगता है।'

'डर किससे ?'

कालीकान्त बोला, 'अगर मेरे हाथों में हथकड़ियाँ पड़ गयी तो ?'

नरेश दत्त बोला, 'कोई डर नहीं। तू दुर्गा का नाम लेकर कूद पड़, मैं तो हूँ। मैं तुझे अपील में छुड़वा ले आऊँगा। आखिर में एक रास्ता तो खुला ही है।'

'कौन-सा रास्ता ?'

नरेश दत्त बोला, 'सिर्फ एक बूँद जहर का सहारा है। आखिर में बुढ़िया की दवा के साथ जहर मिलाकर देने को अपनी बहू से कहना। झंझट खतम होगा। उसके बाद मुकदमा चले। देखें, किसके कितने वकील हैं, मुख्तार हैं ! मैं हवाई बातें नहीं करता।'

कालीकान्त बोला, 'लेकिन शायद इतना न करना पड़े, छोटे-दा।'

'क्यों, कैसे समझा ?'

'मैनेजर का वह भाजा भाग गया है।'

'भाग गया माने ?'

कालीकान्त बोला, 'भाग गया, माने मैंने भगा दिया। वह अब इस घर में नहीं आयेगा।'

'किस तरह भगाया उसे ?'

कालीकान्त बोला, 'घूँसा मारकर। बहुत शैतान था साला। एक दिन बहुत जोर से मारा। कहा, फिर अगर इस घर में घुसेगा तो पैर तोड़ दूँगा। अब मैनेजर उसे चारों ओर खोजता फिर रहा है।'

'ठीक है।'

नरेश दत्त ने जेब से एक सिगरेट निकालकर सुलगायी। मानो कुछ

निश्चिन्त हुआ हो।

बोला, 'तो एक रास्ता तो साफ़ हुआ। ठीक है। अब मैनेजर को पछाड़ सकने में ही काम फ़तह है। तू अब देर न कर, बहुत रात हो गयी है। कल मैं फिर आऊँगा। मुझे रुपयों की बहुत ज़रूरत है। बहुत क़र्ज़ा हो गया है।'

नरेश चला गया।

पूरे घर में उस वक़्त प्रायः अँधेरा हो रहा था। कालीकान्त बहादुर-सिंह के पास जाकर बोला, 'बहादुर, गेट बन्द कर दो।'

बहादुर बोला, 'जी हुज़ूर।'

'कोई अन्दर न घुसे। समझा! इधर-उधर के किसी आदमी को मत घुसने देना।'

'नहीं, हुज़ूर।'

उसके बाद ज़नानख़ाने की ओर घुस गया।
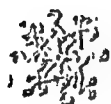
सवेरे ही पुण्यश्लोक बाबू नींद से उठे। हमेशा सवेरे उठने की उनकी आदत है। सवेरे उठकर ही मुँह-हाथ धोकर काम में लग जाते। उस वक़्त एक के बाद एक टेलीफ़ोन आता। सवेरे के वक़्त ही उनका पूरे दिन का प्रोग्राम ठीक हो जाता।

लेकिन उस दिन अपने आप ही टेलीफ़ोन का डायल घुमाया।

'कौन? प्रवेश?'

पिछले दिन बहुत रात हो गयी थी, इसीलिए उस वक़्त भी प्रवेश की नींद नहीं टूटी थी। लेकिन हलकी नींद टेलीफ़ोन की घंटी सुनकर और हलकी हो गयी। बिस्तर पर से हाथ बढ़ाकर रिसीवर कान से लगाकर बोला, 'हलो!'

लेकिन पुण्यश्लोक बाबू की आवाज़ सुनते ही उठ बैठा।

'मैं प्रवेश हूँ।'

उधर से पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'कल क्या हुआ? बादल से मुलाक़ात हुई थी?'

प्रवेश बोला, 'हाँ सर, मिला था।'

आने से दोनों मिल-जुलकर झगड़ा करके भी वक़्त बिता देते। पमिली शायद बहुत अकेली पड़ गयी है। उसका ब्याह कर देना बहुत जरूरी है। लेकिन उस ओर सोचने का उनके पास समय कहाँ है ? जब दिल्ली जाते तो पमिली यहाँ अकेली पड़ी रहती है। जाते वक़्त पमिली से कह जाते हैं, 'बहुत होशियारी से रहना, मैं तीन दिन के लिए दिल्ली जा रहा हूँ।'

पिता के दिल्ली जाने के बाद घर पर अकेली रहने में पमिली को कभी डर नहीं लगा। घर के गेट के सामने दिन-रात पुलिस का पहरा रहता; फिर भी थाने के ओ० सी० को एक बार टेलीफ़ोन करके कह जाते। थाने से भी बहुत कड़ी नज़र रखने को पुलिस वालों से कह दिया जाता।

लेकिन उससे पमिली को न तो कोई असुविधा होती, न सुविधा।

थाने का ओ० सी० हर रोज टेलीफ़ोन करता।

पूछता, 'कैसी हैं, मिस राय ? मैं थाने का ओ० सी० बोल रहा हूँ।'

पमिली कहती, 'ठीक हूँ, थैंक्स।'

कहकर टेलीफ़ोन रख देती।

किसी-किसी दिन ओ० सी० कहता, 'कुछ असुविधा हो तो आप हमसे कहियेगा।'

किसी भी दिन पमिली को कोई असुविधा नहीं हुई। उसकी आराम से ही कटती। आराम से बाहर निकलती, आराम से क्लब जाती, आराम से 'बार' में जाती। और जब तबीयत हो, जितनी रात चाहे खुशी से घर लौटती। न तो कोई बोलने वाला, न देखने वाला। किसी दिन उसके किसी काम के लिए किसी को सफ़ाई न देना पड़ती। ऐसी ही थी पमिली। हमेशा पमिली का यही स्वभाव रहा। उसके लिए पुण्यश्लोक बाबू को खेद रहने पर भी पमिली के मन में कभी कोई खेद नहीं हुआ।

'आइये, राय साहब।'

गोयनका सवेरे ही आकर बैठ गये। पुण्यश्लोक बाबू को कमरे में आते देखकर उठ खड़े हुए।

'कितनी देर हुई आये, गोयनका साहब ?'

जिस काम के लिए गोयनका साहब आये थे वह पुण्यश्लोक बाबू को मालूम था। वही चीनी की मिल का मामला। एक नयी शुगर फैक्टरी।

गोयनका साहब बोले, 'हर दीवार पर आज पोस्टर देखे, राय साहब। उन्होंने बहुत पोस्टर लगाये हैं। आपके घर की दीवार पर भी तो देखा कि लगाये हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'ये सब गुंडों की करतूतें हैं। कल रात में सब धो-पोंछकर साफ़ कर दिये थे, फिर लगा गये।'

'पुलिस कोई काम नहीं करती, राय साहब। पुलिस पहरा दे रही है फिर वे सब कब्ज़ लगा गये?'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'आगे चुनाव आ रहा है न, इसी से अभी कुछ नहीं कह रहा हूँ। चुनाव के बाद सबको अच्छी तरह देख लूंगा।'

गोयनका साहब बोले, 'आज तो एक सौ चवालीस धारा लगी है हजूर?'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'वह तो लगा दी गयी है, लेकिन उससे क्या कम्युनिस्ट क़ाबू में आयेंगे? उन्हें मैं पहचान चुका हूँ।'

गोयनका की भी यही राय थी।

बोले, 'उन्हें अच्छी तरह ठीक कर दीजियेगा, राय साहब। ऐसा ठीक करें कि उन्हें हमेशा याद रहे। हमारे मजदूरों को वे बहुत उकसाते रहते हैं। इनके लिए बंगला मुल्क में कोई कारोबार नहीं किया जाता। आज गोली चलवा दें, पुलिस-कमिश्नर को गोली चलाने के लिए हुकुम कर दें राय साहब, हम कारोबारी लोगों की थोड़ी जान बचे...।'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'वह तो करूँगा, वह आप लोगों को नहीं कहना होगा। आप लोग अगर थोड़ा सहारा दें तो कम्युनिस्टों से नहीं डरता, आप कांग्रेस की थोड़ी मदद दें।'

'मदद तो अपनी गरज से ही देंगे, राय साहब।'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'सूखी मदद से क्या होगा गोयनका साहब, रुपये दें। कांग्रेस-फंड में रुपयों की बड़ी कमी पड़ रही है।'

'क्यों, रुपया तो हम देते हैं, राय साहब।'

'आपके अकेले रुपये देने से क्या होगा, गोयनका साहब। आपकी मारवाड़ी बिरादरी जिनके हाथ में रुपया है, वे तो नहीं दे रहे हैं। अपने चेम्बर ऑफ़ कॉमर्स से कुछ-कुछ भिजवा दें। नहीं तो चुनाव में हम लड़ेंगे कैसे? एक-एक चुनाव में हमारा कितना रुपया खर्च होता है, मालूम है?'

'कितना रुपया? पचास लाख?'

'क्या कह रहे हैं सेठजी, पहले के इलेक्शन में हमारा ढाई करोड़ रुपया खर्च हुआ था, यह जानते हैं?'

'इतने रुपये काहे में लगते हैं, राय साहब?'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'लगता है। बहुत खर्च है। घूस देना होती है। इस चुनाव के वक्त तमाम लोग मकान बनवा लेते हैं, यह मालूम है। हमारा एक आदमी है, उसका नाम है प्रवेश। उसे देखते तो हैं? बहुत मेहनत करता है, तीन चुनावों में उसने काम किया है। इसी कलकत्ता शहर में उसने मकान बनवा लिया, जानते हैं?'

'प्रवेश बाबू को तो पहचानता हूँ। वह तो नौकरी करते हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'नौकरी तो लोगों को दिखाने के लिए है, गोयनका साहब। वह कुछ नहीं, मुझसे जो मिलता है वह नौकरी से डबल होता है। कभी-कभी सोचता हूँ कि उसे भगा दूं। दो-एक बार भगा भी दिया था। लेकिन चुनाव के पहले फिर खुशामद कर बुलाना पड़ता है—वह सब कला-कौशल जानता है।'

उसके बाद जैसे अचानक याद आया हो। बोले, 'हाँ, रुपये लाये हैं आप?'

गोयनका साहब ने हाथ का बैग खोला, 'बोले, मैंने जब वादा किया तो रुपये नहीं लाऊँगा, आप क्या कह रहे हैं?'

कहकर रुपये पुण्यश्लोक बाबू की ओर बढ़ा दिये। उन्होंने लेकर अपनी जेब में रख लिये। रखते-रखते बोले, 'यह सब रुपये जा रहे हैं पार्टी-फ़ंड में, पता है गोयनका साहब? मेरा अपना भी कितना रुपया इसके साथ चला जाता है उसका ठिकाना नहीं है।'

'तो मेरी शुगर मिल का प्लान कब सैंक्शन कर रहे हैं, राय साहब?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'होगा, होगा।'

उसके बाद फिर बोले, 'देखिये, आज उनकी पार्टी का जुलूस है, उसके बाद आ रहा है चुनाव, इस वक़्त कैबिनेट के मेम्बरों का दिमाग़ खराब है। इस वक़्त कोई काम न होगा। चुनाव खतम हो जायें तब आपका काम कर दूंगा। मैं वादा करता हूँ।'

अचानक पास में टेलीफ़ोन बज उठा।

'सर!'

प्रवेश की आवाज़ थी। आवाज़ बहुत घबरायी-सी थी।

'फिर क्या कह रहे हो?'

'पमिली क्या इस वक़्त घर पर है?'

'क्यों, अचानक उसकी बात तुम क्यों पूछ रहे हो? उसे क्या हुआ है?'

प्रवेश बोला, 'नहीं, मैं पूछ रहा हूँ कि पमिली इस वक़्त घर में है या नहीं? मुझे अभी टेलीफ़ोन मिला है, इसीलिए आपसे बिना पूछे न रह सका।'

पुण्यश्लोक बाबू पहले ही उत्तेजित हो गये थे। अब उत्सुक हो गये। बोले, 'न, वह तो सवेरे सबके उठने के पहले ही कहीं निकल गयी है। अब वह कहाँ है?'

प्रवेश बोला, 'वही बात कहने के लिए ही मैंने आपको अभी टेलीफ़ोन

किया। सुना है कि वह इस वक़्त उनके पार्टी-ऑफिस में है।'

'उनके पार्टी-ऑफिस में के मतलब ? किनके पार्टी-ऑफिस में ?'

'पूर्ण बाबू के पार्टी-ऑफिस में।'

'यह क्या ?'

जैसे खबर सुनकर भौंचक्के हो गये। विश्वास करने की तबीयत न हुई। पमिली पूर्ण बाबू के पार्टी-ऑफ़िस में गयी ? इस पर भी उन्हें क्या विश्वास करना पड़ेगा ?

बोले, 'तुम ठीक कह रहे हो ?'

प्रवेश बोला, 'मैंने भी तो पहले विश्वास नहीं करना चाहा। ऐसे आदमी के मुँह से सुना कि जिसकी बात का अविश्वास नहीं कर सकता। इसीलिए तो आपको टेलीफोन कर यही खबर दे रहा हूँ। उसने अपनी आँखों देखा, पमिली बहू-बाज़ार में उनके पार्टी-ऑफ़िस के सामने गाड़ी से उतरकर अन्दर गयी।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन इतनी जगहें रहते इतने सवेरे वह वहाँ क्यों जायेगी ? तुमने ज़रूर गलत सुना है।'

प्रवेश बोला, 'न, गलत नहीं सुना, सर। मुझे लगता है कि जब घर पर नहीं है तो वह ज़रूर वहीं गयी है...।'

पुण्यश्लोक बाबू ने फिर भी मानो विश्वास नहीं करना चाहा। बोले, 'तुम सब पागल हो गये हो प्रवेश, ज़रूर तुम लोगों का दिमाग़ खराब हो गया है। नहीं तो मेरी बेटी कभी उनके पार्टी-ऑफ़िस में जा सकती है ? वह इतनी पढ़ी-लिखी लड़की है, वह अच्छी तरह जानती है कि उसके बाबा किस पार्टी के आदमी हैं, फिर भी वह वहाँ जायेगी ? आज जब उनका जुलूस निकलेगा...।'

प्रवेश बोला, 'अच्छा, मैं खुद जाकर देखे आता हूँ। मैं अभी जा रहा हूँ। मुझे अगर पमिली वहाँ मिली तो आपके पास ले आऊँगा।'

'हाँ, अब जाओ, मैं तुम लोगों के लिए घर पर ही इन्तज़ार कर रहा हूँ।'

उधर से प्रवेश ने भी तब रिसीवर रख दिया।

माधव कुण्डू लेन में उस वक़्त आधी रात थी। गेट पर रोशनी उस वक़्त भी

जल रही थी। वह रात-भर इसी तरह जलेगी। लेकिन बहादुरसिंह ने गेट पर ताला लगा दिया था। नरेश दत्त के जाने के बाद ही कालीकान्त विश्वास ने गेट बन्द करने को कह दिया था। उसके बाद आँगन। आँगन की सब बत्तियाँ बुझी थीं। बाहरी मकान, रसोईघर, खिड़की—बूढ़े बाबू के कमरे में भी उस वक़्त अँधेरा था। दुखमोचन, अर्जुन आदि के घर में भी कोई भी आवाज़ नहीं थी।

सुरेन का कमरा आँगन के एक किनारे पर था। कई दिन से वह भी नहीं था। भूपति भादुड़ी ने उसी दिन से कमरे के दरवाज़े में ताला लगा दिया था। लेकिन ज़नानख़ाने में माँ जी के सिर के पास एक बत्ती सिर्फ़ टिमटिमाकर उस वक़्त भी जल रही थी।

बादामी माँ जी के पैरों के पास ही लेटती थी। उस दिन भी वहाँ लेटी थी। बूढ़ी, बहुत पहले एक दिन माँ जी के ब्याह के मौक़े पर नयी बहू के साथ हाटखोला के दत्त-बाड़ी गयी थी। फिर उसके बाद...।

वह सब कितने पहले की बात है। आँखें बन्द करने पर बादामी को सब याद आ जाता। मानो उस नौबत की आवाज़ भी कानों में घुस जाती। बादामी नींद के नशे में ही कुछ जैसे बड़बड़ाती रहती। उसके बाद सब धुंधला पड़ जाता। नौबत बन्द हो जाती। गाना, शोरगुल, खुशियाँ—सब रुक जातीं। सारी जगह में घुप अँधेरा उतर आता।

'बादामी, बादामी!'

बादामी उस फूल-शैया के रात के शोरगुल के बीच बरामदे के एक कोने में बेहोश सो रही थी। सो उस जगह दत्त-बाड़ी के लड़के की फूल-शैया, ऐसी-वैसी चीज़ नहीं थी। सारे कलकत्ता को निमंत्रण था। जो भी निमंत्रित खाने पर आया उसी के हाथ में बेला के फूलों का मोटा हार दिया गया, बदन पर गुलाब-जल छिड़का गया। चारों ओर बहुत बड़ा इन्तज़ाम था। ऐसी आतिशबाज़ी छोड़ी गयी थी कि बाग-बाज़ार तक से लोग आकर भौंचक्के देख रहे थे और ताज्जुब में पड़ गये थे।

माँ जी को उस दिन इस तरह सजाया गया था कि देखने पर लगता था कि मानो जगद्धात्री हों!

लोग कहते थे, 'हाँ देखने लायक़ बहू है, भाई।'

वह झिनी-झिनी आँखें, छोटा माथा, उस माथे पर हीरे का टीका लटक रहा था और बनारसी साड़ी के हलके-से घूंघट के नीचे दमकता सिन्दूर।

लड़की के घर की नौकरानी, दत्त-बाड़ी की मौसी और बुआओं ने क्या उसी की कम ख़ातिर की? एक-एक कर आतीं और पूछ जातीं,

'क्योंजी, लड़की के घर की नौकरानी, तुमने खाना तो खाया ?'

'हाँ माँ, खाया।'

फिर भी वे न छोड़ती। कहती, 'पेट भरकर तो खाया है लड़की, बाद में जाकर समधीजी से बुराई न करना।'

खाने बैठने के बाद सभी ने बार-बार पूछा, 'हाँ जी लड़की, एक बेनुआ और दूँ ?'

एक लिया तो एक और जबर्दस्ती पत्तल में डाल देती। दीदीमणि की ससुराल में आकर लड़की के घर की नौकरानी कहीं भूखी न रह जाये। उसके बाद शंख बजने लगा। बहुत बार। लोगों के खाकर जाते-जाते रात गहरी हो गयी। तब फूल-शैया रस्म का आरम्भ हुआ। जमाई बाबू सज-धजकर सोने के कमरे में घुसे। उसके पहले ही दीदीमणि को सजा-बजाकर ननदें बिठा आयी थीं।

'ओ जी, लड़की के घर की नौकरानी, तुम विधवा हो, तुम यहाँ क्यों हो, बच्ची ?'

बादामी झटपट कमरा छोड़कर बाहर के बरामदे में निकल आयी। उस समय फूल-शैया के कमरे में ही सब हुड़दंग कर रहे थे। बादामी बरामदे के एक कोने को चुनकर देह को समेटकर वहीं लेट गयी। और उसके बाद कब गहरी नींद में सो गयी उसकी खबर ही न रही...।

अचानक किसी ने पुकारा, 'बादामी, बादामी...!'

उस वक्त कितनी रात थी, पता नहीं। घर-भर का शोरगुल बन्द हो गया था। बरामदे के बाहर सिर्फ एक तेज बत्ती उस वक्त भी जल रही थी।

'बादामी, ओ बादामी, उठ, उठ...।'

सहसा अच्छी तरह देखते ही दिखायी पड़ी दीदीमणि।

'दीदीमणि, क्या हुआ ? तुम ?'

किसके पैरों की आवाज से बादामी की हलकी नींद टूट गयी ?

बोली, 'कौन ?'

सुखदा चौंक पड़ी। सुखदा झटपट फिर कमरे से निकलकर अँधेरे बरामदे में आ गयी। सुखदा के कमरे के आगे कालीकान्त चुपचाप खड़ा था।

सुखदा को देखते ही बोला, 'क्या हुआ, लौट आयी ? चाभी मिली ?'

सुखदा बोली, 'न, लौट आयी।'

'क्यों, लौट क्यों आयी ?'

सुखदा बोली, 'लगा कि बादामी जाग रही है।'

कालीकान्त बोला, 'धत्, वह अस्सी बरस की बुढ़िया, आँखों से दिखायी पड़ता नहीं, उससे क्या डर ? तुम जाओ, फिर एक बार जाओ। छोटे-दा मुझसे बहुत तरह से कह गये हैं। जाओ, जाओ, डरना मत ! जाओ, डर की क्या बात, मैं तो हूँ...।'

सुखदा फिर माँ जी के कमरे की ओर बढ़ने लगी।

पहली बार सुखदा को थोड़ा डर लगा था। कमरे में घुसकर भी मानो हिम्मत नहीं पड़ रही थी। एक तो अँधेरी आधी रात, उस पर घबराहट, सबने मिलकर फिर उसे सुन्न कर दिया। वह फिर लौट आयी।

अपने कमरे के सामने ही कालीकान्त खड़ा था। सुखदा को फिर लौटते देखकर गुस्सा हो गया।

बोला, 'यह क्या, तुम फिर लौट आयीं ?'

सुखदा बोली, 'मुझसे न होगा।'

'न होगा माने ?'

'मुझे डर लगता है।'

'फिर वही एक बात कहती है। रुपये क्या मैं अपने लिए ले रहा हूँ ? रुपयों की तो तुम्हारे लिए ही जरूरत है। यह जो तुम्हारी माँ जी हैं, यह माँ जी अगर आज मर जायें, तो रुपये तो सब वह साला सुरेन ही ले लेगा। कहाँ का कौन है कोई ठीक नहीं, उड़कर यहाँ मजे में बैठ गया है। लाखों रुपये उसके सिर पर नाच रहे हैं। और असल में तो वह सब तुम्हारा ही हक़ है। तुम ही तो माँ जी की सारी जायदाद की हक़दार हो।'

सुखदा ने टोककर कहा, 'लेकिन सुरेन को कैसे सब जायदाद मिलेगी ?'

कालीकान्त बोला, 'तो और तुमसे कह क्या रहा हूँ ! तुम्हारा मन सरल है, इसी से सब को सरल समझती हो। अन्दर-ही-अन्दर उस मैनेजर के बच्चे ने बन्दोबस्त पक्का कर रखा है।'

'क्या बन्दोबस्त किया है ?'

कालीकान्त बोला, 'तुमसे तो कितनी बार बतलाया कि सारी जायदाद वसीयत करवाकर मैनेजर ने अपने भांजे के नाम लिखा दी है।'

'लेकिन वह वसीयत तो तुम्हारे छोटे-दा चुराकर ले आये थे।'

कालीकान्त सुखदा की बेवकूफ़ी देखकर और भी चिढ़ गया। बोला, 'अरे हट, मैनेजर क्या ऐसा कच्चा खिलाड़ी है ? उसने फिर उसकी दूसरी प्रति बनवा ली है। माँ जी जब लुढ़क जायेंगी तब वही वसीयत मैनेजर निकालेगा।'

'तो तुम्हारे छोटे-दा किसलिए हैं ? घास खाने के लिए ?'

कालीकान्त बोला, 'इसी को तो कहते हैं औरत की अक्ल। तुम्हारी अक़्ल पर चलकर ही काम पूरा हुआ है न! तब छोटे-दा भी फिर एक नकली वसीयत निकालेंगे। छोटे-दा जो करेंगे वह तो करेंगे ही। उसको लेकर तुम्हें परेशान न होना होगा। अभी नकद रुपये और गहनों के लिए ही तो परेशानी है। उन्हें इस हालत में हथिया लेने में आधा काम फ़तह है। यह जरा-सा मामूली काम तुमसे नहीं होगा? अगर आज तुम्हारी माँ जी पट् से मर जायें तो उस वक्त क्या मुसीबत होगी, बताओ? तब हम कहाँ रहेंगे, यह सोचा है?'

'तो माँ जी के मर जाने पर क्या वे लोग हमें भगा देंगे?'

'भगा नहीं देंगे तो क्या तुम्हें दामाद की तरह यहाँ बैठा-बैठाकर मछली का सिर खिलायेंगे?'

'तो मैं क्या करूँ?'

कालीकान्त बोला, 'और क्या करोगी? मैं जो कहता हूँ वही करो। मैं जो कहता हूँ तुम्हारे भले के लिए ही कह रहा हूँ। मैं ठहरा आदमी जात, मैं जिस-तिस तरह अपने अकेले पेट का इन्तज़ाम तो कर सकता हूँ। लेकिन तुम्हारी बात अलग है। तुम हो औरत। मान लो, कल अगर मैं ही मर जाऊँ तो तुम तो विधवा हो जाओगी। हो जाओगी या नहीं?'

सुखदा बोली, 'वह तो होगा ही।'

'तुम्हारे साथ तो मेरा ब्याह हुआ है। मन्त्र पढ़, अग्नि को साक्षी बनाकर ही तो ब्याह हुआ है।'

'वह तो हुआ है। मैं क्या कह रही हूँ कि नहीं हुआ?'

कालीकान्त बोला, 'तब? तब क्यों अपना भला ख़ुद नहीं समझतीं? मैं जब न रहूँगा, तब तुमको कौन देखेगा?'

'क्यों, तुम नहीं देखोगे?'

'अरे, फिर सब बेकार बात कह रही हो। जितने दिन मैं हूँ उतने दिन तो देखूँगा ही। मैंने तुमसे ब्याह किया है और तुम्हारी देख-भाल न करूँगा? बात हो रही है कि मैं जब न रहूँगा तब तुमको कौन देखेगा? इस बात को कभी सोचा है? मैंने तो सिर्फ़ तुम्हारे लिए ही सोच-विचार कर इतनी बात कही थी। नहीं तो मैं तो आदमजात, मेरा काम क्या है, रे बाबा! मैं अकेले अपने लिए क्या कभी किसी की परवाह करता हूँ? तुम माँ जी के सन्दूक से गहना-गहना जो कुछ लाओगी सब तुम्हारा ही रहेगा, मैं उसमें हाथ भी लगाने नहीं जाऊँगा। मैं इतने दिनों से हूँ, लेकिन क्या तुमको कुछ दे सका हूँ? एक साड़ी या गहना कुछ भी तो तुम्हारे हाथों पर नहीं रख सका। सोचती हो कि मुझे क्या दुख नहीं होता? मेरी क्या तुम्हें कुछ देने

की इच्छा नहीं होती ?'

सुखदा मानो फिर भी दुविधा करने लगी।

बोली, 'बाद में कुछ होगा तो नहीं ?'

कालीकान्त बोला, 'होगा क्या ? क्या होगा ? और हुआ तो मैं हूँ। मेरे रहते तुम्हें क्या डर ?'

सुखदा को अब जैसे कुछ हिम्मत बँधी। धीरे-धीरे फिर बरामदे से होकर माँ जी के कमरे की ओर बढ़ी। उस वक़्त उसका पूरा बदन काँप रहा था। सारे दिन आराम भी नहीं किया था। इतनी रात हो गयी, फिर भी आँखों में जरा नींद नहीं। एक बार उसने पीछे घूरकर देखा। कालीकान्त आगे जाने के लिए हाथ से इशारा कर रहा था। सुखदा धीरे-धीरे जाकर माँ जी के कमरे में घुस गयी।

और उसके बाद माँ जी के सिर के पास दीवार से लगा वह सन्दूक ! सुखदा ने उस ओर भी एक बार देखा। बादामी उस वक़्त भी नींद की बेहोशी में कुछ बड़बड़ा रही थी। माँ जी की आँखें बन्द थीं। माँ जी की साड़ी के आँचल का कुछ हिस्सा तकिये के नीचे दबा था। उसके आख़िरी हिस्से में चाभियों का गुच्छा बँधा था।

सुखदा एक-एक क़दम उस तकिये की ओर बढ़ी।

कालीकान्त की छाती के अन्दर उस समय उत्तेजना के मारे धुकधुकी मच गयी थी। औरतों की अक़्ल पर कालीकान्त को कभी भी भरोसा नहीं था। फिर भी उस हालत में औरत के न होने से काम सम्भव भी न था। कालीकान्त घबराने लगा। काम झटपट हो जाने से ही जैसे वह बचेगा। उसके बाद ठनठन की काली-बाड़ी जाकर सवा रुपये की पूजा चढ़ा आना होगा। माँ काली की दया के बिना नहीं भी कुछ भी नहीं हो सकता। 'माँ, तुम्हीं पर मुझे भरोसा है, माँ। तुम्हारे सिवा दुनिया में मेरा कोई भी नहीं है। मैं बहुत ग़रीब हूँ, माँ। तुम्हें प्रसन्न करने लायक़ रुपये-पैसे मेरे पास नहीं हैं, माँ ! मैं बहुत दुखी हूँ। बहुत योजना बनाकर मैंने सुखदा से शादी की थी, माँ ! यह योजना अगर फ़ेल हो जाये, माँ, तो मेरी बरबादी हो जायेगी। मैं बुरी तरह मारा जाऊँगा, माँ। तुम ही मेरी एकमात्र सहारा हो, माँ ! लोग तुम्हें पतित-पावनी कहते हैं। मुझसे पतित को पावन नहीं करोगी तो और किसे करोगी माँ, मेरा और कोई नहीं है...।'

एक हाथ में जलती हुई सिगरेट और मन से माँ को पुकारते-पुकारते दूसरा हाथ कालीकान्त सिर से लगाने लगा।

लेकिन अचानक एक आवाज से कालीकान्त चौंक पड़ा।

'चोर, चोर...!'

जनाने गले की आवाज थी। चिल्लाहट के साथ-ही-साथ जैसे घर-भर में एक प्रतिध्वनि उठी, 'चोर, चोर, चोर...!'

और उसके बाद ही एक मरदानी आवाज।

'कहाँ, कहाँ गया चोर, कहाँ ? किधर ?'

जैसे लगा कि मैनेजर भूपति भादुड़ी के गले की आवाज हो। मैनेजर को मानो सब पता चल गया हो। जैसे वह इसीलिए पास में कहीं घात लगाये खड़ा हो। साथ-ही-साथ जीने से चढ़ने-उतरने की धप-धप आवाजें आने लगीं। फटाफट कई बत्तियाँ जल गयीं। तो क्या सुखदा पकड़ी गयी ?

डर के मारे कालीकान्त का शरीर थर-थर काँपने लगा। अगर सुखदा पकड़ी गयी तो सब लोग कालीकान्त को जिम्मेदार ठहरायेंगे। इसके बाद शायद पुलिस आयेगी, दारोग़ा आयेगा। सुखदा के साथ कालीकान्त को भी वे लोग जिम्मेदार ठहरायेंगे।

हाथ के जलते सिगरेट के टुकड़े को पैरों से कुचलकर उसने तय कर लिया कि क्या करना है। झटपट जीने की ओर जाकर धड़ाधड़ नीचे उतरने लगा और सबके साथ आवाज मिलाकर चिल्लाने लगा, 'चोर, चोर...!'

नीचे से धनंजय ऊपर चढ़ रहा था। कालीकान्त को उतरते देखकर पूछा, क्या हुआ जमाई बाबू, क्या हुआ ?'

कालीकान्त का दिमाग़ उस वक्त ठीक न था। उतरते-उतरते ही बोला, 'अरे भाई, सत्यानाश हो गया, सब चोरी हो गया।'

'आप कहाँ जा रहे हैं ?'

'थाने जा रहा हूँ। पुलिस बुलाने।'

कहकर और भी जल्दी-जल्दी नीचे उतर गया। उसके बाद आँगन पार कर सदर गेट पर। सदर गेट खुला था। खुला क्यों ? 'ए बहादुरसिंह, बहादुरसिंह ! कहाँ गया ? सदर गेट खुला छोड़कर सो रहा है ! इसी से तो घर में चोर-डकैत घुसते हैं।'

बहादुरसिंह ने कहीं से निकलकर सलाम किया।

उसे देखते ही कालीकान्त ने डाँटा, 'गेट का ताला बन्द क्यों नहीं है ? मैंने रात को ताला बन्द रखने को इतनी बार कहा और फिर भी गेट खुला है ?'

बहादुरसिंह बोला, 'हुजूर, ताला तो बन्द था, मैनेजर बाबू अभी गये हैं।'

'मैनेजर बाबू ? गये हैं ? कहाँ ?'

'थाने।'

बहादुरसिंह की बात से कलेजा बैठ गया। फिर वहाँ खड़े रहने की हिम्मत न हुई। हो सकता है, अभी इस बस्ती के पुलिस-स्टेशन का अफ़सर (ओ०सी०) आ पहुँचेगा। आकर कालीकान्त को भी गिरफ़्तार करेगा। झट-पट पैर बढ़ाकर कालीकान्त सीधे ट्राम की सड़क पर पहुँच गया। उसके बाद कलकत्ता की जनहीन आधी रात। ट्राम की सड़क भी सूनी। थोड़ा चलने पर ही लगा कि कुछ लौंडे-लवाड़े जैसे कुछ कर रहे हैं। उनके हाथों में काग़ज़ हैं। इतनी रात में ये यहाँ क्या कर रहे हैं ?

लड़कों ने दीवार पर एक बड़े साइज़ का काग़ज़ लेही से चिपका दिया। कालीकान्त पढ़ने लगा :

'कल तीसरे पहर
मेहनतकश जनता की माँगें मनवाने के लिए
झुंड-के-झुंड जुलूस में सम्मिलित हों।'

कालीकान्त कुछ समझ न सका। एक लड़के के पास जाकर पूछा, 'बात क्या है, भाई ? यह कैसा जुलूस है ?'

किसी गुंडे-सी मूँछों वाले एक लड़के को कालीकान्त को ऐसी सूनी रात में देखकर ताज्जुब हुआ।

'हमारी पार्टी का पोस्टर है।'

'तुम्हारी कौन-सी पार्टी है, भाई ?'

लड़का खफ़ा हो गया। बोला, 'आप किस देश के आदमी हैं ? कहाँ रहते हैं ?'

कालीकान्त बोला, 'क्यों, कलकत्ता में। जन्म से कलकत्ता में रहता हूँ।'

लड़कों को बहुत काम था। उन्हें उस वक़्त भी बहुत-से पोस्टर चिपकाने थे। बोले, 'कलकत्ता में रहकर भी अगर आप अभी तक नहीं समझ सके हैं तो आप कभी नहीं समझ सकेंगे, मशाई।'

कहकर लड़कों का दल बढ़ने लगा।

कालीकान्त भी आगे बढ़ गया। बोला, 'अरे भाई, सुनो, सुनो, क्या कहा; फिर एक बार कहना।'

गुंडे-सी शक्ल वाला लड़का बोला, 'कहा कि आप जैसे लोग हैं इसी-लिए कांग्रेस बैठी राज कर रही है, नहीं तो कभी की लुढ़क जाती। कल तीसरे पहर देखियेगा कि क्या होगा।'

'क्या होगा ?'

लड़का बोला, 'देखियेगा कि क्या होगा। ख़ून की नदी बहेगी...।'

कहकर लड़का फिर न रुका। भागते-भागते दल-बल के साथ और दूर

चला गया। कालीकान्त भी बायीं ओर ग्रे-स्ट्रीट में घुस गया। देखा कि उस सड़क की दीवार पर भी तमाम पोस्टर लगे हैं। वही एक ही पोस्टर—

'कल तीसरे पहर
मेहनतकश जनता की माँगें मनवाने के लिए
झुंड-के-झुंड जुलूस में सम्मिलित हों।'

कालीकान्त ने समझ लिया कि इन लड़कों को कोई भी काम नहीं है। अरे, काम न रहे तो घर जाकर सो जाओ। और अगर नींद न आये तो शराब पियो। शराब पीकर बेहोश पड़े रहो। इन साले छोकरों से कुछ होने-हवाने का नहीं। इस युग के छोकरे सब गोबर-गणेश हो गये हैं। रात को पोस्टर चिपकाने निकले हैं। तुम्हीं लोग क्या कांग्रेस से पार पा सकोगे?

उसके बाद दाहिनी तरफ की गली में घुस गया। घुसकर एक घर के सामने जाकर दरवाजे पर धक्का मारने लगा, 'छोटे-दा, छोटे-दा!'

बहुत पुकारने के बाद दरवाजा खोलकर अन्दर से नरेश दत्त निकला। बोला, 'क्यों रे, इतनी रात को? काम पूरा हो गया?'

कालीकान्त बोला, 'नहीं छोटे-दा, सत्यानाश हो गया।'

'वह क्या रे? क्या सत्यानाश हुआ?'

कालीकान्त बोला, 'एकदम ही जिल्लत की बात!'

नरेश दत्त बोला, 'आ, अन्दर आ, दरवाजा बन्द कर दे, अन्दर आकर बता।'

कालीकान्त ने कमरे में घुसकर दरवाजा बन्द कर दिया।

*

येवंश के पार्टी-ऑफिस में उस दिन सवेरे से ही शोरगुल था। हजारों लोग आकर जमा होंगे। खूब जोड़-तोड़ चल रहा था। हर एक को रोटी, आलू-दम देने की जरूरत है। जिन्हें रोटी और आलू-दम न मिले, उनमें हर एक को मिलेगी एक पाव डबल रोटी। खाने के सिवा रुपयों की भी जरूरत है। खाने का घर-घर से इन्तजाम होगा, रुपयों का चन्दे से।

चन्दा क्या आसानी से मिलता है? कांग्रेस को चन्दा देते हैं कल-

कत्ता की बड़ी-बड़ी फ़र्म ! इस पार्टी को कौन देगा ? इस पार्टी की हस्ती ही क्या है ? इस पार्टी के लोगों ने कितने बरस जेल काटी है ?

लेकिन सन्दीप बाबू ने यह सब सोचे बिना ही एक दिन पार्टी की स्थापना की थी। हुगली के एक कॉलेज में नौकरी करते उनके दिमाग़ में एक विचार आया था। इसके बाद इधर-उधर भाषण देते घूमना। सन्दीप बाबू के भाषण की खबर होने से ही सभा में भीड़ हो जाती। उस भाषण से लोग समझते कि कांग्रेस उन्हें बराबर धोखा देती रही है। बहुत दिन पहले कभी कांग्रेस ने घी खाया था, अभी भी हाथ में बची खुशबू से उसका प्रमाण मिल जाता है ! महात्मा गांधी और सी० आर० दास का नाम सुनाकर ही वे अभी तक चला रहे हैं। लेकिन जितने दिन बीत रहे हैं, उतने ही स्वार्थी लोगों की भीड़ वहाँ जमा हो रही है। मीटिंग में यही सब बातें पहले सन्दीप बाबू ने शुरू कीं। ज्यादातर लोग मन लगाकर बातें सुनते। लेकिन लोग हँसी उड़ाते। कहते, सिर्फ़ क्या बातों से ही काम हो जायगा ! काम करना चाहिए। कांग्रेस को हटाना ऐसा आसान नहीं है, बच्चा ! पुलिस-उलिस तो सब उनके ही हाथ में है।

लेकिन ओरियेन्ट सेमिनारी के दल में आने के बाद से दल वास्तव में जम गया। दोनों ही कुँआरे। चरित्र भी अच्छा। देश में तो बहुत-से दल हैं। दल रहें, उनमें ही अपनी जगह बना लेना होगी। आज न सही, कल सही। इस बार के चुनाव में अगर न जीता जा सके तो दूसरी बार होगा। पांच बरस के बाद तो चुनाव होगा ही। अभी से कोशिश करना अच्छा है।

सवेरे से ही सब अपने-अपने काम पर निकल गये। कई दिन से सब लगे हैं। वालंटियरों ने तो कल रात-भर हर दीवार पर पोस्टर लगा दिये। गवर्नमेंट, पुलिस, कैबिनेट सभी एकटक देख रहे हैं—देखें आज क्या हो !

सहसा आशुतोष ने आकर बताया, 'सन्दीप-दा, एक लड़की आकर देवेश-दा की तलाश कर रही है।'

'कौन लड़की ? कहाँ से आयी है ?'

आशुतोष बोला, 'यह नहीं मालूम। गाड़ी से आयी है, गाड़ी के भीतर बैठी है।'

सन्दीप-दा बोले, 'कह दे, देवेश अभी नहीं है।'

लड़का चला गया। सन्दीप-दा, फिर हाथ का काम करने लगे। लेकिन सहसा आशुतोष फिर लौट आया। साथ में थी एक महिला।

आशुतोष बोला, 'सन्दीप-दा, यह आप से बात करना चाहती हैं।'

सन्दीप बाबू ने अच्छी तरह उनकी ओर देखा। बहुत बड़े आदमी

की लड़की लगी। क़ीमती साड़ी-ब्लाउज़-जूते पहनकर आयी थी।

मन्दीप बाबू ने पूछा, 'आप क्या चाहती हैं ?'

पमिली एक कुर्सी पर बैठ गयी। बोली, 'मैं आपकी पार्टी के देवेन बाबू से मिलने आयी हूँ। सुना है कि वे अभी नहीं हैं। इसीलिए आप से बातें करने चली आयी। आप मेरी थोड़ी मदद कर सकते हैं ?'

'क्या मदद ? कहिये।'

'मैं सुरेन्द्रनाथ सान्याल नाम के एक लड़के की तलाश में आयी हूँ। वह देवेन बाबू का दोस्त है। कई दिन से वह घर पर नहीं है। घर के लोग चारों ओर बहुत तलाश कर रहे हैं। थाने पर खबर की है, उसका मामा कल मेरे पास आकर बहुत रो-धो गया। वे बहुत चिन्तित हैं। आप बता सकते हैं कि वे आपकी पार्टी-ऑफिस में हैं या नहीं ?'

मन्दीप बाबू ने बहुत दिनों से राजनीतिक दाँव-पेंच खेले हैं। पार्टी का काम करने में इस ढंग के मामले में बहुत बार उन्हें परेशान होना पड़ा है। लड़की सवेरे ही घर से निकल पड़ी है। फिर भी बहुत सजी हुई है, बदन से सेंट की खुशबू निकल रही है।

बोले, 'आज हमारी पार्टी के बहुत-से लोग यहाँ नहीं हैं। जो हैं वे प्रायः सभी कलकत्ता के बाहर से आये हैं।'

पमिली बोली, 'वह मुझे मालूम है। उसी लिए तो मैं इतने सवेरे उठकर आयी हूँ। सोचा था, नींद से उठने के पहले ही मैं सुरेन को पकड़ूँगी।'

मन्दीप बाबू ने पूछा, 'लेकिन वह लड़का क्या हमारी पार्टी का मेम्बर है ?'

पमिली बोली, 'वह नहीं बता सकती। मेम्बर हो भी सकता है। उसके माँ-बाप कोई नहीं हैं, यहाँ दूसरों के घर उसके मामा ने छुटपन में उसे पाला। वह अगर पार्टी में आये तो उन सब को कैसी परेशानी होगी ?'

मन्दीप बाबू हँसने लगे। बोले, 'क्यों, हमारी पार्टी में आने से लोगों को क्या मुसीबत होगी ?'

'मुसीबत नहीं होगी ? आप कहते क्या हैं ?'

मन्दीप बाबू बोले, 'और माँ-बाप-भाइयों के संरक्षण में रहने से सभी आदमी बन जाते हैं।'

पमिली बोली, 'हाँ, ज़रूर यही होता है।'

मन्दीप बाबू फिर हँसने लगे। बोले, 'तो शायद आप सही नहीं जानतीं। मैंने माँ-बाप-भाई के संरक्षण में भी बहुतों को चोर-डाकू-शराबी-ब्लैकमार्केटियर बनते देखा है। फिर उसके सिवा आजकल सब बाप-माँ

कत्ता की बड़ी-बड़ी फ़र्में ! इस पार्टी को कौन देगा ? इस पार्टी की हस्ती ही क्या है ? इस पार्टी के लोगों ने कितने बरस जेल काटी है ?

लेकिन सन्दीप बाबू ने यह सब सोचे बिना ही एक दिन पार्टी की स्थापना की थी। हुगली के एक कॉलेज में नौकरी करते उनके दिमाग़ में एक विचार आया था। इसके बाद इधर-उधर भाषण देते घूमना। सन्दीप बाबू के भाषण की खबर होने से ही सभा में भीड़ हो जाती। उस भाषण से लोग समझते कि कांग्रेस उन्हें बराबर धोखा देती रही है। बहुत दिन पहले कभी कांग्रेस ने घी खाया था, अभी भी हाथ में बची खुशबू से उसका प्रमाण मिल जाता है ! महात्मा गांधी और सी० आर० दास का नाम सुनाकर ही वे अभी तक चला रहे हैं। लेकिन जितने दिन बीत रहे हैं, उतने ही स्वार्थी लोगों की भीड़ वहाँ जमा हो रही है। मीटिंग में यही सब बातें पहले सन्दीप बाबू ने शुरू कीं। ज़्यादातर लोग मन लगाकर बातें सुनते। लेकिन लोग हँसी उड़ाते। कहते, सिर्फ़ क्या बातों से ही काम हो जायगा ! काम करना चाहिए। कांग्रेस को हटाना ऐसा आसान नहीं है, बच्चा ! पुलिस-उलिस तो सब उनके ही हाथ में है।

लेकिन ओरियेन्ट सेमिनारी के दल में आने के बाद से दल वास्तव में जम गया। दोनों ही कुंआरे। चरित्र भी अच्छा। देश में तो बहुत-से दल हैं। दल रहें, उनमें ही अपनी जगह बना लेना होगी। आज न सही, कल सही। इस बार के चुनाव में अगर न जीता जा सके तो दूसरी बार होगा। पांच बरस के बाद तो चुनाव होगा ही। अभी से कोशिश करना अच्छा है।

सवेरे से ही सब अपने-अपने काम पर निकल गये। कई दिन से सब लगे हैं। वालंटियरों ने तो कल रात-भर हर दीवार पर पोस्टर लगा दिये। गवर्नमेंट, पुलिस, कैबिनेट सभी एकटक देख रहे हैं—देखें आज क्या हो !

सहसा आशुतोष ने आकर बताया, 'सन्दीप-दा, एक लड़की आकर देवेश-दा को तलाश कर रही है।'

'कौन लड़की ? कहां से आयी है ?'

आशुतोष बोला, 'यह नहीं मालूम। गाड़ी से आयी है, गाड़ी के भीतर बैठी है।'

सन्दीप-दा बोले, 'कह दे, देवेश अभी नहीं है।'

लड़का चला गया। सन्दीप-दा, फिर हाथ का काम करने लगे। लेकिन सहसा आशुतोष फिर लौट आया। साथ में थी एक महिला।

आशुतोष बोला, 'सन्दीप-दा, यह आप से बात करना चाहती हैं।'

सन्दीप बाबू ने अच्छी तरह उसकी ओर देखा। बहुत बड़े आदमी

सी लड़की लगी। क़ीमती साड़ी-ब्लाउज़-जूते पहनकर आयी थी।

मन्दीप बाबू ने पूछा, 'आप क्या चाहती हैं?'

पमिली एक कुर्सी पर बैठ गयी। बोली, 'मैं आपकी पार्टी के देवेश बाबू से मिलने आयी हूँ। सुना है कि वे अभी नहीं हैं। इसीलिए आप से बातें करने चली आयी। आप मेरी थोड़ी मदद कर सकते हैं?'

'क्या मदद? कहिये।'

'मैं सुरेन्द्रनाथ सान्याल नाम के एक लड़के की तलाश में आयी हूँ। वह देवेश बाबू का दोस्त है। कई दिन से वह घर पर नहीं है। घर के लोग चारों ओर बहुत तलाश कर रहे हैं। थाने पर ख़बर की है, उसका मामा कल मेरे पास आकर बहुत रो-धो गया। वे बहुत चिन्तित हैं। आप बता सकते हैं कि वे आपकी पार्टी-ऑफ़िस में हैं या नहीं?'

मन्दीप बाबू ने बहुत दिनों से राजनीतिक दाँव-पेंच खेले हैं। पार्टी का काम करने में इस ढंग के मामले में बहुत बार उन्हें परेशान होना पड़ा है। लड़की सवेरे ही घर से निकल पड़ी है। फिर भी बहुत सजी हुई है, बदन से सेंट की ख़ुशबू निकल रही है।

बोले, 'आज हमारी पार्टी के बहुत-से लोग यहाँ नहीं हैं। जो हैं वे प्राय: सभी कलकत्ता के बाहर से आये हैं।'

पमिली बोली, 'वह मुझे मालूम है। उसी लिए तो मैं इतने सवेरे उठकर आयी हूँ। सोचा था, नींद से उठने के पहले ही मैं सुरेन को पकड़ूँगी।'

मन्दीप बाबू ने पूछा, 'लेकिन वह लड़का क्या हमारी पार्टी का मेम्बर है?'

पमिली बोली, 'वह नहीं बता सकती। मेम्बर हो भी सकता है। उसके माँ-बाप कोई नहीं हैं, यहाँ दूसरों के घर उसके मामा ने छुटपन से उसे पाला। वह अगर पार्टी में आये तो उन सब को कैसी परेशानी होगी?'

मन्दीप बाबू हँसने लगे। बोले, 'क्यों, हमारी पार्टी में आने से लोगों की क्या मुसीबत होगी?'

'मुसीबत नहीं होगी? आप कहते क्या हैं?'

मन्दीप बाबू बोले, 'और माँ-बाप-भाइयों के संरक्षण में रहने से सभी आदमी बन जाते हैं।'

पमिली बोली, 'हाँ, ज़रूर यही होता है।'

मन्दीप बाबू फिर हँसने लगे। बोले, 'तो शायद आप सही नहीं जानतीं। मैंने माँ-बाप-भाई के संरक्षण में भी बहुतों को घोर-डाकू-शराबी-ब्लैकमार्केटियर बनते देखा है। फिर उसके सिवा आजकल सब बाप-माँ

ही क्या आदर्श माँ-बाप होते हैं ? उनमें भी तो आजकल तरह-तरह की बुराइयाँ घुस गयी हैं। उस तरह के क्षेत्र से उन माँ-बाप का आश्रय छोड़कर आना ही तो अच्छा है।'

पमिली बोली, 'आपसे मैं बहस करने नहीं आयी हूँ। उसका मामा उस तरह का आदमी नहीं है, चोर-डाकू-शराबी-ब्लैकमार्केटियर कुछ नहीं है।'

सन्दीप बाबू बोले, 'वह नहीं है तो बहुत अच्छी बात है। लेकिन चोर-डाकू-शराबियों के समाज में जो भला आदमी बने रहकर यह सब बर्दाश्त करता है वह भी तो खराब है। चोरी-डकैती-नशाखोरी को प्रश्रय देना भी तो चोरी-डकैती-नशाखोरी में शामिल होता है।'

अब पमिली उठी।

बोली, 'इतनी बातें सुनने मैं आपके पास नहीं आयी। सुरेन यहाँ नहीं है, बात खत्म हो गयी...।'

बात कहकर पमिली बाहर की ओर चली जा रही थी, लेकिन सहसा कमरे में प्रवेश को घुसते देख ताज्जुब से ठिठककर खड़ी हो गयी। थोड़ी देर दोनों के मुँह से कोई बात नहीं निकली।

लेकिन सन्दीप बाबू ने निस्तब्धता तोड़ी।

बोले, 'यह क्या प्रवेश, तुम ?'

प्रवेश बोला, 'सन्दीप-दा, मुझे देखकर आप बहुत ताज्जुब में जरूर पड़ गये होंगे !'

सन्दीप बाबू बोले, 'वह तो पड़ ही गया हूँ, लेकिन बात क्या है, बताओ तो ? पुण्यश्लोक बाबू का कोई सन्देश है क्या ?'

प्रवेश बोला, 'नहीं सन्दीप-दा, उस तरह की कोई बात नहीं है। उसके सिवा आप लोगों का आज जो प्रोग्राम है, उसे बदलने की पुण्यश्लोक बाबू की कोई इच्छा नहीं है। मैं यहाँ लाचार होकर आया हूँ। आया हूँ इन पमिली के लिए...।'

'इनका नाम शायद पमिली है ?'

'आप इन्हें नहीं पहचाते। अभी भी आपके साथ परिचय नहीं हुआ है ?'

सन्दीप बाबू बोले, 'यह कौन है ?'

प्रवेश मन्न अवाक् हो गया। पमिली की ओर देखकर बोला, 'यह क्या, अभी तक तुमने अपना परिचय नहीं दिया ?'

पमिली इतनी देर बाद बोली, 'तुम यहाँ क्या करने आये ?'

प्रवेश बोला, 'तुम्हें लिवाने।'

पमिली बोली, 'मेरे लिए तुम्हें यहाँ आने के लिए किसने कहा ?'

प्रवेश बोला, 'कोई आने को क्यों कहेगा ? मैं अपनी जिम्मेदारी पर ही यहाँ आया हूँ । सवेरे के वक्त तुम घर से चली आयीं, और तुम्हारे इस तरह आने की बात कोई जानता नहीं । चलो !'

'तो मेरे आने-जाने की बात अगर कोई नहीं ही जानता तो तुम्हें ही कैसे पता चला ?'

प्रवेश बोला, 'तुम यहाँ आओगी यह मैं सोच भी नहीं सकता था।'

पमिली बोली, 'तुम क्या समझते हो कि अपनी तबीयत से कहीं जाने की आज़ादी मुझे नहीं है ? मैं आयी थी सुरेन की तलाश में। पता है, वह घर छोड़कर आज कई दिनों से कहीं चला गया है !'

प्रवेश बोला, 'लेकिन उसकी तलाश करने के लिए तो बहुत आदमी हैं। जो उसके अपने आदमी हैं वे तलाश करेंगे। तुम क्यों खोजोगी ? तुम क्या उसकी कोई अपनी हो ?'

सन्दीप बाबू इतनी देर तक इस नाटकीय व्यापार को कुछ समझ न सके। अब वे कुर्सी छोड़कर उठ आये।

बोले, 'क्या बात है, बताओ तो प्रवेश ?'

प्रवेश बोला, 'बाद में बताऊँगा; अभी चलूँ। आज तो आप लोगों का बड़ा हंगामा है; आपको भी बहुत काम हैं।'

आशुतोष अभी तक सब देख रहा था, सब सुन रहा था। प्रवेश और पमिली के चले जाने के बाद सन्दीप-दा की ओर देखकर बोला, 'ये कौन हैं, सन्दीप-दा ?'

सन्दीप बाबू ने उधर ध्यान न देकर कहा, 'कौन जाने किस पार्टी के हैं ? वह प्रवेश तो कभी कांग्रेस में था।'

आशुतोष बोला, 'कांग्रेस के आदमी, यहाँ क्यों आये थे ?'

सन्दीप बाबू बोले, 'आये न, उससे हमारा क्या नुक़सान है ?'

उसके बाद ज़रा रुककर बोले, 'हमारे यहाँ सुरेन सान्याल नाम से कोई है ? तू उसे पहचानता है ?'

आशुतोष बोला, 'है। है नहीं, था।'

'वह कौन है ? कहाँ है ?'

आशुतोष बोला, 'वह देवेश-दा का दोस्त है। कभी दोनों एक ही साथ पढ़ते थे।'

'तो उसे खोजने लड़की यहाँ क्यों आयी ? लड़की के साथ उसका क्या सम्बन्ध ? उसे कैसे मालूम हुआ कि वह यहाँ आता है ?'

उसके बाद सहसा टेलीफ़ोन बजना शुरू हुआ। सन्दीप बाबू ने अपनी मेज़ पर जाकर रिसीवर उठा लिया।
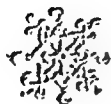
1947 के साल से ही ज़ोरदार आन्दोलन शुरू हुआ था। तब सन्दीपसिंह कॉलेज में लिखते-पढ़ते थे। रूस की ख़बरें लड़कों में पहुँचाने के साथ-ही-साथ सब मिलकर उन्हें निगलते। तब से ही लड़कों में दल बन गये। तभी से लेनिन-ट्राट्स्की-स्तालिन के लेखों का पढ़ना शुरू हुआ। अँग्रेज़ों के रहते समय वह सब काफ़ी लुके-छिपे होता। सबकी नज़रों से छिपाकर। लेकिन जिस दिन से अँग्रेज़ चले गये उसी दिन से नये सिरे से सब पार्टियों की स्थापना हुई। फ़ॉरवर्ड ब्लॉक पहले ही था। कम्युनिस्ट पार्टी भी थी। लेकिन पहले उन लोगों की कारवाइयों में तेज़ी नहीं थी।

लेकिन सबसे बड़ी बात थी कांग्रेस। और कांग्रेस के अर्थ ही थे गांधीजी। महात्मा गांधी। महात्मा गांधी का नाम लेना ही काफ़ी था। सिर्फ़ महात्मा गांधी का नाम लेने से ही लाखों लोगों का सिर श्रद्धा-भक्ति की भावना से झुक जाता था।

सब ठीक था। लेकिन गड़बड़ हुई टुलू की। टूलू आदि आये ं पाकिस्तान से। उनके दल में लाखों लोग थे। एक ओर था बंगाल औ एक ओर था पंजाब। वे धीरे-धीरे सिर उठाने लगे कांग्रेस के ख़िलाफ़।

टुलू के पिता महदेव सरकार ख़फ़ा हो गये गांधी पर।

बोले, 'वह गांधी का बच्चा ही सारी बरबादी की जड़ है।'

बस्ती के और बुज़ुर्ग लोगों की भी वही एक बात थी। बोले, ' बूढ़े ने ही तो देश के दो भाग होने दिये।'

लेकिन जिसको लेकर इतनी बातें थीं, वह कब का मरकर भूत गया था। हिन्दुओं ने ही उसकी हत्या गोली मारकर कर दी थी। क कोई कहने लगे—गांधी देवता थे। या महापुरुष के अवतार थे। और कहने लगा कि वह आदमी बनिया था। हिन्दू लोगों का सत्यानाश पाकिस्तान बनवा दिया।

पुण्यश्लोक बाबू पार्क की हर मीटिंग में लेक्चर देते घूमने लगे। लगे, 'महात्मा गांधी का आदर्श कांग्रेस का आदर्श है। महात्मा ग

स्वप्न को हमने यथार्थ रूप दिया है। हमने दामोदर वैली कार्पोरेशन बनवाया, भाखड़ा-नंगल बाँध बनवाया। हमने भारतवर्ष के करोड़ों भूख से पीड़ित लोगों के मुँह में अन्न देने का प्रयत्न किया; आप लोग कांग्रेस के झंडे के नीचे आकर अहिंसा की शपथ लें। वन्दे मातरम्!'

लेकिन साथ-ही-साथ और भी बहुत-सी पार्टियाँ पार्कों में मीटिंगें करने लगीं। नाम से सब अलग थीं। लेकिन असल में सभी कांग्रेस के विरुद्ध थीं। किसी का नाम था बोल्शेविक पार्टी। किसी का सोशलिस्ट पार्टी। और जितने ही विभिन्न नाम। उतने ही विभिन्न दल थे।

मन्दीर बाबू का दल भी बिलकुल इसी तरह एक पार्टी था। पूर्ण बाबू उसी मीटिंग में खड़े होकर बोलते, 'हम बहुत दिनों तक कांग्रेस के धोखे में भूले रहे। अब अधिक भूलना नहीं चाहते। कांग्रेस अब महात्मा गांधी, सी० आर० दास, लोकमान्य-तिलक की कांग्रेस नहीं रही। आज वह जवाहरलाल, राजेन्द्रप्रसाद, प्रफुल्ल सेन की कांग्रेस है। यह कांग्रेस बिड़ला-गोयनका की दलाल है। मेहनती आदमी और मेहनत-मजूरी करने वाले किसानों और मजदूरों की दुश्मन है। हम इसका नाश चाहते हैं।'

इसी तरह ही धीरे-धीरे दल बड़ा हो गया। दल में आये कारखाने के मजदूर, पाकिस्तान के शरणार्थी और स्कूल-कॉलेजों के लड़के। आये हैवेल, दुर्गापुर और आये उलुबेड़िया, धनबाद, बरासात, वीरभूम के लोग। उनका एकमात्र मकसद था कांग्रेस की जड़ें तक देश की मिट्टी से उखाड़ फेंकना। तभी देश में शान्ति आयेगी। कांग्रेस जितने दिनों रहेगी उतने दिनों गरीब आदमियों के लिए कोई आशा नहीं।

यह हुआ इतिहास।

लेकिन इतिहास तो कोई ठोस, सजीव पदार्थ नहीं है। इसके पीछे रहती है अनेक युगों की आशा-आकांक्षा-इच्छा-अनिच्छा-त्याग-तितिक्षा। इन्हीं सब मनुष्यों की कामना-वासना ही किसी दिन पार्टी बनकर, संस्था बनकर, क्रान्ति का बाना पहनकर साकार हो उठती है।

इस उन्नीस सौ छप्पन साल में ही शायद वह विप्लव आ पहुँचा है।

पुण्डरीक बाबू बहुत उत्तेजित होकर बातें कर रहे थे।

बोले, 'आज लोग कांग्रेस को नहीं मानना चाहते। लेकिन गोयनकाजी, आप ही बताइये, कांग्रेस ने देशवासियों या बंगालियों की उन्नति की कोई व्यवस्था नहीं की?'

गोयनकाजी बोले, 'यह सब कम्युनिस्टों की बातें छोड़ दें, मिस्टर राय। ये सब रूस के दलाल हैं। रूस से उनके पास रुपये आते हैं, यह मालूम है?'

पुण्डरीक बाबू बोले, 'उनकी गुंडा-गर्दी को दूर करने में गवर्नमेंट की

एक मिनट भी नहीं लगेगा, गोयनका जी। एक मिनट में हम उन्हें ठीक कर सकते हैं। लेकिन जवाहरलाल नेहरू भी रोकते हैं, वही मुश्किल है।'

'क्यों, रोकते क्यों हैं ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'यही तो। इसीलिए तो कहता हूँ कि इतना नरम दिल लेकर प्राइम-मिनिस्ट्री नहीं चलती। सिर्फ़ कहते हैं—जनता का साथ मत छोड़िये। जनता ने ही हमें गद्दी पर बिठाया है। जनता ही हमारी मालिक है। जनता को हमें हाथ में रखना होगा। क्योंकि वे ही वोटर हैं।'

'किन्तु हुज़ूर, तब तो पुलिस-मिलिटरी हटा देना चाहिए।'

सहसा कान में गाड़ी की आवाज़ आयी। पुण्यश्लोक बाबू ने खिड़की से बाहर झाँककर देखा।

पमिली पहली गाड़ी से आ रही थी और पीछे थी प्रवेश की गाड़ी।

पमिली गाड़ी से उतरकर सीधे ज़ीने से ऊपर की ओर चढ़ने लगी।

पुण्यश्लोक बाबू कमरे से निकले। प्रवेश गाड़ी से उतरकर सीधे पुण्यश्लोक बाबू की ओर बढ़ आया।

पुण्यश्लोक बाबू पहले ही बोले, 'कहाँ मिली पमिली ?'

प्रवेश बोला, 'मैंने जो कहा था, ठीक वही। पमिली पूर्ण बाबू की पार्टी के ऑफ़िस गयी थी।'

पुण्यश्लोक बाबू चौंक उठे। बोले, 'यह क्या ? वहाँ वह क्या करने गयी थी ?'

प्रवेश बोला, 'यह ठीक नहीं मालूम।'

'तो वहाँ जाकर तुमने क्या देखा ? वह वहाँ क्या कर रही थी ? ऑफ़िस में और कौन था ?'

'और खास कोई नहीं था। उन्हीं सन्दीपसिंह के साथ बैठे-बैठे बातें करते देखा।'

'क्या बातें कर रही थी ?'

प्रवेश बोला, 'वह मैं सुन न सका। मेरे पहुँचने के साथ-ही-साथ उनकी बातें बन्द हो गयीं। सन्दीपसिंह ने मुझसे पूछा था कि पमिली कौन है ?'

'तो उसे सन्दीप पहचानता नहीं ?'

'ऐसा ही लगा।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अगर जान-पहचान नहीं है तो पमिली वहाँ क्या करने गयी थी ?'

प्रवेश बोला, 'मैं ठीक समझ नहीं पाया। लगता है, वही हम लोगों के गुरुजन की तलाश में गयी हो। वह तो कई दिनों से घर से भागा हुआ है।'

'तो उसके लिए उन्हें इतनी फिक्र क्यों है ? वह उसका कौन है ?'

प्रवेश पहले तो चुप रहा। उसके बाद बोला, 'वह मुझे नहीं मालूम।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम जरा ठहरो।'

कहकर फिर अपने ऑफिस के कमरे में गये। गोयनकाजी उस वक्त भी उसी कुर्सी पर बैठे हुए थे।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'गोयनकाजी, आज आप जायें, आज मुझे बहुत काम है। मैं अभी फिर राइटर्स बिल्डिंग जाऊँगा। आज कैबिनेट की इम्पॉर्टेंट मीटिंग है।'

गोयनकाजी उठे। बोले, 'ठीक है, तो मैं फिर आऊँगा।'

गोयनकाजी के चले जाते ही पुण्यश्लोक बाबू फिर बाहर आये। उसके बाद प्रवेश को फिर रुकने को कह ऊपर चले गये। जाकर एकदम सीधे पद्मिनी के कमरे में घुस गये।

पद्मिनी कमरे में तभी आयी थी। पीछे से पुण्यश्लोक बाबू ने गम्भीर आवाज में पुकारा, 'पद्मिनी !'

पद्मिनी शायद इसके लिए तैयार ही थी। पीछे मुड़कर पुण्यश्लोक बाबू के आमने-सामने खड़ी हो गयी।

पुण्यश्लोक बाबू ने पूछा, 'इतने सवेरे तुम कहाँ गयी थीं ?'

पद्मिनी बोली, 'प्रवेश से तो तुमने सब सुन लिया है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मैं जो पूछ रहा हूँ उसका जवाब दो।'

पद्मिनी बोली, 'क्यों, प्रवेश की बात पर क्या तुम्हें विश्वास नहीं हुआ ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'प्रवेश की बात ही अगर सच है, तो मुझे भी पूछने की जरूरत है कि इसमें तुम्हारा मतलब क्या है ?'

पद्मिनी बोली, 'जिस तरह तुम्हारा अधिकार है, उसी तरह मेरा भी जहाँ तबीयत हो वहाँ जाने का अधिकार है।'

'यही क्या मेरी बात का जवाब हुआ ?'

पद्मिनी मानो झगड़ा करने के लिए तैयार ही थी। बोली, 'जवाब न देने का अधिकार भी मेरा है। या वह अधिकार भी मेरा नहीं है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'सीधी जबान में सहज होकर बात करो।'

पद्मिनी बोली, 'तो तुम ही क्या सहजता से बातें कर रहे हो ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अब सहजता से ही बात कर रहा हूँ। तुम मन्दीर के ऑफिस क्यों गयी थीं ? पता नहीं है तुमको कि वे लोग कांग्रेस के कितने बड़े दुश्मन हैं ?'

पद्मिनी बोली, 'कौन किसके दुश्मन हैं, मुझे यह जानने की जरूरत नहीं।

है। लेकिन आदमी आदमी के पास न जा सके, क्या तुम यही कहना चाहते हो ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन तुमको मालूम है कि उन्होंने आने वाले चुनाव में हमारे ख़िलाफ़ पूर्ण बाबू को खड़ा किया है ? वही पूर्ण विश्वास जो हमारे स्कूल में डेढ़ सौ रुपये महीने पर मास्टरी करता था।'

पमिली बोली, 'वह सब ही जानते हैं, सभी जानते हैं कि हम बड़े लोग हैं। सभी जानते हैं कि तुम्हारे पास बहुत-सा रुपया है।'

'देखो...।'

पुण्यश्लोक बाबू एक कुर्सी पर बैठ गये। बोले, 'पमिली, तुम बहुत उत्तेजित हो गयी हो। कुर्सी पर बैठ जाओ। तुमसे मैं कुछ बातें करना चाहता हूँ। बैठो, तुम उस कुर्सी पर बैठो।'

पमिली के सामने के सोफ़े पर बैठते ही पुण्यश्लोक बाबू ने पूछा, 'बताओ, तुम उनकी पार्टी के ऑफ़िस क्यों गयीं ? तुम्हें क्या हो गया है ? तुम जानती हो, मेरी अपनी एक मर्यादा है। समाज के प्रति, देश के प्रति मेरी कोई ज़िम्मेदारी है।'

पमिली कुछ न बोली। उसी तरह चुप रही।

पुण्यश्लोक बाबू कहते गये, 'तुम्हारे कारण मेरी बदनामी हो, क्या यह कहना चाहती हो ?'

पमिली बोली, 'तो तुम्हारी बदनामी हो तो मैं क्या करूँ, मेरी भी तो बदनामी का डर रह सकता है।'

'तुम्हारी बदनामी ! तुम्हारी किस बात की बदनामी का डर है ?'

पमिली बोली, 'तुम्हारे कुछ ग़लत काम करने से क्या मैं बदनामी से बच सकती हूँ ? तुम्हारे कारण मेरी भी तो बदनामी होती है !'

'मेरे कारण तुम्हारी बदनामी होती है ?'

पमिली बोली, 'हाँ, देख नहीं रहे हो कि कलकत्ता-भर में क्या-क्या पोस्टर लगे हैं !'

'यह तो देखे हैं। वह तो उनके जुलूस के पोस्टर हैं।'

'लेकिन रास्ते पर लड़के तुम्हारी पार्टी के नाम पर किन शब्दों में नारे दे रहे हैं, पता है ?'

'वह तो पता है। राजनीति में रहने से वह सब सुनना ही पड़ता है। गांधी के नाम पर लोग कितना-कुछ कहते हैं, जवाहरलाल नेहरू के नाम पर भी कितना-कुछ कहते हैं। उस सबको सुनने से क्या काम चलता है ?'

पमिली बोली, 'अपने नाम के साथ तुम गांधी-नेहरू का नाम मत लो।'

पुण्यश्लोक बाबू जैसे चौंक पड़े हों। अपनी लड़की के मुँह में किसी दिन ऐसी बात सुनने को मिलेगी, यह मन में भी नहीं आया था।

सफा होकर बोले, 'तुम्हारा क्या दिमाग़ खराब हो गया है, पमिली ?' तुम यह क्या रही हो ? तुमको नहीं मालूम कि पिता के साथ किस तरह बात करना चाहिए ? तुम्हारे इतने पढ़ने-लिखने का आख़िर यही नतीजा है ?'

पमिली बोली, 'तुमने मुझे लिखना-पढ़ना सिखाया ही कहाँ ?'

'इसके मतलब ?'

पमिली बोली, 'जो कह रही हूँ, ठीक कह रही हूँ—मुझे तुमने सिर्फ़ शराब पीना सिखाया है !'

पुण्यश्लोक बाबू के सिर पर गाज गिरने पर भी शायद वह ऐसे न चौंकते। वह कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुए। दिमाग़ गरम हो गया। आज तीसरे पहर जुलूस निकलेगा; पूरे कलकत्ता के लोग आज व्यग्र हैं—क्या होगा, क्या होगा ! उनके इतने दिनों के जीवन-प्रवाह में बाधा पड़ने को है। बहुत बरसों के प्रयत्न से वे आज उन्नति और पद के शिखर पर बैठे हैं। इस शिखर पर होने की वजह से ही आज उन्हें चोट पहुँचाने के प्रयत्न में सब लगे हैं। कई दिनों से वे इस पद-मर्यादा की बात सोचकर छटपटाते घूम रहे हैं। पर की ओर वे इतना वक़्त तक देख ही नहीं पाये। सहसा पमिली की बात से जैसे पहली बार उनकी नज़र गयी हो। पमिली की ओर बहुत देर तक तीखी नज़र से देखते रहे। पमिली ने कहा क्या ?

पमिली ने फिर बात कही।

बोली, 'हाँ, तुमने मुझे सिर्फ़ शराब पीना ही सिखाया।'

पुण्यश्लोक बाबू का सारा शरीर उस वक़्त थर-थर काँप रहा था। बोले, 'इतने दिनों बाद तुम्हारे मुँह से मुझे यह बात सुनने को मिली ? मैंने तुमको शराब पीना सिखाया ?'

'हाँ, तुम्हारे सिवा और कौन सिखायेगा ?'

'मैंने ? फिर कह रही हो, मैंने ? मैंने तुमको शराब पीना सिखाया ?'

पमिली बोली, 'हाँ, हाँ, हाँ, और कितनी बार कहूँ ? घर पर तुमने अमेरिकनों को कॉकटेल पार्टियाँ नहीं दी ? उसी पार्टी में तुमने मेरा सबसे परिचय नहीं कराया ? वे जब मेरे साथ शराब पीकर नाचते थे तो तुम मन-ही-मन खुश नहीं होते थे ? बताओ, सच बात कह रही हूँ या नहीं ? जिससे मैं उनके साथ अच्छी तरह नाच सकूँ, मिल-जुल सकूँ, उसी के लिए तुमने मुझे कान्वेंट में नहीं पढ़ाया ? नाच के स्कूल में भरती कराकर मुझे नाच नहीं सिखाया ?'

'हां, सिखाया। लेकिन वह किसलिए ? तुम्हारे ही भले के लिए।'

पमिली भी तब उठ खड़ी हुई। बोली, 'न, मेरे भले के लिए नहीं, तुम्हारे अपने भले के लिए। तुम्हारी अपनी जिससे उन्नति हो उसके लिए। तुम स्वार्थी हो, इसीलिए केवल अपनी बात ही सोचकर तुमने मेरा अपने लक्ष्य में उपयोग किया।'

पुण्यश्लोक बाबू क्या करें, यह न समझकर उठ न सके।

बोले, 'इतने दिनों बाद तुम ये बातें कह रही हो, पमिली ?'

पमिली बोली, 'इतने दिनों बाद कहने को मिला है, इसलिए मैं आज खुश हूँ। इतने दिनों बाद अत्याचार की चरम सीमा पर तुम आ पहुँचे हो। इतने दिनों तुमने मेरा कितनी तरह उपयोग नहीं किया ? जिससे तुम्हारा सम्मान बढ़े, प्रतिष्ठा बढ़े, उसके लिए मुझे सजाया गया, तुम्हारे कारण उनके साथ मिलकर उन्हें खुश करना पड़ा। पार्टी में जिससे तुम्हारा नाम हो, पोजीशन हो, तुम जिससे मिनिस्टर बनो उसके लिए तुमने मुझे ठोक-ठोक के ठीक बना दिया था। बताओ मैं, और कितने दिनों तक यह सब बर्दाश्त करूँ, और कितने दिनों तक कोई इंसान बर्दाश्त कर सकता है ?'

कहते-कहते पमिली रो पड़ी। सिर नीचा कर दोनों हाथों से मुँह ढाँप लिया।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'सारी ग़लती पमिली, सारी ग़लती तुम्हारी है। पता नहीं, तुम्हारे दिमाग़ में यह सब फ़ितूर किसने घुसा दिया है ? लेकिन विश्वास करो, तुम्हारी ये सब धारणाएँ ग़लत हैं।'

पमिली बोली, 'ग़लत धारणाएँ ? तो मैं जब ड्रिंक करके दिन के वक़्त घर लौटी थी, तब तुमने कुछ क्यों नहीं कहा ? मैं जब प्रवेश के साथ इतनी रात को बाहर रही थी, तब तुमने मुझे डाँटा क्यों नहीं ? मुझे रोका क्यों नहीं ? कहो, उसके बाद भी तो तुम मुझसे क्लब जाने को कहते रहे। उसके बाद भी तो तुम ने प्रवेश को हमारे घर आने दिया ?'

पुण्यश्लोक बाबू को लगा कि पमिली मानो उनके चेहरे के आगे एक आईना लिये खड़ी है, और उस आईने में जैसे उनके चेहरे के चित्र का असल साफ़-साफ़ दिखायी पड़ने लगा हो। पमिली की बातें जैसे उनके ही अन्तर का विश्लेषण हों। सच ही तो, पमिली जो कह रही है उसका एक अक्षर भी झूठ नहीं है। अपना मूल्यांकन जैसे पमिली ही स्पष्ट रूप से एक-एक कर किये दे रही है। अभी उस दिन तो पमिली पैदा हुई। यही तो ज़रा-सी दुबली-पतली लड़की थी। इसी बीच इतना कुछ वह कैसे सोचना-समझना सीख गयी ?

पुण्यश्लोक बाबू पमिली की ओर ग़ौर से देखने लगे।

सच ही तो, पमिली तो अब छोटी नहीं है। इतने दिनों तक वे अपने पद, सम्मान, प्रतिष्ठा, मर्यादा की बात ही तो केवल सोचते आये, पद्मिनी की बात तो कहीं कभी नहीं सोची! सोचा था कि पमिली को गाड़ी दी है, पमिली के खर्च के लिए मोटी रकम दी है, इसके बाद उसे कुछ नहीं चाहिए। पुण्यश्लोक बाबू को परिपूर्ण दायित्व से मुक्ति देकर वह अपने ख़यालों में, अपनी ख़ुशियों में, घूमने-फिरने में मस्त रहेगी।

पमिली फिर सिर उठाकर बोलने लगी, 'और मेरी माँ! उनका भी, लगता है, इसी तरह उपयोग किया गया और बँधा किया इसीलिए माँ ने तुम्हें छोड़कर मुक्ति पायी।'

पुण्यश्लोक बाबू स्वर को करुण बनाकर बोले, 'तुम चुप रहो पमिली, तुम बहुत उत्तेजित हो गयी हो, जो नहीं कहते वह भी कहना शुरू कर दिया है।'

'न, न, मैं बिलकुल उत्तेजित नहीं हूँ। मैं जो कह रही हूँ, सब सोच-समझकर कह रही हूँ। तुम छाती पर हाथ रखकर कहो तो कि माँ के मर जाने के बाद तुमने ठण्डी साँस ली थी या नहीं?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'यह क्या, तुमने देखा नहीं, तुम्हारी माँ की कितनी बड़ी तसवीर मेरे कमरे में लगी है?'

पमिली बोली, 'ठहरो। यह सब कहकर तुम मुझे भुला नहीं सकते। पार्क स्ट्रीट के मोड़ पर भी तो गांधी की मूर्ति तुम लोगों ने लगा रखी है, लेकिन किसी दिन भी गांधी की बात एक मिनट के लिए भी याद आती है? तसवीर टाँगकर ही शायद शोक मनाना पूरा हो जाता है!'

पुण्यश्लोक बाबू चुप रहे। कोई जवाब न दे सके।

उसके बाद थोड़ी देर बाद बोले, 'तो क्या कहना चाहती हो मैंने तुम सबको सिर्फ़ धोखा ही दिया है?'

'बिलकुल धोखा दिया है। नहीं तो क्यों तुमने सुव्रत को अमेरिका भेज दिया?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'क्यों, उसे अमेरिका भेजने में भी मेरा अपराध हो गया?'

पमिली बोली, 'तुम अपने मन से पूछो, क्यों तुमने सुव्रत को अमेरिका भेजा?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'सुव्रत मेरा बेटा है, उसके भले के लिए ही उसे विदेश भेजा है—यह तो पहले ही कहा है।'

पमिली बोली, 'यह तो सतही जवाब है। बाहर के लोगों को तुम यह बात कहकर समझा सकते हो। लेकिन असल में तुम अपने बेटे-बेटी को

ज़िम्मेदारी से छुटकारा पाना चाहते हो। हम लोग तुम्हारे लिए बोझ हैं; बोझ के सिवा हम लोग कुछ नहीं हैं।'

'लेकिन पता है, बरस में उसके लिए मुझे कितना रुपया ख़र्च करना पड़ता है?'

पमिली बोली, 'लेकिन उसके बदले में तुम्हारा कितना बोझ कम हो गया है? उसके बदले कितने निश्चिन्त होकर तुम निरन्तर स्वार्थ-सिद्धि कर पा रहे हो। ठीक इसीलिए तुम मुझे हाथ खोलकर पैसा देते हो, जिससे कि मैं तुम्हारे गले में बँधी न रहूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू पास आये। पमिली के सिर पर हाथ रखकर सान्त्वना के ढंग से कहने लगे, 'तुम्हारे मन की भूल है, पमिली। सिर्फ़ मन की भूल है। ऐसी ग़लत धारणाएँ कैसे तुम्हारे दिमाग़ में घुसीं, यही सोच रहा हूँ।'

सिर पर हाथ पड़ते ही पमिली उसे हटाकर अपने बिस्तर पर जाकर लेट गयी। उसके बाद तकिये में सिर गड़ाकर लेटी रही।

पुण्यश्लोक बाबू धीरे-धीरे पमिली के बिस्तर के पास जाकर खड़े रहे। उन्हें आज बहुत काम हैं। ज़रा भी समय नहीं है। तरह-तरह की चिन्ताएँ कई दिन से दिमाग़ में घूम रही हैं। दिमाग़ में इन चिन्ताओं का उठना सीधी बात है, लेकिन उस स्थिति को सही रखने की जो दुर्भावना है उसकी यन्त्रणा कौन समझेगा? पूरे समाज के लोगों ने मिलकर आज उन्हें हटा देने के लिए जो षड्यन्त्र किया है उसे विफल करने की फ़िक्र में ही वे आज बेचैन हैं। कल से ही तो हर दीवार पर पोस्टर लगे हैं। उनकी अपनी दीवार पर भी पोस्टर लगाये गये। आज वही जुलूस है। और उसके बाद ही आ रहा है चुनाव। इन सारी भावनाओं ने इतना दुर्वह बनकर उन्हें केवल पीड़ा ही पहुँचायी है। आज इस समय पमिली की बात ने फिर एक नयी समस्या के बोझ से वे बहुत खिन्न हो गये हैं। इससे छुटकारे का क्या उपाय है? पमिली उनकी दुश्चिन्ताओं का बोझ इस तरह बढ़ा देगी, यह तो वे समझ नहीं सके। और पमिली और सुव्रत के लिए उन्होंने क्या कुछ भी नहीं किया? उन लोगों के लिए इतना रुपया ख़र्च करना भी क्या मामूली बात है? बेटे-बेटी के निकट उनका कोई मूल्य नहीं? इन लोगों ने इस सब में मेरी केवल स्वार्थ-सिद्धि की झलक ही देखी? प्यार का ज़रा-सा छींटा भी नहीं देख पाये? सचमुच में क्या वह स्वार्थी हैं? सचमुच क्या वह अपनी मर्यादा, प्रतिष्ठा, सम्मान की बात ही सोचते हैं? लड़के-लड़की के भविष्य की चिन्ता क्या उनके दिमाग़ में ज़रा भी नहीं आती?

पुण्यश्लोक बाबू ने दुलार से पुकारा, 'पमिली।'

सोचा, शायद दुलार करने से पमिली थोड़ा शान्त होगी। मुंह नीचा

कर पमिली के मुंह के पास लाकर फिर पुकारा, 'पमिली बेटी...।'

पमिली सहसा गरम हो उठी। मुंह उठाकर गुस्से में भरकर बोली, 'तुम जाओ, तुम मेरे कमरे से निकल जाओ, निकल जाओ।'

पुण्यश्लोक बाबू एक कदम पीछे आ गये। ऐसी बात राइटर्स बिल्डिंग में उनसे कोई कहता तो उसकी नौकरी उसी वक्त चली जाती। लेकिन बेटी से यह जवाब पाकर सिर्फ दुख हुआ। परम मर्मांतक दुख हुआ। कुछ देर चुपचाप वहीं खड़े रहे। खड़े-खड़े ही पमिली की ओर देखते रहे। या शायद पमिली की ओर मुंह करके अपनी ही ओर देखते रहे। खुद को ही टुकड़े-टुकड़े कर देखना चाहा। लेकिन अपनी दीन मूर्ति देखकर जैसे खुद ही चौंक पड़े! सहसा अपने निकट अपने को बहुत ही घृणित-से लगे। वे हैरान हो उठे।

लेकिन उसी क्षण रघु की आवाज से जैसे मुक्ति मिल गयी। 'बाबू आपका टेलीफोन।'

प्रवेश उस समय भी एकमंजिले के गलियारे में राह देख रहा था।

ऊपर से पुण्यश्लोक बाबू को जीने से उतरते देखकर उनकी ओर देखा। इतनी देर तक पमिली से क्या बातें हो रही थी, पता नहीं। उसे पुण्यश्लोक बाबू ठहरने को कहकर गये थे। प्रवेश ने पुण्यश्लोक बाबू के मुंह की ओर देखा। प्रवेश को लगा जैसे पुण्यश्लोक बाबू के चेहरे की शकल बिलकुल बदल गयी है। जैसे इतने थोड़े समय में ही पुण्यश्लोक बाबू की उम्र बहुत तेजी से बढ़ गयी हो। अपनी ओर ही आंखें किये उतर रहे हैं, जैसे किसी ओर भी उनकी नजर पड़ना सम्भव नहीं।

जिससे कि प्रवेश को वे देख सकें—इसीलिए पुण्यश्लोक बाबू की दृष्टि की सीमाओं में जाकर वह खड़ा हो गया।

तभी पुण्यश्लोक बाबू ने उसे देखा।

बोले, 'तुम जरा ठहरो प्रवेश, मैं टेलीफोन पर बात करके आ रहा हूं।' कहकर चले जा रहे थे, लेकिन फिर रुके। लौटकर खड़े होकर कहा, 'तुम्हारे साथ आते वक्त पमिली ने तुमसे कुछ कहा था, प्रवेश?'

प्रवेश बोला, 'हम एक साथ तो आये नहीं। पमिली अपनी निजी गाड़ी से आयी थी। क्यों, आपसे कुछ कहा है?'

'नहीं, कुछ कहा नहीं। लेकिन लगा जैसे पमिली बहुत उद्विग्न हो गयी है। क्या हुआ, समझ में नहीं आता। और आज मुझे इतना काम है। यह सब सोचने का वक्त ही नहीं है। कैबिनेट की मीटिंग है। उसके बाद एस्प्लेनेड रोड पर आज उनका जुलूस है...।'

प्रवेश बोला, 'उसके लिए आप इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हैं? पुलिस

ज़िम्मेदारी से छुटकारा पाना चाहते हो। हम लोग तुम्हारे लिए बोझ हैं; बोझ के सिवा हम लोग कुछ नहीं हैं।'

'लेकिन पता है, बरस में उसके लिए मुझे कितना रुपया खर्च करना पड़ता है?'

पमिली बोली, 'लेकिन उसके बदले में तुम्हारा कितना बोझ कम हो गया है? उसके बदले कितने निश्चिन्त होकर तुम निरन्तर स्वार्थ-सिद्धि कर पा रहे हो। ठीक इसीलिए तुम मुझे हाथ खोलकर पैसा देते हो, जिससे कि मैं तुम्हारे गले में बँधी न रहूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू पास आये। पमिली के सिर पर हाथ रखकर सान्त्वना के ढंग से कहने लगे, 'तुम्हारे मन की भूल है, पमिली। सिर्फ़ मन की भूल है। ऐसी ग़लत धारणाएँ कैसे तुम्हारे दिमाग़ में घुसीं, यही सोच रहा हूँ।'

सिर पर हाथ पड़ते ही पमिली उसे हटाकर अपने बिस्तर पर जाकर लेट गयी। उसके बाद तकिये में सिर गड़ाकर लेटी रही।

पुण्यश्लोक बाबू धीरे-धीरे पमिली के बिस्तर के पास जाकर खड़े रहे। उन्हें आज बहुत काम हैं। ज़रा भी समय नहीं है। तरह-तरह की चिन्ताएँ कई दिन से दिमाग़ में घूम रही हैं। दिमाग़ में इन चिन्ताओं का उठना सीधी बात है, लेकिन उस स्थिति को सही रखने की जो दुर्भावना है उसकी यन्त्रणा कौन समझेगा? पूरे समाज के लोगों ने मिलकर आज उन्हें हटा देने के लिए जो षड्यन्त्र किया है उसे विफल करने की फ़िक्र में ही वे आज बेचैन हैं। कल से ही तो हर दीवार पर पोस्टर लगे हैं। उनकी अपनी दीवार पर भी पोस्टर लगाये गये। आज वही जुलूस है। और उसके बाद ही आ रहा है चुनाव। इन सारी भावनाओं ने इतना दुर्वह बनकर उन्हें केवल पीड़ा ही पहुँचायी है। आज इस समय पमिली की बात ने फिर एक नयी समस्या के बोझ से वे बहुत खिन्न हो गये हैं। इससे छुटकारे का क्या उपाय है? पमिली उनकी दुश्चिन्ताओं का बोझ इस तरह बढ़ा देगी, यह तो वे समझ नहीं सके। और पमिली और सुव्रत के लिए उन्होंने क्या कुछ भी नहीं किया? उन लोगों के लिए इतना रुपया खर्च करना भी क्या मामूली बात है? बेटे-बेटी के निकट उनका कोई मूल्य नहीं? इन लोगों ने इस सब में मेरी केवल स्वार्थ-सिद्धि की झलक ही देखी? प्यार का ज़रा-सा छींटा भी नहीं देख पाये? सचमुच में क्या वह स्वार्थी हैं? सचमुच क्या वह अपनी मर्यादा, प्रतिष्ठा, सम्मान की बात ही सोचते हैं? लड़के-लड़की के भविष्य की चिन्ता क्या उनके दिमाग़ में ज़रा भी नहीं आती?

पुण्यश्लोक बाबू ने दुलार से पुकारा, 'पमिली।'

सोचा, शायद दुलार करने से पमिली थोड़ा शान्त होगी। मुँह नीचा

कर पमिली के मुंह के पास लाकर फिर पुकारा, 'पमिली बेटी...।'

पमिली सहसा गरम हो उठी। मुंह उठाकर गुस्से में भरकर बोली, 'तुम जाओ, तुम मेरे कमरे से निकल जाओ, निकल जाओ।'

पुण्यश्लोक बाबू एक कदम पीछे आ गये। ऐसी बात राइटर्स बिल्डिंग में उनसे कोई कहता तो उसकी नौकरी उसी वक्त चली जाती। लेकिन बेटी से यह जवाब पाकर सिर्फ दुख हुआ। चरम मर्मान्तक दुख हुआ। कुछ देर चुपचाप वहीं खड़े रहे। खड़े-खड़े ही पमिली की ओर देखते रहे। या शायद पमिली की ओर मुंह करके अपनी ही ओर देखते रहे। खुद को ही टुकड़े-टुकड़े कर देखना चाहा। लेकिन अपनी दीन मूर्ति देखकर जैसे खुद ही चौंक पड़े। सहसा अपने निकट अपने को बहुत ही घृणित-से लगे। वे हैरान हो उठे।

अंतिम उसी क्षण रघु की आवाज से जैसे मुक्ति मिल गयी। 'बाबू, आपका टेलीफोन।'

प्रवेश उस समय भी एकमंज़िले के गलियारे में राह देख रहा था।

ऊपर से पुण्यश्लोक बाबू को जीने से उतरते देखकर उनकी ओर देखा। इतनी देर तक पमिली से क्या बातें हो रही थीं, पता नहीं। उसे पुण्यश्लोक बाबू टहलने को कहकर गये थे। प्रवेश ने पुण्यश्लोक बाबू के मुंह की ओर देखा। प्रवेश को लगा जैसे पुण्यश्लोक बाबू के चेहरे की शकल बिलकुल बदल गयी है। जैसे इतने थोड़े समय में ही पुण्यश्लोक बाबू की उम्र कही तेज़ी से बढ़ गयी हो। अपनी ओर ही आँखें किये उतर रहे हैं, जैसे किसी और भी उनकी नज़र पड़ना सम्भव नहीं।

जिससे कि प्रवेश को वे देख सकें—इसीलिए पुण्यश्लोक बाबू की दृष्टि की सीमाओं में आकर वह खड़ा हो गया।

तभी पुण्यश्लोक बाबू ने उसे देखा।

बोले, 'तुम जरा ठहरो प्रवेश, मैं टेलीफोन पर बात करके आ रहा हूँ।' कहकर चले जा रहे थे, लेकिन फिर रुके। लौटकर खड़े होकर कहा, 'तुम्हारे साथ आते वक्त पमिली ने तुमसे कुछ कहा था, प्रवेश?'

प्रवेश बोला, 'हम एक साथ तो आये नहीं। पमिली अपनी निजी गाड़ी में आयी थी। क्यों, आपसे कुछ कहा है?'

'नहीं, कुछ कहा नहीं। लेकिन लगा जैसे पमिली बहुत उद्विग्न हो गयी है। क्या हुआ, समझ में नहीं आता। और आज मुझे इतना काम है। यह सब सोचने का वक़्त ही नहीं है। कैबिनेट की मीटिंग है। उसके बाद एस्प्लेनेड रोड पर आज उनका जुलूस है...।'

प्रवेश बोला, 'उसके लिए आप इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हैं? पुलिस-

कमिश्नर को तो सब मालूम ही है।'

'वह होने पर भी समझते नहीं हो, अगर एक बार गोली चल गयी तो कितनी मुश्किलें पैदा होंगी। सारी मुसीबत तो मिनिस्टर को ही बर्दाश्त करना होगी। तब शायद इन्क्वायरी कमीशन बैठाने के लिए विरोधी-दल ज़िद करेंगे। सब लोगों ने मिलकर किस झमेले में डाल दिया है!'

कहकर फिर टेलीफ़ोन की बात याद आते ही उस ओर चले गये। जाते वक़्त कह गये, 'तुम चले न जाना प्रवेश, तुमसे मुझे ख़ास बातें करना है, मैं टेलीफ़ोन सुनकर आ रहा हूँ।'

प्रवेश उसी हालत में वहीं चहलक़दमी करते हुए राह देखने लगा।
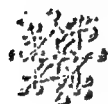
कलकत्ता के जीवन में कैसी बुरी घड़ी आती जा रही थी, वह उस समय भी कोई समझ न सका था। किसी ज़माने में किसी दिन कांग्रेस का जन्म इस कलकत्ता में ही हुआ था। उसके बाद बहुत पहले एक दिन कांग्रेस ने पूरे भारतवर्ष के करोड़ों लोगों के मन में स्थायी जगह बना ली थी। वह सारी कहानी आज के इस पुण्यश्लोक बाबू के युग के सब लोग कैसे भूल गये? कब, 'वन्दे मातरम्' उच्चारण करने के अपराध में ही तमाम लोगों ने हँसते-हँसते फाँसी के तख़्ते पर प्राण उत्सर्ग किये थे, कब फिर एक दिन 'जय हिन्द' के आविर्भाव से उस 'वन्दे मातरम्' को सब भूल गये, वह भी आज किसी के ध्यान में नहीं है। उसके बाद फिर कब सब-कुछ भुलाकर चुपचाप 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' आ पहुँचा—उसका भी किसी को कभी पता न लगा।

शायद ऐसा ही होता है। यह केवल इतिहास ही बता सकता है कि इसकी परिणति कहाँ है। नहीं तो पुण्यश्लोक बाबू के पूर्व-पुरुषों ने जिस दिन इस शहर में रहना आरम्भ किया, उस दिन क्या उन्होंने कल्पना की थी कि उनके ही वंश की एक सन्तान किसी दिन अपने अस्तित्व की रक्षा के संघर्ष में क्षत-विक्षत होकर तकिये में मुँह गाड़कर रोयेगी? अगाध ऐश्वर्य और असीम क्षमता पाकर भी हर क्षण आशंकित रहकर सामान्य आदमी के निकट दया के लिए हाथ पसारकर वोट की भीख पर अपना मान-सम्मान बचायेगा।

और शिवशम्भु चौधरी ?

यहाँ लाखों रुपयों की कलकत्ता की स्थावर सम्पत्ति बन जाने के बाद एकमात्र सन्तान का भविष्य उन्होंने निश्चिन्त करना चाहा था। सोचा था, लड़की की शादी कर दो और उसके लिए छोड़ दो इतने रुपयों की जायदाद ! इसके सुखद भविष्य को कौन छोड़ सकता है ?

हाय रे मनुष्य, और हाय रे मनुष्य की साध-आह्लाद-वासना-कामना !

सुधन्य के मन में भी वही बात उठ रही थी। माधव कुंडू लेन की गली में घूमते-घूमते बार-बार इष्ट देवता का स्मरण कर रहा था, 'हे भगवान्, घर में घुसकर देखूँ कि माँ जी खतम हो गयी हैं। हे माँ काली, मेरी मनोकामना पूरी करो, माँ !'

लेकिन घर के गेट के पास आते ही चौंक उठा। एक बार सोचा कि भाग जाये। उसके बाद सोचा, जब इतनी दूर आया ही है तो देखा ही जाये कि हो क्या रहा है !

उस वक्त तीन लाल पगड़ी पहने पुलिस वाले लाठी लिये खड़े थे। अचानक पुलिस क्यों आयी ? इस घर में क्या हो गया है ?

सड़क पर एक आदमी पास ही खड़ा था। सुधन्य ने उसी से जाकर पूछा, 'इस घर में क्या हुआ है, भाई ?'

उस आदमी ने कहा, 'क्या पता ! सुनते हैं कि घर के अन्दर चोरी हुई है।'

चोरी ! सुधन्य ताज्जुब में पड़ गया। इस घर में इतना बड़ा गेट। दिन-रात दरबान बैठा रहता है ! फिर भी चोरी ! चोर की हिम्मत कम नहीं है। सुधन्य की समझ में न आया कि अन्दर घुसे या नहीं। आँगन में पुलिस नहीं अहर है, लेकिन असल मामला हो रहा है घर के अन्दर।

बहादुरसिंह कायदे के मुताबिक गेट पर पहरा दे रहा था।

सुधन्य को बहादुरसिंह पहचान गया।

'कैसे हो, बहादुरसिंह ?'

बहादुरसिंह ने इस बाबू को बूढ़े बाबू के साथ देखा था। कम-से-कम यह समझ गया कि इस आदमी को अन्दर घुसने का अधिकार है। बहादुरसिंह ने सुधन्य की बात का कोई जवाब नहीं दिया। आँगन में उस समय घर के नौकर-नौकरानी, ठाकुर दूर से उत्सुक होकर सब देख रहे हैं। लेकिन वह मैनेजर कहाँ गया ? वही तो इस घर का मालिक है।

और भी अन्दर रसोईघर की ओट में नौकर-चाकर खड़े-खड़े देख रहे थे। सुधन्य ने पास जाकर पूछा, 'क्या चोरी गया है, जी ? किसने चोरी

की ?'

किसी ने कोई जवाव नहीं दिया। सभी मानो डर से सिकुड़े हुए हों। इन में बूढ़े वावू कहीं न दिखायी पड़े। उसके बाद धीरे-धीरे बिलकुल पीछे की ओर बूढ़े वावू के कमरे में जाकर पुकारा, 'काका...।'

बूढ़े वावू अपने कमरे में तख्त पर बैठे हाँफ रहे थे।

बोले, 'कौन ? सुवन्य ?'

सुधन्य भीतर जाकर वोला, 'काका, तुम भीतर लेटे हुए हो, और उधर घर-भर में शोर मचा हुआ है।'

'किस बात का शोर ? मुझ से तो किसी ने कुछ नहीं कहा।'

'चोरी हुई है। चोर सब चोरी कर के ले गये हैं।'

बूढ़े वावू जैसे चिन्तित हो उठे हों। बोले, 'क्या चोरी की है, रे ? किसने ? किसने चोरी की ?'

सुधन्य बोला, 'वह ठीक नहीं समझ सका। सिर्फ़ देखा कि पुलिस-उलिस सब आयी है, सभी घर के अन्दर भीड़ लगाये हुए हैं।'

जो कुछ सुधन्य ने वाहर से देखा था वही बता दिया। लेकिन उसकी आँखों की ओट ज़नानखाने में उस समय और भी बहुत कुछ हो रहा था। एकदम तिमंजिले के बरामदे पर मैनेजर भूपति भादुड़ी पुलिस के इन्सपेक्टर के सामने हाथ हिला-हिलाकर सब समझा रहे थे।

इन्सपेक्टर ने पूछा, 'असल में वह लड़की इस घर की कौन है ? आप लोगों की आत्मीय है ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अरे राम-राम, आत्मीय क्यों होगी ? हमारी माँ जी के सात कुलों में कोई नहीं है। विश्वास न हो तो उसी से पूछ लीजिए।'

सुखदा तब वहाँ खड़ी-खड़ी मुँह और आँखें आँचल से दबाये रो रही थी। और उन लोगों की बातें भी उसके कानों में पड़ रही थीं।

इन्सपेक्टर ने सुखदा को लक्ष्य कर पूछा, 'आप इस घर की माँ जी की कौन होती हैं ?'

सुखदा ने रोते-रोते जवाब दिया, 'माँ जी मेरी दीदी हैं।'

'दीदी माने ? आपकी अपनी दीदी ?'

सुखदा बोली, 'न, माँ जी मेरी माँ की भांजी हैं।'

'किस तरह की भांजी ? सगी भांजी ?'

'मुझे ठीक नहीं मालूम। लेकिन सगे से भी ज़्यादा। मैंने अपनी माँ को भी कभी नहीं देखा। मैं छुटपन से ही माँ जी के पास पली।'

इन्स्पेक्टर ने भूपति भादुड़ी की ओर देखकर पूछा, 'आप लोगों के इस

मामले में ही यह पड़ी हैं क्या ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'वह सब बहुत लम्बे की बात है। आप थाने में आकर जिरह करें, सब सच निकल आयेगा।'

दारोगा के पास उस वक्त इतना मौका नहीं था। पहले तो थाने से ही कोई यहाँ आना नहीं चाहता था। भूपति भादुड़ी बहुत खुशामद कर पुलिस को घर बुलाके लाये। कहा था, 'चोर पकड़ा गया है, आप अभी जरा चलिये, दारोगा बाबू।'

लेकिन सचमुच उस दिन पुलिस के पास बहुत काम थे। दोपहर बाद स्टूडेन्टों का एक बड़ा भारी जुलूस निकलेगा। वहाँ राजभवन के सामने उन्हें ड्यूटी देना होगी।

इन्स्पेक्टर ने कहा था, 'हमें अभी बहुत काम हैं, इन सब छोटे मामलों की तहकीकात में हम न जा सकेंगे, मैं सिर्फ़ कान्स्टेबिल भेजे दे रहा हूँ।'

लेकिन भूपति भादुड़ी आसानी से छोड़ने वाले आदमी नहीं थे। जरूरत होने पर वे शायद दारोगा के पैर पकड़ सकते थे।

बोले, 'आपके गये बिना नहीं चलेगा सर, आपके पैरों पड़ता हूँ, आप जरा चले चलिये।'

कहते-कहते सचमुच बिलकुल पैर पकड़ने जा रहे थे। उसके बाद जब अन्दाज मिला कि पार्टी पैसे वाली है तो दारोगा उठा। बोला, 'चलिये।'

भूपति भादुड़ी ने पहले से ही इन्तजाम कर रखा था। तीनेक सौ नोट अपने फतुए की जेब में ही रख लिये थे। एक लिफ़ाफ़े में भरकर वह उसी की ओर बढ़ा दिये। फिर दारोगा साहब को कुछ कहना न था।

बोले, 'चलिये।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अभी तीन सौ रुपये दिये हैं सर, अभी यही ले लें। बाद में और भी दूँगा, वादा करता हूँ।'

उसके बाद जरा रुककर बोले, 'उसके हाथों में हथकड़ी लगा, बाँधकर ले जाना होगा सर, मेरी बड़ी तबीयत है...।'

'तो वही ठीक है। रिवाज की चीज जब मिल गयी तो फिर कहने की जरूरत नहीं, सब समझ लिया।' फिर बोला, 'चलिये।'

सबेरे से ही यह मामला चल रहा है। इन सब मामलों में भूपति भादुड़ी की अक्ल बहुत चलती है। भूपति भादुड़ी ने बहुत दिनों से घात लगा रखी थी। वही जिस दिन कालीकान्त विश्वास इस घर में आया उस दिन से ही। उसे जैसे कुछ शक हो गया था। यही लगता था कि जमाई का कुछ इरादा है। भूपति भादुड़ी मुँह से कुछ न कहता। लेकिन छुपे-छुपे सब-कुछ लक्ष्य करता। माँ जी जब बीमारी में लेटी रहतीं, तो उन्हें देखने

का बहाना कर भूपति भादुड़ी वहाँ जाकर खड़ा रहता। कुछ बातें कहता। उसके बाद सुखदा की आँखों और चेहरे की ओर अच्छी तरह ध्यान देता। लगता कि आँखें हमेशा कुछ तलाश कर रही हैं। तभी से भूपति भादुड़ी को सन्देह हुआ था। तब से ही वक़्त-बे-वक़्त, काम-बे-काम माँ जी के कमरे में जल्दी-जल्दी आता।

लेकिन जिस दिन देखा कि नरेश दत्त आकर चुपके-चुपके फुसफुसाकर कालीकान्त से बातें कर रहा है तो उसी दिन शक पक्का हो गया। तो फिर तो जो सोचा था वह ठीक है। उसके बाद बहुत-सी बातों के बाद नरेश दत्त चला गया। भूपति भादुड़ी उसके बाद से ही घात में रहा। कालीकान्त जभी ऊपर जाता तभी कुछ-न-कुछ बहाना कर भूपति भादुड़ी ऊपर जाता। ऊपर जाकर माँ जी के कमरे में जाता। वहाँ बहुत-से बहानों से माँ जी के पैरों से पास बैठा रहता।

भूपति भादुड़ी जानता था कि रात में ही ज्यादा खतरा है। रात को ही ये लोग जो करना होगा, करेंगे।

उस दिन कमरे की खिड़की से भूपति भादुड़ी ने देखा कि कालीकान्त सिगरेट का जलता टुकड़ा फेंककर अन्दर चला गया। ठीक उसके बाद भूपति भादुड़ी भी पीछे-पीछे ऊपर चढ़ गया। अँधेरे में पैर धीरे-धीरे रखकर एकदम तिमंजिले पर जाकर दरवाज़े की ओट जाकर छिप गया। सुखदा और कालीकान्त की बातें भूपति भादुड़ी को सुनायी दे रही थीं। सारा वातावरण शान्त और भयावह था। माँ जी के कमरे में कोने की ओर टिमटिमाकर सिर्फ़ एक बत्ती जल रही थी। और सब घोर अँधेरा था।

सहसा दिखायी दिया कि सुखदा धीरे-धीरे माँ जी के कमरे में जा घुसी। लेकिन इतनी जल्दी उसी वक़्त पकड़ने से सब मिट्टी हो जायेगा। भूपति भादुड़ी और राह देखने लगे।

लेकिन सुखदा तभी कमरे से बाहर निकल आयी। लगता था कि डर गयी है। बाहर आकर अपने कमरे के पास आते ही कालीकान्त ने सुखदा को समझा-बुझाकर फिर अन्दर भेज दिया।

भूपति भादुड़ी ओट में खड़े-खड़े सब सुन रहे थे।

उसके बाद आँख-कान खड़े किये रहा। अँधेरे में सुनायी पड़ी सुखदा के हलके-हलके पैरों की आवाज। लड़की शायद बहुत डर गयी है। भूपति भादुड़ी का दिल भी उस वक़्त आशा-आशंका से नये सिरे से धड़कने लगा। भूपति भादुड़ी बहुत दिनों से एक बड़ी आशा कलेजे में पालते आये थे। जिस दिन से शिवशम्भु चौधरी मरे, उस दिन से ही सब-कुछ सोच-विचार कर रखा था। यह चल-अचल सम्पत्ति सारी-की-सारी किसी

दिन उनकी होगी। सिर्फ वसीयत कराने का काम रह गया है।

और अगर वसीयत की बात ही कही जाये तो वह भी तो सब ठीक है। सिर्फ माँ जी की बीमारी के कारण दस्तखत नहीं ले सके। एक बार वसीयत चोरी भी हो गयी थी। उसके बाद उसकी कापी से और भी कई कापियाँ तैयार करा ली गयी थीं।

लेकिन इधर सुखदा जो फिर इस घर में आ जायेगी, यह बात भूपति भादुड़ी सोच भी न सके थे। आज इतने दिनों बाद जब उसी सुखदा को भगाने का इन्तजाम हुआ, तो इस मौके को छोड़ना किसी तरह ठीक नहीं। इसीलिए दारोगा के पैर पकड़कर घर ले आये।

'तो फिर आप यह सब चुराने क्यों गयी ?'

सुखदा ने कोई जवाब न दिया। वैसे ही पहले की तरह मुँह पर आंचल डालकर रोने लगी।

'रोने से तो कोई फायदा नहीं। जो कुछ किया सच-सच बताइये।'

सुखदा रोते-रोते बोली, 'आपके पैरों पड़ती हूँ, मुझे छोड़ दीजिये। *अब मैं चोरी नहीं करूँगी। मैं आपसे वादा करती हूँ, मैं फिर चोरी नहीं करूँगी।*'

'लेकिन वह तो नहीं होगा। आपको थाने चलना होगा।'

सुखदा आर्तनाद करने लगी, 'आपके पैरों पड़ती हूँ दारोगा बाबू, पैरों पड़ती हूँ।'

दूर पर सरला, बादामी—सभी ओट से खड़ी-खड़ी सुन रही थीं। उस ओर देखकर दारोगा बाबू बोले, 'नीचे से हमारे कांस्टेबिलों में से एक को बुला तो लाइये।'

भूपति भादुड़ी को जैसे और देर बर्दाश्त न हुई। झटपट एक छलांग में नीचे उतरकर पुलिस को बुला लाये। उनके पास हथकड़ी मौजूद थी। सुखदा के हाथों में हथकड़ी पहनाते ही सुखदा जोरों से रो पड़ी।

इन्स्पेक्टर बोला, 'चलो, बाहर ले चलो।'

[illegible] बेहोश हो जायेगी। किस [illegible] लेकिन कहाँ से क्या हो [illegible]। सुखदा की आँखों के आगे मानो सब गड़बड़ा गया हो।

बाहर पुलिस की एक गाड़ी खड़ी थी। सबकी आँखों के आगे से हथकड़ी पहने सुखदा आँख-मुँह ढके गाड़ी में बैठ गयी। और साथ-ही-साथ सुधन्य फिर बूढ़े बाबू के कमरे में जा घुसा।

बोला, 'काका, बहुत अच्छी खबर है।'

'क्या है, रे ?'

सुधन्य बोला, 'अभी देखकर आ रहा हूँ, इस घर की वही लड़की र है। माँ जी के गहने चुराये थे। पुलिस उसके हाथों में हथकड़ी लगा-र थाने पकड़ ले गयी है।'

बूढ़े बाबू ने मुंह से कुछ न कहा। सुधन्य की ओर आँखें फाड़े देखते रहे।

सुधन्य बोला, 'जय माँ काली, जय माँ जगदम्बा! काका, तुम लेटे रहो, मैं देखकर आता हूँ कि वहाँ क्या हो रहा है। मैं देखकर सब तुमको बताऊँगा।'

उधर धरमतल्ला के मोड़ से जुलूस का आखिरी हिस्सा उस समय भी पैदल जा रहा था। इसी तरह शायद इतिहास युग-युग में बढ़ता रहता है। इसी तरह इसी सड़क से अँग्रेज़ों की फौज किसी दिन नवाब सिराजुद्दौला के विरुद्ध लड़ाई करने के लिए बढ़ी थी। वह 1757 के साल की बात है। फिर इसी तरह सड़क से एक दिन कांग्रेस के वालंटियर 'वन्दे मातरम्' कहते-कहते कलकत्ता के लाटसाहब के घर की ओर बढ़े थे। फिर आज इस एक ही सड़क से उसी कांग्रेस के खिलाफ़ पूर्ण बाबू की पार्टी के लड़के-लड़कियाँ 'इन्क़लाब जिन्दाबाद' कहते-कहते राजभवन की ओर बढ़ चले हैं।

अतीत, वर्तमान, भविष्य—सभी इस राजभवन के पास आकर मानो एकाकार हो गये हैं। उसी अतीत से शुरू करके आगामी भविष्य के दिन तक इनको जैसे किसी को विराम नहीं चाहिए। पहले भी जैसे चले थे, आज भी चल रहे हैं, कल भी उसी तरह चलेंगे।

दूर से टुलू को देखकर सहसा सुरेन की बात करने की तबीयत हुई। उसने अच्छी तरह टुलू की ओर देखा। लाल रंग के कपड़े का झण्डा हाथ में लिये टुलू बीच-बीच में चिल्ला उठती : 'इन्क़लाब जिन्दाबाद !'

चिल्लाने के साथ-साथ उसका सिर ऊँचा हो जाता था। एक हाथ की मुट्ठी ऊँची कर वह आसमान की ओर उठाती। मानो वह आसमान को ही तानकर घूंसा दिखा रही हो। या आसमान की तरह ऊँचे पर जो बैठे

हैं उन्हें धमका रही हो। इन्हीं कुछ दिनों में उसका शरीर अच्छा हो गया था। इस समय टुलू खूब अच्छी लग रही थी।

'क्या हुआ, आप ?'

टुलू ने सहसा सुरेन को देखा।

'आपको जुलूस में देखूंगी, इसका खयाल नहीं था।'

सुरेन बोला, 'तुम बिलकुल पहचानी ही नहीं जा रही हो।'

'क्यों ?'

'मैं समझ भी नहीं सकता कि इतनी बड़ी दुर्घटना के बाद तुम इतनी जल्दी उठकर खड़ी हो सकोगी।'

टुलू का मुख उस भीड़ में ही जैसे लाल हो आया हो। मानो अपनी लज्जा को हटाने के लिए ही उसने झटपट जवाब दिया, 'बाबा मुझे आने को मना करते थे।'

'तो क्यों आयी ?'

'आयी। बिना आये नहीं रह सकती।'

सहसा सुरेन के पास के आदमी के जेब से सोडे की बोतल निकालकर दूर पर पुलिस के ऊपर फेंकते ही बहुत जोर की आवाज हुई। साथ-ही-साथ पीछे से एक और।

सुरेन ताज्जुब में पड़ गया।

सुरेन ने उस आदमी से पूछा, 'यह क्या कर रहे हैं ? सोडे की बोतल क्यों फेंक रहे हैं ?'

लेकिन साथ-ही-साथ एक और घटना हो गयी। कतार-की-कतार पुलिस पास ही खड़ी थी। अभी तक वे कुछ नहीं बोले थे। लेकिन अब वे भागने लगे। कहीं पास ही जैसे बम से एक भयानक आवाज हुई। साथ-ही-साथ चारों ओर धुआं छा गया। फिर आवाज, फिर नारे—'इन्कलाब जिन्दाबाद।' तभी जुलूस के लोग बिगड़ उठे। कहीं से जैसे ईंटों के टुकड़े पुलिस पर फेंके जाने लगे। 'मारो, सालों को मारो।' सुरेन स्तब्ध होकर चारों ओर देखने लगा। सब भाग क्यों रहे हैं ? भाग क्यों रहे हैं सब ? लेकिन टुलू झंडा ऊंचा उठाये उस वक्त भी खड़ी थी। 'टुलू, हट जाओ।' धुएं से वह जगह भर गयी। आंखें जल रही थीं। कोई-कोई फिर टीयर-गैस के जलते टुकड़ों को लेकर पुलिस की ओर फेंक रहे थे। एक सोडे की बोतल एक दूकान के शीशे पर जाकर गिरी। कांच टुकड़े-टुकड़े हो गया। 'टुलू, भाग जाओ। भाग जाओ, टुलू। तुम अभी कमजोर हो। तुम अभी बीमारी से उठी हो। अभी वे गोली दागेंगे।' उधर से पुलिस की एक और टुकड़ी जुलूस पर टूट पड़ी। तभी जुलूस के लोग भी निडर हो चले थे। फिर एक

भयानक आवाज़ हुई। और ज़ोरों की आवाज़। इस बार टीयर-गैस नहीं थी, गोली चल रही थी। सारा कलकत्ता शहर जैसे थरथराकर काँप उठा।
'टुलू भागो, भाग, तुम जाओ, भाग जाओ तुम।'

सहसा सुरेन को लगा जैसे उसके सिर पर आकर कुछ लगा। और उसके साथ-ही-साथ एक भयानक शब्द हुआ। एक मुहूर्त मात्र। साथ-ही-साथ यंत्रणा। लेकिन वह भी क्षण-भर के लिए। उसके बाद सुरेन को कुछ याद नहीं।

टुलू दूर खड़ी थी। उसकी भी नज़र में पड़ते ही मुँह से एक चीख़ निकल पड़ी, 'ओः...!'
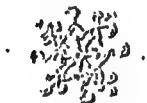
कैबिनेट की मीटिंग से उसी समय पुण्यश्लोक बाबू निकले थे। संध्या उतर गयी थी। सारा डलहौजी स्क्वायर पुलिस से भरा था। बाहर से भी पुलिस मँगायी गयी थी। आज के लिए पहले से ही विशेष व्यवस्था हुई थी। पहले से ही पता लग गया था कि ऐसा कुछ ज़रूर होगा। पुण्यश्लोक बाबू के कानों में गोली चलने की आवाज़ आयी थी। राइटर्स बिल्डिंग उस आवाज से मानो मतवाली हो गयी थी। किसी भी कमरे में किसी भी क्लर्क ने कोई काम नहीं किया। सेक्रेटरी लोग केवल नियम के अनुसार हुकुम की तामील करते रहे। राजनीतिक जीवन में इस तरह की घटना नयी नहीं थी। बहुत-सी मीटिंगें पुण्यश्लोक बाबू ने देखी हैं। उन्हें जीवन में बहुत-सी गड़बड़ों, शोर-शराबों का सामना करना पड़ा है। जीवन में उन्नति करना क्या आसान है? विशेष रूप से राजनैतिक जीवन में? जहाँ राजनीति लगभग पेशे का पर्याय हो गया है वहाँ ऐसा संग्राम अनिवार्य है। कभी शायद आसान ही था। लेकिन सीधा था, यही कैसे कहा जाये! उस पिछले ज़माने में क्या उन्हें कम झंझट का सामना करना पड़ता? तब भी पुलिस की बन्दूकें तनी रहती थीं। तब भी उनके लिए जेलों के दरवाज़ खुले रहते थे। जेलख़ाने में कितनी बार उन्हें अनशन करना पड़ा था। आजकल के लोगों को वह सब-कुछ नाम मालूम नहीं। आजकल के लड़कों के आगे वे मरे हुए हैं। लेकिन उस समय वे जहाँ-जहाँ गये, जाकर खड़े हुए, वहीं सारी जनता उनको देखकर उमड़ पड़ती थी। उनके कुछ कहने के पहले ही लोग तालियाँ बजा

उठते थे। उनका भाषण सुनने के पहले ही लोग उन्हें सिर पर उठा लेते थे। कलकत्ता से गोहाटी, गोहाटी से फरीदपुर, फरीदपुर से नारायणगंज, नारायणगंज से ढाका, वर्दमान—पूरे बंगाल में उन्हें एक के बाद एक भाषण देना पड़ता था। फूलों के हारों से गला भर जाता था। वह सारा इतिहास अगर कोई अब लिखता तो आजकल के लड़के उसे पढ़कर समझ सकते कि पुण्यश्लोक बाबू ने भी देश के लिए कुछ कम नहीं किया। आज के उन पूर्ण बाबू की तुलना में वे भी कुछ कम नहीं हैं।

कैबिनेट की मीटिंग होते वक़्त वे चुपचाप यही सब बातें सोच रहे थे। सबके ही चेहरे बहुत गम्भीर थे। लगता था कि अन्दर-ही-अन्दर सभी यही बातें सोच रहे थे। बहुत दिन पहले से ही सोच-विचार चल रहे थे, योजनाएँ बन रही थीं। चीफ़ मिनिस्टर इस मामले में सख्त रहे। शुरू से ही बहुत सख्त कदम उठाने के पक्ष में थे।

डॉक्टर राय शुरू से ही सख्त आदमी हैं। चारों ओर जब अराजक अवस्था हो तो उनका दिमाग विचलित नहीं होता। सही है कि जब तक पुलिस-मिलिटरी हाथ में है तब तक किस बात का डर? लेकिन असल में सब लोगों को जनता का डर रहता है। जनता को आज बन्दूक उठाकर ज़रूर ठीक किया जा सकता है। पर चुनाव के वक़्त?

वह चुनाव आ रहा है, इसीलिए तो इतना सोच-विचार है। नहीं तो क्या फ़िक्र थी? और वक़्त होता तो किसी की परवाह करने की ज़रूरत ही न थी। कमरे में सभी ज़ोरों की बहसें करते थे। कमरे के कपाट बन्द करके सलाह-मशविरे होते थे। प्रेस के लोगों को घुसने नहीं दिया जाता था। इसी से जिसको बोलने का अधिकार है वह सब बेरोक है। सामने के चुनाव की बात सोचकर ही सब बेचैन हैं।

सहसा पमिली की बात याद पड़ी।

याद आते ही जैसे आँखों के आगे से सब पुछ गया। पुछ गया चुनाव, पुछ गयी कैबिनेट। पुछ गयी सब बन्दूकें और टीयर-गैस छूटने की आवाज़ें।

मन इसी कारण से सवेरे से खराब था। पमिली उनके कैम्प में क्यों गयी थी? पमिली को क्या यह नहीं मालूम कि उनकी पार्टी-ऑफ़िस में जाने के माने मेरा अपमान है? शायद पमिली जानती है। शायद जान-बूझकर ही यह काम किया था। शायद सचमुच लड़की की नज़रों में वे श्रद्धा के पात्र नहीं रहे। और नहीं रहे, इसीलिए तो वे बातें इस तरह वह कह गयी।

अपने निकट ही वे अपने को अपराधी लगने लगे। पमिली ने जो कहा है वह क्या सच है? सच ही क्या उन्होंने अपने स्वार्थ के लिए उसका

उपयोग किया है ? अपनी बेटी को मेमसाहब रखकर पियानो बजाना सिखाया, क्या केवल पब्लिक लाइफ़ में अपनी उन्नति करने के लिए ? क्लब में पमिली को भरती करा दिया था, वह भी क्या इसी कारण से ?

पमिली की ज़बान से बातें सुनने के बाद से ही मन कैसा-कैसा विक्षुण्ण और अपराधी लगने लगा था !

पुण्यश्लोक बाबू के निकट तब सारा जीवन ही निरर्थक लगने लगा। उस छुटपन से इस आज तक जैसे सब छलना है। वे जैसे अनजाने ही सबसे केवल कपट करते आये हैं। सबसे कपट किया और साथ-ही-साथ अपने से भी कपट किया। पमिली ने मानो ठीक ही उन्हें पकड़ा है; उनकी अपनी बेटी होने पर भी वह तो अब छोटी नहीं है। उसकी अपनी निजी एक सत्ता नाम की चीज़ उत्पन्न हो गयी है। उसने ठीक ही कहा—पुण्यश्लोक बाबू अपनी निजी बेटी को किराये पर चलाकर ख़ुद बड़े होने की राह सुगम करते रहे हैं !

सवेरे की घटना फिर उनकी आँखों के आगे उतर आयी।

टेलीफ़ोन निबटाकर वे फिर बाहर आये। देखा कि प्रवेश उस समय भी गलियारे में चहल-क़दमी कर रहा है।

प्रवेश पुण्यश्लोक बाबू की कृपा से आदमी बना था। पुण्यश्लोक बाबू को छोड़ने के अर्थ वह समझता था। समझता था कि पुण्यश्लोक बाबू को पकड़े रखने की सफलता में ही उसकी सिद्धि है।

पुण्यश्लोक बाबू को देखते ही वह आशापूर्ण दृष्टि लिये बढ़ आया।

बोला, 'पुण्य-दा, आपने मुझसे रुकने को कहा था...।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, तुमसे मुझे बात करनी थी, आओ, लायब्रेरी के कमरे में आओ, ज़रा अकेले में बातें करना ज़रूरी है।' कहकर लायब्रेरी के कमरे में चले गये। प्रवेश पीछे-पीछे गया।

इसी लायब्रेरी के कमरे में ही किसी दिन पुण्यश्लोक बाबू ने सुरेन को भेजा था। उस दिन सोचा था कि प्रवेश के बाद इस सुरेन के द्वारा ही वे फिर और ऊँचे शिखर पर चढ़ेंगे। सुरेन ही कांग्रेस का इतिहास लिखेगा। और उसी इतिहास के बीच में पुण्यश्लोक बाबू की कीर्ति-गाथा उज्ज्वल अक्षरों में लिखी रहेगी। असल में उनका उद्देश्य यही था। लेकिन वह न हो पाया।

प्रवेश की ओर देखकर पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुमको तो सब-कुछ मालूम है, प्रवेश। तुमसे नये सिरे से क्या कहूँ ! आज पमिली ने मुझसे जो कुछ कहा उसने मुझे चिन्ता में डाल दिया है।'

प्रवेश विनीत भाव से बोला, 'क्या कहा पमिली ने ?'

पुण्यश्लोक बाबू कुछ देर गम्भीर बने रहे। उसके बाद अचानक चुप्पी तोड़ी।

बोले, 'अच्छा प्रवेश, तुम क्या सोचते हो कि मैंने पमिली को शराब पीना सिखाया है? मैंने अपनी उन्नति के लिए उसे मानो ताड़ पर चढ़ाया?'

प्रवेश स्तब्ध रह गया।

बोला, 'यह बात क्या पमिली ने आपसे कही है?'

पुण्यश्लोक बाबू उस बात का जवाब न देकर बोले, 'मुझे खुद ही कितना बुरा लग रहा है, प्रवेश। आज हम सब वैसे भी परेशान हैं। सामने चुनाव आ रहा है। तुम्हें पता है, चुनाव के वक्त मेरा ब्लड-प्रेशर किस तरह बढ़ जाता है। और इसी वक्त पमिली की ये बातें!'

प्रवेश बोला, 'सच, आपके लिए ब्लड-प्रेशर की परवाह न करना ठीक नहीं है। मैं डॉक्टर को बुलाऊँ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'न, न, तुमको कुछ फिकर नहीं करना है। जो होना होगा, होगा ही।'

प्रवेश बोला, 'यह बात न कहें, सर। अच्छा, न हो तो मैं ही डॉक्टर को एक बार आने को कहूँगा। मुझे इधर थोड़ा ध्यान देना पड़ेगा।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'न, वह तुम्हें नहीं देखना पड़ेगा। तुमसे सिर्फ एक अनुरोध है। वह अनुरोध तुम्हें मानना होगा।'

'कहिये, कहिये क्या अनुरोध है, और अनुरोध क्यों कह रहे हैं? आप मुझसे इस तरह से बात न कहा करें, पुण्य-दा।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अच्छा, एक बात है, पमिली का ब्याह कर देना कैसा रहेगा?

'ब्याह?'

'हाँ, ब्याह। लगता है कि पमिली की शादी ही कर देना पड़ेगी। लगता है कि शादी नहीं की, इसीलिए शायद इस तरह हो गयी है। वय का धर्म नाम की भी एक बात होती है। मैं जीवन-भर देश के काम में दीवाना रहा, बाल-बच्चों के बारे में सोचने का वक्त ही नहीं मिला। अब देख रहा हूँ कि यह मेरा अपराध है।'

प्रवेश बोला, 'अपराध क्यों कह रहे हैं? आपने तो पमिली और मुन्न के लिए बहुत कुछ किया। और कोई न जाने, मैं तो जानता हूँ। आप क्यों वह सब सोचकर बेकार तकलीफ़ पा रहे हैं?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन पमिली ने अभी तो मुझसे यही बात कही। और इसीलिए तो मेरा दिल खराब हो गया है। इसीलिए सोचा'

तुम्हारे साथ सलाह करूँगा। तो शादी तो करूँगा, लेकिन किससे करूँ, बता सकते हो ?'

प्रवेश ने कोई जवाब न दिया। चुप रहा।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुमको पता है, पमिली से किसी का प्यार है ? यानी वह किससे ज्यादा मिलती-जुलती है ?'

प्रवेश सहसा इस बात का जवाब न दे सका। बोला, 'मैं यह जानने की कोशिश करूँगा।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'यह क्या ? इतने दिनों से यहाँ आते-जाते हो, तुम यह खबर तक भी नहीं रखते ? तुमसे क्या मेरा कोई काम न होगा ! तो फिर तुम मेरे साथ किसलिए हो ?'

प्रवेश को बड़ा बुरा लगने लगा।

बोला, 'आपने पमिली से ही क्यों नहीं पूछा ?'

पुण्यश्लोक बाबू अब धीरज न रख सके।

बोले, 'तुम क्या कह रहे हो, उसका कुछ ठीक नहीं। यह सब बातें क्या मैं उससे पूछ सकता हूँ ? या पमिली ही मुझे इसका जवाब दे सकती है ? तुम्हारे द्वारा क्या एक भी काम होने वाला नहीं ? मुझे लगता है कि इतने दिनों पमिली का व्याह न करके मैंने ग़लती की। तुम्हें क्या लगता है ?'

प्रवेश बोला, 'मैं इस मामले में क्या कहूँ, बताइये ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वाह रे, क़रीब-क़रीब छुटपन से तुम पमिली को देखते आ रहे हो, तुम नहीं बताओगे तो क्या मैं बताऊँगा ? और मान लो, अगर वैसा कुछ न हो तो मुझे उसके लिए एक लड़का ढूंढना होगा। क्या कहते हो ?'

प्रवेश बोला, 'हाँ, लड़का खोजना तो ठीक ही है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम तो ठीक कहकर छुट्टी पा गये, लेकिन उसकी-सी लड़की के लिए लड़का तलाश करना क्या आसान बात है ? उसके योग्य लड़का कहाँ मिलेगा ?'

उसके बाद सहसा दिमाग़ में जैसे एक खयाल आया।

ज़रा रुककर बोले, 'अच्छा, एक बात, दुनिया में तुम्हारे कौन-कौन हैं ?'

'मेरे ?' प्रवेश आसमान से गिरा।

'हाँ, माने तुम्हारे माँ-बाप, चाचा-चाची, भाई-बहन कोई नहीं है ?

प्रवेश बोला, 'नहीं।'

'नहीं माने ? वे कभी भी नहीं थे ?'

प्रवेश बोला, 'बाप-माँ थे, आत्मीय स्वजन भी कोई-न-कोई थे ही,

लेकिन मुझे ठीक से उनकी याद नहीं है। लड़कपन से ही मैं दूसरे के घर बड़ा हुआ, आदमी बना। उसके बाद जिस दिन मैं कांग्रेस में आया, जेल काटी, पिकेटिंग की, तभी से उन्होंने मुझे घर से निकाल दिया। तभी से मैं आपके पास हूं।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'यह तो मालूम है। लेकिन तुमने तो यह सब होने पर भी रुपया-पैसा जमा कर लिया है। एक घर भी बनवा लिया है।'

'हां, लेकिन वैसा बड़ा मकान नहीं है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'यह ठीक है, बड़ा हो या छोटा हो, कलकत्ता शहर में जमीन खरीदकर मकान बनवाना क्या आसान है? उस मकान से भी तो तुम्हें कुछ रुपया आता है?'

प्रवेश बोला, 'हां, थोड़ा-सा हिस्सा किराये पर देकर महीने में ढाई सौ रुपये मिल जाते हैं।'

'और वेतन? भूल गया, तुमको कितना वेतन मिलता है?'

प्रवेश बोला, 'बारह सौ।'

'इसके सिवा तुम्हारी और कुछ आय है?'

प्रवेश बोला, 'है, इधर-उधर से प्रेस के मालिक लोग काम दिलवाने की कुछ कमीशन देते हैं। वह भी महीने में तीन चार सौ के करीब हो जाता है।'

पुण्यश्लोक बाबू ने कुछ देर सोचा। उसके बाद बोले, 'अच्छा, एक बात और है। तुम्हारे साथ पत्नी के सम्बन्ध कैसे हैं? पत्नी क्या तुम्हारा साथ पसन्द करती है?'

प्रवेश बोला, 'लगता है कि करती है।'

'पसन्द करती है?'

प्रवेश बोला, 'पत्नी ने मुंह से कभी कुछ नहीं कहा, लेकिन लगता है कि पसन्द नहीं करती।'

पुण्यश्लोक बाबू कुछ चिन्तित हुए।

बोले, 'तो प्रवेश, [illegible]'

प्रवेश ने कोई जवाब नहीं दिया। चुप रहा।

पुण्यश्लोक बाबू इस बात के बाद रुके नहीं। उठकर बोले, 'ठीक है, तो यही बात रही। अगर पमिली तुम्हारे लिए राजी हो तो उत्तम। और अगर वह न हो तो मुझे नये सिरे से सोचना पड़ेगा।'

दूसरे दिन पुण्यश्लोक बाबू जब गाड़ी से सेक्रेटेरियट जा रहे थे तभी देखा कि चारों ओर सख्त पहरे का इन्तजाम है। कलकत्ता शहर ही स्तब्ध था।

और उसके बाद ही क्लोज्ड डोर मीटिंग।

गाड़ी कैनिंग स्ट्रीट से मुड़कर आ रही थी। इसी एक तरफ़ पुलिस ने पहरा लगा रखा था।

मिनिस्टरों और अफ़सरों के आने-जाने के लिए यह सड़क पुलिस ने खाली कर रखी थी।

पुण्यश्लोक बाबू की गाड़ी आहिस्ता-आहिस्ता उसी रास्ते से एकदम महात्मा गांधी रोड पर आ गयी। वे समझ गये कि कलकत्ता शहर की हालत असामान्य है। सड़क पर लोगों का चलना कम हो गया है। सभी को पता चल गया है कि शहर में गोली चली है, गोलियों से लोग मरे हैं, बस और ट्रामें कुछ-कुछ बन्द हैं। हावड़ा स्टेशन पर जो लोग ट्रेनों से आ पहुंचे हैं, वे कुलियों के सिर पर असबाब लदवाकर फ़ुटपाथ से होकर अपने-अपने स्थान को जा रहे हैं। लोगों की तकलीफ़ों का अन्त नहीं। यही वे नहीं समझते। इतने लोगों को तकलीफ़ पहुंचाकर वे कांग्रेस को हटायेंगे। इसी तरह से वे चुनाव में जीतेंगे! 'फ़ूल्स! पैक ऑफ़ फ़ूल्स—दोज कम्युनिस्ट्स!'[1]

सहसा मानो दक्खिन की ओर से फिर गोली चलने की आवाज हुई।

गोलीबारी उस वक़्त भी जारी थी। चले। थोड़ा दमन हो। दमन हुए बिना उन्हें सबक़ नहीं मिलेगा। हमने मानो देश का कुछ भला ही नहीं किया। हमने मानो कुछ त्याग नहीं किया। हमने मानो किसी दिन जेल नहीं काटी। अकेले उन्होंने ही जेल काटी है, गोलियां खायी हैं, पुलिस की लाठियां सही हैं!

बहुत-सी सड़कों से घूम-घूमकर पुण्यश्लोक बाबू की गाड़ी फिर सुखिया स्ट्रीट की गली में हो घुसी।

घर के गेट में गाड़ी घुसते ही दरबान ने सलाम ठोका।

पोर्टिको में आते ही देखा, प्रवेश खड़ा है। उसका मुंह और आंखें सूनी और खाली-खाली हैं।

---

1. बेवकूफ़! बेवकूफ़ों का गिरोह—इन कम्युनिस्टों का!

पुण्यश्लोक बाबू ने गाड़ी से उतरते ही पूछा, 'क्या खबर है, प्रवेश? कब आये?'

'यही एक घण्टा हुआ आये।'

'उधर की कोई खबर मिली?'

प्रवेश बोला, 'मिली, लेकिन पुण्य-दा, पमिली घर पर नहीं है।'

'यह क्या? पमिली घर पर नहीं है?'

प्रवेश बोला, 'नहीं।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'कैसा ताज्जुब है, इस गड़बड़ी में वह कहाँ निकल गयी?'

प्रवेश बोला, 'मैं तो था नहीं, एक काम से गया था, आकर देखा तो पमिली नहीं है।'

वे और भी ताज्जुब में पड़ गये। प्रवेश उस समय भी सामने खड़ा था।

बोले, 'तो तुम यहाँ क्यों नहीं ठहरे? तुम्हें इस घर से जाने को किसने कहा था? तुम्हें पता है कि एक जंजाल में दिन काट रहा हूँ। इन कुछ दिनों जरा तुम पमिली को संभाल नहीं सके?'

प्रवेश बोला, 'उसी लिए तो मैं आज ऑफिस नहीं गया था।'

'ऑफिस नहीं गये तो कहाँ गये थे?'

प्रवेश बोला, 'सिर्फ एक बार खाने के लिए घर गया था। घर से ही ऑफिस टेलीफोन कर दिया था कि मैं नहीं आऊँगा।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, अच्छा ही किया ऑफिस नहीं गये।'

प्रवेश बोला, 'उसके बाद यहाँ से आते ही सुना कि पमिली नहीं है।'

'लेकिन गयी कहाँ! आज की तरह के दिन वह जायेगी भी कहाँ? जानते हो।'

'डॉक्टर राय बहुत खफा हो गये थे। पुलिस-कमिश्नर को गोली चलाने के लिए हुक्म दे दिये गये थे। कानून तोड़ने पर ही गिरफ्तार किया जायेगा। सारी ट्रामें सड़कों पर से हटा ली गयी हैं। बस भी सब रास्तों पर नहीं चल रही हैं।'

प्रवेश बोला, 'वह तो मैंने रेडियो पर ही सुना था।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'कैबिनेट मीटिंग में सब बहुत गर्म हो रहे थे। दिल्ली में भी ट्रंक कॉल आया था। होम-मिनिस्टर ने भी हामी भर दी है। लेकिन ये सब बातें छोड़ो। मेरा मन आज दिन-भर बहुत अशान्त रहा। मैं बराबर बहुत चुप रहा। डॉक्टर राय ने मुझसे कई बार पूछा था—तुम चुप क्यों हो, पुण्यश्लोक?... मैं कुछ न कह सका। और-

भी क्या ? मुझे कहने को था ही क्या ? किससे सब कहूं ? केवल लग रहा था कि इतने दिनों से जो कुछ किया सब ग़लत किया।'

प्रवेश ने सान्त्वना देकर कहा, 'ग़लती की बात क्यों कहते हैं, पुण्य-दा ! आपने जो अच्छा समझा, जो ठीक समझा वही तो किया, आपने अच्छा समझकर ही तो सुव्रत को हायर एजुकेशन के लिए अमेरिका भेजा। और पमिली ! पमिली क्या कह सकेगी कि आपने उसकी खोज-खबर नहीं रखी ? आपने मेमसाहब रखकर उसे पियानो बजाना सिखाया, सीनियर कैम्ब्रिज पास कराया। उसके लिए अलग गाड़ी, अलग ड्राइवर रख दिया। आदमी बेटे-बेटियों के लिए और क्या कर सकता है ?'

पुण्यश्लोक बाबू ने बालों में हाथ फेरा। बोले, 'तुम तो यह कहते हो। और इतने दिन मैं भी यही समझता रहा। लेकिन वे लोग तो ऐसा नहीं सोचते। वे तो सोचते हैं कि मैंने यह सब-कुछ अपनी इज्जत बढ़ाने के लिए ही किया।'

अचानक रुककर फिर बोले, 'तुमसे मैंने जो बात कही, अभी भी वही कहता हूं, प्रवेश। पमिली को अगर आपत्ति न हो तो तुम उससे शादी कर लो। कम-से-कम मैं छुटकारा पा जाऊं।'

प्रवेश बोला, 'आप कह क्या रहे हैं पुण्य-दा, मैं तो सपने में भी नहीं सोच सकता था।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'न, स्वप्न में नहीं। देखो, मैंने बहुत सोचकर देखा है। कोशिश करने पर शायद मैं पमिली के लिए कोई अच्छा लड़का खोज सकता हूं। कलकत्ता शहर में ख़ानदानी बड़े लोगों की कमी नहीं है। मेरे प्रस्ताव करने-भर से ही वे उछलकर हां करेंगे। वे मेरी मान-प्रतिष्ठा की बात जानते हैं, मेरे पास जितना रुपया है, इसे भी वे जानते हैं। लेकिन मैं वह नहीं चाहता।'

'क्यों, इसमें नुक़सान क्या है ?'

'न, प्रवेश, इन कुछ बरसों में मैंने बहुत कुछ देखा है। और तुमने भी बहुत देखा है। आजकल के ख़ानदानी वंश के बड़े लोगों के लड़कों के सम्बन्ध में मेरी धारणा अच्छी नहीं है, मैंने पुलिस की रिपोर्ट पढ़कर देखी हैं। आजकल शहर में डकैती, राहजनी के पीछे वे ही हैं। गाड़ी-घोड़ी की चोरी यही लोग करते हैं। बड़े-बड़े घरानों के लड़के ही आजकल गाड़ियां चुराकर भागते हैं। उसके बाद तीन-चार दिन बाद वही गाड़ियां टूटी-फूटी हालत में किसी सड़क के किनारे मिलती हैं। सुन-सुनकर ताज्जुब में पड़ जाओगे प्रवेश, अगर तुम्हें उन सब घरों का नाम बताऊं।'

प्रवेश चुप किये रहा। कोई जवाब न दिया।

पुण्यश्लोक बाबू फिर बोलने लगे, 'तुम राजी हो या नहीं, मुझे यही बता दो।'

प्रवेश ने जरा सिर झुकाया। कुछ सोचा। पमिली से अगर शादी कर सके तो फिर जिन्दगी में उसे क्या चाहिए! इन पुण्यश्लोक बाबू ने उसे कांग्रेस का वालंटियर बनाया। उसके बाद नौकरी दिला दी। फिर उसके बाद आज...।

'बताओ, क्या सोचते हो? जवाब दो—मैं चुनाव के पहले ही बात तय कर डालना चाहता हूँ। तुम तो जानते हो, मैं जो सोच लेता हूँ वह करता हूँ। जितनी जल्दी कर सकूँ, करता हूँ। पमिली की शादी भी झटपट निबटाये बिना मैं चुनाव की ओर मन नहीं लगा सकूँगा। इस बार का चुनाव और चुनावों की तरह नहीं है। पहले कांग्रेस के नाम पर ही लोग गद्‌गद् होकर वोट दे देते थे—इस बार तो वैसा नहीं है। इस बार [illegible]।'

[illegible] नहीं दे रहे हो?'

प्रवेश बोला, 'मैं क्या जवाब दूं?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम राजी हो या नहीं, यह तो मुझे बताओ?'

प्रवेश बोला, 'मेरे राजी होने से क्या होगा, पमिली की राय भी तो लेना पड़ेगा। वह अगर राजी न हो?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन इतने दिनों से तो पमिली से मिलजुल रहे हो, तुम लोग एक ही क्लब के मेंबर रहे। दोनों एक साथ कितना मिलते-जुलते थे, उसे तुम राजी नहीं कर सकोगे? तो फिर तुमने मेरे साथ रहकर इतने दिनों में सीखा क्या?'

प्रवेश थोड़ी देर चुप रहा। उसके बाद बोला, 'मैं कोशिश करूँगा पुण्य-दा, मैं भरसक कोशिश करूँगा।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, कोशिश करो। फिर कोई कुछ भी कहे, पमिली असल में भली लड़की है। मेरी अपनी लड़की है, इसलिए नहीं कह रहा हूँ। तुमने तो खुद देखा है। थोड़ी तेज स्वभाव की है। जरा में ही बिगड़ जाती है। लेकिन गुस्से को दिल में नहीं रखती।'

प्रवेश बोला, 'वह मैं जानता हूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन शाम हो गयी, अभी तक वह नहीं आयी।'

प्रवेश बोला, 'आखिर वह जा कहाँ सकती है ? थानों में टेलीफ़ोन करूँ ?'

'थानों में टेलीफ़ोन करने से क्या होगा ? शायद क्लब गयी है। अच्छा है, उसके क्लब में टेलीफ़ोन करके पता लो।'

'लेकिन क्या इस हंगामे में क्लब खुला होगा ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अरे, क्लब की बात मत करो। उनके लिए हंगामा-अंगामा कुछ नहीं रहता। वहाँ उनका सारा काम ठीक क़ायदे से चलता है, जाकर देखो...।'

प्रवेश कमरे में जाकर टेलीफ़ोन का रिसीवर उठाने जा रहा था। लेकिन उसके पहले ही वह बजने लगा।

प्रवेश ने उसे उठाकर कहा, 'हलो...।'

पुण्यश्लोक बाबू पास ही खड़े थे।

प्रवेश ने रिसीवर मुँह से हटाकर कहा, 'आपसे बात करना चाहता है।'

'कौन ?'

'कांग्रेस ऑफ़िस से ही कोई बोल रहे हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू ने कान में रिसीवर लगाकर कहा, 'कौन ?'

उसके बाद थोड़ा चुप। लेकिन उसके बाद ही जैसे वे चौंक पड़े।

बोले, 'पमिली ? पमिली वहाँ है ? पमिली वहाँ कैसे पहुँची ?'

उधर से कांग्रेस के सेक्रेटरी बोले, 'रास्ते में जुलूस की भीड़ में उन लोगों ने उनकी गाड़ी घेर ली थी। पुलिस उन्हें छुड़ाकर यहाँ ले आयी है।'

'उसके बदन को तो किसी ने हाथ नहीं लगाया ?'

'न, वह नहीं किया। लेकिन आपकी गाड़ी को भीड़ ने जला डाला है। गाड़ी वहीं छोड़कर पुलिस-वैन में आपकी लड़की को यहाँ ले आये हैं।'

'लेकिन उसे मेरे घर क्यों नहीं ले आये ?'

'आपके घर के सारे रास्ते बन्द हैं। वहाँ दो डबल-डेकर बसें जला दी गयी हैं।'

'तो सेन्ट्रल एवेन्यू से तो आ सकते थे ?'

'वहाँ अभी भी गोली चल रही है। दक्षिण से उत्तर जाने के सारे रास्ते इस वक़्त बन्द हैं।'

'अभी उनका जुलूस चल रहा है क्या ?'

सेक्रेटरी बोला, 'जो रिपोर्ट मिल रही है उससे लग रहा है कि वे सड़क पर बैठ गये हैं। और धरमतल्ला के चारों ओर की सड़कों की

रोशनी बन्द हो जाने से अँधेरा हो गया है। चारों ओर धुआँ-ही-धुआँ है।'

'कितने लोग मरे हैं? कोई खबर मिली है?'

'न, अभी नहीं मिली, फिर भी चालीस-पचास लोगों से कम न होंगे। और घायल हुए होंगे क़रीब चार सौ लोग।'

'यह क्या?'

सेक्रेटरी उधर से बोले, 'आप कुछ फ़िकर न करें, आपकी लड़की को यहाँ हमने अच्छी तरह रखा है। कोई असुविधा नहीं है। रास्ता थोड़ा साफ होते ही आपके घर पहुँचा देंगे।'

'लेकिन पमिली उधर गयी क्यों थी, कुछ बताती नहीं?'

'न, वह बात हम नहीं पूछ सके।'

'ठीक है, थोड़ी सुविधा मिलते ही मैं उसे ले आने की कोशिश करूँगा।'

कहकर पुण्यश्लोक बाबू ने रिसीवर रख दिया। उसके बाद प्रवेश की ओर देखा। लेकिन मुँह से कुछ न कहकर कुर्सी पर लुढ़क गये।

सारा दिन आँधी की तरह बीता। यह आँधी अभी भी रुकी नहीं थी। और यह आँधी चुनाव के पहले नहीं रुकेगी ऐसा उन्हें लगा।

प्रवेश ने बहुत देर बाद पूछा, 'मैं चलूँ, पुण्य-दा?'

'कहाँ?'

'पमिली को लाने?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'जाओगे कैसे? रास्ते तो बन्द हैं। दो बसें धरमतल्ला पर जली हैं। निजी कारें भी जलायी गयी हैं। इधर सेन्ट्रल ऐवेन्यू में घुप अँधेरा है। उधर से गाड़ी चलाकर जा सकोगे? तुम्हारी गाड़ी भी अगर जला दें? देखता हूँ कि देश को बिलकुल खाक किये बिना वे लोग न छोड़ेंगे।'

कहकर फिर थोड़ी देर के लिए चुप हो गये।

प्रवेश की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे। उसके बाद बोला, 'आप अगर कहें तो अभी ही जा सकता हूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम चुप रहो, देखता हूँ कि तुम किसी काम के आदमी नहीं हो। तुम्हारे वे आदमी कहाँ गये, जिन्हें तुम हजारों रुपये दे आये? आखिर पमिली की गाड़ी जल गयी। और वे कुछ न कर सके?'

प्रवेश इस बात का क्या जवाब देता? या जवाब ही क्या था? अपराधी की तरह चुपचाप सिर झुकाये रहा।
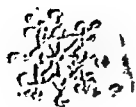
भूपति भादुड़ी का कुल दिन काम की बहुत परेशानी में बीता। सारी रात जागकर चोर पकड़ना। उससे बाद थाने पर जाकर दारोग़ा की खुशामद करना। और सिर्फ़ ज़बानी खुशामद से ही नहीं—सभी को नक़द रुपये भी थमाना पड़े। रुपये दिये बिना कलकत्ता शहर में कोई काम होता है? उसके बाद सुखदा को पुलिस-थाने ले जाकर हवालात में बन्द करा दिया।

इन सब कामों में पुलिस के पीछे पड़ा रहना पड़ता है। पीछे न पड़े रहने से दूसरा पक्ष रुपये देकर मामला ख़राब करा दे सकता है। इसी से सुखदा के चले जाने के बाद भूपति भादुड़ी पीछे-पीछे थाने जा पहुंचे थे।

बहुत देर वहां रहने के बाद दारोग़ा साहब को जैसे कुछ दया आयी। बोले, 'आप अब यहां क्यों हैं? जो करना होगा हम करेंगे।'

भूपति भादुड़ी ने हाथ जोड़ दिये, 'दया करके आप आसामी को जमानत पर न छोड़ दें।'

दारोग़ा जी बोले, 'तो ज़मानत देने वाले क्या हम हैं?'

भूपति भादुड़ी सब जानता था। बोला, 'आप लोग ही तो असल मालिक हैं, बड़े बाबू। कलकत्ता शहर के तो आप ही मालिक हैं।'

दारोग़ा बोले, 'वे सब बातें छोड़िये, क़ानून के सिवा हम कुछ नहीं कर सकते।'

भूपति भादुड़ी ने तभी फतुआ की जेब से एक गड्डी नोट निकालना शुरू कर दिया था। उन्हें मोड़कर मुट्ठी में भर आगे बढ़ा दिया।

बोले, 'आप क्या कह रहे हैं बड़े बाबू, आप ही तो क़ानून हैं। आप लोग जो करेंगे वही तो क़ानून होगा।'

लगा कि बड़े बाबू को दया आ गयी।

बोले, 'अभी जाइये। खा-पीकर तीसरे पहर आइयेगा।'

तो वही सही। खा-पीकर आराम कर फिर थाने जा पहुंचे। फिर बड़े बाबू के सामने जाकर प्रणाम किया।

उस समय बड़े बाबू इज़हार लिखने में लगे थे। सुखदा का बयान खाते में लिख रहे थे।

घूंघट निकाले, दोनों आंखों को ढके सुखदा एक के बाद एक जवाब दिये जा रही थी। उसकी आवाज़ से लग रहा था कि उसकी आंखों से अश्रु-

धारा बहे जा रही थी।

'आपकी शादी कब हुई ?'

सुखदा ने तारीख बतायी।

बड़े बाबू ने पूछा, 'आप ने घर से भागकर अभिभावकों की अनुमति के बिना शादी की ?'

'हाँ।'

'आपके पति का नाम क्या है ?'

सुखदा दुविधा करने लगी। भूपति भादुड़ी बोले, 'कालीकान्त विश्वास।'

'आपके पति का नाम कालीकान्त विश्वास है ?'

सुखदा ने सिर हिलाकर कहा, 'हाँ।'

बड़े बाबू ने पूछा, 'आपके पति क्या करते हैं ?'

बहुत देर बाद सुखदा ने जवाब दिया, 'कुछ नहीं।'

'तो आपके पति ने ही क्या आपको गहने चोरी करने को उकसाया था ?'

सुखदा चुप रही।

बड़े बाबू ने धमकाया।

'बताइये, बताइये, चुप किये रहने से चालान कर दूँगा।'

सुखदा बोली, 'हाँ।'

'आपके पति रहते कहाँ हैं ? क्या पता है ? बताइये, बताइये, चुप किये रहने से आप ज्यादा मुसीबत में फँसेंगी।'

आखिर सुखदा का बयान पूरा हुआ। उसके बाद कान्स्टेबिल ने सुखदा को गारद में बन्द कर ताला लगा दिया।

बड़े बाबू ने भूपति भादुड़ी की ओर देखकर कहा, 'अब तो खुश हैं ? जो चाहते थे वह हो गया न ?'

भूपति भादुड़ी सचमुच बहुत खुश थे। फिर हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

बोले, 'तो मैं फिर आऊँगा।'

सड़क पर आकर भूपति भादुड़ी ने चैन की साँस ली। शहर की गाड़ियाँ कुछ कम थीं। बीच-बीच में एक-दो बसें चल रही थीं। लेकिन ट्राम बन्द थी। लोगों की बातों से समझ में आया कि बड़ाबाजार की ओर गोली चली है। बहुत लोग मारे गये हैं। एक और खबर सुनाई दी। भूपति भादुड़ी का मन खूब खुश हो गया। हो, सब अस्त-व्यस्त रहे। उनका अपना काम पूरा हो गया है। अब कलकत्ता के उलटकर खाक हो जाने पर !

भी उन्हें कोई दुःख नहीं है। बहुत दिनों का पाप आज जाकर घुला। अब जेल काटे सुखदा। सुखदा सड़े, कालीकान्त विश्वास सड़े, और वह हरामजादा नरेश दत्त भी सड़े। चोर से चोरी! अब पता चलेगा बच्चू को कि कितने धान में कितने चावल होते हैं!

माधव कुंडू लेन से घर में घुसते ही एक आदमी जल्दी-जल्दी आगे बढ़ गया।

बोला, 'हां मशाई, सुरेन सान्याल नाम का कोई इस घर में रहता है?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हां, क्यों? मैं उसका मामा हूँ। क्या हुआ?'

'आप उसके मामा हैं? तो अभी ज़रा मेडिकल कॉलेज जाइये। इमर्जेंसी वार्ड में।'

'क्यों?' भूपति भादुड़ी का कलेजा काँप उठा।

लड़का बोला, 'आपके भांजे के बदन में बन्दूक की गोली लगी है। उसे पुलिस मेडिकल कॉलेज अस्पताल ले आयी है। इमर्जेंसी वार्ड में।'

कहकर लड़का रुका नहीं। जसे आया था वैसे ही जल्दी-जल्दी फिर चला गया।

जब होश आया तो लड़का बहुत दूर निकल गया था। भूपति भादुड़ी ने चिल्लाकर पुकारा, 'अरे भाई सुनो, ओ भाई!'

भूपति भादुड़ी वहीं थोड़ी देर चुप किंकर्तव्य-विमूढ़-से खड़े रहे। जो लड़का खबर दे गया वह उसी वक्त भागकर गली पार कर सदर रास्ते पर आकर ग़ायब हो गया था। भूपति भादुड़ी की आँखों में सारा वातावरण मानो धुंधला हो गया। ज़रा देर पहले ही सुखदा को हवालात में भेज सकने पर जो खुशी दिल में उठी थी सब जैसे ग़ायब हो गयी हो। क्या करें, यह उनकी समझ में न आया। इतने दिनों तक भांजे को संभाले रखकर चलते-चलते अन्त यह हुआ। किनारे पर आकर नाव डूब गयी। पक्की गोट आख़िर में कच्ची निकल आयी।

भूपति भादुड़ी उस वक़्त भी मुँह बाये खड़े थे।

भूपति भादुड़ी को लगा कि उनके सारे किले ढह गये हों। अब इतने रुपयों की जायदाद का मालिक बनकर वे क्या करेंगे? फिर, वे कितने दिन ज़िन्दा ही रहेंगे? उनकी बहुत दिनों की बड़ी साध थी कि इस मकान के तिमंजिले के कमरे में पाँव-पर-पाँव रखकर चैन करेंगे। अन्तिम दिनों में भांजे की शादी कर देंगे। ख़ुद उन्होंने शादी की नहीं थी। किसी ने शादी की बात चलायी ही नहीं, इसीलिए उनकी शादी हुई नहीं। शादी होने पर, बाल-बच्चों से घिरे रहने पर शान्ति मिलती ही, उसका ही क्या निश्चय था!

पर के सामने आते ही बहादुरसिंह ने सलाम किया। लेकिन भूपति भादुड़ी ने उधर ध्यान ही नहीं दिया। दुर, दुर! सारी जिन्दगी यह नौकरी करके ही काट दी बेटा। सिर्फ पहरा ही देते रहे। पता ही नहीं लगा कि कितनी क्या जायदाद चोरी हुई जा रही है!

'नमस्कार।'

भूपति भादुड़ी चौंक पड़े। बोले, 'कौन? तुम कौन हो?'

आदमी बोला, 'मैं सुधन्य हूँ।'

'सुधन्य। कौन सुधन्य?'

'जी, मैं बूढ़े बाबू का भतीजा हूँ। बूढ़े बाबू मेरे चाचा हैं।'

भूपति भादुड़ी ने आदमी को एक बार सिर से पाँव तक देखा। उसके बाद बोले, 'तो क्या चाहिए?'

सुधन्य बोले, 'नहीं, चाहिए कुछ नहीं। बूढ़े बाबू की हालत तो अच्छी नहीं चल रही है। उन्हें ही बीच-बीच में देखने चला आता हूँ, और क्या?'

भूपति भादुड़ी खफा हो गये। बोले, 'सिर्फ देखने आने से क्या फायदा? काका को अगर ऐसी ही देखने की तबीयत है तो अपने घर उठाकर ले जा सकते हो। वहाँ जी-भरकर आँखों की साध मिटा सकते हो।'

सुधन्य बोला, 'जी, इस हालत में क्या हिलाना-डुलाना अच्छा है?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा है। बूढ़े बाबू को ऐसा क्या हुआ है कि उनका हिलना-डुलना ठीक नहीं? अच्छा तो खाते-पीते-सोते हैं। सुना है कि बहुत कसकर भात निगलते हैं। बूढ़े बाबू को यहाँ तो कोई तकलीफ नहीं है।'

सुधन्य बोला, 'आप क्या कह रहे हैं, मैनेजर बाबू! काका की भूख कम हो गयी है। काका और कितने दिन चलेंगे, इसका भी ठीक नहीं। ठीक से बात भी नहीं कर पाते हैं। उठ-बैठ भी नहीं सकते।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'बात नहीं कर सकते तो मैं क्या करूँ? मैं क्या डॉक्टर हूँ? काका पर अगर तुम्हें इतना प्यार है तो डॉक्टर को दिखा दो। कलकत्ता में डॉक्टरों की कमी नहीं है। रुपया देने पर वे आकर देख जायेंगे।'

सुधन्य बोला, 'रुपया ही अगर होता मैनेजर बाबू, तो आपसे ये सब बातें क्यों कहता? मेरे काका भी गरीब आदमी हैं, मैं भी गरीब आदमी। अगर बड़ा आदमी होता तो कॉंवरापाड़ा की बस्ती में जाकर स्त्री और लड़के-लड़कियों को लेकर मुझे रहना पड़ता?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मुझे इस तरह की, इतनी बातों के [illegible] का वक्त नहीं है, तुम जाओ।'

सुधन्य बोला, 'आप काम-काज वाले आदमी हैं, आपको तो बातों के जवाब देने का वक़्त नहीं ही रहेगा। लेकिन बूढ़े आदमी की तरफ़ भी तो आपको ज़रा ध्यान देने की ज़रूरत है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अरे, ज़रूरत तो बहुत कुछ है, लेकिन मैं तो अकेला आदमी हूं। कितनी तरफ़ देखूं? इधर घर में गहने चोरी हो गये, उस पर भांजा अस्पताल में है। उसके बदन में गोली लगी है। मैं किधर-किधर संभालूं? इसीलिए तो कह रहा हूं कि भाई, अभी तुम जाओ, मुझे इस वक़्त बेकार बात करने का वक़्त नहीं है।'

सुधन्य आश्चर्य में पड़ गया। पूछा, 'आपका भांजा? वही सुरेन बाबू? उसके बदन में गोली लगी है? बन्दूक की गोली?'

'हां जी, हां। मुझे क्या एक झंझट है? इसलिए तो कह रहा हूं कि अभी तुम जाओ। मुझे अभी बहुत काम है। दिमाग़ की चोट से मैं पागल कुत्ते के काटे-सा हो रहा हूं, और तुम तब से बक-बक ही किये जा रहे हो।'

कहने के बाद भूपति भादुड़ी फिर न रुके। कल रात से झमेलों में फंसे हैं। उस पर फिर यह नयी उलझन। इस वक़्त क्या अस्पताल में सुरेन से मुलाक़ात होगी? छः के बाद तो उसमें मुलाक़ातियों का आना-जाना बन्द हो जाता है। अब जाने पर क्या उसे घुसने देंगे? लेकिन गये बिना भी कैसे हो? कम-से-कम पता तो चले कि कैसा है। बाहर के नर्स या डॉक्टर लोगों से पूछने पर वे भी तो हाल बता सकते हैं।

मां जी के कमरे के सामने ही धनंजय से भेंट हुई।

'क्या रे? अब मां जी कैसी हैं?'

'उसी तरह।'

'होश आया।'

धनंजय बोला, 'कुछ-कुछ बोली थीं। तरला ने पानी पिला दिया।'

भूपति भादुड़ी कमरे में गये। बादामी एक ओर बैठी-बैठी ऊंघ रही थी। तरला सिरहाने के पास बैठी थी। और मां जी आंखें बन्द किये चित लेटी थीं। भूपति भादुड़ी के घुसते ही तरला ने एक बार मैनेजर बाबू की ओर ताका।

भूपति भादुड़ी के इशारा करते ही तरला उठकर पास आ गयी।

बोली, 'सवेरे से कुछ मुंह में नहीं गया है। अभी पीने के लिए थोड़ा-सा पानी दिया था।'

'मां जी कुछ पूछ रही थीं?'

तरला बोली, 'सबकी ओर देखा था। उसके बाद पूछा—सुखदा कहां है?'

'तूने क्या कहा ? यह तो नहीं कहा कि पुलिस पकड़ ले गयी है ?'

'नहीं । कह दिया, दीदी अपने कमरे में हैं ।'

भूपति भादुड़ी आहिस्ता-से बोले, 'वाह, देख रहा हूँ, तुममें तो बहुत अक्ल है । बहुत अच्छा जवाब दिया ।'

तरला बोली, 'पुलिस की बात सुनकर वही फिर बेहोश हो जातीं, इसीलिए यह जवाब दिया ।'

'अच्छा किया बेटी, तूने अच्छा किया । तेरी समझ की बलिहारी है । कमज़ोर शरीर—पुलिस का नाम सुनकर ही तो हार्ट फेल हो जायेगा । अब किसी से नहीं कहना है । बादामी से भी कह देना, धनंजय से भी कह देना कि पुलिस की बात माँ जी से न कहें । वैसी ज़रूरत हुई तो डॉक्टर से पूछकर मैं ख़ुद ही कह दूँगा । तुझे इस मामले में कुछ नहीं कहना है । समझी ?'

उसके बाद थोड़ा रुककर बोले, 'उधर फिर एक झंझट हो गया !'

'कैसा झंझट ?'

'अरे, सुना है कि मेरे भांजे को पुलिस ने गोली मार दी ।'

'हाय राम, यह क्या ! गोली क्यों मारी ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अरे, कलकत्ता की सड़कों पर कब क्या हो जाय, कोई बता सकता है ? रोज़ ही तो दंगा-फसाद चलता रहता है । कब भीड़ में घुस गया और कब आकर गोली लग गयी—सारे बदमाश लोग काम-धाम नहीं, बस, फ़सादहै-भर ।'

भूपति भादुड़ी धीरे-धीरे कमरे से बाहर आये । आज इतने दिनों बाद मानो कुछ चैन मिला हो कि वैसे ही एक नया झमेला आ गया । यह हो, असल में तो माँ काली ही सब-कुछ की मालिक हैं । उनकी अगर कृपा हो तो भूपति भादुड़ी की सारी चिन्ताएँ मिटा देंगी । 'माँ, तुमको मैं बकरे का जोड़ा बलि दूँगा । मेरी मनोकामना पूरी करो, माँ ! तुम्हें सोने का, शंख का चूड़ा बनवा दूँगा । मोती-जड़ी सोने की नथ दूँगा ।'

'सलाम हुजूर ।'

बहादुरसिंह अपनी ड्यूटी कर रहा था । भूपति भादुड़ी ने उधर ध्यान ही नहीं दिया । लड़का वहाँ लाचार पड़ा है ? बाप नहीं, माँ नहीं, सारी ज़िम्मेदारी मामा की । भाजा होकर क्या पैदा हुआ कि मामा को मोल ले लिया । ट्राम नहीं, बस नहीं, बस पैदल ही इतना रास्ता जाना पड़ेगा । रास्ते की बत्तियाँ तक सालों ने बुझा दी हैं । झुंड-के-झुंड लोग पैदल आ रहे हैं । दूकानों के मारे दरवाज़े बन्द हैं ।

भूपति भादुड़ी ने एक अनजान सज्जन से पुकारकर पूछा, 'हाँ मशाई, सामने कुछ गड़बड़ है क्या ?'

सज्जन बोले, 'कितनी दूर तक जायेंगे ?'

'यही मेडिकल कॉलेज तक।'

सज्जन बोले, 'न, वहां तक कोई गड़बड़ नहीं है। वेलिंग्टन स्क्वायर में विधान राय के घर के सामने से ही गड़बड़ शुरू हुई थी। उधर न ही जाया जाये तो भला।'

कहकर भले आदमी चले जा रहे थे। भूपति भादुड़ी ने फिर भी नहीं छोड़ा। फिर पूछा, 'गड़बड़ कैसी है, मशाई ? गोली क्यों चली ? कुछ जानते हैं ?'

'अरे, वह सब गुंडों की कारस्तानी है ! एक तरफ़ कांग्रेस और दूसरी तरफ़ कम्युनिस्ट ! दोनों दल ही मिनिस्ट्री लेना चाहते हैं। बीच में तमाम बेक़सूर लोग गोली खाकर मारे गये। और हमारा दुर्भाग्य कि ऑफ़िस से पैदल चलकर घर लौटना पड़ रहा है !'

भूपति भादुड़ी ने पूछा, 'बहुत लोग मारे गये हैं क्या ?'

भले आदमी बोले, 'कल अखबार में देख लीजियेगा।'

पास से एक सज्जन पैदल जा रहे थे, वे बीच में बोल पड़े, 'राजा राजा लड़ें और भोले-भाले क्यों मारे जायें !'

दोनों ने उनकी ओर देखा। लेकिन वह आदमी बात कहकर जिधर जा रहा था उधर ही जाने लगा। भूपति भादुड़ी रुके नहीं। गोली खाकर भांजा अस्पताल में पड़ा है, देर होने से हो सकता है आखिरी बार भेंट भी न हो। ट्राम-बसें तो चल नहीं रही हैं, पर रिक्शे चल रहे हैं, टैक्सियां चल रही हैं। लेकिन सब भरी हैं। उनमें ठसाठस लोग भर के जा रहे हैं। जो भी हो, जिस तरह भी सम्भव हो, हर कोई घर लौटना चाहता है। एक बार किसी तरह घर पहुंच पाने पर बेफ़िक्र ! फिर कोई चिन्ता नहीं ! भूपति भादुड़ी भी घर का गेट बन्द कर बेफ़िक्री में बिता सकते थे। लेकिन उन्हें बेफ़िक्री नहीं है। भांजा बिगड़ गया है। बुरे दोस्तों के साथ मिल, आवारा बनकर तंग करने लगा है।

मेडिकल कॉलेज के गेट के आगे बहुत भीड़ थी। इमर्जेंसी वार्ड कहाँ है, भूपति भादुड़ी को यह भी पता नहीं था। सभी भागदौड़ कर रहे थे।

सामने आंगन में एक आदमी को पाकर पूछा, 'मशाई, बता सकते हैं, इमर्जेंसी वार्ड कहाँ है ?'

सज्जन बोले, 'वह सामने है। बड़े-बड़े अक्षरों में वह क्या लिखा है।'

उसके बाद ज़रा रुककर उन सज्जन ने पूछा, 'इमर्जेंसी वार्ड में आपका

कौन है ?'

मीठी बात से भूपति भादुड़ी पिघल गये। बोले, 'मेरा अपना भांजा है मशाई, सुना है कि पुलिस की गोली लगने से यहाँ लाया गया है।'

'पुलिस की गोली ? गोली कहाँ लगी है ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'पता नहीं। मुझे एक आदमी आकर बता गया। मैं तो मशाई, अपने बाप के पैदा होने पर भी यहाँ नहीं आया। जान के लाले पड़ने पर यहाँ आना पड़ा।'

सज्जन बोले, 'आप अकेले ही नहीं हैं। मुझे भी तो आना पड़ा है।'

'आपका कौन है ?'

'मेरा सगा छोटा भाई है, मशाई। आजकल के लड़के, बात तो बिलकुल सुनते नहीं। लेकिन इसलिए मैं तो गुस्सा होकर बैठ नहीं सकता। मुझे भी इसीलिए आपकी तरह जान के लिए आना पड़ा है।'

भूपति भादुड़ी को मानो कुछ सहारा मिला, 'भाई को आपने देखा है ? अब कैसे हैं ?'

सज्जन बोले, 'कैसे देखूं ? रुपया माँगते हैं। कहते हैं, रुपया दो तो दिखायें, बतलायें।'

'क्यों ? रुपया किस बात का ?'

'कहते हैं, बहुत-सा खून निकल गया है। सो अब ब्लड-बैंक से खून लेना होगा। उसके दाम तीस रुपये हैं। खून देने के बाद मुलाक़ात होगी।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तब तो मेरे भांजे के लिए भी खून की जरूरत होगी।'

'वह तो होगी ही।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो ज़रा पता लगा लीजिये न, मेरे भांजे की क्या हालत है ? मेरे भांजे को भी तो गोली लगी है।'

सज्जन बोले, 'क्या नाम है आपके भांजे का ?'

'सुरेन्द्रनाथ सान्याल।'

'कैसी शक्ल है ? नाम तो इन लोगों को सबका पता नहीं है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'साँवला-सा—दुबला, दुहरा चेहरा। बाईस बरस की उम्र। सिर के बाल पीछे की ओर मोड़े हुए।'

'ठीक है।'

कहकर सज्जन अन्दर की ओर चले गये। जाते वक्त कह गये, 'आप यहीं खड़े रहें, मैं अभी पता लगाकर आ रहा हूँ। किधर और मत चले जाइयेगा।'

भूपति भादुड़ी चुपचाप वहीं खड़े रहे। आस्य से आते समय रुप

साथ ले आये थे। नहीं तो यहाँ कहाँ, किसके आगे हाथ फैलाते ? आस-पास तमाम लोग उत्सुक दृष्टि से इधर-उधर घूम-फिर रहे हैं। भूपति भादुड़ी चुपचाप वहीं खड़े रहे।

कुछ देर बाद ही वे सज्जन भागते-भागते आये।

आते ही बोले, 'सत्यानाश हो गया मशाई, मेरे भाई को जो है वही आपके भांजे को भी है, सेम केस। ब्लड देना होगा।'

'कैसा देखा मेरे भांजे को ? कैसा है ? बात कर सकता है ?'

सज्जन बोले, 'अरे नहीं, भेंट नहीं हुई। भेंट कैसे होगी ?'

'डॉक्टर ने क्या बताया ?

'उसने ही बताया कि ब्लड देना पड़ेगा ?

'मुझे कितना रुपया लगेगा ?'

'बोला कि तीस रुपये के क़रीब। आपके पास रुपये हैं ? रुपये साथ लाये हैं ?'

भूपति भादुड़ी ऊपरी जेब से मनीबैग से रुपये निकालते-निकालते बोले, 'हाँ लाया हूँ। आते वक़्त कुछ सोचकर रुपये ले आया।'

उसके बाद तीन दस-दस रुपये के नोट भले आदमी के हाथ में देकर बोले, 'डॉक्टर ने कुछ पूछा ? डॉक्टर ने क्या कहा ? बच तो जायेगा ?'

भले आदमी बोले, 'ज़रूर बच जायेगा। मैंने डॉक्टर से तो वही बात पूछी। आप क्या सोचते हैं कि बिना पूछे रुपया दे रहा हूँ ?'

रुपयों को मुट्ठी में लेकर सज्जन बोले, 'हाँ, एक बात, आपके पास और तीस रुपये होंगे ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाँ।'

'अगर विश्वास करके दे दें तो बड़ा अच्छा हो। मैं रुपये लाना भूल गया। रुपये मैं आज रात को ही आपके घर आकर खुद दे जाऊँगा। मेरा नाम-पता आप रख लीजिये, मेरा नाम निरापद सेन गुप्त है...।'

भूपति भादुड़ी रोककर बोले, 'उसकी बात आप अभी न सोचें।'

उसके बाद और दस-दस रुपयों के तीन नोट निकालकर सज्जन के हाथ में दिये। बोले, 'तो आप अभी लौटकर आ रहे हैं ?'

'हाँ, हाँ, रुपये देने पर ही खून देंगे।'

'रसीद तो देंगे ?'

'ज़रूर। रसीद लिये बिना कैसे छोड़ूँगा ? मैं अभी आया। आप यहीं खड़े रहें।'

कहकर सज्जन तेजी से चले गये।

सारा मध्य कलकत्ता उस समय जल रहा था। मानव की जीवन-धारा कई घण्टों तक उलटी बही। यह भी शायद इतिहास का एक अमोघ लेख है। किसी दिन ब्रिटिश-राज दो सौ बरस का मौरूसी पट्टा छोड़कर चला गया था। उसके बाद बहुत-सी रातें कट गयीं। मानव-जीवन में और एक नयी क्रान्ति की खबर फैली। यह उन्नीसवीं सदी की औद्योगिक क्रान्ति नहीं थी—यह उसमें भी नये प्रकार की क्रान्ति थी। यह किसी की अधीनता स्वीकार न करने की क्रान्ति थी। यहाँ पिता पिता नहीं, पुत्री भी यहाँ पुत्री नहीं थी। यह सम्भवत: प्रचुरता के अपव्यय की निर्णायक क्रान्ति थी। या गरीबी की अवश्यम्भावी परिणति में उत्पन्न क्रान्ति थी। आराम इस युग में पाप है, और शायद जीविका कमाने के लिए सूर्योदय से सूर्यास्त तक परिश्रम करना भी यहाँ असह्य है। जन्म के बाद ही इस युग के मानव का गुस्सा लपवर्ती क्रोधाग्नि बनकर समस्त मानव-समाज को लीलकर ही शान्त होगा। तभी जो कुछ भी प्रतिष्ठित है, जो कुछ भी मूल्यवान् है, जो कुछ भी सुन्दर है—उन पर ही मनुष्य का सारा क्रोध है।

प्रवेश तमाम सड़कें घूम-घूमकर सर्कुलर रोड, पार्क स्ट्रीट का चक्कर लगाकर कांग्रेस के ऑफिस में जा पहुँचा। दूर पर टीयर-गैस के गोलों के फटने की आवाज यहाँ भी सुनायी पड़ रही थी। गाड़ी नीचे खड़ी कर प्रवेश तरतड़ सीढ़ियाँ पार कर ऊपर पहुँच गया। सामान करीने से सजा हुआ था। बहुत रुपये खर्च कर चन्दे के रुपयों से नेताओं के आराम के लिए यह मकान बना है, जिसमें देश-सेवा के लिए यहाँ बैठकर शान्ति से पुष्पगन्धि वायु आदि अपने-अपने दिमाग पर बोझ टाल सकें। उसी दृष्टि से अधिक-से-अधिक प्रबन्ध हुआ है। उसके सिवा चुनाव भी तो आ रहा है। उसकी जोड़-तोड़ शुरू भी हो गयी है।

'कहाँ? पमिला कहाँ है? किस कमरे में?'

सबके चेहरों पर मानो बड़ी भारी थकावट और टूटने के चिह्न थे। फिर भी वह स्पष्ट प्रकट नहीं थे। ऑफिस में वही प्रसन्नता का वातावरण था। कोई-कोई सिगरेट पी रहा था। प्रवेश सेन के सब पुराने परिचित दोस्त-साथी थे। आज कलकत्ता के इस अग्नि-काण्ड के दिन सभी ठंडा करने के लिए यहाँ आकर जमा हुए हैं। लेकिन उस वक्त अड्डेबाजी करने

की प्रवेश सेन की मनोदशा न थी। वह उधर ही जा पहुंचा जिधर पमिली थी। पमिली के कमरे में उस वक़्त दो-तीन महिलाओं की भीड़ थी।

'आइये प्रवेश-दा, अभी तक हम पमिली के साथ बातें कर रहे थे।'

उस वक़्त उनसे भी बातें करने की प्रवेश की प्रवृत्ति न थी। उनके जाते ही प्रवेश बोला, 'क्या हुआ पमिली, आज तुम किसलिए सुबह-सुबह निकल पड़ीं ? तुम्हें पता था कि आज गड़बड़ होने वाली है। तुमने जरूर सुना होगा कि आज पुलिस ने फ़ायरिंग भी किया है।'

पमिली का मुंह-आंखें-चेहरा जैसे दूसरी ही तरह का हो गया। यह पमिली जैसे वह पमिली नहीं थी। जैसे बहुत दिनों के बाद प्रवेश अच्छी तरह आंखें उठाकर पमिली की ओर देख रहा हो। वह पमिली को छुटपन से देखता आ रहा है, छुटपन से पमिली से मिलता-जुलता आया है। उस समय पमिली कॉन्वेंट में पढ़ती थी। उसके बाद मेमसाहब से पियानो सीखती थी। वे सब दिन भी देखे थे। उस समय भाई-बहन झगड़ा किया करते थे। वे झगड़े प्रवेश को ही मिटाने पड़ते। पुण्यश्लोक बाबू का तमाम काम प्रवेश को ही देखना पड़ता। हरिलोचन मुंशी जरूर थे, लेकिन उनका रहना-न-रहना एक बराबर था।

उसके बाद प्रवेश को नौकरी मिली—अंग्रेज़ कम्पनी के पब्लिक रिलेशंस ऑफ़िसर का काम। उस नौकरी में जिस तरह बढ़िया वेतन था, उसी तरह आमदनी भी काफ़ी थी। उसके सिवा थीं तरह-तरह की पार्टियां, कान्फ़्रेंसें और बाहर घूमने की सुविधा। उसी ऊपरी रुपये की सुविधा से वह आज कलकत्ता शहर में एक बड़े मकान का मालिक बन गया। रह गयी शादी। उसका इन्तजाम पुण्यश्लोक बाबू ने कर दिया।

यह मानो सबसे अच्छी घटना थी—किसी उपन्यास की तरह !

रास्ते में आते-आते प्रवेश वही बात सोच रहा था। कलकत्ता आज अशान्त है। जब इतने दिनों बाद उसके जीवन में जरा शान्ति की प्रत्याशा दिखायी दी, ठीक तभी शहर में कैसी आग लग गयी। अभी धू-धू आग भड़काने की क्या जरूरत थी ?

प्रवेश बोला, 'चलो, घर चलो, पुण्य-दा मुझे आने नहीं दे रहे थे। लेकिन मैं जबर्दस्ती चला आया।'

पमिली ने फिर भी कुछ जवाब न दिया।

प्रवेश फिर बोला, 'रास्ते में बहुत टीयर-गैस छोड़ी जा रही है।'

पमिली बोली, 'इस मुसीबत में तुमसे किसने आने को कहा था ?'

प्रवेश फिर बोला, 'वाह रे, तुम्हारी मुसीबत की बात सुनकर मैं कैसे चुप रहता ? खबर सुनने के बाद से तो मैं तुम्हारे पास आने के लिए छट-

पटा रहा था। तुम्हारी गाड़ी जला देने की बात सुनने के बाद मैं कैसा डर गया था, उसका तुम अनुमान भी न लगा सकोगी।'

पद्मिनी बोली, 'मेहरबानी कर चुप रहो, प्रवेश।'

प्रवेश बोला, 'क्यों ? तुम्हें विश्वास नहीं आ रहा है ? तुम्हें पता नहीं है कि किस मुसीबत से, कहाँ-कहाँ घूमता हुआ मैं गाड़ी से यहाँ पहुँचा हूँ। लेकिन मैंने अपनी बात जरा भी नहीं सोची। मुझे तो पुष्प-दा ने आने से ही रोका था। कहा था, पद्मिनी कांग्रेस के ऑफिस में है, और निरापद है।'

कुछ रुककर प्रवेश बोला, 'चलो, और देर मत करो, रात बढ़ने के साथ-साथ गड़बड़ और बढ़ सकती है। आज की फायरिंग में उनके बहुत-से लोग मारे गये हैं।'

सहसा पद्मिनी बोली, 'चलो।'

प्रवेश को मानो स्वर्ग मिल गया। बोला, 'और देर करना अच्छा नहीं है।'

पद्मिनी सचमुच उठ खड़ी हुई। उसके बाद धीरे-धीरे प्रवेश के साथ नीचे उतरने लगी। प्रवेश एक बार अन्दर जाकर सेक्रेटरी को धन्यवाद दे आया। उस वक्त वहाँ ताश का अड्डा जमा था। वहाँ से झटपट एकदम गाड़ी में बरामदे से उतरकर देखा कि पद्मिनी गाड़ी में बैठी हुई है। आँखें और मुँह गम्भीर हैं। नजरें कहीं भी नहीं टिकी है।

गाड़ी चलाते-चलाते प्रवेश बोला, 'तुम्हारे ऊपर बेटा लोगों ने हाथ नहीं छोड़ा, यही बहुत है। वे लोग सब कर सकते हैं।'

पद्मिनी चुपचाप सड़क की ओर देख रही थी। बाहर सड़क पर घोर अँधेरा था। इधर रास्ता बहुत चक्करदार था। लेकिन कोई और गड़बड़ न थी। सड़क की बत्तियाँ बुझी थीं। इस बस्ती के लोगों को खबर मिल गयी थी कि धरमतल्ला में खून-खराबी हुई है। बसें जली हैं। सभी निश्चिन्त होकर घर में घुसकर सुरक्षा की तलाश में हैं। लेकिन उन्हें नहीं मालूम कि आज सुरक्षा देने वाले मालिक तक अपनी सुरक्षा के लिए बेचैन हैं। वे भी बेदाग नहीं बचे। इस वक्त उनका सिंहासन डोल रहा था। उनकी लड़कियाँ भी कांग्रेस-भवन की चारदीवारी में सुरक्षा खोज रही थीं!

'तुम्हारा उन लोगों ने कोई अपमान तो नहीं किया, पद्मिनी ?'

पद्मिनी बोली, 'न।'

प्रवेश बोला, 'हाँ, इतना साहस उनका नहीं है। साहस होने पर क्योंकर भी तरह से ये सब बसें जलाते ? यह नहीं पता कि यह सब पब्लिक!'

है।'

कहकर क्लच और ज़ोर से दबा दिया। उसके बाद बोला, 'और देखो पमिली, हम भी पार्टी का काम करते हैं। पिकेटिंग की, जेल काटी, पुलिस को मारा, क़ानून तोड़ा, लेकिन सोडा की बोतल कभी नहीं फेंकी, बस-ट्राम भी नहीं जलायीं, क्योंकि हम जानते थे कि वह देश के लोगों की सम्पत्ति है।'

गाड़ी सियालदह के मोड़ की ओर न जाकर अमहर्स्ट स्ट्रीट में घुसी।

सहसा प्रवेश बोला, 'अच्छा पमिली, एक बात तुमसे पूछूं?'

पमिली बोली, 'क्या?'

'तुम्हारे बाबा से जाकर एक अनुरोध करूँगा।'

'क्या अनुरोध?'

'तुम अन्दाज़ लगाओ कि क्या अनुरोध हो सकता है?'

पमिली ने कुछ उत्तर नहीं दिया। जैसे कि बेकार बात का जवाब देने का वक़्त उसे नहीं है।

प्रवेश बोला, 'क्यों, मेरी बात का जवाब नहीं दे रही हो?'

पमिली बोली, 'मुझे इस वक़्त कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। तुम चुप रहो।'

प्रवेश बोला, 'ठीक, ठीक, मुझसे ही ग़लती हुई थी। इतना बड़ा एक ऐक्सीडेंट हो गया। इस वक़्त बात करना अच्छा नहीं ही लगेगा।'

उसके बाद जरा रुककर बोला, 'देखो पमिली, तुम्हें तो मालूम है कि मुझे कितना वेतन मिलता है। लास्ट सैलरी ड्रा की थी पन्द्रह सौ रुपये, उसके बाद है बहुत-सी ऊपर की इनकम, जिसका कोई हिसाब नहीं, जैसे कि...।'

बात करते-करते प्रवेश ने पमिली के चेहरे की ओर देखा। पमिली बात सुन रही है या नहीं सुन रही है, यह समझ में नहीं आया।

'उसके सिवा तुम जानती हो कि मैंने एक घर भी बनवा लिया है...।'

अचानक पमिली बोल उठी, 'स्टॉप इट प्रवेश, प्लीज़ स्टॉप।'

प्रवेश डर गया। पमिली की ओर देखकर बोला, 'क्यों पमिली, तुम्हें क्या मेरी बातें अच्छी नहीं लग रही हैं? मेरे बारे में तुम कुछ नहीं जानना चाहती हो? मैं क्या तुम्हारी आँखों में आदमी ही नहीं हूँ?'

पमिली धीरज खोकर बोल उठी, 'प्रवेश, अब रुक जाओ। यह सब बातें सोचना इस वक़्त मुझे अच्छा नहीं लग रहा है। मैं सोचते-सोचते इस वक़्त गूंगी हो गयी हूँ।'

'गूँगी हो गयी, माने ?'

पमिली बोली, 'तुम लोगों का काम-करतब देखकर मेरा सब सोचना रुक गया है।'

प्रवेश विस्मित हो गया था। बोला, 'हम लोगों का काम देखकर? हम लोगों का क्या काम तुमने देखा? काम तो किया उन लोगों ने। वही उनकी पार्टी ने।'

'उन लोगों की पार्टी माने ?'

'वही पूर्ण बाबू वगैरह। कल दिन-भर दीवारों पर पोस्टर लगाकर लोगों को पागल बना दिया, आदमी को पागल कर देने पर वे बस-ट्राम-गाड़ी नहीं जलायेंगे? फिर यह नहीं जानते कि यह उन्हीं की प्रॉपर्टी है। पुण्य-दा की प्रॉपर्टी भी नहीं है, तुम्हारी-मेरी भी प्रॉपर्टी नहीं—सबकी प्रॉपर्टी है।'

उसके बाद जरा रुककर बोला, 'यही देखो न, तुमने उनके साथ क्या दुश्मनी की थी कि तुम्हारी गाड़ी जला दी? तुमने तो उनके साथ कोई बुरा बर्ताव नहीं किया था।'

पमिली बोली, 'हाँ, हमने उनके साथ बुरा बर्ताव किया।'

प्रवेश और भी अधिक ताज्जुब में आ गया। बोला, 'वह क्या? तुमने उनके साथ बुरा बर्ताव किया था?'

पमिली बोली, 'न, मैंने नहीं किया। लेकिन मेरे बाबा ने उनके साथ बुरा बर्ताव किया। वे जानते हैं कि मैं मन्त्री की बेटी हूँ।'

'तो मन्त्री की बेटी होना क्या गुनाह है? देख रहा हूँ कि तुम मेरा मज़ाक उड़ा रही हो? फिर उसके सिवा पुण्य-दा ने ही उनके साथ क्या बुरा बर्ताव किया है?'

पमिली ने जैसे डाँटा हो। बोली, 'सब-कुछ जानकर भी तुम झूठ मत बोलो, प्रवेश!'

प्रवेश और भी आश्चर्य में पड़ गया। बोला, 'इसके मतलब ?'

पमिली बोली, 'इसके मतलब तुम अच्छी तरह जानते हो। मेरे आगे भोले मत बनो। मेरे बाबा ने उन पर जो-जो अत्याचार किये, उन्हें तुम नहीं जानते हो?'

प्रवेश और उत्तेजित हो गया, 'पुण्य-दा ने उन पर अत्याचार किये हैं?'

'सिर्फ़ अत्याचार ही नहीं किये, एक्सप्लॉयट भी किया। और सिर्फ़ उन्हें ही एक्सप्लॉयट नहीं किया, मुझे भी एक्सप्लॉयट किया।'

प्रवेश सारा मामला समझ गया। इतने दिनों पमिली के साथ घूमा-

रा था, आनन्द उठाया था, शराब पी थी, मदमस्ती करता आया था। लेकिन वही लड़की अचानक इतने दिनों में ऐसी आत्म-सचेतन हो जायेगी, यह प्रवेश ने कभी कल्पना भी नहीं की थी। प्रवेश के लिए यह सत्य भी चौंकाने वाला था। पमिली की बातों से प्रवेश को मानो अचानक किसी महादेश के आविष्कार करने का आश्चर्यजनक अनुभव हुआ हो।'

पमिली चुप किये रही। अचानक फिर बोलने लगी, 'मैं इतने दिनों तक कुछ समझ नहीं पायी, इसीलिए कुछ बोली नहीं। लेकिन अब मेरी आँखें खुल गयी हैं।'

प्रवेश बोला, 'ताज्जुब है, सहसा किस बात से तुम्हारी आँखें खुल गयीं? अचानक क्या हो गया कि तुम ऐसी बदल गयीं? आज का हाल देखकर?'

पमिली बोली, 'नहीं।'

'तो?'

लेकिन पमिली ने फिर जवाब नहीं दिया। सामने ही बहुत-से लोगों की भीड़ दिखायी पड़ी। उस अँधेरी सुखिया स्ट्रीट के बीच जैसे बहुत-से लोग पुण्यश्लोक बाबू के घर के सामने जमा होकर नारे लगा रहे हों। काम होने प भी कम-से-कम दो सौ लोग इकट्ठा थे। सभी एक साथ चिल्ला रहे थे :

'खून के बदले खून चाहिए
होशियार, होशियार।'

पुलिस का कहीं भी नाम-निशान नहीं था। प्रवेश को मानो अजीब-सा डर लगा।

उसने सहसा गाड़ी रोक दी। बोला, 'चलो, गाड़ी वापस ले चलें, पमिली।'

पमिली बोली, 'क्यों?'

प्रवेश बोला, 'वहाँ जाने से वे यह गाड़ी भी जला देंगे।'

'वे कौन?'

'और कौन? वही पूर्ण बाबू के गुंडों का दल।'

'तो वे हमारे घर के आगे क्या कर रहे हैं?'

प्रवेश बोला, 'कर क्या रहे हैं, नारे लगा रहे हैं।'

पमिली बोली, 'नारों से तुम्हें डर क्यों लगता है?'

प्रवेश बोला, 'फिर अगर गुस्से में आकर मेरी गाड़ी भी जला दें?'

'क्यों, तुमने क्या किया है?'

प्रवेश बोला, 'न, न, वक़्त खराब करने से फ़ायदा नहीं है। चलो

गाड़ी घुमाकर थाने पर खबर दे आयें। पुण्य-दा इस बीच बहुत चिन्ता में होंगे।'

'पुलिस को तो बाबा ही खबर दे सकते हैं। टेलीफ़ोन से क्या खबर नहीं दी जा सकती है? तुम चलो। मैं कह रही हूँ, तुम चलो।'

प्रवेश बोला, 'न, न, तुम पर भी वे हाथ छोड़ सकते हैं, तुम उन्हें नहीं जानतीं।'

'क्यों, मुझ पर हाथ क्यों छोड़ेंगे? मैंने उनका क्या किया है?'

प्रवेश बोला, 'लेकिन वे तो पहचानते हैं कि तुम पुण्य-दा की बेटी हो।'

'तो बाबा ने उनका ऐसा क्या किया है जो उनकी लड़की को वे नहीं छोड़ेंगे?'

प्रवेश बोला, 'यह बहस करने का मौक़ा नहीं है, पमिली। वे लोग समझने-बूझने तो हैं नहीं। देखती नहीं हो, कह रहे हैं—खून के बदले खून चाहिए, होशियार, होशियार!'

'इसके मतलब?'

'इसके मतलब कि एस्प्लेनेड पर जो कई लोग पुलिस की गोली से मारे गये हैं, उनके बदले यह लोग भी खून करेंगे।'

कहकर प्रवेश गाड़ी घुमा रहा था, लेकिन उसके पहले ही पमिली बोली, 'ठहरो, पहले मैं उतर जाऊँ, उसके बाद तुम थाने जाना।'

'यह क्या?'

लेकिन तभी पमिली दरवाज़ा खोलकर उसी अँधेरे में सड़क पर उतर गयी थी। उतरकर सीधी घर की ओर तेज़ी से चलना शुरू कर दिया था।

'पमिली, पमिली, सुनो!'

गाड़ी पास ही रोककर प्रवेश खुद भी उतरा। उसके बाद झटपट पमिली के पीछे जाकर पुकारने लगा, 'पमिली, सुनो पमिली!'

पमिली उस वक़्त और भी आगे बढ़ गयी थी। आगे की भीड़ से उस समय एक साथ आवाज़ उठ रही थी—

'कांग्रेस सरकार खूनी सरकार
भूलो मत, भूलो मत।'

प्रवेश को और अधिक डर लगने लगा। झटपट भागकर उसने पमिली को एक हाथ से दबा लिया। बोला, 'मत जाओ, मत जाओ पमिली, लौट चलो।'

पमिली एक झटके से प्रवेश का हाथ छुड़ाकर आगे बढ़ गयी। बोली,

'तुम छोड़ो।'

उसके बाद एकदम आदमियों की भीड़ में जाकर घुस पड़ी। वहाँ जाकर बोली, 'आप लोग चिल्ला क्यों रहे हैं ? क्या चाहिए आप लोगों को ?'

पहले तो सब लोग जैसे घबड़ा गये हों। ऐसी उन्हें आशा नहीं थी।

पमिली बोली, 'आप लोग क्या मेरे पिता से मिलना चाहते हैं ? अगर मिला चाहते हैं तो आइये मेरे साथ।'

सब लोग इस अप्रत्याशित घटना से जैसे किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये। ऐसी घटना पहले किसी मन्त्री के घर नहीं हुई थी।

पमिली बोली, 'अगर आप लोगों को कुछ कहना है तो बाबा से आमने-सामने कहिये।'

पास से कोई आदमी चिल्ला उठा, 'खून के बदले खून चाहिए।'

लेकिन 'होशियार' कहने वाला कोई आदमी न था।

तभी प्रवेश आ गया। आते ही दोनों हाथों से पमिली के चारों ओर घेरा बना लिया। मानो ऐसा न करने से वे लोग उस पर हाथ चला देंगे।

लेकिन साथ-ही-साथ एक शोरगुल उठा। दूर से पुलिस की वैन आने की आवाज़ सुनायी दी। भीड़ के आदमियों में सुगबुग शुरू हुई। शायद आते ही पुलिस फ़ायरिंग शुरू कर देगी।

फिर भी कुछ लोगों में उस वक़्त भी हिम्मत थी। वे एक साथ चिल्ला पड़े :

'कांग्रेस सरकार खूनी सरकार
भूलो मत, भूलो मत।'

लेकिन तभी वैन आगे आकर खड़ी हो गयी थी। भीड़ के आदमी साथ-ही-साथ तितर-बितर होने लगे। पुलिस को निशाना बनाकर चारों ओर से ढेले बरसने लगे। पुलिस भी तैयार थी। उन्होंने भी साथ-ही-साथ टीयर-गैस छोड़ी। क्षण-भर में आवाज़ और धुएँ से वह स्थान बिलकुल युद्ध-भूमि बन गया।

पुण्यश्लोक बाबू के दरबान ने अन्दर से लोहे का गेट बन्द कर दिया था।

प्रवेश वहाँ पर उसी गेट के सामने खड़े होकर चीखने लगा, 'दरबान, गेट खोलो, गेट खोलो, दीदीमणि आयी हैं।'

अस्पताल के आँगन में भीड़ उस वक्त और भी बढ़ गयी थी। एक के बाद एक और भी कई ऐंबुलेंस गाड़ियाँ आ पहुँची थीं। और कई लोगों को स्ट्रेचर पर से उठा-उठाकर उतारा जा रहा था। सबके आत्मीय स्वजन, बन्धुबान्धव स्तब्ध होकर वहीं नजदीक खड़े थे। स्ट्रेचर उतारते ही वे आगे बढ़ आये। चुन-चुनकर चेहरे देखने लगे। कहीं कोई उनकी पहचान का हो!

भूपति भादुड़ी भी झटपट आगे बढ़ गये। कहीं उनमें सुरेन न हो।

लेकिन नहीं। सब कम उमर के अनजान लड़के थे। बहुत होगी तो बीस-बाईस बरस की उमर होगी। आजकल के लड़के कैसे बिगड़ गये हैं! माँ-बाप, चचा-ताऊ की बात कोई नहीं मानता। बस, निडर बने घूमते हैं, बमबाजी करते हैं।

'ओ महाशय, सुनिये।'

भले आदमी अचानक पुकार सुन ठिठककर खड़े हो गये।

भूपति भादुड़ी बोले, 'क्या हुआ? मेरा रुपया जमा करा दिया?'

सज्जन तो जैसे आसमान से गिरे हों। बोले, 'कैसा रुपया? कैसा रुपया जमा करा दूँगा?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'यह क्या? आपने मुझसे तीस रुपये लिये, अपने खुद के लिए भी तीस रुपये उधार लिये?'

'आपसे किसलिए रुपये उधार लूँगा? क्या समझते हैं—मेरे पास रुपये नहीं हैं? आप कौन हैं?'

भूपति भादुड़ी बड़ी मुश्किल में पड़ गये। पूरा दिन गधे की तरह थाना और घर की मेहनत में गया, उस पर कल रात भी जागकर काटी। और अब यह मुसीबत!

'आप मुझे देखकर किसी और को समझ रहे हैं, और दोष मुझे दे रहे हैं। जानते हैं कि मैं इस मेडिकल कॉलेज का स्टूडेंट हूँ?'

झगड़ा सुनकर और दो-चार आदमी आकर खड़े हो गये। बोले, 'किसी ठग, धोखेबाज के झाँसे में आ गये; अब वह पैसा नहीं मिलने का, चला गया।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो मैं थाने पर खबर करूँगा।'

वह कभी किसी की परवाह करेगा भी नहीं। सब आदमी धोखेबाज़ हो गये हैं। सब आदमी ठग हो गये हैं। अब वह किसी के भले की नहीं सोचेगा। चलो भूपति भादुड़ी, पैर चलाकर तुम पैदल ही चलो। पैदल ही चलो...।'

बहादुरसिंह रोज की तरह माधव कुंडू लेन के चौधुरी-बाड़ी के गेट पर पहरा दे रहा था। सहसा एक टैक्सी आकर रुकी।

'कौन है?'

टैक्सी एकदम गेट पार कर आँगन में घुसना चाह रही थी। लेकिन बहादुरसिंह किसी तरह गेट नहीं खोल रहा था। टैक्सी में चार-पाँच छोकरे बैठे थे। उनमें से ही एक कूदकर उतरा। उतरकर गेट के सामने आकर खड़ा हो गया।

बोला, 'इस घर में भूपति भादुड़ी नाम का कोई है? उसे ज़रा बुला दो।'

'मैनेजर बाबू कोठी में नहीं हैं।'

'तो और कौन है?'

'और कोई नहीं है।'

कहकर बहादुरसिंह चुपचाप गेट के आगे खड़ा रहा।

लड़का बोला, 'और कोई नहीं है तो किससे बात करें?'

आँगन में सुधन्य खड़ा था। उसने देखा था कि एक टैक्सी आकर रुकी है। उसके बाद कोई आकर दरबान से कुछ बातें कर रहा है। कई दिनों से वह जल्दी-जल्दी आना-जाना कर रहा था। इस घर में कब क्या हो जाये, कुछ कहा नहीं जा सकता। उसके बाद आज धर्मतल्ला में गोली चली है। ट्राम बन्द है। पैदल चलकर उसे बेलियाघाटा के मोड़ तक जाना होगा। वहाँ से बस में चढ़कर घर। फिर बस मिल भी सकती है, नहीं भी मिल सकती है।

बहस हो रही है—सुनकर वह गेट के नज़दीक बढ़ आया।

'क्या हुआ, भाई? किसे चाहते हैं?'

लड़का बोला, 'सुरेन सान्याल इस घर का आदमी है न?'

सुधन्य बोला, 'हाँ, इस घर का आदमी है। लेकिन वे तो इस वक्त घर में नहीं हैं। कई दिन हुए वे घर छोड़कर चले गये हैं।'

'उनके मामा भूपति भादुड़ी हैं। वे भी नहीं हैं?'

सुधन्य बोला, 'नहीं।'

लड़का बोला, 'उन्हीं सुरेन सान्याल को हम टैक्सी में लाये हैं। उनके हाथ में गोली लगी है।'

'गोली ? बन्दूक की गोली ?'

'हाँ, धरमतल्ला पर पुलिस ने गोली चलायी। वहीं गोली लगी। उसके बाद वहाँ से ऐंबुलेंस अस्पताल ले गयी थी। अब बैंडेज बाँधकर रिलीज़ कर दिया है।'

सुधन्य समझ गया कि ये सब पार्टी के लोग हैं। लेकिन उसकी समझ में न आया कि क्या करे। वह खुद भी तो बाहरी आदमी है।

बोला, 'ज़िन्दा तो है ?'

लड़का बोला, 'हाँ, हाँ, ज़िन्दा है। बहुत नहीं लगी। ज्यादा सीरियस होने पर क्या अस्पताल छोड़ देता !'

सुधन्य बोला, 'देखिये, मैं ठीक इस घर का आदमी नहीं हूँ। मैं इस घर के नौकर को बुला रहा हूँ।'

इस बीच सहसा भूपति भदुड़ी आकर यह सब देखकर अवाक् हो गये।

बोले, 'क्या हुआ ? यहाँ कैसी भीड़ है ? कैसी भीड़ है यहाँ ?'

एक तो पहले से ही मिजाज़ बिगड़ा हुआ था। उस पर अस्पताल में साठ रुपया गड्ढे में गया। फिर मिजाज़ कैसे ठीक रहे ?

सुधन्य आगे आ गया। बोला, 'मैनेजर बाबू, यह अस्पताल से सुरेन बाबू को ले आये हैं।'

'ऐं !'

भूपति भादुड़ी के सिर के ठीक ब्रह्मतालु पर मानो वज्र गिरा। 'कहाँ ? किधर ? किधर है वह ?'

टैक्सी के अन्दर तब सुरेन बेहोश पड़ा लेटा था। एक हाथ में कड़ी बैंडेज बँधी थी। देखने पर लगता था कि मर गया है, या कुछ देर में ही मर जायेगा ?

'बेहोश हो गया है क्या सुरेन ?'

लड़के तब बोले, 'न, मॉर्फ़िया देकर डॉक्टरों ने अभी बेहोश कर रखा है। बताया है कि डरने की कोई बात नहीं है। अस्पताल के डॉक्टरों ने रिलीज़ कर दिया है। घर ले जाने को कहा है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम कौन हो ?'

लड़के बोले, 'हम भी सुरेन-दा की पार्टी के लोग हैं।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मैं भी तो अभी अस्पताल से आ रहा हूँ। तुम अगर पहले ले आते, तो मुझे इतनी परेशानी नहीं होती, मेरे रुपयों का भी नुक़सान न होता।'

कहकर टैक्सी में सिर डाला। सभी मिल-पकड़कर सुरेन को गोदी

मे उठा आँगन में ले गये। उसके बाद तुरन्त ही कमरे में ले जाकर उसके बिस्तर पर लिटा दिया।

लड़के बोले, 'तो अब हम चलें?'

भूपति भादुड़ी खड़े हो गये। बोले, 'तुम तो उसे हमारी गर्दन पर छोड़कर चले जाओगे, लेकिन उसके बाद?'

लड़के बोले, 'उसके बाद आप मुहल्ले के डॉक्टर को दिखाइये।'

'अजीब तमाशा है। गोली खाने के वक्त साथ तुम और डॉक्टर को दिखाने के वक्त मैं? क्यों? तुमने उसे अपने दल में क्यों लिया? ट्रामें-बसें जलाने में तुम्हें क्या फायदा होता है, बेटा? गवर्नमेंट का नुकसान कर तुम्हें क्या मजा आता है? तुम्हारे बाप-चाचा-मामा-ताऊ कोई नहीं हैं? वे तुमसे कुछ कहते नहीं? वे तुमको घर में घुसने देते हैं? तमाम बेवकूफों ने इकट्ठा होकर कलकत्ता को बिलकुल खाक कर डाला है!'

लड़के फिर रुके नहीं। धीरे-धीरे पैर पीछे करने लगे। और उसके बाद अँधेरे में गेट के बाहर जाकर गायब हो गये।

बाहर दरवाजे की कुंडी खटकते ही नरेश दत्त ने दरवाजा खोल दिया। कालीकान्त आकर अन्दर घुसा।

नरेश दत्त ने पूछा, 'क्या खबर है? कुछ सुविधा हुई?'

कालीकान्त की जीभ उस समय हाथ-भर बाहर निकल आयी। सिर पर हाथ रखकर तख्त पर बैठ गया। बोला, 'बड़ा बुरा हो गया।'

'कैसे?'

कालीकान्त बोला, 'बहू को मैनेजर साले ने हवालात में बन्द करा दिया।'

'क्यों?'

कालीकान्त बोला, 'वही, तुमने चोरी का केस बताया था। माँ जी के सन्दूक से बहू ने गहने चुराये थे।'

'तो पुलिस ने जमानत क्यों नहीं ली?'

कालीकान्त बोला, 'पुलिस जमानत कैसे लेगी? मैनेजर साले ने पुलिस

सड़ेगी। कल इतवार है, कल के दिन भी सड़ेगी। कल रात भी सड़ेगी। उसके वाद परसों सोमवार है। सोमवार से दिन अगर वहू कोर्ट ले जायी जाये तो ज़मानत देने वाले हों तो ज़मानत पर छूट आयेगी।'

'तुझसे यह सव वातें किसने वतायीं?'

कालीकान्त वोला, 'और कौन वतायेगा, पुलिस ने वताया।'

'पुलिस ने माना कि उसने मैनेजर का रुपया खाया है?'

कालीकान्त वोला, 'वह क्या कोई कहता है? मैं तो हाव-भाव से सव समझ गया। मेरे पास रुपया होता तो मैं भी घूस दे देता।'

नरेश दत्त कुछ देर के लिए गम्भीर होकर तरकीव सोचने लगा। नरेश दत्त जव कभी किसी मुसीवत में पड़ता तभी गम्भीर हो जाता। और सोच-सोचकर वड़ी-वड़ी तरकीवों की वातें करता। लेकिन इस वार राह निकालने में वड़ी मुश्किल में पड़ गया। अन्त में क्या भूपति भादुड़ी की अक़्ल के आगे वह हार जायेगा? यह सोचने में वड़ी तकलीफ़ हुई। उसके सिवा इतने दिनों की इतनी तैयारियाँ सव इस तरह वेकार हो जायेंगी। वुढ़िया मर रही है, ठीक इसी समय यह मुसीवत!

कई दिन से नरेश दत्त पर तरह-तरह के झंझट पड़ रहे थे। पहले जव कभी ज़रूरत होती तो मैनेजर से रुपये ले आता था। थोड़ा दवाव डालते ही 'वाप-वाप' कहकर कैश-वॉक्स खोल रुपये निकाल देता था। अव क्या होगा? अव किस वहाने रुपये लेने जायेगा?

'लेकिन छोटे-दा, तुम्हारी वातों में अव मैं नहीं आऊँगा।'

'क्यों?'

कालीकान्त वोला, 'गहने चोरी करने की सलाह तो तुम्हीं ने दी थी।'

'सलाह तो मैंने दी थी, लेकिन सलाह पूरी करने में जो ग़लती की वह मेरा क़सूर है? तेरी वहू क्या किसी काम की नहीं है? विलकुल ही निकम्मी है! यह इतना सीधा काम भी नहीं कर सकी!'

उसके वाद खफ़ा होकर वोला, 'धत्, उस साली वहू को अव घर में मत लेना।'

कालीकान्त वात के मतलव न समझकर छोटे-दा के चेहरे की ओर देखता रहा।

नरेश दत्त वोला 'हाँ, जो कह रहा हूँ ठीक कह रहा हूँ। उस वहू को लेकर तेरा कोई काम नहीं होने का। एकदम साँड का गोवर! एक मामूली काम दिया, वह भी न कर सकी। छिः छिः!'

उसके वाद थोड़ा रुककर वोला, 'ठीक है। जो होना था वह हो गया।

उस मैनेजर साले को भी देख लूँगा। बेटा मुझे धक्का देगा!'

कहकर उठा। उसके बाद दीवार पर खूँटी पर टँगे कुर्ते को उतारकर पहना। जूतों का जोड़ा भी पैरों में डाला। और उसके बाद दरवाज़े के बाहर निकलते-निकलते एक बार पीछे घूमकर खड़ा हो गया। बोला, 'तेरे पास कुछ रेज़गारी होगी?'

कालीकान्त छोटे-दा के हाव-भाव कुछ समझ न सका। बोला, 'तुम कहाँ जा रहे हो?'

नरेश दत्त बोला, 'देखूँ साले मैनेजर को, ज़रा कुछ चीर-फाड़ कर आऊँ।'

'कैसे चीर-फाड़ करोगे?'

'यह तू अपनी आँखों से देख लेना। अभी यह बता कि तेरे पास कुछ रेज़गारी है या नहीं?'

कालीकान्त बोला, 'लेकिन तुम जाओगे कैसे? सड़क पर तो गोली चल रही है।'

नरेश दत्त बोला, 'धत्, तेरे छोटे-दा ने ऐसी गोलियों की परवाह नहीं की। बहुत-सी बन्दूकें, बहुत-सी गोलियाँ देखी हैं। मैं मैनेजर को तहस-नहस किये बिना नहीं लौटने का।'

'क्या तहस-नहस करोगे।'

'ज़रूरत हुई तो सिर उतार लूँगा। उसने समझा क्या है? मैं क्या उसका सिर नहीं उतार सकता हूँ?'

कहकर फिर वहाँ न रुका। सीधे अँधेरी सड़क पर क़दम बढ़ा दिये। उसके बाद बाहर की बड़ी सड़क पर आकर एक रिक्शे पर उछलकर बैठ गया।

रिक्शेवाला पहचान का था। बाबू को बहुत बार, बहुत जगहों से बेहोश हालत में घर लेकर आया था।

'कहाँ जाएँगे, बाबू?'

'और कहाँ जाना है? रामबाग। तू क्या नया आदमी हो गया है?'

कहकर नरेश दत्त आराम से रिक्शे पर उठंग गया। और रिक्शेवाला टन्-टन् करते-करते अन्धकार को भेदकर दौड़ने लगा।

नरेश दत्त ने ज़िन्दगी में बहुत-कुछ देखा था। कभी हाटखोला के दत्त-बाड़ी का ऐश्वर्य भी देखा था, और जेब में एक पैसा न रहने की लाञ्छना भी सही थी। जिस तरह मुक़दमा जीता, उसी तरह मुक़दमा हारा भी। हार-जीत की खींच-तान में फ़ायदा तो कुछ हुआ नहीं, जो दुर्दशा थी वह दुर्दशा ही उसकी रह गयी। पैतृक सम्पत्ति की बिक्री या रेहन से

ही में तो मेरी गाँठ के पचास हजार रुपये वकील-बैरिस्टर खा गये। तुम लोग काम कर सकोगे या नहीं, वह बताओ।'

'क्यों नहीं कर सकेंगे, बड़े बाबू ? हुक्म देते ही सेवा करेंगे।'

'तो मैं बेफ़िक्र रहूँ ?'

भूलो बोला, 'आप मूँछों पर ताव देकर जायें, सोयें।'

'ठीक है,' कहकर नरेश दत्त गिलास का बाक़ी घूंट पीकर उठ पड़े। उसके बाद होंठ पोंछते बाहर आ खड़े हुए। बस्ती में उस वक़्त भी सरगर्मी थी।

नरेश दत्त ने जेब में हाथ डालकर पूछा, 'रुपये तुम लोग पेशगी लोगे ? या बाद में होने से चलेगा ?'

उसके बाद खुद ही एक दस रुपये का नोट निकाल आगे बढ़ाकर बोले, 'ले, पेशगी बयाना ले ले। जा, काम पूरा होने पर बाक़ी-बक़ाया चुकती हो जायेगा।'

कहकर पॉकेट से एक पैकेट सिगरेट निकाल सबको एक-एक दी। बोले, 'ले, पकड़, मेरा काम पूरा हो जाये, तो जो चाहोगे मिलेगा।'

उसके बाद सामने ही एक रिक्शा खड़ा था। उस पर नरेश दत्त बैठ गये। बोले, 'चलो भाई, चलो।'

लेकिन चलने को होने पर रिक्शा रुक गया। सामने ही पुलिस का दारोग़ा दो कांस्टेबिलों को ले रास्ता रोककर खड़ा था।

दारोग़ा ने आगे बढ़कर कहा, 'आपका ही नाम नरेश दत्त है ?'

नरेश दत्त तो ताज्जुब में पड़ गया। बोला, 'हाँ, क्यों सर ?'

'आपको मैं गिरफ़्तार कर रहा हूँ। आप मेरे साथ थाने चलिये।'

नरेश दत्त उस समय भी रिक्शे से नहीं उतरा। वहीं बैठे-बैठे बोला, 'क्या कह रहे हैं सर, मेरी समझ में नहीं आ रहा है। मैंने तो कुछ ग़लत काम नहीं किया।'

'आपने गलती की है या नहीं की, वह कचहरी समझेगी। अभी चलिये, रिक्शे से उतरिये।'

नरेश लाचार उतर पड़ा। चारों ओर एक बार नजर डालकर देखा। रास्ता सूना था। पुलिस देखते के साथ ही भूलो वग़ैरह सब भाग खड़े हुए थे। दो-चार लोग जो भी सड़क पर टहल रहे थे वे भी जिसका जिधर सींग समाया, उधर जा छुपे।

नरेश दत्त रिक्शे से उतरकर बोला, 'मैंने क्या अपराध किया है वह तो मुझे बतायेंगे, सर।'

रोड पर, या डायमण्ड हार्बर के रास्ते पर। वहाँ ले जाकर उन्हें छोड़ दें। जितनी गाड़ियाँ हैं सबको भरकर चारों ओर भेज दें...।'

'ठीक है, सर।'

सो उसी तरह का इन्तज़ाम हुआ। लाल-बाज़ार के लाल-घर से दल-के-दल गाड़ियाँ चलीं। एक-एक गाड़ी चले और पुलिस की सीटी बजे। उस वक़्त रात बहुत हो गयी थी। आधी रात में ही सारा काम कर डालना होगा। और आधी रात के बीच ही सारे क़ैदियों को चुपचाप तट-हीन समुद्र में डुबा आना होगा!

और औरतें?

पुलिस-अधिकारी का हुक्म हुआ, 'औरतों को एक गाड़ी में भर दो। भरकर बशीर-हाट के सिवा किसी भी मैदान में भेज दें।'

सो यही इन्तज़ाम पक्का कर पुलिस-कमिश्नर का काम समाप्त हुआ। दिन-भर बड़ी परेशानी में बीता। एक ओर होम-मिनिस्टर पूछताछ कर रहे हैं और दूसरी तरफ़ उन लोगों की गड़बड़! कलकत्ता की शान्ति नष्ट होने से काम नहीं चलेगा। कलकत्ता के लोग जैसे शान्ति से सो सकें। उन लोगों को कल सवेरे फिर ठीक वक़्त पर बसें-ट्रामें सवारी के लिए मिलें। कल सवेरे साढ़े दस बजे के बीच सभी ऑफ़िस-कचहरी बैंक में निश्चिन्त होकर काम कर सकें।

रात को घर पहुँचकर भी शान्ति नहीं। उस समय भी टेलीफ़ोन बज रहा था। उस समय भी मिनिस्टर के सामने जवाबदेही देना होती। तब भी पड़ता, 'एव्रीथिंग ओके...।'

'सबको गिरफ़्तार तो कर लिया?'

'हाँ।'

'मैं अभी दिल्ली टेलीफ़ोन कर रहा हूँ। उन्हें सब बता रहा हूँ।'

'हाँ, बता दीजिये।'

उसके बाद पुलिस-कमिश्नर ने कुछ देर के लिए बिस्तर पर शरीर छोड़ दिया।
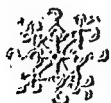
तब तक आकाश के तारों ने अपनी जगह बदल ली थी। अँधेरे रास्तों के

'न, वह तो बहुत दूर है। अभी अँधेरे में वहाँ न जा सकेंगी।'

'जायेंगे नहीं तो रहेंगे कहाँ ?'

कहाँ रहें, उसके बारे में वह आदमी कुछ न बता सका। दूकान के अन्दर इतनी जगह नहीं थी कि इन सबको जगह दे सकता।

'यहाँ हमारे ज़मींदार बाबू का एक चण्डीमण्डप है, वहाँ रह सकती हैं।'

'जगह ख़ाली है ?'

'हाँ। चलिये।'

मानना पड़ा कि इस आदमी में दया-ममता है। इसी से इतनी रात को एक हरीकेन जलाकर सबको ले चला।

पुराना घर। वह भी चलेगा। ज़मींदार का कोई आदमी वहाँ नहीं रहता। ज़मींदार वग़ैरह कलकत्ता में थे। लेकिन बड़ा भारी मकान ख़ाली पड़ा है। गवर्नमेंट की योजना है कि विस्थापित लोगों को वहाँ रखकर कोई काम दे। लेकिन वह योजना अभी तक पूरी नहीं हुई।

'यहाँ टेलीफ़ोन है ?'

'वह तो पोस्ट-ऑफ़िस में है। कल सवेरे के सिवा मिलेगा नहीं। रात में पोस्ट-ऑफ़िस बन्द रहता है।'

'और अख़बार ?'

'अख़बार आयेगा सो वह भी सवेरे।'

तो यही अच्छा है। आदमी ने दो-एक लोगों को बुलाकर कमरा साफ़ करवा दिया। हरीकेन भी रख गया।

टुलू बोली, 'अब घंटे ही कितने हैं! ये तो जगे-जगे ही कट जायेंगे।'

सवेरे के वक़्त पोस्ट-ऑफ़िस खुलते ही टुलू पोस्ट-मास्टर के पास बढ़ गयी। कॉल करने के लिए कहा। पोस्ट-मास्टर इतनी लड़कियों को एक-साथ देखकर ताज्जुब में पड़ गया। पूछा, 'आप लोग कौन हैं ?'

'हम पोलिटिकल पार्टी के लोग हैं।'

पोस्ट-मास्टर समझ गया। बोला, 'कल कलकत्ता में क्या दो सौ लोग मारे गये हैं ?'

'आपको कैसे मालूम हुआ ?'

'हमारे हेड-ऑफ़िस से ख़बर आयी है।'

'और इस ठेठ गाँव में टेलीफ़ोन कहाँ से आया ?'

पोस्ट-मास्टर मशाई बोले, 'वही लड़ाई के वक़्त यहाँ मिलिटरी थी। उनकी ज़रूरत के लिए तब टेलीफ़ोन लगा था, लगा रह गया।'

बड़ी मुश्किल से लाइन मिली।

'कौन गन्दीर-दा ? मैं टुनु हूँ।'

'कहाँ से ?'

'हमें नयाबपुर में उतारकर पुलिस चली गयी। हम यहीं के पोस्ट-
...फ़िस से टेलीफ़ोन कर रहे हैं। वहाँ का क्या हाल है ? पूर्णेन्दु-दा कहाँ
...?'

'वे गिरफ्तार कर लिये गये हैं।'

'और देवेन-दा ?'

'देवेन भी।'

'अच्छा, बता सकते हैं वह सुरेन-दा कहाँ है ?'

'कौन ? सुरेन गाङ्गुली ? उसके गोली लगी थी।'

'हाँ, हाँ, उसके बाद क्या हुआ ? कुछ पता चला है ?'

गन्दीर-दा बोले, 'उस लड़के को अस्पताल भेज दिया गया था। सुनने
में है कि वहीं वह मर गया।'

टुनु का सिर जैसे कुछ क्षणों के लिए चक्कर खाने लगा। इससे पहले
बहुत बार इस तरह के जुलूसों में टुनु शामिल हुई थी। उसके लिए यह
मामूली बात हो गयी थी। यह गोली, बन्दूक, पुलिस, टीयर-गैस—ये सब
पार्टी का काम करने में बाधा नहीं डाल सकते। उसके बाद यह पुलिस-गाड़ी
में भरकर ठेठ गाँव में छोड़ देना कुछ भी नया नहीं था। लेकिन इस बार
लगता है, उनके हिसाब में कुछ गलती हो गयी है। हाँ, ज़रूर गलती हो
गयी है। नहीं तो ऐसे गाँव में क्यों छोड़ा गया, जहाँ पोस्ट-ऑफ़िस हो
टेलीफ़ोन हो।

'क्या हुआ, टुनु-दी ?'

पार्टी की लड़कियों ने अचानक टुनु का चेहरा देखकर ताज्जुब में
गयी थीं।

'कलकत्ता का क्या हाल है ?'

टुनु बोली, 'दिमाग बहुत चक्कर खा गया। बस, वहीं चलकर
बैठें।'

गाँव में भी राजनीति में रुचि रखने वाले कुछेक लोग हैं। नव
गाँव होने पर भी यहाँ के लोग शहर की भी थोड़ी-बहुत खबर रखते
बहुतेरे बूढ़े लोग भी मिलने आये। देखते-देखते घर में आगे भी
हो गयी।

'जी हाँ, पुलिस ने तुम लोगों पर भी हाथ छोड़ा ?'

मन्ना बोली, 'क्यों, पुलिस हमारे बदन को हाथ लगाये, सुन
लोगों को ताज्जुब होता है ? अंग्रेज़ों के बदले कांग्रेस आ गयी

पुलिस ज्यों-की-त्यों है। पुलिस के रंग-ढंग नहीं बदले हैं।'

एक वृद्ध सज्जन बोले, 'वही तो देख रहा हूँ।'

एक-एक आदमी के घर से दल के एक-एक व्यक्ति के लिए खाने का इन्तज़ाम हुआ। सभी ने आ-जाकर, भाग-दौड़कर सबकी खातिर की। कहने को सभी किसान-वर्ग के लोग थे। किसी ने कलकत्ता शहर नहीं देखा था—खासकर बूढ़े लोगों ने। किसी-किसी ने काशी या श्री-क्षेत्र देखने जाने की राह में सियालदह स्टेशन पर उतरकर हावड़ा स्टेशन जाकर फिर ट्रेन पकड़ी थी। इतना-भर कलकत्ता देखा था।

वक़्त बीत रहा था। और देर करने से कलकत्ता पहुँचने में रात हो जायेगी। कई बैल-गाड़ियों का इन्तज़ाम हुआ। वे सीधे स्टेशन तक पहुँचा देंगी। तीसरे पहर दो गाड़ियों ने गाँव छोड़ा। छः कोस का रास्ता था।

शाम को छः के लगभग सब स्टेशन आ पहुँचीं। किसी के पास रुपये-पैसे नहीं थे। पार्टी की लड़कियाँ ही स्टेशन के आगे खड़े होकर पार्टी के नाम पर चन्दा जमा करने लगीं। आधे घंटे में ही बहुत-सा रुपया जमा हो गया। बीस लड़कियों के लिए टिकटें खरीदना पड़ीं।

ट्रेन आने पर सभी हड़बड़ाकर चढ़ गयीं।

एक को कुछ ध्यान आया। बोली, 'टुलू-दी ? टुलू-दी कहाँ गयीं ?'

एक और बोली, 'यह तो रहीं टुलू-दी।'

टुलू उस वक़्त एक कोने में बेजान-सी चुपचाप बैठी थी।

सन्ध्या ने पूछा, 'तुम्हारा सिर-दर्द ठीक हो गया, टुलू-दी ?'

टुलू बाहर की ओर उसी तरह एकटक देखती रही। किसी भी बात का जवाब नहीं दे रही थी। उसकी बोलने की शक्ति ही जैसे गुम हो गयी थी।

रात किसी तरह बीत गयी। कलकत्ता की रातें सामान्यतः बीतती नहीं। इन रातों में ही हर दीवार पर पोस्टर लगाये जाते हैं। इन रातों में ही पार्टी का षड्यंत्र मुखर होता है। कल सवेरे फिर कोई प्रोग्राम शुरू करना होगा, यह कैबिनेट की मीटिंग खत्म होने से पहले ही टेलीफ़ोन पर ही ठीक हो जाता। इस मोहल्ले से उस मोहल्ले खबर भेज दी जाती। रात को लोग

बहुत-सी आशाएँ लेकर सोने जाते मानो कि कल सवेरे ट्रामें और बसें ठीक
से चलेंगी। जैसे ठीक वक्त पर बाजार जमे-खुलेगा। जैसे कि ठीक समय
से लड़के-लड़कियाँ स्कूल-कॉलेज जा सकेंगे, स्कूल-कॉलेज से लौट सकेंगे।

उस दिन पुण्यश्लोक बाबू ने पद्मिनी से अधिक बात नहीं की। पद्मिनी
बहुत थकी हुई लग रही थी।

पुण्यश्लोक बाबू पद्मिनी के मुँह की ओर देखकर सिर्फ इतना बोले,
'पद्मिनी, तुम बहुत थकी-थकी लग रही हो ?'

पद्मिनी ने कुछ उत्तर नहीं दिया।

पुण्यश्लोक बाबू फिर बोले, 'यह सारा गुंडों का काम है। तुम कुछ
फिकर मत करो। मैं कल ही उन्हें दुरुस्त करूँगा, तुम जाओ, ऊपर जाओ
तुम, आराम करो।'

पद्मिनी धीरे-धीरे ऊपर जाकर अपने निजी कमरे में चली गयी।

उसके बाद प्रवेश की ओर घूमकर बोले, 'दिस इज वेरी बैड। मैं कहता
हूँ, दिस इज वेरी बैड।[1] मैंने डॉक्टर राय से अभी फोन पर बात की थी।'

प्रवेश जोश में आ गया। बोला, 'डाक्टर राय ने क्या कहा ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'कहेंगे क्या, उनके घर के सामने भी यही हमल
ही बम फटे।'

प्रवेश बोला, 'मेरी समझ में नहीं आता कि उन लोगों को इतने ब
मिल कहाँ से जाते हैं ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'सब से बड़ी बात कि उनके पास रुपये कह
आते हैं ? इतने बड़े जुलूस का इन्तजाम करने में कम-से-कम एक
रुपया खर्च होता होगा। वे रुपये कौन देता है ?'

प्रवेश बोला, 'खुफिया विभाग के लोग क्या कहते हैं ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वे तो कहते हैं कि रूस और चाइना देता
'लेकिन आप लोग इसे रुकवा नहीं सकते ?'

पुण्यश्लोक बाबू को ये सब बातें सोचना अच्छा नहीं लग र
उन्होंने प्रसंग को टालना चाहा।

बोले, 'ये सब बातें छोड़ो, मैं पद्मिनी के भविष्य से बहुत चि
गया हूँ। गाड़ी से आते-आते पद्मिनी ने तुमसे क्या कहा ? तुमने उस
की बात चलायी थी ?'

प्रवेश इस बात का क्या जवाब दे, यह उसकी समझ में न
उसके बाद जरा रुककर बोला, 'पद्मिनी के दिमाग का सारा

---

1. यह तो बहुत बुरी बात है।

था, इसी...।'

'व्हाट डू यू मीन वाई टेम्पर ?[1] उसका रिऐक्शन क्या है ? वह क्या बहुत नर्वस हो गयी थी ? उसको किसी ने क्या हाथ लगाया था ?'

प्रवेश बोला, 'न, ऐसा कुछ तो नहीं हुआ था।'

'तब ? तुमने पूछा नहीं, क्यों वह आज गाड़ी लेकर खुद निकल गयी थी ? इस तरह के दिन कोई गाड़ी लेकर निकलता है ?'

प्रवेश बोला, 'मैंने पूछा था, लेकिन उस बात का कोई जवाब नहीं दिया।'

'उसकी गाड़ी की क्या हालत है ?'

'वहीं पड़ी है।'

'और उसका ड्राइवर जगन्नाथ ?'

'वह कहीं भाग गया है। उसकी कोई भी खोज-खबर नहीं है।'

'तुम कल ही इंश्योरेंस ऑफ़िस को खबर दे देना। लेकिन वह बड़ी बात नहीं है। पमिली का क्या करूँ, समझ में नहीं आता। पहले क्लब, पियानो, ड्रिंक्स लेकर भूली हुई थी, उसके फिर भी कुछ माने थे। लेकिन यह क्या ? अचानक यह ग़रीबों के लिए इतनी सहानुभूति कहाँ से पैदा हो गयी ? यह अगर एक बार जड़ पकड़ ले तो यह और बढ़ती जायेगी। तब हमारी कैबिनेट में भी बात उठेगी।'

प्रवेश बोला, 'वह तो है ही।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हमारे लड़के-लड़कियों की करतूतों को लेकर हमारी असेम्बली में बात उठ सकती है, तब मुश्किल होती है, पमिली यह नहीं समझती। यही कुछ देर पहले डॉक्टर राय से बात हो रही थी— शायद वे लोग इन्क्वायरी कमीशन बैठाने के लिए माँग करें।'

प्रवेश चुप रहा।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अगर इन्क्वायरी कमीशन सच ही बैठ जाये तो उस वक़्त तुम्हें बहुत काम होगा। तब तुम्हें ऑफ़िस से छुट्टी लेना पड़ेगी।'

'इन्क्वायरी कमीशन क्या सचमुच बैठेगा ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'बैठ तो सकता है। नहीं तो शायद फिर वे लोग हड़ताल की पुकार लगायें। हमने तो पूर्ण बाबू को गिरफ़्तार कर लिया है, मालूम है न ? उनके पार्टी के सब बड़ों-बड़ों को भी गिरफ़्तार कर लिया है।'

प्रवेश बोला, 'ठीक किया है। वे बहुत शोख हो रहे थे।'

---

1. दिमाग़ का पारा चढ़ा था से क्या मतलब ?

'लेकिन एक बात है। अभी तुम घर चले जाओ। कल सवेरे फिर ज़रा आ जाना। मेरे दिमाग में बहुत-से ख़याल चक्कर काट रहे हैं। आने वाले चुनाव की बात सोचकर ही कह रहा हूँ।'

प्रवेश बोला, 'हाँ, उसका भी तो वक्त क़रीब आ रहा है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'रात हो गयी, अब तुम जाओ। मैं भी ज़रा आराम कर लूँ, कल से फिर लगना पड़ेगा। देखो, इस बार चुनाव के पहले ही पमिली की शादी कर देना चाहता हूँ। नहीं तो चुनाव के दिनों फिर पमिली को सँभालने में लगा रहकर काम-धाम कुछ न कर सकूँगा।'

कहकर फिर न रुके। सामने से रघु आ रहा था, उसे बुलाया, 'ए, दीदी क्या कर रही है, रे?'

रघु आदर के साथ निकट आया। बोला, 'दीदी के कमरे का दरवाज़ा बन्द देखकर आया हूँ।'

'दीदी का खाना तो नहीं हुआ है। खायेंगी नहीं?'

रघु की समझ में न आया कि इसका क्या जवाब दे।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अच्छा, तू जा।'

रघु जाकर बचा। उसके बाद प्रवेश भी चला गया। अपनी गाड़ी उसने अन्दर लाकर रखी थी। नहीं तो वे लोग पमिली की गाड़ी की तरह आग लगा देते। सड़क पर उस समय और भी अँधेरा था। पहले ही कई बत्तियाँ बुझी हुई थीं। अब लोगों ने कई बत्तियाँ ढेले मारकर तोड़ दी थीं। दो कांस्टेबिल उस वक्त भी गेट पर पहरा दे रहे थे।

प्रवेश गेट पार कर थर्ड गियर में सीधे आगे बढ़ गया। झटपट भागना ही अच्छा था। राह में उसे देखकर लड़के बिगड़ उठ सकते हैं। सचमुच प्रवेश को आश्चर्य हुआ। अभी कुछ बरस पहले ये लोग 'पुण्यश्लोक राय ज़िन्दाबाद' कहते-कहते बेहोश हो जाते थे। कलकत्ता में कहीं भी कितने अनुष्ठान हुए थे, सब जगह से पुण्यश्लोक बाबू को बुलाने आते थे। पुण्यश्लोक बाबू का सब जगह जाना ज़रूरी था। उनके जाने ही से मानो वे कृतार्थ हो जाते थे। और पुण्यश्लोक बाबू लेक्चर देने के लिए जब खड़े होते, चारों ओर तालियाँ बजतीं। वह वक्त कहाँ गया? वह युग कैसे बीत गया? अब उन्हीं पुण्यश्लोक बाबू को कोई बुलाता तो प्रवेश को ही डर लगता। ढेले तो नहीं बरसेंगे? कुर्सियाँ तो नहीं टूटेंगी?

यह क्यों हुआ?

घर के सामने आते ही अचानक लगा कि कोई चुप खड़ा है।

'कौन?'

इतनी रात को यह आदमी अकेला खड़ा क्या चाहता है?

प्रवेश ने गाड़ी रोककर पूछा, 'किसकी तलाश है ?'

और तेज नज़र से देखा। छिः छिः, गाय थी। एक गाय खड़ी-खड़ी जुगाली कर रही थी। प्रवेश की क्या आँखें भी खराब हो गयी हैं ? एक जीती-जागती गाय को उसने किस तरह आदमी समझने की ग़लती की !

गाय को धक्का दे हटाकर गैरेज के दरवाज़े का ताला खोल गाड़ी अन्दर की। उसके बाद फिर ताला बन्द कर दरवाज़े की कॉलबेल दबायी।

लेकिन कलकत्ता की रात का सचमुच भरोसा नहीं। विश्वास था कि पहले जब रात कलकत्ता में घूमने के लिए उतरती, तो दिन की थकान के बाद नींद आती नयी तैयारियों से नये होकर काम करने के लिए। अब रात आती है नये षड्यंत्रों को जन्म देने के लिए। इन सब गलियों में वे शायद तरह-तरह के छद्मवेश में निरीह शक्लों में खड़े रहते हैं। लेकिन वास्तव में वे मनुष्य हैं। वे सारी रात-भर हर दीवार पर पोस्टर चिपका देते हैं। क्रान्ति का आह्वान करते हैं। और सवेरा होते ही वे बसों-ट्रामों में लटकते-लटकते ऑफ़िसों-कारखानों-कचहरियों की तरफ़ भाग जाते हैं।
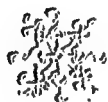
पुण्यश्लोक बाबू को भी बहुत देर तक नींद नहीं आयी। बहुत-सी चिट्ठी-पत्री, बहुत काम-धाम कई दिन से पड़े थे। लेकिन दिल लगा था गेट की ओर। आज उनके लिए, उनके घर के सामने ही, 'मुर्दाबाद' का नारा लगाया गया था। इतने दिनों की जेल काटने की, इतने दिनों के इतने लेक्चर देने की आज यह परिणति ? यह भी उन्हें देखना-सुनना पड़ा ! लेकिन शायद यही अन्त नहीं है। इसके बाद वे लोग इन्क्वायरी कमीशन की माँग रखेंगे। जाँच कमेटी। जाँच कमेटी के आगे वे लोग झुंड-के-झुंड गवाही देने जायेंगे। कहेंगे, कांग्रेस ने निर्दोष आदमियों पर गोली चलायी। कहेंगे, पुलिस को भड़काने के लिए गुंडों को लगा दिया गया था। शायद सब भेद खुल जायेंगे। उनका नाम भी आयेगा, प्रवेश का नाम भी आयेगा।

धीरे-धीरे अपना कमरा छोड़कर वे ज़ीने की ओर जाने लगे।

सीढ़ी चढ़कर दुमंज़िले पर गलियारा है। सहसा दिखायी पड़ा कि पास के पमिली के कमरे में रोशनी जल रही है। इतनी रात को भी पमिली जागी हुई है। रोशनदान से रोशनी की चमक बाहर आकर सीलिंग पर

पड़ रही थी।

'पमिली!'

पमिली को पुकारे बिना पुण्यश्लोक बाबू रह न सके।

'पमिली, अभी भी जाग रही हो?'

दरवाज़े के दोनों पल्ले खट से खुल गये। उसके बाद पमिली ने मुँह निकालकर कहा, 'क्या है?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'न, न, तुम्हें मैं और तंग न करूँगा। लेकिन इतनी रात तक क्यों जाग रही हो? सो जाओ...।'

पमिली बोली, 'एक काम कर रही थी।'

'काम? क्या काम? तुम्हें और काम?'

पमिली बोली, 'सुव्रत को चिट्ठी लिख रही थी।'

'सुव्रत? सुव्रत को चिट्ठी लिख रही थी? सुव्रत कैसे हैं? मुझे तो बहुत दिनों से चिट्ठी नहीं भेजी। क्या लिखा है? कैसा है?'

पमिली बोली, 'अच्छे हैं।'

'पास हो गया?'

'हाँ, और कुछ दिनों वहाँ रहना चाहता है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तो रहे कुछ दिन, जल्दी करने को क्या है! अच्छा ही है, रहे। उसे यहाँ आने पर रुपये तो कमाना नहीं है।'

पमिली बोली, 'नहीं, लेकिन मैंने उसे जल्दी लौट आने को लिखा है।'

'क्यों?' पुण्यश्लोक बाबू को ताज्जुब हुआ।

फिर बोले, 'झटपट आने के लिए क्यों लिखा है? वह तो वहाँ अच्छी तरह है। देख नहीं रही हो, कलकत्ता में क्या हाल चल रहे हैं! अभी उसका आना क्या अच्छा होगा? एकदम चुनाव के बाद ही बेहतर होता।'

पमिली बोली, 'न, उसका अभी आना अच्छा है।'

पुण्यश्लोक बाबू जैसे अपने घर में भी चुनाव में हार जाने के लिए बैठे हों। बोले, 'न, न, उससे अच्छा यह है कि तुम उसे लिख दो कि मेरे चुनाव के बाद आये।'

पमिली बोली, 'नहीं बाबा, मैं उसे पहले ही लौट आने को लिख चुकी हूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू लड़की की बात पर ठिठककर खड़े हो गये। उसके बाद सम्हलकर बोले, 'लिख चुकी हो तो अच्छा किया है, लेकिन अभी लिखकर भेजा नहीं तो उसे फाड़ फेंकने में कितनी देर लगती है? एक नयी चिट्ठी लिख दो। तुम समझती क्यों नहीं हो, चुनाव के बाद मैं थोड़ी फ़ुरसत में रहूँगा। हम तब अपनी पद-मर्यादा को पक्का रख सकेंगे।'

पमिली बोली, 'अपना काम तुम समझो, उससे हमारा क्या सम्बन्ध ?'

पुण्यश्लोक बाबू आश्चर्य में पड़ गये। बोले, 'यह क्या ! तुम कह क्या रही हो ? हमारे साथ तुम्हारा सम्बन्ध नहीं ? अब भी तुम वही सब पागलपन कर रही हो ! मैं तुम लोगों का पिता, संरक्षक नहीं हूं ? तुम्हारा भला-बुरा मेरा भला-बुरा नहीं है ? सुव्रत के लौटने पर मुझे ही उसके लिए नौकरी ढूंढना होगी न ? मैं नहीं करूँगा तो कौन करेगा ?'

पमिली बोली, 'रात हो रही है, तुम अब सोने जाओ, बाबा।'

'मैं सोने जाऊँ या नहीं, वह मैं समझूंगा। पहले तुम मेरी बातों का जवाब दो।'

'मैं कोई जवाब नहीं दूंगी।'

पुण्यश्लोक बाबू अब सख्त पड़े। बोले, 'जवाब नहीं दोगी माने ? मैंने बहुत दिनों तक सहा। तुम्हारी तमाम बातों पर मैं आँख बन्द किये रहा। लेकिन अब मैंने तय कर लिया है कि अब चुप नहीं रहूंगा। आज तुम गाड़ी लेकर क्यों निकली थीं ? कहाँ गयी थीं ? तुम्हें नहीं पता था कि आज उनका कांग्रेस के विरुद्ध मोर्चा-जुलूस है ? तुमको नहीं मालूम था कि आज उन पर गोलियाँ चलेंगी ? तब तुम जान-बूझकर सड़क पर क्यों निकलीं ?'

पमिली बोली, 'इसका जवाब भी तुम्हें देने के लिए मैं बाध्य नहीं हूं।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन तुम्हारे जवाब दिये बिना भी मैं खूब समझता हूं कि तुम्हारा जवाब क्या है ? अपनी आँखों से मेरी बेइज्जती देखना चाहती थीं !'

इसके बाद पमिली न रुकी। पुण्यश्लोक बाबू के मुँह पर दरवाजा धड़ाम से बन्द कर अन्दर से कुंडी लगा ली। पुण्यश्लोक बाबू को लगा कि जैसे पमिली ने उनके मुँह पर जोर से थप्पड़ मारा हो !

उसके बाद सवेरे जब नींद टूटी तो अखबार खोलते ही एक और थप्पड़ आकर मुँह पर लगा। बड़ी-बड़ी हैड-लाइन्स देकर कल की खबरें अखबारों में सुगमता से छापी गयी थीं। उसके पास ही उनकी पार्टी का वक्तव्य था। उन्होंने माँग की है कि इन्क्वायरी कमेटी बैठे। इस अमानवीय अत्याचार की जाँच होना चाहिए। जाँच कमेटी बैठायी जाये !

सुरेन ने आँखें खोलकर एक बार चारों ओर देखा। चारों ओर अँधेरा था। सिर्फ एक रोशनी टिमटिमाकर वाहर जल रही थी। उसी के प्रकाश से थोड़ी रोशनी अन्दर भी हो रही थी।

सहसा सामने एक चेहरा दिखायी पड़ा। जैसे बहुत पहचाना चेहरा हो।

'कौन ? कौन ?'

पहचानकर भी जैसे पहचान न पाया हो। फिर पहचानने की कोशिश की। लेकिन सिर सन्-सन् कर चकरा गया। उसके बाद फिर होश न रहा। सुरेन फिर बेहोश हो गया।

भूपति भादुड़ी पास ही खड़े थे। डॉक्टर आकर देख गया था। बन्दूक की गोली हाथ में जरूर लगी थी। लेकिन अन्दर नहीं घुँसी थी। छिछली लगती हुई हाथ का मास खुरचती हुई निकल गयी थी। अच्छी तरह बैंडेज खोलकर फिर बैंडेज बाँधा गया था। सुरेन ने जब फिर आँखें बन्द कीं तो भूपति भादुड़ी ने धनंजय से कहा, 'तू ज़रा यहाँ बैठ धनंजय, मैं आ रहा हूँ।'

कई दिनों से भूपति भादुड़ी का काम बहुत बढ़ गया था। इस बुढ़ापे में अकेले क्या इतना काम संभाला जा सकता है? मेडिकल कॉलिज में उन साठ रुपयों का नुकसान उस समय भी बदन में छिद रहा था। अरे बाबा, दुनिया क्या हो गयी है! किसी का विश्वास नहीं किया जा सकता है।

झटपट मुँह-हाथ-पैर धोकर ज़रा बाहर जाना होगा।

दुखमोचन आँगन में झाड़ू लगा रहा था। भूपति भादुड़ी उससे बच-कर सीधे नल की ओर चले गये। उसके बाद एक बाल्टी पानी लेकर सिर पर उँडेल लिया।

जिन्दगी-भर भूपति भादुड़ी इस चौधुरी-बाड़ी में काम करते आये। शिवशम्भु चौधरी के ज़माने में इन भूपति भादुड़ी के न रहने पर यह घर एक पल न चलता। भले ही मालिक चले गये हैं, लेकिन भूपति भादुड़ी तो हैं। भूपति भादुड़ी ही तब से इस मकान के हर काम को चलाते आये हैं। भूपति भादुड़ी के न रहने पर इस मकान का कोई भी काम जिस तरह न चलता, इस मकान का काम न रहने पर उसी तरह भूपति भादुड़ी का भी न चलता।

लेकिन यही स्थिति बने रहने के लिए अब ज़्यादा दिन शेष नहीं रह गये ।

भूपति भादुड़ी ने सिर पर पानी छोड़ते-छोड़ते कहा, 'अब तो ज़्यादा दिन नहीं रह गये ।'

'बहुत दिन तक राह देखी माँ, अब मेरी ओर एक बार मुँह उठाकर देखो, माँ । शरणागत पर दया करो ।'

आज वैसे आराम से नहाना न हुआ । नहाकर बाहर निकलने के वक़्त ही अचानक सुधन्य का सामना हो गया ।

'तुम ?'

सुधन्य बोला, 'नमस्कार, मैनेजर बाबू ।'

'तुम इतने सवेरे कहाँ से ?'

सुधन्य बोला, 'मैं कल गड़बड़ में घर न जा सका, इसीलिए यहीं रात काटी ।'

भूपति भादुड़ी का मुँह अजीब तरह से तिरछा हो गया । बोले, 'किसी से कहा नहीं, पूछा नहीं, तुमने यहीं रात बिता दी ?'

सुधन्य बोला, 'जी, बताइये क्या करता, बस-ट्राम कल सब बन्द हो गये । श्याम-बाज़ार के मोड़ तक पैदल गया । सब भाँय-भाँय कर रहा था । सड़क पर एक भी बत्ती नहीं । मुझे बहुत डर लगने लगा मैनेजर बाबू, इसी से फिर लौट आया ।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो मैं इस घर का मैनेजर हूँ, मुझसे तो ज़रा कह देना था ।'

सुधन्य बोला, 'जी, कहता तो कैसे, आपका तो पता नहीं मिला । आप उस वक़्त पुलिस, अस्पताल और सुरेन बाबू को लेकर व्यस्त थे ।'

भूपति भादुड़ी ख़फ़ा हो गये ।

बोले, 'मैं व्यस्त था, इसलिए क्या मुझे बात करने की भी फ़ुरसत नहीं थी ? तुम क्या ऐसे सिर चढ़ गये हो कि मुझसे एक बार पूछने की ज़रूरत भी नहीं समझी !'

सुधन्य बोला, 'इतने झमेलों में मैंने आपको परेशान नहीं करना चाहा, बस, इतना ही ।'

'चुप रह, बे-अदब कहीं का ! जो नहीं चाहता, वही हुआ । तुम अपने काका को लेकर जा नहीं सकते हो ? अपने काका को अगर ऐसा ही प्यार करते हो तो यहाँ तकलीफ़ में क्यों रखा है ? अपने घर तो ले जा सकते हो ।'

सुधन्य बोला, 'अबकी बार ले जाऊँगा, मैनेजर बाबू । तबीयत ज़रा

ठीक होते ही घर ले जाऊँगा।'

'हाँ, ले जाना। मेरी तो पागल कुत्ते की-सी हालत हो रही है। घर में दस बीमारों को किधर-किधर देखूँ? यह मकान है, या अस्पताल!'

कहकर फिर न रुके। एकदम सीधे अपने कमरे में चले गये। कपड़े निकालकर पहने। सिर्फ एक ओर ही देखने से तो उनका पूरा नहीं पटेगा। चारों तरफ देखना होगा। हजारों झंझटें सिर पर हैं। कई दिनों से माँ जी को भी देख नहीं सका। उस पर भाजा गोली खाकर लेटा हुआ है।

सिर पर कंघी फेरते एक बार आईने में अपना मुँह अच्छी तरह देखा। उसके बाद कमरे के कोने से छाता उठाकर निकले।

गेट के पास आते ही बहादुरसिंह ने बाकायदा सलाम किया।

भूपति भादुड़ी बोले, 'बहादुर, रात में और कोई तो घर में नहीं घुसा?'

बहादुर ससम्भ्रम बोला, 'नहीं, हुजूर।'

'हाँ, किसी को भीतर न घुसने देना। जमाना बहुत खराब चल रहा है। इस शहर में बहुत गोलमाल होने लगा है। खूब होशियार रहना।'

बहादुरसिंह फिर ससंभ्रम बोला, 'जी हुजूर।'

उसके बाद छाते के साथ हाथ जोड़कर सिर पर आकाश में चमक रहे सूर्य की ओर अलक्ष्य देवता को मानो लक्ष्य कर क्षण-भर कुछ प्रार्थना की। 'हे सृष्टि-स्थिति-प्रलय के देवता, मेरा उद्देश्य सिद्ध हो, मैं सारी बाधा-विपत्ति पार कर, सब आपत्तियों को लाँघकर सारी मनोकामनाएँ पूरी कर सकूँ।'

इसके बाद देर नहीं करना है। एकदम तेजी से हाथी-बागान थाने। पहले से ही सूची मलामी थाने पर चढ़ाना पड़ती। पहले कांस्टेबिल। उसके बाद छोटी मछली—मुंशी। उसके बाद खुद दारोगा साहब!

लेकिन दारोगा साहब को खुश करना ऐसी सीधी बात नहीं। दुनिया में जिनको सब-कुछ देकर भी खुश नहीं किया जा सकता है वे हैं कोर्ट के पेशकार। लेकिन जो खुश रहकर भी हमेशा नाराज रहें—वे हैं दारोगा!

थाने के बड़े बाबू ने पूछा, 'क्या खबर है, मैनेजर बाबू?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'खबर लेने के लिए ही तो आना हुआ, बड़े बाबू, आपके पास। मैं क्या खबर दे सकता हूँ?'

'आपका काम हो गया है। उस नरेश दत्त को हवालात में ठूँस दिया है।'

'बहुत अच्छा किया, बड़े बाबू। समाज का एक पाप विदा हुआ। लोगों पर आपने एक बड़ा उपकार किया, बड़े बाबू। किस तरह से आपको

धन्यवाद दूं ?'

वड़े वावू हँसे। वोले, 'लेकिन वह वेटा नहीं मिला। वह लापता है।'

'कौन ? कालीकान्त ? कालीकान्त विश्वास ? वह ग़ायव है ?'

'हाँ।'

भूपति भादुड़ी का मुँह भय से सिकुड़ गया। वोले, 'क्या मुसीवत है ! यही वेटा तो असली पाजी है, वड़े वावू !'

'देखा जायेगा कि क्या हो सकता है।'

कहकर वड़े वावू टेलीफ़ोन पर किसी से वातें करने लगे। वात एक मिनट में तो खतम होने को नहीं थी। लोगों को भी और वक़्त नहीं था—इसी वक़्त सभी वातें किये विना गुज़ारा न था !

'सर।'

टेलीफ़ोन रखते-रखते ही वड़े वावू वोले, 'क्या ?'

'मेरे उस चोर की क्या ख़वर है ? कुछ स्टेटमेंट दिया है ?'

वड़े वावू वोले, 'नहीं, किसी तरह का कोई वयान नहीं देती।'

भूपति भादुड़ी वोले. 'नहीं देती तो निकलवा लें। डण्डे से निकलवा लें। यह क्या, पुलिस की वात न सुनेगी, यह तो ठीक नहीं है। इतनी वे-अदवी !'

फिर वोले, 'लड़की कहती क्या है ?'

वड़े वावू वोले, 'कुछ नहीं कहती। कल से कुछ नहीं खाया। खाती नहीं, पीती नहीं, वस मुँह वन्द किये वैठी है।'

'तो एक वार मुझसे मुलाक़ात करा देंगे ? मैं ज़रा कोशिश करके देखूं।'

'देखिये।'

कहकर वड़े वावू ने ड्यूटी-अफ़सर को वुलाया। वह मैनेजर को लेकर भीतर गया। मज़वूत लोहे की छड़ों का दरवाज़ा था। अन्दर वहुत अँधेरा था। अँधेरे में मैनेजर की आँखें कुछ देर के लिए कुछ देख-भाल न पायीं। सवेरे का वक़्त। वाहर सूर्य के प्रकाश में शहर चमक रहा था। और यहाँ अन्दर मानो नरक हो। नरक में भी शायद इससे अधिक रोशनी हो !

सुखदा मुँह ढांके एक कोने में वैठी थी। अचानक दरवाज़े की आवाज़ होते ही आँखें उठाकर देखा। मैनेजर को पहचाना।

भूपति भादुड़ी सुखदा को देखते ही भों-भों कर रो पड़े।

भूपति भादुड़ी का रोना सुनकर सुखदा चौंक पड़ी। उनके सहसा रो उठने का कोई मतलव समझ में नहीं आया।

भूपति भादुड़ी रोते-रोते कहने लगे, 'हाँ वेटी, आख़िर मुझे तेरी यह

हालत देखना पड़ी ! तुझे इस तरह हवालात में रहना पड़ा ! इससे तो अच्छा था—मैं मर क्यों न गया, बेटी ? तूने क्या ऐसा अपराध किया है जिससे तेरी यह बुरी हालत हुई ?'

सुखदा कुछ न बोली। सिर्फ चुपचाप सुनती रही।

भूपति भादुड़ी बोले, 'क्यों बेटी, बोल क्यों नहीं रही हो ?'

सुखदा बोली, 'माँ जी को मालूम है कि मैं यहाँ हूँ ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मैं तो वही बात कहने यहाँ आया हूँ, रे। तू जब छोटी, इतनी-सी थी, तब से मैं तुझे देखता आया हूँ। आखिर में तेरे भाग्य में यह था, बेटी ? तूने क्या किया, बता दे न ! तुझमें ऐसी दुर्बुद्धि कैसे जगी ?'

सुखदा और बर्दाश्त न कर सकी। बोली, 'आप चुप रहें, आपका रोना मुझे अच्छा नहीं लगता।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'ओ रे, सो तो तू कहेगी ही। मुझे कितना कष्ट है, यह तो तू जानती नहीं। मेरे भांजे के शरीर में बन्दूक की गोली लगने से वह मरने को पड़ा है, मैं उसे न देखकर माँ जी को देखूँगा ! माँ जी को उसी दिन से होश नहीं है। अज्ञान-अचेत होकर पड़ी हैं। उसके बाद तू। तू रही पुलिस की हवालात में। मैं किसे छोड़कर किसे देखूँ, यही बता ?'

'सुरेन को क्या हुआ ?'

'और क्या होगा ? अज्ञान-अचेत पड़ा है। भगवान की यही दया है कि गोली छाती में नहीं लगी। मैं कितना कहता हूँ कि उन सब बदमाशों के साथ मत रह। सो छोकरा क्या धर्म की बात सुनता है। छोड़, जो जिसके भाग्य में है वह तो होगा ही। मेरा क्या ! अब अपनी बात बता। सुरेन को धनंजय की रखवाली में रखकर तेरे पास आया हूँ, तेरी बात सोचकर तो मेरा रोना रुकता नहीं। तेरी यह हालत किसने की, यही बता ? बता, किसने की ? तू चोरी करने क्यों गयी थी ?'

अब शायद सुखदा की बारी थी। सुखदा ने अपनी साड़ी के पल्ले से आँखें पोंछ लीं।

'रो मत बेटी, रो मत, बड़े दारोगा बाबू भी वहाँ दुःख कर रहे थे। कह रहे थे—लड़की ने रात-भर कुछ नहीं खाया, पानी तक नहीं छुआ। बड़े दयालु हैं दारोगा बाबू। सो मैंने सुनकर कहा, मुझे जरा मिलने दीजिये दारोगा बाबू, मैं अगर समझा-बुझाकर कुछ कर सकूँ।'

सुखदा फिर भी रोने लगी।

भूपति भादुड़ी फिर एक बार बोले, 'रो मत बेटी, रो मत, तू बता मुझे, तू क्या करने को कहती है ? क्या करने से तेरा भला होगा ? क्या

दिया। उसके वाद वोले, 'अव इसके नीचे इस जगह पर अँगूठा-निशानी लगाने को कहें। यह लीजिये स्याही का पैंड।'

भूपति भादुड़ी को और देरी वर्दाश्त नहीं हो रही थी। एक हाथ में खाने का दोना, और दूसरे में खाता और पैंड लेकर हवालात में घुसे।

उस दिन अचानक सवेरे अखवार खोलने पर देखा कि डॉक्टर विधान राय ने एक प्रस्ताव रखा है। वंगाल की भौगोलिक और आर्थिक उन्नति के लिए वंगाल और विहार प्रदेशों का एकीकरण ज़रूरी है। दोनों राज्य एक होने से फिर वंगाल देश-विभाजन के पहले की तरह शक्तिशाली वन जायेगा। वंगाल और विहार दोनों राज्यों के रहने वाले फिर खाने-पीने, रहने-सहने में आत्म-निर्भर वनकर परस्पर सहयोग से अपनी जीविका और उपार्जन का मार्ग प्रशस्त करेंगे।

सन्दीप वावू अखवार खोलकर पढ़ते-पढ़ते चौंक पड़े। कांग्रेस ने फिर एक चाल चली है।

पार्टी-ऑफ़िस के अन्दर सूना था। प्रायः सव दूसरे लोग पुलिस के हाथों पकड़ लिये गये थे। वे लोग पूर्ण वावू को भी पकड़कर जेल ले गये थे।

सहसा टेलीफ़ोन आया।

वोले, 'कौन ?'

'मैं अमर हूँ। आज का अखवार देखा सन्दीप-दा ? कांग्रेस की यह एक और चाल है। चुनाव के पहले हमारी पार्टी को कमज़ोर कर देना चाहते हैं। वंगाल-विहार का एकीकरण कभी अच्छा हो सकता है ? आप ही वताइये ?'

सन्दीप-दा वोले, 'देखता हूँ, सोचकर देखता हूँ।'

अमर वोला, 'न, सोचकर देखना-वेखना नहीं है। मैं अभी जा रहा हूँ। प्रेस को एक स्टेटमेंट देना है। पहले कल के मामले का एक फ़ैसला हो, उसके वाद एकीकरण का सवाल उठाया जाये। मैं कहता हूँ, इसके लिए जाँच कमीशन वैठाना पड़ेगा।'

सहसा जैसे दरवाज़े पर किसी का चेहरा दिखायी पड़ा। पार्टी की कई लड़कियाँ आ पहुँचीं, जिन्हें पुलिस नवावपुर तक ले जाकर छोड़ आयी थी।

टुलू ही सबके आगे थी। उसका मुँह रुआँसा हो रहा था।

टेलीफोन रखकर सन्दीप-दा बोले, 'आओ, आओ।'

टुलू के जीवन में यह सब रोज़ की घटना थी। जब से वह पैदा हुई, तब से ही समझ लिया था कि लड़ाई लड़कर, संग्राम कर, अपनी माँगें पूरी कराना होगी। अपने-आप कोई तुम्हारे मुँह में सन्देश नहीं रख जायेगा। सहदेव बाबू की सभी लड़कियाँ यह जानती थीं।

जिस दिन जुलूस था, उसके पहले के दिन ही सहदेव बाबू ने पूछा था, 'हाँ रे, जुलूस में गोली-ओली तो नहीं चलेगी ?'

टुलू बोली, 'गोली चलायेंगे तो क्या किया जायेगा, चलें।'

हजार होने पर भी सहदेव बाबू बाप थे। बोले, 'अभी उस दिन तो तू बीमारी से उठी है। इसी बीच ऐसी तकलीफ उठा सकेगी ?'

टुलू ने कहा था, 'वह फिर भी इससे अच्छा है बाबा, ऐसे जिन्दा रहने को क्या जिन्दा रहना कहा जाता है ?'

इसके बाद सहदेव बाबू के मुँह से कहने लायक़ कुछ न रहा। जो बाप लड़के-लड़कियों को खिला-पिला न सके, उस बाप को जिन्दा रहने का अधिकार नहीं है। लेकिन अंधा आदमी होकर खुद ही क्या करे ? यह तो उसका अपना देश तो नहीं है, अपना गाँव भी नहीं है। यह शहर है। खास कलकत्ता शहर। इस शहर में कौन किसी पराये की बात सोचता है ? कौन किसको लेकर अपना दिमाग परेशान करता है ?

दोपहर होने के पहले ही टुलू चली गयी।

जाने के पहले कह गयी, 'अगर मैं न लौटूं तो कोई-न-कोई आकर तुम्हें खबर दे जायेगा।'

फुलू चुप लगाये पास खड़ी थी। टुलू बोली, 'मैं अगर न आऊँ तो तू बाबा को भात परोस सकेगी न ?'

फुलू परोस सकेगी। यह भी न कर सकेगी तो क्या करेगी ? इस तरह के घर में पैदा होने पर करना ही होता है। छुटपन से ऐसे ही काम करती आयी है। जीवन में किसे असाध्य-साधन कहा जाता है, इससे वह खूब परिचित हो गयी है। यह जानती आयी है कि उसकी दीदी ने भी छुटपन से असाध्य-साधन किया है। इस सारे संसार में क्या सभी लोग सब मनचाहा कर सकते हैं ? जो काम हो उसे कर सकना ही यहाँ जरूरी है। जिसके घर में फुलू काम करती है, उसके मालिक-मालकिन तो छोटी बच्ची को उसकी हिफाजत में रखकर ऑफिस चले जाते हैं। तब घर का काम कौन करता है ?

टुलू चली गयी।

सहदेव वाबू कुछ देर चुप वैठे रहे। उसके वाद उठ खड़े हुए। उसके वाद फिर वैठ गये। कुछ देर वाद फिर उठे। उसके वाद पुकारा, 'फुलू, ओ फुलू!'

कहाँ है फुलू! वह भी दीदी के साथ वस की सड़क तक गयी है। शायद दीदी को चढ़ाने के लिए। अभी आ जायेगी। लेकिन कहीं किसी की आवाज नहीं है। सहदेव वाबू फिर आकर अपने तख्त पर वैठ गये। कलेजे से एक दर्द जैसे ऊपर उठने लगा हो। यह सव किस तरह का काम है, यह सहदेव वाबू की समझ में न आया। इस सव मारपीट-काटपीट में टुलू क्यों गयी? क्या दुनिया में कोई और काम नहीं रह गया था? नौकरी ही अगर करना है तो किसी ऑफ़िस में नौकरी करने से काम न चलता? तमाम लड़कियाँ तो ऑफ़िसों में नौकरी करती हैं। उसके वाद ऑफ़िस के ही किसी लड़के से शादी कर गृहस्थी चलाती हैं।

अचानक सहदेव वावू ने गला फाड़कर पुकारा, 'फुलू, फुलू रे!'

आवाज़ सुनकर मानो किसी ने वाहर से जवाव दिया। कहा, 'सहदेव वावू, सहदेव वावू हैं?'

सहदेव वावू के कलेजे की साँस जैसे ऊपर-की-ऊपर, नीचे-की-नीचे ही रुक गयी। वोले, 'कौन?'

आदमी दरवाज़ा ठेलकर अन्दर आया। वोला, 'मैं टुलू-दी की पार्टी के ऑफ़िस से आ रहा हूँ। आप ही का नाम सहदेव वावू है? टुलू के वावा?'

सहदेव वावू वोले, 'हाँ, टुलू कैसी है, भाई?'

लड़का वोला, 'अच्छी है। वही वात कहने मैं आया हूँ। टुलू-दी ने आपको ख़वर देने को कहा है। टुलू-दी को पुलिस पकड़ ले गयी है।'

'जेल हो गयी है?'

लड़का वोला, 'हाँ, आप कुछ फ़िक्र न करें, कुछ दिन वाद ही फिर लौट आयेगी। टुलू-दी ने आपसे फ़िक्र न करने को कहा है।'

'तो टुलू ने क्या किया था?'

लड़का वोला, 'करेगी क्या? वस झंडा लेकर नारे लगाये थे। धारा एक सौ चवालीस तोड़ी थी।'

सहदेव वावू कुछ न समझे। सिर्फ़ वोले, 'वह सव करने से तुम लोगों का क्या होता है, भाई? तुम सव वेकार में वह सव क्यों करते हो? गोली और वम खाकर पुलिस के साथ झगड़ा करने से फ़ायदा क्या? उससे अच्छा

किसी ऑफ़िस-कचहरी में नौकरी नहीं कर सकते हो? उसमें बूढ़े माँ-बाप को फिर भी कुछ सहारा मिले।'

लड़का बोला, 'वह सब आप नहीं समझेंगे, सहदेव बाबू। वह सब किये बिना कांग्रेस राह पर न आयेगी। उसी कांग्रेस के कारण ही तो आपका देश पाकिस्तान बन गया। उसी कांग्रेस के कारण ही तो आप लोगों को इतनी तकलीफ में इस बस्ती में गाय-बकरी की तरह रहना पड़ता है।'

'तो ठीक।' सहदेव बाबू को लगा कि बात ठीक है।

बोले, 'भाई, लेकिन हमें तो टुलू का ही सहारा है। और तो हमारा कोई है नहीं। टुलू को अगर कुछ हो गया तो मैं कैसे जिन्दा रहूँगा? हमारे क्या कोई लड़का है? जो लड़का था वह भी सियालदह स्टेशन पर मर गया। मेरी लड़की को तुम पार्टी से हटा दो न, भाई।'

लड़के को इतनी बातें सुनने का वक्त न था।

बोला, 'मुझे और बहुत जगह जाना है। मैं चलूँ।'

कहकर वह फिर न रुका। चला गया। सहदेव बाबू भौंचक्के-से कुछ देर वहीं खड़े रहे। उसके बाद कुछ न कर पा सकने से फिर लाचार-से तख्त पर बैठ गये। लेकिन क्या इंसान चुपचाप बैठ सकता है? न तो है कोई आदमी, न आदमज़ात, जिससे बात करे। सहसा किसी के पैरों की आवाज़ सुनकर सहदेव बाबू चौंक पड़े। चीख पड़े, 'कौन? फिर कौन?'

फुलू की आवाज़ सुनायी पड़ी, 'तुम्हें खाना दूँ, बाबा?'

सहदेव बाबू और न रुक सके। जैसे एकदम फट पड़े। बोले, 'कहाँ थी तू हरामज़ादी?'

फुलू इन गालियों की कभी परवाह न करती। बोली, 'खाना है तो खा लो। नहीं तो मैं तो खा रही हूँ। मुझे तो भूख लगी है।'

सहदेव बाबू बोले, 'तुझे तो बस ठूँसना ही ठूँसना है। ठूँस लिया और हो गया। उधर तेरी दीदी को पुलिस ने पकड़कर जेल में डाल दिया है, यह मालूम है?'

फुलू बोली, 'मालूम है।'

सहदेव बाबू का मुँह टेढ़ा पड़ गया, 'मालूम है? जानकर भी तुझे भूख है? बलिहारी है तेरी भूख पर बिटिया, अक्कल नाम का तुझ में कुछ भी नहीं। तू तो मरेगी ही, मुझे भी मारेगी। तुझे भी पुलिस क्यों नहीं पकड़ ले गयी? तब मेरी जान बचती।'

फुलू थाली में अपना भात निकालकर खाने लगी और खिलखिलाकर हँसने लगी।

'और हँस रही है, लड़की को शरम भी नहीं आती। दीदी जेलखाने,

और बहन खी-खी कर हँस रही है।'

फूल और भी हँसने लगी। हँसते-हँसते बोली, 'मुझे रोना नहीं आ है तो मैं क्या करूँ ? तुम भी हँसो न, तुमसे रोने को किसने कहा ?'

समय सन्दीप-दा सवेरा होने के साथ-ही-साथ व्यस्त हो गये थे। पार्टी नीति की घोषणा सन्दीप-दा को अकेले ही करना पड़ेगी। पार्टी में इस ह की बात पहले कभी नहीं हुई। पहले जो हुआ वह सबसे सलाह लेकर या गया था। कांग्रेस के षड्यंत्र को तोड़ने में पहले देश के लोगों को चेत करना होगा। देश के लोग अगर एक बार जान सकें कि उन्होंने जन्हें सेवा के लिए वोट दिया है वे सुविधावादी हैं, वे अपनी, अपने दल ी सुविधा की बात पहले सोचते हैं, तो फिर सब सफल है। यही चाहा था र्ण बाबू आदि ने।

देवेश ने भी वही सोचा था। देवेश ने भी सुरेन से कहा था, 'तुझे और मुझको पुलिस अगर गोली मारकर खतम कर डाले तभी हमारा लक्ष्य सफल होगा।'

सुरेन ने कहा था, 'लेकिन हमारे मरने पर स्वतन्त्रता कौन भोगेगा ?'

देवेश ने कहा था, 'हम न रहें, हमारी पार्टी तो रहेगी। हमारी पार्टी तो बड़ी होगी। पार्टी की तो ख्याति बढ़ेगी। हमारी पार्टी का व्यक्ति ही किसी दिन देश का प्रधानमंत्री बनेगा, उससे बड़ी क्या बात है ?'

यह सब बातें पहले ही हुई थीं। पहले से ही सारी योजना निश्चित हो गयी थी। सन्दीप-दा सवेरे ही पार्टी-ऑफ़िस में सिर्फ़ उस योजना को नये ढंग से रूप दे रहे थे। प्रेस को पार्टी की ओर से वक्तव्य भेज दिया गया था। सवेरे 'स्वाधीनता', 'आनन्द बाज़ार', 'स्टेट्समैन', 'युगान्तर' में वही वक्तव्य छपकर निकला भी था। सन्दीप-दा ने उसे अपने आप ही पढ़ा था। ख़बर सभी जगह छोटी करके छपी थी। सिर्फ़ 'स्वाधीनता' अख़बार में बड़े-बड़े टाइप में छपी थी। लिखा था : इस सरकार से एक बात की जवाबदेही चाहते हैं। हम जानना चाहते हैं कि डॉक्टर राय की सरकार ने किस साहस से निरीह, निरस्त्र जुलूस पर निर्दयतापूर्वक गोली चलायी ? जो डॉक्टर राय बंगाल-विहार के एकीकरण करने के लिए उत्कंठित हैं, जो डॉक्टर राय नये सिरे से बंगालियों के इतिहास को मलियामेट करने के लिए कमर कसते हैं उनसे जवाब चाहिए कि इस रक्तपात से उन्होंने किसका क्या उद्देश्य पूरा किया ? हम चाहते हैं कि डॉक्टर राय की सरकार इस दुर्घटना के लिए जाँच कमीशन बैठाये। जाँच कमीशन बैठाकर अपराधियों को दंड दिया जाये। जाँच कमीशन नहीं बिठाया जायेगा तो

हम अपना आन्दोलन जारी रखेंगे। और जब तक वह नहीं होता तब तक डॉक्टर राय की सरकार की पुलिस की बन्दूकों के आगे हजारों शान्तिप्रिय लोग अपनी छाती खोले रखेंगे। उतने दिनों इस क्रान्ति की लपटें तेज होकर भभकेंगी।

सवेरे से सन्दीप-दा ने यह सब काम किया था। ऐसे ही वक्त टुलू आदि का दल आ गया।

सन्दीप-दा बोले, 'आज का सवेरे का अखबार देखा है न ?'

टुलू बोली, 'देखा है।'

सन्दीप-दा बोले, 'जाँच-कमीशन अगर बनता है तो तुम सबको गवाही देना पड़ेगी।'

टुलू ने पूछा, 'लेकिन जाँच होगी भी क्या ?'

सन्दीप-दा बोले, 'कमीशन बनाना ही पड़ेगा। नहीं तो हम फिर हड़ताल करायेंगे। हड़ताल कराकर कलकत्ता का सारा कामकाज ठप्प करा देंगे। कांग्रेस अगर समझे बैठी है कि लोग उनके कहने में हैं तो इस बार फिर उन्हें दिखायेंगे।'

सहसा टुलू बोली, 'अस्पताल से कोई खबर मिली है ?'

'हाँ, हाँ,' सहसा जैसे सन्दीप-दा को याद आया। सामने ही एक कागज पड़ा था। उसे लेकर बोले, 'यह देखो, तुमको कल गलत खबर दी थी। देवेश अभी अस्पताल में है। उसकी हालत भी ज्यादा खराब नहीं है।'

'और सुरेन-दा ?'

'हाँ हाँ, सुरेन सान्याल। वही जिसे देवेश-दा ले आया था। उसे अस्पताल से छोड़ दिया गया है।'

'छोड़ दिया गया है ?'

टुलू कुर्सी से उठ खड़ी हुई। फिर भी जैसे शक हुआ। पूछा, 'छोड़ दिया गया ? आपने तो कल टेलीफोन पर मुझसे कहा था कि वह मर गये ?'

सन्दीप-दा बोले, 'मुझे उस समय गलत रिपोर्ट मिली थी।'

'उसे अस्पताल से कहाँ ले गये हैं ? पुलिस की हवालात में ?'

'न, पुलिस की हवालात में ले जाने पर तो खबर मिलती। शायद उसके घर ही ले गये।'

'घर पर ?'

टुलू उत्तेजना में जैसे काँपने लगी। बोली, 'आपको ठीक मालूम है सन्दीप-दा, उसे उसके घर ले गये हैं ? वही माधव कुण्डू लेन के घर ?'

सन्दीप-दा बोले, 'वह नहीं पता।'

टुलू बोली, 'तो आज मैं चलूं, सन्दीप-दा।'

सन्दीप-दा बोले, 'हाँ, हाँ, घर जाओ, तुम्हारे बाबा शायद बहुत फ़िक्र कर रहे होंगे। लेकिन कल ज़रा जल्दी आना चाहिए। मैं फिर शाम को देवेश को देखने अस्पताल जाऊँगा। अच्छा हो, आज घर जाकर आराम करो।'

तभी पार्टी के और कई लोगों ने आना शुरू किया। पार्टी के ऑफ़िस में दिन-भर यों ही चलेगा। टुलू तब तक सड़क पर निकल आयी थी। पहले घर जाये या माधव कुंडू लेन? लेकिन ऑफ़िस के आगे खड़े रहते हुए टुलू के सामने एक गाड़ी आकर रुकी।

ड्राइवर ने जैसे पीछे किसी की ओर देखा।

'अच्छा, आप क्या इसी ऑफ़िस से निकली हैं?' गाड़ी से एक महिला ने उतरकर सीधे टुलू से सवाल किया।

टुलू बोली, 'हाँ।'

महिला बोलीं, 'कल की खबर आप कुछ जानती हैं?'

टुलू ने पूछा, 'क्या खबर चाहती हैं? आज के अखबार में तो सब निकला है।'

महिला ने कहा, 'नहीं, वह नहीं। कौन-कौन मर गया और कौन-कौन घायल है, वही जानना चाहती हूँ।'

टुलू ने महिला को ऊपर से नीचे तक देखा। कपड़े-लत्ते झलमला रहे थे। क़ीमती रेशम की साड़ी, क़ीमती गाड़ी, बदन से उस वक़्त भी सेंट की गंध निकल रही थी। लेकिन मन मानो बहुत अव्यवस्थित हो।

टुलू बोली, 'आप किसकी खबर चाहती हैं, यह बताइये।'

महिला बोलीं, 'उसका नाम सुरेन सान्याल है। सुना है कि उसने कल के जुलूस में हिस्सा लिया था।'

टुलू के बदन का सारा खून पल-भर में जैसे दिमाग़ में आ जमा हुआ हो।

'सुरेन सान्याल?'

महिला बोली, 'हाँ, आप उसे पहचानती हैं?'

टुलू ने किसी तरह कहा, 'हाँ।'

महिला ने अधीर होकर पूछा, 'बता सकती हैं, वह कैसा है?'

टुलू मानो लड़खड़ा रही हो। बोली, 'आप कौन हैं?'

महिला जैसे ख़फ़ा हो गयी। बोली, 'इस सवाल का क्या मतलब?'

टुलू समझ न सकी।

महिला बोली, 'मैं जो पूछ रही हूँ, आप उसका जवाब दें। वह कैसा

है, मैं वही जानना चाहती हूँ।'

ड्राइवर उस समय टुलू की ओर एकटक देख रहा था।

टुलू को जैसे अकारण गुस्सा आ गया। सड़क की ओर मुँह करके बोली, 'आप पार्टी के ऑफिस में जाकर पता लगायें।'

कहकर वह वहाँ न रुकी। बस के रास्ते की ओर जाने लगी। उसके बाद कुछ ख्याल आया कि पीछे घूमकर देखा। देखा कि गाड़ी उस वक्त भी वहाँ वैसे ही खड़ी है। और वह लड़की? लड़की शायद सीढ़ियों से ऑफिस के दोमंजिले पर चढ़ गयी थी।

बस के लिए रास्ते में खड़े-खड़े बहुत-सी ट्रामें-बसें निकल गयीं, फिर भी जैसे एक पर भी चढ़ने की उसकी तबीयत न हुई। लड़की कौन है? सुरेन के साथ उस लड़की का क्या सम्बन्ध है? उसे इतना आग्रह क्यों है? सुरेन के साथ क्या कोई खास जान-पहचान है?

फिर वहाँ खड़े रहना और अच्छा न लगा। एकदम सड़क पार कर उधर फुटपाथ पर जाकर खड़ी हो गयी। वह माधव कुण्डू लेन न जायेगी। वहाँ जाकर क्या होगा? उसे देखने के लिए बहुत-से लोग हैं। उसकी फ़िक्र करने वाले बहुत हैं। टुलू उसकी कौन है? टुलू का वह कौन है? टुलू के जो लोग हैं वे तो उस पर निर्भर किये हैं। बूढ़ा अंधा पिता, छोटी नाबालिग बहन!

न, वह किसी के लिए नहीं सोचेगी। उसकी बात सोचने वाला जब कोई नहीं है, तो वह भी किसी के बारे में न सोचेगी।

एक बस के सामने आकर रुकते ही टुलू उस पर बैठ गयी। उसके बाद बस छूट गयी। अचानक कंडक्टर की बात से ध्यान टूटा।

'टिकिट।'

टुलू ने बैग से पैसे निकालकर दिये।

बोली, 'हडुरिया एक।'

सवेरे भी पुण्यश्लोक बाबू को कोई पता न चला। सवेरे उठकर अखबार पढ़ने में ही बहुत देर हो गयी थी। उन लोगों की पार्टी ने स्टेटमेंट दिया था। पुण्यश्लोक बाबू रोज पहले 'स्वाधीनता' ही पढ़ते थे।

लिखा था : हम डॉक्टर राय की सरकार से एक चीज़ का जवाव चाहते हैं। हम जानना चाहते हैं कि डॉक्टर राय की सरकार ने किस साहस से किस अपराध के लिए निहत्थे जुलूस पर निर्दयतापूर्वक गोली चलायी ? जो डॉक्टर राय वंगाल-विहार के एकीकरण के लिए उत्कंठित हैं, जो डॉक्टर राय नये सिरे से वंगालियों का ऐतिहासिक नाश करने में कमर कसे हैं, उनसे जवाव चाहिए—इस रक्तपात के परिणामस्वरूप उन्होंने किसका क्या उद्देश्य सिद्ध किया है ? हम चाहते हैं कि डॉक्टर राय की सरकार इस दुर्घटना पर जाँच-कमीशन वैठाये। जाँच-कमीशन वैठाकर अपराधियों को दंड दे।

पढ़ते-पढ़ते पुण्यश्लोक वावू का दिमाग़ गरम हो उठा।

वुलाया, 'रघु।'

रघु आया।

उन्होंने पूछा, 'हरिलोचन वावू आये ?'

रघु वोला, 'नहीं, अभी नहीं आये।'

पुण्यश्लोक वावू ने घड़ी की ओर देखा। अभी भी सात नहीं वजे थे। हरिलोचन के आने में एक घंटा और वाक़ी है।

वोले, 'मुंशीजी आयें तो कह देना कि मैं वाहर चला गया हूँ। डॉक्टर राय के घर गया हूँ।'

'कह दूँगा, हुज़ूर।'

'और सुन। मेरी गाड़ी निकालने को कह दे।'

रघु वोला, 'गाड़ी तो दीदी लेकर निकल गयी हैं।'

'यह क्या ? मेरी गाड़ी लेकर निकल गयी है ? दीदी ?'

रघु वोला, 'हाँ।'

'कहाँ गयी है ?'

रघु वोला, 'यह नहीं मालूम।'

'कव निकली है ?'

रघु वोला, 'यही आध घंटा पहले। दीदी की अपनी गाड़ी तो है नहीं, इसीलिए जगन्नाथ से आपकी गाड़ी निकालने को कहा था।'

वात सुनकर पुण्यश्लोक वावू हतवाक् हो गये। घर-वाहर अगर इस तरह अशान्ति हो तो आदमी जन-सेवा के व्रत को किस तरह निभाये ? अगर गाड़ी कल न जलती तो ऐसा ज़रूर न होता। पमिली को भी तो एक गाड़ी चाहिए। छुटपन से उनका लड़का और लड़की वरावर गाड़ी पर चढ़ते आये हैं। अव क्या वे गाड़ी छोड़कर टैक्सी से कहीं आना-जाना कर सकेंगे ?

राजनीति! वे बराबर राजनीति के अखाड़े में ही रहते आये हैं। राजनीति में सच बात सहज रूप से कहने का नियम नहीं है। और बात इस तरह कहना होगी जिससे लोग सोचें कि सच बात को ही सहज रूप में कह रहे हैं! सार्वजनिक जीवन में ही हो, या गृहस्थ-जीवन में ही हो, पुण्यश्लोक बाबू के दल के सब लोगों का यही स्वभाव हो गया है। और सिर्फ पुण्यश्लोक बाबू के दल के लोगों का ही नहीं, सारे राजनीतिक दलों के जीवन की यही प्रारम्भिक शिक्षा मिलती है। सच बात सहज रूप से बोलो तो तुम अपने दल को हरा दोगे! तुम अकेले पड़ जाओगे!

इन्हीं सब कारणों से तो प्रवेश आदि की तरह के लोगों को रखना पड़ता है। कम-से-कम उनमें मन खोलकर कुछ कहा तो जा सकता है। लड़के-बच्चों से जो नहीं बताया जा सकता है यह भी प्रवेश से निस्संकोच कहा जा सकता है।

प्रवेश के घर एक बार टेलीफोन किया।

'प्रवेश, तुम जरा आ सकते हो?'

प्रवेश बोला, 'क्या बात है पुण्यश्लोक दा, अचानक क्या हुआ?'

'तुम जरा अभी चले आओ। मैं बहुत मुश्किल में पड़ गया हूँ।'

प्रवेश ने और देर न की। सिर्फ कुछ देर पहले वह नींद से जागा था। इस तरह की बुलाहट वह बराबर पाता रहा है—जब से उसने वालंटियरी शुरू की थी तभी से ही। इस तरह हुक्म का पालन करके ही वह आज इतना बड़ा हुआ है। कलकत्ता शहर में मकान बनवाया। आज मोटी तनख्वाह की नौकरी कर रहा है, खुद की गाड़ी चलाता है।

पुण्यश्लोक बाबू के घर पहुँचते ही सीधे उनकी बैठक में चला गया।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'सुनो प्रवेश, मुझे बहुत जल्दी है। कलकत्ता की घटना के लिए डॉक्टर राय को दिल्ली से नेहरू ने टेलीफोन किया है।'

प्रवेश बोला, 'मैं भी ऐसा ही सोच रहा था।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अखबार देखा है न? विरोधी-दल ने क्या स्टेटमेंट दिया है? खुद ही गड़बड़ की, और कहते हैं कि जाँच-कमीशन बैठाना होगा। आज की मीटिंग में इस बारे में कोई फैसला लेना होगा। मैं तो सवेरे से ही अखबार लिये बैठा हूँ।'

प्रवेश बोला, 'मैं भी वही कह रहा था, तो जाँच-कमीशन बनेगा क्या?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'उसके बनने से हमें क्या डर है?'

प्रवेश बोला, 'नहीं, मैं उसके लिए नहीं कह रहा हूँ। यों ही छोटी-छोटी बातों के लिए अगर जाँच-कमीशन बैठने लगे तो काम कैसे चलेगा?

पुलिस का भी तो मन टूट जायेगा। पुलिस का मन अगर टूट जाये तो शासन कैसे चलेगा?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'इसीलिए तो हम डॉक्टर राय के घर चल रहे हैं, लेकिन पता है इधर क्या हुआ? पमिली सवेरे ही कहीं निकल गयी है।'

'पमिली! वह कहाँ गयी?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'क्या पता! मेरी गाड़ी लेकर कहाँ गयी, समझ में नहीं आता। देखता हूँ कि उसने तो बड़ी मुश्किल में डाल दिया है। पहले क्लब जाती थी, बार में जाती थी, वही इससे अच्छा था। इस तरह इतनी सवेरे तो कभी कहीं जाती ही नहीं थी।'

प्रवेश कुछ देर चुप रहा।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम गाड़ी लाये हो?'

प्रवेश बोला, 'हाँ।'

'तो तुम्हारी गाड़ी से ही हम जरा निकलें। पमिली कब लौटेगी, इसका तो कोई ठीक नहीं। और अगर गयी तो मेरी गाड़ी क्यों ले गयी? मुझसे कहकर भी तो जा सकती थी!'

प्रवेश बोला, 'चलिये, आपको मैं लिये चलता हूँ।'

'तुम्हारा ऑफ़िस खुला नहीं है?'

प्रवेश बोला, 'मैं वहाँ टेलीफ़ोन कर दूंगा।'

प्रवेश के ऑफ़िस के अधिकारी जानते थे कि प्रवेश को सन्तुष्ट रखने का मतलब था बंगाल के शासन को हाथ में रखना। प्रवेश को हाथ में रखने से कम्पनी के काम में गवर्नमेंट कोई रुकावट नहीं डालेगी। बल्कि जरूरत होने पर पिछले दरवाज़े से बहुत सुविधाएँ मिलती रहेंगी।

पुण्यश्लोक बाबू तैयार हो गये। तब तक हरिलोचन आ गये थे। वे हरिलोचन से बोले, 'मेरे आने तक तुम कहीं जाना मत, हरिलोचन। अगर गोयनका साहब आयें तो बैठाये रखना। उनसे मुझे कई काम हैं—कहना, मैं उनके काम से ही डॉक्टर राय के पास गया हूँ।'

प्रवेश ने गाड़ी स्टार्ट कर दी।
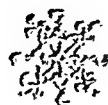
आदमी की एक बड़ी शिकायत है कि उसकी तबीयत के मुताबिक सब

काम नहीं होंगे। किसी दिन देशबन्धु सी० आर० दास ही क्या जानते थे कि जिस बंगाल के लिए वे सर्वस्व त्याग कर गये, उसी बंगाल के भाग्य में इतना दुर्भाग्य लिखा रह जायेगा! उस दिन सर्वस्व त्यागकर उन्होंने सोचा था कि भविष्य में उनके वंशधर कम-से-कम उनकी महिमा को हृदयंगम करेंगे, कम-से-कम उनके दल में से और दो-चार देशबन्धु पैदा होंगे।

लेकिन वे शायद इतिहास के अलक्ष्य निर्देश के आभास का अनुमान नहीं लगा सके। अनागत काल को वे दे गये अपना काम, अपना जीवन। उन्होंने चाहा था कि उनके बाद जो लोग आयेंगे वे मानो उनके दिखाये मार्ग पर चलेंगे। किन्तु पुण्यश्लोक बाबू की तरह के लोग फिर बंगाल में जन्म लेंगे, यह बात देशबन्धु ही क्यों, कोई भी कल्पना नहीं कर सकता था।

मुक्दा हवालात से निकली।

पुलिस-अफसर बोला, 'चलिये।'

'कहाँ ?'

पुलिस अफसर बोला, 'कचहरी।'

'क्यों, कचहरी क्यों ?'

पुलिस-अफसर बोला, 'आपके केस की सुनवाई होगी।'

मुक्दा बोली, 'लेकिन जो कहना था वह तो मैं लिखकर दे चुकी हूँ। मैंने स्वीकार कर लिया है कि मैं चोर हूँ, मैंने चोरी की है। मुझे चोरी करने को उकसाने के लिए मेरे पति कालीकान्त विश्वास, मेरे पति के मित्र नरेश दत्त जिम्मेदार हैं। उन्हें भी आप लोग पकड़िये, मेरी तरह उन्हें भी हवालात में रखें।'

पुलिस-अफसर बोला, 'उनको भी हमने पकड़ लिया है।'

मुक्दा अवाक् हो गयी, बोली, 'मेरे पति को पकड़ लिया है ?'

'न, वे भाग गये हैं।'

'भाग गये हैं ?'

'हाँ, उन्हें पकड़ने की कोशिश भी हम कर रहे हैं। लेकिन अभी तक उन्हें पकड़ नहीं पाये हैं।'

मुक्दा बोली, 'लेकिन उन्हें आप पकड़ क्यों नहीं पाते ? उनका पता मैं बता सकती हूँ। उन्हें आप जितनी जल्दी हो सके, पकड़ें।'

'उन्हें तो हम पकड़ने की कोशिश कर ही रहे हैं। आप बता सकती हैं, कहाँ जाने से वे मिल सकेंगे ?'

'क्यों, उनके घर से ? ग्रे स्ट्रीट से एक बन्द गली के अन्दर से।'

'वहाँ कोई नहीं है। वहाँ भी हम गये थे।'

एक रात ही में सुखदा में जैसे वहुत परिवर्तन हो गया था। सुखदा चारों ओर नज़र डालकर देखा।

बोली, 'हमारे घर का मैनेजर कहाँ गया ? वह नहीं आया ?'

पुलिस-अफ़सर बोला, 'कल आया था।'

सुखदा ने पूछा, 'और कोई नहीं आया ? मुझे देखने के लिए वहाँ से माँ जी ने किसी को नहीं भेजा ? मेरे लिए साड़ी-ब्लाउज़ नहीं भेजा ?'

सुखदा जैसे कुछ सोचकर सहसा रोने लगी।

बोली, 'आप लोग छोड़ दें न, मैं अब कभी किसी की वात न मानूँगी, मैं फिर कभी चोरी न करूँगी।'

तभी दिखायी दिया कि दूर पर हाथ में छाता लिये भूपति भादुड़ी चले आ रहे हैं।

'यह रहे, आपके मैनेजर वावू आ रहे हैं।'

भूपति भादुड़ी को देखकर सुखदा रुक न सकी। एकदम ज़ोरों से रोने लगी।

दारोग़ा वावू की ओर देखकर मैनेजर वावू बोले, 'क्या हुआ, आसामी रो क्यों रही है ?'

इस वीच एक पुलिस-कांस्टेविल आसामी के पास खड़ा पहरा दे रहा था। सुखदा उसको बचाकर भूपति भादुड़ी की ओर झपट पड़ी, 'मैनेजर वावू, ये लोग मुझे कचहरी लिये जा रहे हैं, आप मुझे बचाइये। मैं कचहरी नहीं जाऊँगी। वहाँ जाने से मुझे जेलखाने में क़ैद कर दिया जायेगा।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'नहीं वेटी, तुझको कोई डर नहीं है। मैं तो हूँ। तुम्हारी वात सोच-सोचकर मुझे रात-भर नींद नहीं आयी, यह जानती हो ? तुम्हें देखने के लिए मैं अपना सारा काम-काज छोड़कर आया हूँ। सोचा कि मेरी वेटी को वहुत तकलीफ़ हो रही है, जाऊँ जाकर देख आऊँ। तुम्हें रात को नींद तो आयी थी ?'

सुखदा वोली, 'नहीं मैनेजर वावू, मुझे विलकुल नींद नहीं आयी। रात-भर मैं वस रोती रही। सोचती ही रही, क्यों मैंने ऐसा किया ? मेरी अक़ल ऐसी खराव क्यों हुई ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो अब तो मैं आ गया हूँ। अव तुम्हें कोई डर नहीं है, वेटी।'

'लेकिन मैनेजर वावू, मुझे जेल हो जायेगी। जेल हो जाने पर मैं लोगों के आगे मुँह कैसे दिखाऊँगी ? मैं किसके पास जाकर खड़ी होऊँगी ? मुझे कौन ठिकाना देगा ? मैं आत्महत्या कर लूँगी, मैनेजर वावू !'

भूपति भादुड़ी बोले, 'क्यों बेटी, मैं किसलिए हूँ ? बच्चे के रहने पर माँ कहाँ जायेगी ? माँ बच्चे के पास ही रहेगी। मेरे पास रहने में तुमको आपत्ति है, माँ ?'

सुखदा और भी फूट पड़ी।

बोली, 'आप मुझे बचा लीजिये मैनेजर बाबू, मैं जेल न जा सकूँगी। मैं किसी तरह जेल न जा सकूँगी।'

भूपति भादुड़ी पुलिस की ओर देखकर बोले, 'अरे, इस लड़की को लेकर तो बड़ी मुश्किल में पड़ना पड़ रहा है। जेल कौन नहीं गया ? कितने बड़े-बड़े लोग जेल काट आये, तुम्हें तो पता है। महात्मा गांधी ने जेल नहीं काटी ? नेताजी ने जेल नहीं काटी ? और यह जो हमारे प्राइम-मिनिस्टर जवाहरलाल नेहरू हैं, यह कितने बरस जेल में बन्द रहे, तुम्हीं बताओ ? इस लड़की से यही बात समझाकर कहो।'

उसके बाद सुखदा की ओर देखकर बोले, 'तुम्हें तो कुछ पता नहीं है, इन सिपाहीजी से पूछो, बड़े-बड़े लीडरों को सिपाही साहब ने अपने हाथों से जेलखाने में भर दिया। और फिर यही सिपाहीजी ही अब उनको देखकर सलाम करते हैं। किसी के सब दिन क्या बराबर जाते हैं, माँ ? कुछ दिन जेल काट आओ न, उसके बाद फिर गृहस्थी करना, बाल-बच्चे होंगे, तब आज की बात किसे याद रहेगी ? किसी को याद न रहेगी। तब तुम्हारे पास अगर रुपया हो तो सब तुम्हारी ही खातिर करेंगे।'

सुखदा रोते-रोते बोली, 'मुझे अब रुपये नहीं चाहिए मैनेजर बाबू, मुझे रुपयों से घिन हो गयी है। सब लोगों ने मिलकर मुझे रुपयों का लालच दिखाया था। मुझे रुपये नहीं चाहिए—उन लोगों ने ही मुझसे चोरी करने को कहा था। मैं अब उनकी बात सुनने की नहीं, मैनेजर बाबू।'

'लेकिन तुमने उनकी बात क्यों सुनी थी, माँ ? उन्होंने क्या अच्छी सलाह दी थी ?'

सुखदा बोली, 'उन्होंने ही कहा था कि माँ जी की जायदाद मुझे मिलेगी।'

'उन्होंने कहा था और तुमने वही विश्वास कर लिया ?'

'तो फिर माँ जी का रुपया किसे मिलेगा ?'

'माँ जी जिसे वसीयत कर जायेंगी उसे ही मिलेगा। वह मुझे भी नहीं मिलेगा, तुम्हें भी नहीं मिलेगा।'

सुखदा अभी तक सहज रूप से बात कह रही थी। बोली, 'तो वह लोग जो कह रहे थे कि माँ जी की सारी जायदाद आपने माँ जी से अपने भांजे के नाम लिखवा ली है ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'उनके कहने से ही तुमने मान लिया, माँ ? अच्छा, बताओ तो, अपने भांजे को जायदाद दिलाने से मुझे क्या फ़ायदा ? मेरा भांजा क्या मेरे बस में है ? वह जायदाद लेगा, यही उन लोगों ने तुमको समझा दिया है ? पता है, मेरा भांजा आजकल मेरे पास ही नहीं रहता है।'

'आपके पास नहीं रहता ?'

भूपति भादुड़ी म्लान हँसी हँसे। बोले, 'तो और अफ़सोस की क्या बात कह रहा हूँ ! बिना माँ-बाप का सगा भांजा, जिसे मैंने कलकत्ता लाकर रुपया-पैसा ख़र्च कर लिखना-पढ़ना सिखाया, आदमी बनाया। सोचा कि मेरे बुढ़ापे में वह मेरी देख-भाल करेगा। वह अब लायक़ होकर मेरी कुछ भी नहीं मानता है। यह क्या मेरे लिए कम दुःख की बात है ?'

'लेकिन फिर सुरेन कहाँ रहता है ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम अपने ही दुःख में कातर हो, इसीलिए ये सब बातें तुम्हें नहीं बताना चाहीं। सोचा था, सुखदा को अपना दुःख-दर्द बताकर कष्ट न दूँगा। मैं किस ज्वाला में जल रहा हूँ, उसे भगवान ही जानते हैं। फिर उस पर माँ जी की बीमारी। वह बीमारी तो अब दूर नहीं हो रही है। उसके लिए दवा, डॉक्टर, सेवा—सब तो अकेले मुझे ही करना पड़ता है।'

सुखदा ने सहसा पूछा, 'माँ जी को पता है कि मैं यहाँ हूँ ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'पागल हुई हो ! यह बात मैं किसी से कह सकता हूँ ? यह तो किसी से कहने लायक़ बात नहीं है। माँ जी बेहोश पड़ी हैं—जैसे मानो होश लौटेगा ही नहीं। तरला दिन-रात उनके पास रहकर देख-भाल कर रही है। और बादामी की बात तो छोड़ ही दो। बादामी के भी अब ज़्यादा दिन नहीं हैं, वह भी अब जायेगी।'

कहकर जरा दम ले फिर बोलने लगे, 'मैं किस तरह दिन बिताता हूँ वह तुम्हें कैसे समझाऊँ। घर मानो मरघट बन गया है। चौधुरी-बाड़ी की कभी कैसी चमक-दमक देखी थी, अब उसी चौधुरी-बाड़ी में यह दशा भी मुझे देखनी पड़ी।'

सुखदा सबके दुःखों की बात सुनकर जैसे अपना दुःख कुछ भूल गयी हो।

बोली, 'लेकिन आपका भांजा ? वह कहाँ है, इसकी कोई खोज-ख़बर आपको नहीं मिली ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'ख़बर जब मिली तो सब ख़तम हो गया था।'

'ख़तम हो गया था माने ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'कहीं किन बुरे लोगों के दल में पड़ पार्टी बनाकर घूमता था, बन्दूक की गोली से घायल होकर फिर मेरे घर लौटा है।'

'यह क्या? बन्दूक की गोली कैसे लगी?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'यही तो बात है। मैं भी तो यही कहता हूँ। लिखना-पढ़ना सीखकर सभी जो करते हैं वही करना चाहिए। कोई नौकरी करो, उसके बाद घर-गिरस्ती चलाओ। वह नहीं, आजकल के लड़कों की क्या मति-गति हो गयी है! जुलूस में हिस्सा लेने गया था—वहीं पुलिस की गोली लगी।'

'अब कैसे हैं?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम्हारे लिए उसे भी तो ठीक से नहीं देख पा रहा हूँ। उधर माँ जी, और एक-मंज़िले पर सुरेन। दो रोगी लेकर मैं अकेला आदमी थक जाता हूँ। उस पर फिर तुम। मैं किस-किस तरफ़ देखूँ? किसे संभालूँ?'

पुलिस के बड़े बाबू दफ़्तर के काम से उधर चले गये थे। अब फिर आ गये।

बोले, 'चलिये, गाड़ी आ गयी है।'

बाहर सड़क पर जाली से घिरी पुलिस-गाड़ी खड़ी थी।

सुखदा फिर ज़ोरों से रो पड़ी। बोली, 'मेरा क्या होगा, मैनेजर बाबू?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'कोई डर नहीं है। मैं हूँ, डर क्या है? मैं तो कचहरी चल रहा हूँ। मैं तुम्हारे लिए गाँठ का पैसा ख़र्च कर वकील करूँगा। तुम कोई फ़िक्र न करो, तुम गाड़ी में जाकर बैठो।'

सुखदा रोते-रोते गाड़ी में बैठ गयी। दो पुलिस-कांस्टेबिल साथ में थे। बड़े बाबू ने एक छोटे बाबू को साथ भेज दिया। छोटे बाबू के ड्राइवर के पास जाकर बैठते ही गाड़ी रवाना हो गयी।

पीछे से भूपति भादुड़ी ने सुखदा को सुना-सुनाकर अन्तर्यामी से हाथ जोड़कर कहने लगे, 'दुर्गा...दुर्गा...!'

सहसा एक आवाज़ से सुरेन की आँखें खुल गयीं। देखा—धनंजय है

धनंजय बोला, 'एक लड़की आपसे मिलने आयी है, भांजे बाबू।'

'कौन रे? कौन लड़की है?'

धनंजय बोला, 'वह नहीं मालूम, आपसे मिलना चाहती है। यहाँ बुला लाऊँ?'

सुरेन ठीक से समझ न सका। यहाँ उसका हाल जानने कौन आयेगा? पमिली है क्या? लेकिन पमिली उसके पास क्या करने आयेगी? पमिली से उसका क्या सम्बन्ध? तो क्या टुलू है? लेकिन उसे तो पुलिस पकड़ ले गयी है? वह तो इस वक्त जेल में होगी।

बोला, 'ठीक है, तुम बुला लाओ।'

इस तरह टुलू अचानक आ पहुँचेगी, यह सुरेन सोच भी न सकता था।

'तुम किस तरह हो, सुरेन-दा?'

सुरेन उठकर बैठने की कोशिश करने लगा। जो व्यक्ति आया है वह ऐसा-वैसा व्यक्ति नहीं है। उसकी लेटे रहकर अभ्यर्थना करना ग़लत है।

टुलू बोली, 'उठ क्यों रहे हो? लेटे रहो न।'

सुरेन बोला, 'लेकिन तुम हमारे घर आयी हो और मैं इस तरह लेटा रहूँ?'

टुलू बोली, 'उससे क्या हुआ? तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है, लेटोगे नहीं तो क्या उठकर घूमोगे? तुमको ज़्यादा चोट नहीं आयी, यही बड़ी बात है। उन्होंने तो हमारे दल के कुछ लोगों का ख़ून करना चाहा था।'

सुरेन बोला, 'हमारे दल का कोई मारा गया है?'

टुलू बोली, 'अभी तक तो कुछ पता नहीं चला है। मुझे भी तो उन लोगों ने गिरफ़्तार किया था। लेकिन कहीं नवाबपुर नाम का एक ठेठ गाँव है, वहीं ले जाकर छोड़ दिया था। आज कुछ देर पहले ही वहाँ से आयी हूँ।'

'वह क्या? तुम अभी तक घर नहीं गयीं?'

टुलू बोली, 'घर गयी थी। लेकिन घर जाकर सिर्फ़ यहाँ आने के लिए बेचैन होने लगी। उसके बाद उसी हालत में फिर सीधे चली आयी। तुम्हारे पास आये बिना न रह सकी।'

सुरेन का चेहरा जैसे सहसा लाल हो गया।

उसके बाद बोला, 'मुझसे राजनीति में न रहा जायेगा, टुलू।'

टुलू बोली, 'क्यों? यह बात क्यों कह रहे हो?'

सुरेन बोला, 'तो तुम्हारी बातें सुनने में इतनी अच्छी क्यों लगती हैं? तुम आयी हो, यह देखकर मुझे इतनी ख़ुशी क्यों हो रही है? इतना भावुक होने से राजनीति में चल सकता हूँ?'

टुलू हँसने लगी। बोली, 'वाह रे, जो राजनीति में रहते हैं, उनके शायद मन ही नहीं रहता! तो मैं किस तरह राजनीति करती हूँ? मैं जब घर पर बीमार पड़ी थी तब तुम मुझे देखने गये थे न! तब उस वक़्त मुझे क्यों अच्छा लगा था?'

सुरेन ने टुलू की आँखों की ओर एकटक देखा। बात सच कह रही है या नहीं, यह टुलू की आँखें देखकर जाँचने की कोशिश की।

बोला, 'सच? तुमको सचमुच अच्छा लगा था, टुलू?'

टुलू बोली, 'क्यों तुम्हें उस बात का पता नहीं है?'

सुरेन बोला, 'पता है, लेकिन विश्वास करने में डर लगता है।'

टुलू बोली, 'इस वक़्त सब सोचने की जरूरत नहीं है। तुम जल्दी-जल्दी अच्छे हो जाओ।'

सुरेन और न रह सका। उठ बैठा।

टुलू बोली, 'यह क्या? उठे क्यों?'

सुरेन ने उस बात का जवाब नहीं दिया। खिड़की से बाहर की ओर देखकर जैसे किसी को खोजने लगा।

'किसे खोज रहे हो?'

उस बात का जवाब न देकर सुरेन ने बाहर आँगन में अर्जुन को देखकर पास बुलाया। बोला, 'अर्जुन, धनंजय को तो ज़रा बुला दे।'

'क्यों बुला रहे हो?'

लेकिन सुरेन को उस बात का जवाब न देना पड़ा। धनंजय आस-पास ही कहीं था। बुलाहट सुनते ही वह आ पहुँचा। सुरेन ने उसे पास बुलाकर कुछ चुपचाप कहा। और धनंजय यह सुनते ही फिर जल्दी कमरे से निकल गया।

टुलू बोली, 'क्या बात है, बताओ तो?'

सुरेन बोला, 'कुछ तो नहीं।'

'कुछ नहीं माने?'

सुरेन बोला, 'तुम इतने दिनों बाद आयी, तुम्हारी कुछ खातिर किये बिना क्या अच्छा लगेगा?'

टुलू बोली, 'वह क्या? न, न, तुम्हारे साथ क्या मेरा इस तकल्लुफ का सम्बन्ध है?'

लेकिन तभी धनंजय भागते-भागते आ पहुँचा। हाथ में खाने की प्लेट थी।

टुलू बोली, 'यह क्या किया, मैं कोई हाथी-घोड़ा हूँ? मैं इतना खा सकती हूँ? तुमने क्या समझा है?'

सुरेन बोला, 'मैं रुपया लूँ तभी तो पार्टी को दे सकता हूँ।'

टुलू का खाना तब भी चल रहा था।

खाते-खाते टुलू बोली, 'पता है सुरेन-दा, सन्दीप-दा ने बताया है कि उस दिन की घटना के लिए जाँच-कमेटी बिठाने के लिए हम दबाव डालेंगे।'

सुरेन बोला, 'वाह रे, सुव्रत मेरे साथ पढ़ा है, उसके पिता पुण्यश्लोक बाबू को मैं जानता हूँ, वे डॉक्टर राय के दाहिने हाथ हैं।'

टुलू बोली, 'तुम उन्हें जानते हो? तुम पुण्यश्लोक बाबू को कैसे जानते हो?'

सुरेन बोला, 'वाह रे, सुव्रत क्लास में मेरा दोस्त था न, उसके बाबा ही तो पुण्यश्लोक राय हैं। उन्हीं पुण्यश्लोक बाबू ने मुझसे कांग्रेस का इतिहास लिखने को कहा था। मुझे लिखना अच्छा नहीं लगा—इसी से वह काम छोड़ दिया था।'

टुलू बोली, 'यह बात तो मुझे मालूम न थी।'

सुरेन बोला, 'तुम्हारे साथ कितने दिनों का परिचय है जो तुम जानतीं? मेरी सब बातें क्या तुम जानती हो? देवेश को मालूम है। देवेश और मैं एक-साथ पढ़े हैं।'

टुलू बोली, 'पता है, देवेश-दा को भी पुलिस ने गिरफ्तार कर रखा है?'

सुरेन ने सहसा देखा। बोला, 'यह क्या, तुमने सन्देश नहीं खाया? वह खा लो। पैसा देकर ख़रीदी चीज है, फेंको मत—सब तुम्हें खाना ही पड़ेगा, खाओ।'

टुलू बोली, 'बस करो सुरेन-दा, मेरा पेट भर गया है; मैं और नहीं खा सकती।'

सुरेन ने टुलू का हाथ पकड़ लिया। बोला, 'न, तुम्हें खाना ही पड़ेगा। अपने घर तुमने जो दिया था मैं चाट-चूटकर खा गया था। हमारे घर तुम फेंक न सकोगी।'

न टुलू खायेगी और न सुरेन छोड़ेगा। हाथ पकड़कर खींचतान चलने लगी। सुरेन ने टुलू का हाथ पकड़कर कहा, 'मैं किसी तरह तुम्हारा हाथ न छोड़ूँगा।'

उसी हालत में सहसा सुरेन और टुलू के सामने जैसे वज्र गिरा। सहसा कमरे में आ पहुँची पमिली। पमिली ने भी अन्दर आकर ऐसा ही दृश्य देखने की आशा नहीं की थी। गेट के सामने आते ही दरवान ने उसकी गाड़ी देखकर जरा ज्यादा इज़्जत के साथ सलाम किया था। उसके

बाद भाजे बाबू का नाम सुनते ही एकदम सुरेन के कमरे में भेज दिया था।

पमिली ने सोचा था कि आकर देखेगी कि सुरेन बीमार हालत में बिस्तर पर पड़ा होगा। लेकिन इस तरह एक लड़की के साथ बैठे-बैठे गप करेगा और हाथ पकड़कर खींचतान करेगा, यह तो उनके सपने में भी नहीं आया था।

कमरे में घुसते ही यह दृश्य देख पमिली को अजीब-सा अटपटा लगा। क्या बात कहकर शुरू करे, यह समझ में न आ रहा था। एक बार सोचा कि वह लौट जाये, लेकिन क्षण-भर के लिए।

'यह क्या पमिली, तुम ? तुम ?'

तभी टुलू भी मुंह फेर देखकर भौचक्की रह गयी। यह ही वह लड़की है न ? वही जो उनकी पार्टी-ऑफिस के सामने गाड़ी से उतरकर [illegible] सुरेन के बारे में पूछ रही थी ? आखिरकार वह यहां आ गयी ? इतनी देर याद क्यों आयी ? इतनी देर कहां थी ?'

पमिली ने भी टुलू को देखकर पहचान लिया। यह लड़की [illegible] आयी ?

सुरेन तब तक सीधा होकर बैठा था। बोला, '[illegible] पमिली, बैठो।'

पमिली की समझ में न आया कि क्या कहे। वह कुछ देर [illegible] बनी रही। उसके बाद बोली, 'मैंने सोचा था कि तुम [illegible] कि तुम्हें पुलिस की गोली लगी है।'

सुरेन बोला, 'हां, गोली ही तो लगी थी, लेकिन [illegible] हाथ में लगी थी, इसलिए बच गया।'

पमिली बोली, 'होगा, देख लिया, तो [illegible]

सुरेन बोला, 'न, अच्छा नहीं पमिली, [illegible] बैठो।'

सुरेन बोला, 'लगता है, तुमने विश्वास नहीं किया ? विश्वास न हो तो तुम इससे पूछ लो।'

पमिली हँस पड़ी। बोली, 'उससे नहीं पूछना होगा। मैं उसे जानती हूँ। कलवार का गवाह शराबी।'

'क्या कहा ?'

टुलू अब तक चुप थी। एक बात भी नहीं बोली। लेकिन अब फुफकार उठी। बोली, 'क्या कह रही हैं ?'

पमिली बोली, 'जो कह रही हूँ ठीक ही कह रही हूँ। मुझे आप पहचानती नहीं हैं।'

टुलू बोली, 'ठीक से नहीं जानती, लेकिन आपको मैंने देखा है।'

पमिली बोली, 'आप अगर सब जानती थीं तो सुरेन की खबर मुझे क्यों नहीं दी ?'

टुलू बोली, 'आपको मैं जानती नहीं, पहचानती नहीं, क्यों मैं आपको सुरेन-दा की खबर देती ?'

सुरेन आश्चर्य में पड़ गया। बोला, 'तो तुम दोनों क्या एक-दूसरे को जानती हो ? बात क्या है ?'

पमिली बोली, 'नहीं, मैं उसे नहीं पहचानती। मैंने उससे तुम्हारा पता पूछा था, तो उन्होंने मुझे पार्टी-ऑफ़िस का रास्ता दिखा दिया था।'

सुरेन ने पमिली से कहा, 'तो मेरा पता तो तुम्हें मालूम था, पमिली। तुम तो पहले भी मेरे घर आयी हो।'

पमिली बोली, 'वह तो जानती हूँ, लेकिन मुझे क्या मालूम कि तुम हॉस्पिटल में हो या घर पर हो ? तुम्हारी ठीक खबर जानने के लिए ही तो मैं तुम्हारे ऑफ़िस गयी थी।'

टुलू की आँखें छलछला आयीं। बोली, 'तो अब मैं चलूँ सुरेन-दा दोनों बातें करो।'

कहकर उठ खड़े होने जा रही थी।

लेकिन पमिली बोली, 'नहीं आप क्यों जायेंगी ? जाना होगा [illegible] ही चली जाऊँगी। मैं आप दोनों के प्रेमालाप में बाधा नहीं देना चाह[illegible]

कहकर फिर वहाँ न रुकी। सीधे कमरे से निकल आँगन पा[illegible] अपनी गाड़ी में जा बैठी।

सुरेन उस तख़्त पर बैठे-बैठे ही पुकारने लगा, 'पमिली सुनो, प[illegible]

लेकिन पमिली के ड्राइवर जगन्नाथ ने तब गाड़ी को स्टार्ट [illegible] था। उस आवाज़ में पमिली और कुछ न सुन सकी।

कमरे में तब टुलू आँचल से आँख ढककर रो रही थी।

क्या हुआ ? यह तुमने क्या किया, सुरेन-दा ? तुम्हारे सामने तुम्हारी मित्र आकर मेरा अपमान कर गयी और तुमने कुछ भी नहीं कहा ?'

उसके बाद चेहरे से आँचल हटाकर सहसा टुलू बोली, 'मैं अब उठूँ, सुरेन-दा। मैं देखती हूँ कि तुम्हारे पास आकर मैंने गलती की। मुझे पहले ही समझना चाहिए था।'

कहकर उठ खड़े होकर दरवाजे की ओर गयी। उसके बाद दरवाजा पार कर आँगन की तरफ पैर बढ़ाया।

सुरेन बोला, 'तुम जा कहाँ रही हो टुलू, बैठो।'

टुलू बोली, 'मैं चलूँ, मैं अब कभी यहाँ नहीं आऊँगी। सचमुच मुझसे गलती हुई।'

सुरेन बोला, 'अरे, तुम भी खफा हो गयी, टुलू ? तुमने भी मुझे गलत समझा ? बैठो, बैठो, जाना मत।'

लेकिन तभी टुलू ने तेजी से सीधे आँगन पार कर माधव कुडू लेन पर कदम रखा।

बैंकशाल कचहरी में मुंसिफ के कमरे में उस समय आसामी के कठघरे में खड़ी थी सुखदा। सिर पर घूँघट खींचे थी। और खड़ा था नरेश दत्त।

वकील ने जिरह की, 'आसामी सुखदा बाला, आपने थाने की पुलिस को जो इजहार दिया है वह क्या सच है ?'

सुखदा चुप रही। कोई जवाब नहीं दिया।

पुलिस के वकील ने फिर पूछा, 'यह देखिये, यह आपका इजहार है। यह इजहार आपने ही दिया है न ? इस पर आपके अँगूठे की निशानी है। इसमें आपने बताया है कि आपने आसामी नरेश दत्त और अपने पति, फरार आसामी कालीकान्त विश्वास, के बहकाने पर साठ हजार रुपये के गहने चोरी किये थे। वे सारे गहने अपने पति फरार आसामी कालीकान्त विश्वास को दिये थे। यह सब सच है ? हुजूर आपके मुँह से सुनना चाहते हैं, इजहार में जो लिखा है वह सच है या नहीं ? बताइये, सब सच है न ?'

और भी कितने ही सवाल करने लगा, उसका कुछ ठीक है ? सवालों की मानो बाढ़ हो। एक-एक लहर आती और मानो सुखदा

ले जाती। कब किस दिन पहले-पहले मनुष्य ने अपनी ही मूर्खता से पहला पाप किया था, आज इतने युगों के बाद जैसे सुखदा को धर्माधिकारी के आगे उसकी जवाबदेही करना पड़ रही है :

हे मानव के सृष्टिकर्ता, तुम्हें कौन-सा अहेतुक विचार चरितार्थ करने के लिए हमारी इस पृथ्वी पर जन्म लेना पड़ा, कौन जाने ! यदि हमारी पृथ्वी की ही सृष्टि की तो अपने मन के अनुसार क्यों सृष्टि नहीं की ? अन्तर में क्यों दी क्षुधा और बाहर दिया अनुशासन ? हाथ बढ़ाकर ही जो मिल सके उसे क्यों पहुँच के बाहर ढकेल देने का यह परिहास किया ? अगर इतनी वासना-कामना दी ही थी तो जन्म से लेकर मृत्यु-पर्यन्त असाध्य-साधन का संघर्ष करने की क्षमता क्यों न दी ? तुम यदि अन्तर्यामी हो तो हमारा रुदन क्यों तुम्हारे बन्द सिंहद्वार पर धक्का खाकर हमारे हृदय में लौट आता है ? हम कहाँ उत्पन्न हुए, हम किसके प्रयत्न से, किसकी उपेक्षा से इतने बड़े हुए, पता नहीं। बस यही पता है कि जिस पृथ्वी पर हम हैं, यहाँ कोई किसी का नहीं है। आवश्यकता का मानदण्ड लेकर, माप-तौल कर यहाँ हमारा मूल्य आँका जाता है। इसीलिए तो हम तुम्हें अस्वीकार करते हैं। तुम्हें अस्वीकार कर मैंने जैसा तुम्हारा अपमान किया है, तुम खुद भी वैसे अपमानित हुए हो। हमें तुम कभी क्षमा मत करना, प्रभु ! हमें तुम चरमदण्ड दो, मैं तुम्हारे आगे अपने वही सब अपराध स्वीकार कर सिर झुकाये खड़ी हूँ। मुझे दण्ड दो। मुझे क्षमा मत करो। क्षमा करके मुझे आत्मा के परित्राण से छुटकारा मत दो।

आँखों के आगे क्या होता है, क्यों होता है, कौन क्या कहता है, वे कौन हैं, उस समय सुखदा के दिमाग़ में कुछ न आ रहा था। तमाम लोग, तमाम शब्द, तमाम बहस, तमाम कुतूहल—कुछ भी जैसे सुखदा को छू नहीं पा रहा था।

सहसा क्या हुआ, लगा कि सब खाली हो गया है। कोई नहीं है। एक अखंड शून्यता में जैसे किसी ने उसे फेंक दिया है।

'चलो माँ, चलो।'

सुखदा को आज भी याद है, तभी उसे होश आया था। सामने ही भूपति भादुड़ी खड़े हैं—उसकी ओर देखते हुए। जैसे सुखदा से कुछ कहा हो।

'चलो माँ, अब चलो।'

सुखदा भी कठपुतली की तरह चलने लगी। सोचा, फिर वही होगी जाली से घिरी गाड़ी। फिर वही पुलिस के कांस्टेबिलों का पहरा।

सुखदा ने पूछा, 'वह पुलिस कहाँ गयी ? वह जाली से बन्द गाड़ी ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'पुलिस सब चली गयी, माँ। मैं तुम्हे टैक्सी से ले जाऊँगा।'

सुखदा आश्चर्य मे पड गयी, 'क्यों ? टैक्सी क्यों ? वह जाली से बन्द गाडी कहाँ गयी ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम जमानत पर छूट गयी हो, माँ ! अब तो तुम स्वतन्त्र हो।'

'तो मुझे जेल नही हुई ? मुझे फिर हवालात मे लौटकर नही जाना होगा ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'न, अब मैं तुम्हे दूसरी जगह ले जाऊँगा।'

सुखदा बोली, 'कहाँ ? हमारे उसी किराये के घर मे ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'नही माँ, वह घर अब तुम्हारा नही है। वह घर छोड़कर जमाई भाग गये। घर वाले ने उस घर पर दखल कर लिया है। इतने दिनों का किराया बाकी पड़ गया था। घर वाले का क्या दोष ? सो उसके लिए फिक्र नही।'

सुखदा बोली, 'लेकिन मैं माँ जी को अपना मुँह नही दिखा सकूँगी ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मुझे वह मालूम है माँ, मैंने इसीलिए तुम्हारे लिए पेशगी किराया देकर एक घर तय कर रखा है। तुम वहाँ जाकर रहोगी, चलो।'

टैक्सी पर सुखदा को बिठाकर भूपति भादुड़ी बाद मे बैठे। टैक्सी वाले को शायद पहले से ही सब बता दिया था। तुरन्त ही गाडी चली। कचहरी का काम खतम होते-होते शाम हो गयी थी। टैक्सी कहाँ से चक्कर लगाकर एक गली मे आकर खड़ी हो गयी। गली मे बहुत-से लोगो के आने-जाने से भीड थी।

'यह मुझे कहाँ ले आये, मैनेजर बाबू ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम्हे कुछ फिक्र नही है, माँ। तुम्हारा जिसमे भला हो, मैंने वही इन्तजाम किया है। यहाँ तुम्हे कोई असुविधा न होगी।'

सुखदा बोली, 'मेरे कपडे-लत्ते, बक्स-पिटारा सब घर पर हैं।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'उसकी व्यवस्था भी मैंने कर रखी है माँ, तुमने क्या सोचा है कि मैं इतना भुलक्कड आदमी हूँ ?'

कहकर घर के सामने जाकर पुकारने लगे, 'ओ भूलो की माँ, भूलो की माँ !'

एक बुढ़िया आ पहुँची। अच्छी तरह तीखी नजरो से वह सुखदा को देखने लगी।

भूपति भादुड़ी बोले, 'ऐसा क्या देख रही हो, भूलो की माँ ? कमरे

ताला खोल दो।'

भूलो की माँ ने झटपट कमर से चाभियों का गुच्छा निकालकर दुमंज़िले का ताला खोल दिया। साथ-ही-साथ भूपति भादुड़ी भी सुखदा को ले गये। कमरे की रोशनी जला दी गयी। अच्छा खुला साफ़ कमरा था।

भूपति भादुड़ी भूलो की माँ से बोले, 'कहाँ है जी, ट्रंक कहाँ है? जिसमें लड़की की सब साड़ी-ब्लाउज़ हैं। जाओ, जाओ, ट्रंक लाने को कहो।'

उसके बाद भूपति भादुड़ी ने सुखदा को इधर-उधर दिखा दिया। यह है नल-घर, यह है छत पर जाने की सीढ़ी। यहाँ आराम से अब सोओ। तुम्हें कोई तंग करने नहीं आयेगा।'

'रसोई? रसोई कहाँ है?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'रसोई-असोई तुम्हें नहीं करना होगी। वह मैंने आदमी का इन्तज़ाम कर दिया है। एक पेट के लिए तुम बेकार में रसोई क्यों करोगी?'

बात पूरी न हुई थी कि एक महिला कमरे में आयी। अच्छी साफ़-सुथरी, बुज़ुर्ग, मोटी-सी। नाक में बायीं ओर हीरे की लौंग। हँसमुख। ओंठ लाल करते हुए पान चबा रही थी। पान की गिलौरी से एक ओर का गाल फूला था।

'अरे मौसी, तुम आ गयीं। मैं तुम्हारी बात ही सोच रहा था, यह देखो, यह मेरी लड़की है।'

मौसी सुखदा को एकटक देख रही थी। बहुत देर तक जाँच कर देखती हुई बोली, 'वाह, यह तो बड़ी अच्छी लड़की है। तुम्हारा नाम क्या है, बच्ची?'

भूपति भादुड़ी ने सुखदा की ओर देखकर कहा, 'बताओ, बताओ, अपना नाम बताओ—यह मेरी मौसी होती हैं।'

सुखदा भी महिला को अच्छी तरह देख रही थी।

'बताओ न माँ, अपना नाम बताओ।'

'मैनेजर बाबू, देख रही हूँ तुम्हारी लड़की बड़ी ही अच्छी है।'

कहकर सुखदा का चिबुक थामकर मौसी सुखदा को दुलार करने लगीं। सुखदा को बड़ा अच्छा लगा। क्षण-भर में प्यार में पिघल गयी।

मौसी बोलीं, 'तुम मुझे दीदी कहो भाई, मैं तुम्हारी दीदी हूँ।'

उसके बाद फिर बोली, 'यहाँ तुम्हें कोई डर नहीं है, भाई। जो कोई असुविधा हो, मुझे बताना। आज रात तुम क्या खाओगी, बताओ तो?

रोटी खाओगी या भात ?'

मुखदा बोली, 'आज मैं कुछ न खाऊँगी।'

मौसी बोली, 'ओ माँ, यह क्या होता है ? पेट में कुछ डाले बिना नींद कैसे आयेगी ? कहावत है कि भूख से हाथी तक मर जाता है। न, न, किस दुख से भूखी रहोगी ?'

मुखदा बोली, 'मुझे भूख नहीं है।'

'रहने दे, मुँह में कुछ डालना ही पड़ेगा। तुम्हारे लिए मैंने परौठा और मांस बनाने के लिए कह दिया है।'

तभी एक आदमी सिर पर ट्रंक रखे कमरे में घुसा। मौसी बोली, 'यहाँ रखो इस कोने में।'

कोने में ट्रंक रखकर आदमी चला जा रहा था।

मौसी बोली, 'ओ रे, देख तो आ मेरी दीदी के लिए मांस, परौठा बन गया या नहीं ?'

आदमी चला गया।

भूपति भादुड़ी अब बोले, 'तो मैं चलूँ, मौसी। मैं अपनी लड़की को तुम्हारे ज़िम्मे छोड़े जा रहा हूँ। देखना, लड़की को कोई तकलीफ़ न हो। फिर जब मुक़दमे की तारीख़ पड़ेगी, उस दिन आकर ले जाऊँगा।'

उसके बाद मुखदा की ओर देखकर बोले, 'तो मैं चलूँ, माँ।'

मुखदा बोली, 'आप फिर कब आयेंगे ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम कोई फ़िक्र न करो। घर चले जाने पर भी मेरा मन यहीं पड़ा रहेगा। घर गये बिना भी नहीं चलता, माँ जी की बीमारी अभी भी दूर नहीं हो रही है, क्या करूँ ?'

उसके बाद चलते-चलते भी पीछे फिरकर बोले, 'तो चलूँ माँ, चलूँ।'

कहकर अँधेरे में ही भूपति भादुड़ी ने पैर बढ़ा दिये। और अन्दर मौसी मुखदा का बदन, हाथ, पैर दबाकर देखने लगी।

मुखदा बोली, 'क्या देख रही हैं आप ?'

मौसी बोली, 'ओ माँ ! तुम फिर आप और जी कहकर क्यों बात करती हो ? मैं तो दासी हूँ। देख रही हूँ कि दीदी का बदन कैसा है।'

मुखदा बोली, 'बदन देखने से आपको क्या फ़ायदा ?'

मौसी बोली, 'फ़ायदा कुछ नहीं। देखना अच्छा लगा। इसलिए देख रही थी। तुम इतना बिगड़ क्यों रही हो, माई ? मैंने क्या कुछ बिगड़ने की बात की ? और ऐसा ही तुम्हें लगता हो तो मैं चली, चलती।'

कहकर मौसी चली गयी। इस बीच मुखदा को अकेले में लेकर अच्छी तरह सोचने का मौक़ा मिला। मुखदा के मन में आया कि भाग्यदेवता ने

उसे कहाँ लाकर फेंक दिया है ? उसने क्या यही चाहा था ? कहाँ गयी वही छोटे-दा के आश्वासन की बात ? और बड़ा आदमी होने की कामना ने उसे इस तरह क्यों धोखा दिया ? आश्चर्य है, यहाँ आते ही पहले उसे लगा था कि जीवन में विराम-चिह्न लगने पर शायद मनुष्य यहीं आता है। विष की गोली खाकर जीवन पर विराम लगाने से यहाँ इसी तरह रहने से शायद विराम लगाना आसान होता है।

एक दिन इसी तरह के परिवेश के बीच सहसा सुरेन से भेंट हुई थी। यहाँ आकर भी जिस पृथ्वी और प्रकाश में किसी से भेंट सम्भव हो सकती है, वह सुखदा उस दिन भूल ही गयी थी। किन्तु जीवन एक बड़ी विचित्र नाव है। घाट-घाट पर लगने पर भी वह अघाट के बीच भी गन्तव्य स्थल का आस्वाद कब ले लेती है, यह कोई नहीं बता सकता।

उस दिन सुरेन सुखदा को देखकर चौंक पड़ा था।

कहा था, 'यह क्या ? तुम ?'

तब तक सुखदा ने सारा यौवन अनेक अयोग्य लोगों में मुक्त रूप से वितरित कर दिया था। तमाम रातों के जागने की बहुत-सी कालिमा ने उसे मलिन कर दिया था। किन्तु पाप-रहित आँखों ने सुखदा को पहचानने में ज़रा भी भूल नहीं की।

सुखदा बोली, 'तो मुझे पहचान लिया ?'

सुरेन बोला, 'न पहचान पाता, तभी अच्छा था।'

सुखदा ने पूछा, 'लेकिन मैं तो अब सुखदा वाला दासी नहीं हूँ।'

सुरेन बोला था, 'हाँ, वही तो देख रहा हूँ। अब देख रहा हूँ, सान्त्वना बोस हो।

वह चुनाव का अवसर था। क़तार बाँधकर सुखदा हाथ में एक कार्ड थामे वोट देने गयी थी। कार्ड पर उसका वही नाम लिखा था—सान्त्वना बोस।

सुरेन ने कहा था, 'अपने अभिभावक का नाम क्यों बदल दिया ?'

सुखदा बोली, 'सिर्फ़ पाँच मिनट के लिए बदला है। कुछ देर बाद ही फिर सुखदा वाला दासी बन जाऊँगी।'

'इसके मतलब ?'

सुखदा ने बताया था, 'उसके बदले बीस रुपये जो मुझे मिले हैं।'

कहकर दो दस-दस रुपयों के नोट निकालकर सुरेन को दिखा दिये।

'तो बीस रुपये आज तुम्हारे लिए बहुत हो गये ?'

सुखदा उस भीड़ में सीधी खड़ी थी। बोली थी, 'बीस रुपये क्या कम

हैं ? चौबीस घंटा मेहनत कर तुम बीस रुपये कमाते हो ?'

सुरेन का चेहरा घृणा से मानो काला पड़ गया हो। यहाँ आने के बाद वही पहली भेंट थी। तब सुखदा के गले में सोने का हार, हाथों में सोने की चूड़ी, कानों में मोती के गहने थे। सब मिलाकर सुरेन जैसे सुखदा को नहीं देख रहा था, सान्त्वना बोस को ही देख रहा था।

तब वह वोट दे आयी थी।

सुरेन ने पूछा था, 'तुम कहाँ रहती हो ?'

सुखदा ने कहा था, 'क्यों, तुम मेरे घर आओगे ?'

सुरेन ने कहा था, 'पहले पता तो बताओ, उसके बाद सोचूँगा कि आऊँगा या नहीं ?'

सुखदा ने कहा था, 'लेकिन पता सुनकर अगर तुम न आओ।'

'मैं आऊँगा तभी तुम पता बताओगी ?'

तब सुखदा ने बताया था, 'अट्ठाईस नम्बर दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट।'

सुरेन ने पता सुनकर सुखदा को एक बार सिर से पैर तक गौर से देखा। उसके बाद जाते-जाते बोला था, 'अच्छा चलूँ...।'

लेकिन सुखदा ने जाने न दिया। राह रोककर खड़ी हो गयी।

बोली, 'रास्ते का नाम सुनकर ही चले जा रहे हो ? आओगे या नहीं, यह नहीं बताया ?'

सुरेन बोला, 'मुझे काम है, हटो।'

बात सुनकर सुखदा बहुत बिगड़ उठी। बिगड़कर कहा था...।

लेकिन वह सब कब की बात है ? बहुत बाद की। बहुत बाद की बात याद में ही कहना अच्छा रहता है। फिर भी बीच-बीच में आज भी वे सब बातें याद आती हैं। याद आता है पहले जिस दिन वह आयी थी, पहले जिस दिन मौसी ने उसका बदन-हाथ-पैर दबा-दबा कर देखा था।

सहसा दरवाजे के बाहर वही आदमी फिर आया। उसके हाथ में काँसे की थाली और पानी का गिलास था।

सुखदा ने पूछा, 'यह क्या ?'

आदमी बोला, 'दीदीमणि, तुम्हारा खाना।'

पीछे-पीछे भूलो की माँ भी आयी थी। बोली, 'अब खा लो, बच्ची। सारा दिन मेहनत में बीता। उठो, हाथ-मुँह धोकर खा लो।'

सुखदा बोली, 'मैं अभी नहीं खाऊँगी। मुझे भूख नहीं है।'

भूलो की माँ ने गालों पर हाथ लगाया।

'ओ माँ, तुम्हारे लिए गाय के घी में बनाकर परांठा और मांस ले आयी और तुम खाओगी नहीं, कह क्या रही हो ? न खाने पर शरीर कैसे

टेकेगा, बच्ची ? यह मेहनत का धन्धा है। मेहनत करके पेट-भर खाना होगा।'

सुखदा और बहस न कर सकी। बोली, 'यहाँ खाना रख देने को कह दो, रखकर तुम लोग चले जाओ, भूख लगने पर मैं खा लूँगी।'

कहकर करवट बदल लेट गयी।
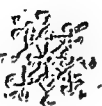
पमिली जब घर लौटी तब तीसरा पहर हो गया था। पुण्यश्लोक बाबू किसी दूसरे की गाड़ी लेकर निकल गये थे। सवेरे क्यों, कल रात से ही पमिली का मन कड़वा हो रहा था। कड़वाहट किसी अकेले के लिए नहीं, लग रहा था कि वह स्वयं ही अपनी सबसे बड़ी शत्रु है। इतने दिनों वह केवल झूठ के ही पीछे भाग रही थी। लग रहा था कि जो उसके अपने हैं, वे भी मानो अपने न हों। और जो पराये हैं वे मानो किसी दिन भी उसके अपने न बनेंगे।

रघु सामने आकर खड़ा हो गया, 'दीदी, खायेंगी नहीं ?'

पमिली बोली, 'न, मुझे एक बालटी गरम पानी बाथरूम में देने को कहो।'

उसके बाद जैसे कोई बात याद आ गयी हो, बोली, 'हाँ रे, बाबा मुझे खोज रहे थे ?'

'हाँ, बाबू पूछ रहे थे—गाड़ी कहाँ गयी ?'

'बाबा गये कैसे ?'

'प्रवेश बाबू की गाड़ी से, प्रवेश बाबू गाड़ी चलाकर ले गये।'

पमिली के अपने कमरे की ओर चलते ही रघु बोला, 'आपकी एक चिट्ठी आयी है।'

पमिली ने हाथ बढ़ा चिट्ठी लेकर देखा कि अमेरिका से आयी है। फ़िलाडेलफ़िया की मुहर थी।

लिफ़ाफ़ा फाड़कर देखा कि चिट्ठी सुव्रत ने लिखी है। सुव्रत ने लिखा है कि उसका कोर्स समाप्त हो गया है। अगले अगस्त में देश लौटेगा।

सुव्रत की चिट्ठी पाकर पमिली को बड़ा अच्छा लगा।

जिस समय घर में, घर के बाहर सब कोई उसके विरुद्ध शत्रुता कर

रहे हैं, ऐसा लग रहा था, ठीक उसी समय सुव्रत की चिट्ठी का आना आशीर्वाद-समान लगा। लगा कि अभी भी कोई ऐसा है जो उनकी ओर है। सुव्रत ही जैसे एकमात्र व्यक्ति है जो उसे बचा सकता है।

रघु फिर कमरे में आया। बोला, 'दीदी, बाबू आपको टेलीफोन पर बुला रहे हैं।'

पमिली को बुला रहे हैं पुण्यश्लोक बाबू! पमिली ने उठकर पास ही के कमरे में जाकर टेलीफोन उठाया।

'हलो।'

उधर से पुण्यश्लोक बाबू के मोटे गले की आवाज आयी, 'कौन? पमिली? कहाँ गयी थी? कब आयी?'

पमिली ने जवाब दिया, 'अभी-अभी।'

'लेकिन कहाँ गयी थी?'

'एक खास काम से।'

पुण्यश्लोक बाबू ने मानो भौंहें टेढ़ी की हों। बोले, 'खास काम से? तुम्हें खास काम क्या था? खास काम ही था तो मुझे बताकर क्यों नहीं गयी? मेरा अपना भी खास काम था। तुम्हें पता है, मैं व्यस्त आदमी हूँ। मुझे बहुत-से काम है। मुझे बहुत काम संभालने पड़ते हैं। अकेला मैं कितनी तरफ देखूँ? उस पर अगर तुम्हें भी सभालना पड़े तो वह मेरे लिए बड़ी मुसीबत है। तुम अब बड़ी हो गयी हो, सब-कुछ समझती हो।'

पमिली बोली, 'तुम्हें और कुछ मुझसे कहना है?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'क्यों, मेरी बातें क्या तुम्हें बुरी लग रही हैं?'

पमिली बोली, 'हाँ, बुरी लग रही हैं।'

'क्यों, बुरी क्यों लग रही है? मैंने क्या तुमसे कुछ गलत कहा? तुम्हारे लिए क्या मैं सोचता नहीं हूँ? तुम कहाँ जाती हो, क्यों जाती हो, यह मुझे सोचना नहीं चाहिए?'

पमिली बोली, 'मेरे बारे में मत सोचो।'

'क्यों न सोचूँ? तुम्हारे लिए सोचना तो मेरा फर्ज है।'

पमिली बोली, 'बार-बार क्यों वही सब बातें कहते हो? मुझे वही सब बातें सुनना अच्छा नहीं लगता।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'ठीक है, मैं तुम से बाद में बात करूँगा। चुनाव आ रहा है, इसी में मैं बहुत व्यस्त हूँ—मैं फोन रख दे रहा हूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू ने टेलीफोन रख दिया। रखकर कुछ देर के लिए मानो निर्जीव हो गये हों। उसके बाद कमरे के दूसरे लोगों की ओर देखा। सभी बहस में उलझे हुए थे। चुनाव में पार्टी से रुपया न मिलने पर खर्च

नहीं चलाया जा सकता।

तो ख़र्च देने के लिए आदमी भी हैं। वे खर्च देना भी चाहते हैं। वे ख़र्च देकर कृतार्थ होंगे। जो भी लगे। दो-तीन लाख रुपयों से कम में चुनाव नहीं होता। गोयनका कॉटन मिल खोल रहे हैं, शुगर मिल बना रहे हैं, कलकत्ता में चौड़ी सड़क के किनारे दस-मंज़िला, ग्यारह-मंज़िला मकान खड़ा करते हैं। सब कामों के समाधान के लिए मिनिस्टरों के चुनाव का खर्च भी देते हैं।

'मिस्टर राय, आप गाड़ी नहीं लाये?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'न, लड़की लेकर चली गयी थी।'

'आपकी लड़की? लड़की की गाड़ी क्या हुई?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मेरी लड़की की गाड़ी को उन लोगों ने जला दिया। लड़की के लिए फिर एक गाड़ी ख़रीदना होगी।'

गोयनकाजी अभी तक पास में बठे सब सुन रहे थे। बोले, 'यह क्या राय साहब, मेरी कम्पनी की छः गाड़ियाँ हैं, आप एक गाड़ी ले जाइये, ड्राइवर भी दिये दे रहा हूँ।'

एक गाड़ी के दाम आज कितने होते हैं! बारह या तेरह हज़ार। उन दिनों उससे ज़्यादा किसी गाड़ी के दाम न थे। उस गाडी से डबल दाम भी मिल जाते अगर एक एक्सपोर्ट लाइसेंस का परमिट मिल जाता। एक इम्पोर्ट लाइसेंस के परमिट के ब्लैक में दाम दो लाख रुपये, और ह्वाइट दाम उसके दस भाग का एक भाग। असल में कोई भी एक परमिट मिलना काफ़ी था। उसके लिए गाड़ी ही क्यों, तुम्हारे लिए एक मकान भी बनवा दे सकता हूँ। जब तक ब्रिटिश गवर्नमेंट थी तब तक हम कुछ न कर सके। तब कांग्रेस को लाखों रुपये चन्दा किसलिए दिये थे? देश स्वतन्त्र कराने के लिए? झूठी बात। हमने चन्दा दिया था नफ़ा कमाने के लिए। कांग्रेस को हमने अपने ही स्वार्थ के लिए उठाया था। क्योंकि कांग्रेस का राज होने से ही हम नफ़ा कमायेंगे—कॉटन मिल, शुगर मिल, जूट मिल बनायेंगे।

'आपकी गाड़ी कहाँ है, गोयनकाजी?'

गोयनकाजी घबड़ाकर उठ खड़े हुए। बोले, 'अभी कम्पनी को टेली-फ़ोन कर रहा हूँ, गाड़ी आ जायेगी।'

इसी तरह चुनाव के पहले गिद्ध श्मशान की ओर बढ़ आते। वे सब-कुछ लूट-पाट करना चाहते हैं। सिर्फ़ ख़बर मिलना चाहिए कि चुनाव आ रहे हैं। वे पहले से ही उसके लिए तैयार रहते हैं। तब हाट-बाज़ार में बताशे बँटते हैं। रुपयों के बताशों की लूट। तब कैनवेसर लोगों को हर

आदमी पर पाँच रुपये। घर-घर जाकर कहना पड़ेगा: 'आप दया करके पुण्यश्लोक बाबू को वोट दें।'

अगर कोई पूछे, 'क्यों मशाई, पुण्यश्लोक बाबू को क्यों वोट दें? उन्होंने हमारा क्या उपकार किया है?'

वालंटियर पाँच रुपये रोज के नौकर। वे कहते, 'उन्होंने देश के लिए अपना सर्वस्व त्याग किया। लाखों रुपये दान में दिये, और छ-सात बरस जेल भी काटी।'

लेकिन जो वोटर है उनमें कोई बुद्धिमान भी रहते हैं। उनमें से कोई पूछता, 'उनकी लड़की इतनी शराब क्यों पीती है, मशाई? विलायती शराब?'

इन सब क्षेत्रों में प्रवेश कूद पड़ता। वह कहता, 'देश के काम के लिए जिन्होंने अपने को समर्पित कर दिया, उनकी क्या घर की ओर नजर रहती है? महात्मा गांधी को क्या अपने लड़कों को आदमी बनाने का वक्त मिला था? सी० आर० दास का लड़का क्या आदमी बना? घर की ओर अगर पुण्यश्लोक बाबू को देखने का वक्त मिलता तो देश का काम न कर पाते। हमारे देशव्रती पुण्यश्लोक राय—उन्हीं पुण्यश्लोक बाबू को ही आप वोट दें। देशव्रती का स्वप्न सफल करें।'

बहुतेरे वोटरों को बात पसन्द आती। वे तालियाँ बजाते। बोलते, 'इस आदमी ने ठीक कहा।'

प्रवेश के आते ही पुण्यश्लोक बाबू ने उत्कंठित होकर पूछा, 'क्या खबर है? हवा किधर की है, कुछ समझ में आया?'

प्रवेश बोला, 'आप नाक में सरसों का तेल डालकर सो जाइये। मैं आज की मीटिंग में हवा बदल आया हूँ। नब्बे प्रतिशत वोट आपके पक्के हैं।'

'पक्के हैं न?'

पुण्यश्लोक बाबू ने मेज के खाने से गड्डी-की-गड्डी नोट निकाले। निकालकर प्रवेश की ओर बढ़ाये।

बोले, 'यह तुम रखो, प्रवेश।'

'इतने रुपयों का क्या होगा? उन्हें हर आदमी के पीछे पाँच रुपये रोज दे रहा हूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'अरे, वह तो उनकी मजदूरी है। और भी कुछ रखो। कुछ पहले गायनकाजी मुझे दे गये हैं। उनका पाप का रुपया कम-से-कम किसी पुण्य-कार्य में खर्च हो।'

कहकर 'हो-हो' कर हँस पड़े।

प्रवेश चला जा रहा था । पुण्यश्लोक बाबू के मन में एक बात आयी । बोले, 'हाँ, पमिली आजकल क्या कहती है ? उसी तरह उदास ही है क्या ?'

प्रवेश बोला, 'नहीं, आजकल अब कहीं आती-जाती नहीं ।'

'निकलती नहीं तो वक़्त कैसे काटती है ?'

प्रवेश बोला, 'मैं भी तो वही कहता हूँ । थोड़ा-बहुत बाहर जाना चाहिए । बिलकुल घर में बैठे रहने से दिमाग़ खराब हो जायेगा ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वह तो है ही, उससे थोड़ा-बहुत निकलने को कहो । बीच-बीच में तुम उसे ज़रा लेकर जाया करो न !'

प्रवेश बोला, 'मुझे तो वक़्त ही नहीं मिलता । मुझे अब भी दस मुहल्ले घूमना बाक़ी हैं ।'

'और उधर बहू-बाज़ार की ओर ? उधर के वोट मेरे लिए पुख़्ता हैं ?'

प्रवेश बोला, 'बहू-बाज़ार के लिए नहीं सोच रहा हूँ । वह तो कांग्रेस का अपना क़िला है ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'पमिली अब और कहीं आती-जाती है ? वहीं जहाँ जाती थी ?'

प्रवेश बोला, 'कहाँ, देखता तो नहीं ? मैं तो जगन्नाथ से पूछता हूँ । जगन्नाथ को बड़ा आराम है । उसे कोई काम ही नहीं करना पड़ता है । गाड़ी भी खाली खड़ी रहती है ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मेरे साथ भी तो जिस तरह बात करती है उससे कुछ समझ में नहीं आता । इस तरह तो ज्यादा दिन नहीं चलेगा । एक अच्छी खबर है, सुव्रत आ रहा है ।'

'ऐसा है क्या ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, पमिली को चिट्ठी लिखी है । अगले अगस्त में ही आयेगा । मैंने चिट्ठी लिख दी है कि जल्दबाज़ी करने की जरूरत नहीं है । अगर और कुछ दिन रहना चाहे तो रहे । तबीयत हो तो कॉन्टिनेन्ट घूमकर देख आये । तब तक मेरे चुनाव का झंझट भी खत्म हो जायेगा । तब मैं भी फ्री रहूँगा ।'

पमिली ज़ीने से उतर रही थी । पुण्यश्लोक बाबू की उधर नज़र गयी ।

पुण्यश्लोक बाबू सीधे लड़की की ओर बढ़ गये ।

बोले, 'यह क्या, अचानक कहाँ चल दीं ?'

पमिली का चेहरा गम्भीर था ।

बोली, 'बाहर।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'दैट्स गुड। तुम्हारे पास रुपये है न ?'

पमिली बोली, 'है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन जल्दी लौटना, पमिली। मैं तुम्हारी राह देखूंगा।'

पमिली ने उस बात का कोई जवाब नहीं दिया। बहुत दिनों के बाद वह निकल रही है। जगन्नाथ गाड़ी लेकर तैयार था। पुण्यश्लोक बाबू और प्रवेश दोनों ही देखते रहे। आज पमिली बहुत सजी-मंवरी है।

पमिली के गाड़ी में बैठते ही जगन्नाथ ने गाड़ी चला दी।

पुण्यश्लोक बाबू ने पूछा, 'पमिली कहां गयी है, बताओ तो, प्रवेश ?'

प्रवेश बोला, 'मैं भी तो वही बात सोच रहा हूं।'

[illegible], या लड़की [illegible] ज्यादा मन [illegible]

उसके बाद बोले, 'इधर आज का अखबार देखा है ?'

प्रवेश ठीक से समझ न पाया। बोला, 'किस खबर की बात कह रहे हैं ? जांच-कमीशन की ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हां, जांच-कमीशन डॉक्टर राय क्यों बिठा रहे हैं, समझ में नहीं आता। हाउस में जब हमारा बहुमत है, तो हम किसकी परवाह करते हैं ? पुलिस हमारे हाथ में, मिलिटरी हमारे हाथ में, फिर किसका डर ? देश के आदमी तो भेड़ हैं। और तो और, अखबार तक हमारे दल के पीछे हैं।'

प्रवेश बोला, 'होगा सर, उसको लेकर सोचने की क्या जरूरत है ? हम सबकी कुछ फिकर न करें। मैं खुद गवाह जमा कर दूंगा। हर एक के हाथ में कुछ रख देना होगा। नाम के लिए हो न जांच, हमारा उससे क्या नुकसान है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'न, नुकसान तो कुछ नहीं, बस एक झमेला है।'

प्रवेश को तब बहुत काम था। वह फौरन अपनी गाड़ी लेकर चला गया।

कलकत्ता के इतिहास में उन्नीस सौ छप्पन का वह साल बहुत कठिन सिद्ध हुआ था। आठ बरस हुए, देश स्वतन्त्र हुआ था। आठ बरस में बहुतेरे बाँध बने, बैराज बने, दामोदर वैली कार्पोरेशन बना। बाहर से जो सारे विदेशी डेलीगेट इस देश को देखने आते वे यह सब देखकर अचम्भे में पड़ जाते। कांग्रेस ने इन आठ बरसों में ही बहुत काम कर डाला था।

यह तो हुआ बाहरी स्वरूप।

किन्तु भीतर का स्वरूप भी बहुत बदल गया था। जो पाकिस्तान से यहाँ आये थे उन्हें अब तक रहने को जगह नहीं मिली। खाने को रोटी, रोज़गार जुटाने के लिए स्थान नहीं मिला। सियालदह और हावड़ा स्टेशन पर विस्थापित मानो चिरस्थायी घर-बार बनाकर बैठ गये थे, उठने का नाम न लेते। उठकर जायें कहाँ—यही पहले बता दो!

सड़कों पर जुलूस निकलते और ठीक राज-भवन के सामने जाते ही पुलिस लाठी मारकर उन्हें हटा देती। लेकिन दूसरे दिन ही फिर वहाँ दूसरा दल जुलूस बनाकर आ जाता। वह भी लाठी की मार से भाग जाता।

वह हो, लेकिन दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट से शुरू कर ठकुरिया तक सारे अंचल में सुखदा, सुरेन, टुलू, प्रवेश, पमिली, पुण्यश्लोक बाबू आदि उस समय अलग-अलग छितराये कलकत्ता की छाती पर जमकर एक दूसरे कलकत्ता के आविष्कार में जुटे हैं। उनके सिर पर डॉक्टर राय थे। लेकिन उस समय उनकी उम्र पचहत्तर बरस की थी।

कोई दरबारी आकर कहता, 'सर, अब आपको ज़रा मुहल्लों में घूमना होगा।'

बात का डॉक्टर राय को जैसे विश्वास न होता। बंगाल के लिए ज़िन्दगी-भर वे इतना करते आये, और अब उनको हाथ जोड़कर घर-घर जाकर वोट माँगना पड़ेगा!

'वह सब मुझसे न होगा, भाई।'

'लेकिन वह किये बिना आपके पक्ष की जीत ज़रा मुश्किल होगी।'

'कैसे?'

'हाँ सर, आप लोगों का कलकत्ता अब वैसा नहीं है। बिलकुल बदल

गया है। पार्टीशन होने के बाद से ही बदल गया है। अब बिलकुल दूसरी हालत है। लोग अब निडर हो गये है। कांग्रेस नाम की लोग खिल्ली उड़ाते है।'

'ऐसी बात है ?'

बहू-बाजार बड़े लोगों का मुहल्ला है। वहाँ के बंगाली पीढ़ियों से उसी एक मुहल्ले मे रहते आये हैं। लेकिन वे भी मानो अब हमेशा से चलती आ रही बात पर श्रद्धा नहीं दिखाते है। उनके ही सामने से जब लाल झण्डा लेकर बड़े-बड़े जुलूस धरमतल्ला की ओर जाते हैं, तब डॉक्टर विधान राय के घर के आगे जाकर ज्यादा चिल्लाते हैं।

कहते हैं :

'मुख्यमन्त्री जवाब दो
नहीं तो गद्दी छोड दो।'

उसके बाद शाम को फिर वे उसी रास्ते से लौटते। एकदम सड़क कँपाते, चिल्लाते हुए श्याम-बाजार के मोड पर जाकर रुकते।

सुरेन निकल रहा था। भूपति भादुडी बोले, 'फिर कहाँ जा रहा है ? कमजोर है, न जा।'

सुरेन बोला, 'जरा जाऊँगा और लौट आऊँगा।'

कहकर चलते-चलते ट्राम की सड़क पर जा पहुँचा। यह किसका जुलूस है ? यह कौन-सी पार्टी है ?'

एक आदमी बोला, 'पी० एस० पी०।'

कितनी तरह की पार्टियाँ हैं। सभी सरकार को हटाना चाहती हैं। एक ट्राम इधर आ रही थी। सुरेन उस पर चढ गया। उसके बाद सुकिया स्ट्रीट के मोड के पास आते ही उतर गया। पुण्यश्लोक बाबू देख पायेंगे तो जरूर पूछेंगे कि इतने दिन कहाँ था ?

तब सुरेन क्या जवाब देगा ?

धीरे-धीरे वह सड़क पर बढने लगा। पुण्यश्लोक बाबू के घर के सामने जाकर देखा—वही एक पुलिस-मैन हमेशा की तरह स्टूल पर बैठा है। सुरेन को पहचानता है, शायद उससे कुछ नही कहेगा। लेकिन अगर पू

तो वह क्या कहेगा ? पुण्यश्लोक बाबू की लड़की पमिली से मिलने आया है। पमिली निश्चय ही घर पर है।

पमिली से मिलकर वह उस दिन की सारी घटना समझाकर बतायेगा। समझाकर टुलू की बात बतायेगा। टुलू के साथ उसके क्या सम्बन्ध हैं, वह साफ़ बता देगा। टुलू को उसने बुलाया नहीं था। टुलू खुद ही अगर आये तो उसमें सुरेन का कोई क़सूर ?

सुरेन सीधा गेट के अन्दर घुस गया। पुलिस वाला उससे कुछ न बोला। बग़ीचे का रास्ता पार कर पोर्टिको था। पोर्टिको के नीचे खड़े होकर किसी को देखने की कोशिश की। लेकिन कोई कहीं न था। पुण्यश्लोक बाबू का कमरा खुला था। वहाँ जाकर देखा, हरिलोचन मुंशी दत्त-चित्त होकर अपना काम कर रहे हैं।

उसके बाद फिर बाहर निकल आया।

सहसा रघु दिखायी दिया।

'रघु, दीदी हैं ?'

रघु बोला, 'नहीं तो, दीदी बाहर गयी हैं।'

सुरेन बोला, 'दीदी घर आयें तो बता देना कि मैं आया था।'

कहकर सुरेन फिर गेट की ओर चलने लगा। मुलाक़ात न हुई, न सही। कम-से-कम पमिली को पता तो चल जायेगा कि वह आया था। यही काफ़ी है। धीरे-धीरे गेट के पास आते ही अचानक एक गाड़ी दिखायी दी। गाड़ी अन्दर आ रही थी। सुरेन ने ग़ौर से देखा कि गाड़ी के अन्दर पमिली है।

सुरेन के गाड़ी को रास्ता देने के लिए एक ओर हटकर खड़े होते ही गाड़ी वहीं रुक गयी।

पमिली ने भी उसे देख लिया।

रुकी गाड़ी के अन्दर से मुंह निकालकर पमिली ने पूछा, 'तुम ?'

सुरेन बोला, 'तुमसे ही मिलने आया था।'

'मुझसे ? क्यों ?'

पमिली गाड़ी का दरवाज़ा खोलकर बाहर उतरी। बोली, 'मुझसे मिलने तुम किसलिए आये ? मुझसे क्या काम है ?'

सुरेन बोला, 'पहले ही मेरा आना उचित था पमिली, मैं पहले ही आता, लेकिन इतने दिनों तक शरीर बहुत कमज़ोर था। अब भी बहुत कमज़ोर है, फिर भी आये बिना न रुक सका।'

पमिली बोली, 'वह तो देख ही रही हूँ, लेकिन क्यों ?'

सुरेन बोला, 'उस दिन तुम इस तरह क्यों चली आयीं ? तुम्हें नहीं

मालूम, तुम्हारे चले आने के बाद से मैं इन दिनों रात को बिलकुल सो नहीं सका।'

पमिली बोली, 'तुमने सोचा है कि यह बात सुनकर मैं सब अपमान भूल जाऊँगी ?'

'अपमान ! अपमान की बात क्यों कह रही हो ? किसने तुम्हारा अपमान किया ? मैंने ?'

पमिली बोली, 'देखो, बहुत दिनों से तुम्हें देखती आ रही हूँ। यह मत समझना कि मैंने तुम्हें पहचानने में गलती की। तुम्हारी तुलना में मेरी हालत में बहुत फ़र्क है। तुम गरीब हो, मैं घटना-चक्र से बड़े आदमी के घर पैदा हुई हूँ। और इसीलिए तुम्हारे साथ मेरे मन के गठन में भी बहुत फ़र्क है। लेकिन फिर भी सोचती थी कि शायद एक जगह हम मिल सकते हैं। नहीं तो तुम्हारे साथ मेरा क्या सम्बन्ध ?'

सुरेन बोला, 'वह मुझे मालूम है।'

पमिली बोली, 'अगर तुम्हें वह मालूम है तो फिर क्यों मुझसे मिलने आये हो ? तुम्हें मेरी क्या ज़रूरत आ पड़ी ?'

सुरेन बोला, 'सिर्फ़ ज़रूरत ही क्या सब-कुछ होती है ? ज़रूरत के सिवा भी तो आदमी बहुत-कुछ चाहता है !'

पमिली बोली, 'बताओ, तुम मुझसे क्या चाहते हो ?'

सुरेन बोला, 'मैं क्षमा चाहता हूँ।'

पमिली बोली, 'क्षमा ?'

सुरेन बोला, 'मैं नहीं जानता कि मैंने क्या कसूर किया है। पर कसूर न करता तो तुम इस तरह खफ़ा होकर क्यों चली आयी ? जो हो, तुम्हारे उस तरह चले आने के बाद से मुझे शान्ति नहीं मिल रही है। जिस तरह भी हो, मुझे तुम थोड़ी शान्ति दो, पमिली। मैं कम-से-कम कुछ चैन पाऊँ। तुम मुझे बता दो कि मैं क्या करूँ ?'

पमिली बोली, 'अभी तुम जाओ सुरेन, मेरा मन इस वक़्त बहुत थका हुआ है। मैं ज़रा अकेली रहना चाहती हूँ।'

सुरेन बोला, 'तुम तो अकेली रहोगी। तुम्हें अकेली रहने के लिए बहुत सुविधा है। जीवन में तुम्हें बहुत-कुछ मिला है। शायद और भी मिलेगा, लेकिन मैं ?'

पमिली बोली, 'तुम्हारे मुँह से ऐसी बातें मुझे सुनने में अच्छी नहीं लगतीं। मेरे सामने ये बातें कभी न कहना। तुम अब जाओ।'

सुरेन बोला, 'मैं रहने तो आया नहीं पमिली, चला ही जाऊँगा। उसके पहले तुम यही कह दो कि तुमने मुझे क्षमा कर दिया।'

पमिली बोली, 'तो मेरे क्षमा करने से तुम्हें स्वर्ग मिल जायेगा ?'

सुरेन बोला, 'तुम्हारे मुंह की बात ही मेरे लिए काफ़ी है। उसके बाद मैं और कुछ न चाहूँगा।'

'लेकिन उसके पहले एक बात बता दो। तुम क्या खुद अपने को क्षमा कर सकोगे ?'

सुरेन कुछ देर पमिली के मुँह की ओर देखता रहा। लगा कि पमिली जैसे उसकी आँखों के आगे एक पहेली बनी खड़ी है।

बोला, 'मेरी बात कहती हो ? लेकिन मैंने अपनी बात तो कभी सोची ही नहीं। आज तुम्हारी बात सोचकर ही मैं यहाँ चला आया।'

पमिली बोली, 'मैंने तो तुमसे पहले ही कह दिया, तुम्हारे साथ मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। मैं भी तुम्हारी कोई नहीं, तुम भी मेरे कोई नहीं।'

सुरेन बोला, 'लेकिन सम्बन्ध तो पहले भी कुछ नहीं था।'

पमिली बोली, 'जो कुछ सम्बन्ध था वह भी तुम सुव्रत के दोस्त थे इसलिए। और कुछ नहीं।'

सुरेन बोला, 'अगर वही हो तो अब भी तो मैं सुव्रत का दोस्त हूँ। सुव्रत यहाँ नहीं है, इसीलिए क्या वह सम्बन्ध समाप्त हो गया ?'

पमिली ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। सिर्फ़ यही बोली, 'तुम्हारी बीमारी की खबर पाकर ही तुम्हारे घर गयी थी। लेकिन देखा कि तुम्हारी सेवा करने वाले लोगों की कमी नहीं है।'

सुरेन बोला, 'इस बात का जवाब यहाँ खड़े-खड़े नहीं दिया जा सकता।'

पमिली बोली, 'मैंने तो इसका जवाब तुमसे माँगा नहीं। और इतनी दूर तकलीफ़ उठाकर मेरे घर आकर मिलने को भी नहीं कहा। तुम अपने को स्वयं अपराधी लगे, इसलिए तुम आये।'

सुरेन बोला, 'अपराधी लगेगा नहीं ? मेरे घर जाकर अकारण टुलू से झगड़ा कर आयीं, वह बेचारी रोते-रोते घर चली गयी। यह तो मेरा ही अपराध है।'

पमिली बोली, 'यही लगता है कि तुम अपनी टुलू की ओर से सफ़ाई बखानने आये हो ?'

सुरेन बोला, 'सचमुच उसका कोई क़सूर नहीं है, पमिली। वह बहुत ग़रीब लड़की है। देवेश आदि की पार्टी में काम करती है। काम करने के मामूली-से रुपये मिलते हैं। उसके साथ तुम्हारी तुलना हो नहीं हो सकती। उसकी बात पर तुम खफ़ा मत हो।'

पमिली बोली, 'मैं अगर खफ़ा ही हूँ तो तुम्हें क्या ?'

मिली बोली, 'तो मेरे क्षमा करने से तुम्हें स्वर्ग मिल जाएगा ?'
सुरेन बोला, 'तुम्हारे मुंह की बात ही मेरे लिए काफ़ी है। उसके बाद
र कुछ न चाहूंगा।'
'लेकिन उसके पहले एक बात बता दो। तुम क्या खुद अपने को क्षमा
सकोगे ?'
सुरेन कुछ देर पमिली के मुंह की ओर देखता रहा। लगा कि पमिली
उसकी आंखों के आगे एक पहेली बनी खड़ी है।
बोला, 'मेरी बात कहती हो ? लेकिन मैंने अपनी बात तो कभी सोची
नहीं। आज तुम्हारी बात सोचकर ही मैं यहां चला आया।'
पमिली बोली, 'मैंने तो तुमसे पहले ही कह दिया, तुम्हारे साथ मेरा
ोई सम्बन्ध नहीं। मैं भी तुम्हारी कोई नहीं, तुम भी मेरे कोई नहीं।'
सुरेन बोला, 'लेकिन सम्बन्ध तो पहले भी कुछ नहीं था।'
पमिली बोली, 'जो कुछ सम्बन्ध था वह भी तुम सुव्रत के दोस्त थे
इसलिए। और कुछ नहीं।'
सुरेन बोला, 'अगर वही हो तो अब भी तो मैं सुव्रत का दोस्त हूं।
सुव्रत यहां नहीं है, इसीलिए क्या वह सम्बन्ध समाप्त हो गया ?'
पमिली ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। सिर्फ़ यही बोली,
'तुम्हारी बीमारी की खबर पाकर ही तुम्हारे घर गयी थी। लेकिन देखा कि
तुम्हारी सेवा करने वाले लोगों की कमी नहीं है।'
सुरेन बोला, 'इस बात का जवाब यहां खड़े-खड़े नहीं दिया जा
सकता।'
पमिली बोली, 'मैंने तो इसका जवाब तुमसे मांगा नहीं। और इतनी
दूर तकलीफ़ उठाकर मेरे घर आकर मिलने को भी नहीं कहा। तुम अपने
को स्वयं अपराधी लगे, इसलिए तुम आये।'
सुरेन बोला, 'अपराधी लगेगा नहीं ? मेरे घर जाकर अकारण टुलू
से झगड़ा कर आयीं, वह बेचारी रोते-रोते घर चली गयी। यह तो मेरा
ही अपराध है।'
पमिली बोली, 'यही लगता है कि तुम अपनी टुलू की ओर से सफ़ाई
बखानने आये हो ?'
सुरेन बोला, 'सचमुच उसका कोई क़सूर नहीं है, पमिली। वह बहुत
ग़रीब लड़की है। देवेश आदि की पार्टी में काम करती है। काम करने के
मामूली-से रुपये मिलते हैं। उसके साथ तुम्हारी तुलना ही नहीं हो सकती।
उसकी बात पर तुम खफ़ा मत हो।'
पमिली बोली, 'मैं अगर खफ़ा ही हूं तो तुम्हें क्या ?'

सुरेन बोला, 'यह भी तुम्हारी गुस्से की बात है। तुम सिर्फ यह समझ लो पमिली, कि संसार में जिस तरह मैं अनाथ हूँ, वह भी प्राय: वैसी ही है। उसके या मेरे ऊपर गुस्सा करने से हम दोनों को ही दुःख होगा। उससे अच्छा एक काम करूँ। न हो तो एक दिन उसे तुम्हारे पास ले आऊँगा, वह अपने मुँह से ही तुमसे सब साफ़-साफ़ कह देगी। तुमसे माफी चाहेगी।'

पमिली बोली, 'न, उस तरह की भद्दी बात कभी न करना, मैं तुम्हे चेतावनी दिये दे रही हूँ।'

सुरेन बोला, 'न, तुम आपत्ति न कर सकोगी। देखोगी कि वह कितनी अच्छी लड़की है।'

'तुम्हारे साथ उसका कितने दिनों का परिचय है?'

सुरेन बोला, 'ज्यादा दिनों का नहीं। लेकिन कम दिनों में ही समझ गया कि बंगाल में उस जैसी लड़कियों की संख्या ही अधिक है। उन्हें देखकर ही समझ में आ जाता है कि बंगाली कितने ग़रीब हैं। उनकी हालत सुधरे बिना बंगाल की हालत भी कभी अच्छी न होगी, यह मालूम है? उसके पिता अंधे हैं, उसकी छोटी बहन घरों में नौकरानी का काम करती है—फिर वे लोग भी तो कभी भले लोग थे, उनकी तबीयत अच्छे कपड़े-लत्ते पहनने की होती है, अच्छा खाने को तबीयत भी होती है।'

पमिली सहसा बोली, 'तुम अचानक उनके जुलूस में क्यों गये थे?'

सुरेन ने पूछा, 'क्यों, जाकर क्या बहुत बुरा किया?'

पमिली बोली, 'लेकिन उस दिन अगर पुलिस की गोली तुम्हारी छाती में लग जाती?'

सुरेन बोला, 'तो क्या समझ रही हो कि वह बात मैंने नहीं सोची थी? बहुत बार सोची थी। पर पता नहीं कि तुम समझोगी या नहीं, उनके साथ मिलकर मुझे बस यही लगा था कि सिर्फ खा-पहनकर जिन्दा रहने में मनुष्य की कोई सार्थकता नहीं। किसी के लिए कुछ कर सकने पर, मनुष्य के किसी काम आने पर मेरा उपयोग है। मैं इसीलिए उनके साथ गया था।'

'लेकिन तुम्हें पता है, उन लोगों ने मेरी गाड़ी भी जला दी?'

सुरेन बोला, 'मैंने वह बाद में सुना, सुना कि उससे तुम्हारा कोई नुकसान नहीं हुआ, नुक़सान हुआ तुम्हारी गाड़ी का। लेकिन उस गाड़ी का रुपया तो बीमा कम्पनी दे देगी।'

पमिली बोली, 'वह तो देगी सही, लेकिन मेरा भी तो नुकसान हो सकता था?'

सुरेन बोला, 'वह बात भी सोची थी। लेकिन देखो, सोचने को तो

तुम्हारी तलाश की। कहीं भी तुम न मिलीं। मिस्टर राय तो तुम्हारे लिए बहुत चिन्ता में पड़े हैं। तो शायद मिस्टर सान्याल के साथ गयी थीं?'

सुरेन बोला, 'नहीं, मैं तो अभी आया हूँ।'

पमिली बोली, 'उसके साथ मैं निकलूँगी तो उसमें हर्ज क्या है?'

प्रवेश ने अपने को संभालते हुए कहा, 'न, न, मैं क्या वह कह रहा हूँ?'

पमिली बोली, 'हाँ, तुम तो वही कह रहे हो। बात को घुमा-फिरा कर कहने से क्या फ़ायदा? देखो प्रवेश, तुमसे एक बात कहे देती हूँ, मेरे किसी काम में तुम दखलन्दाज़ी मत किया करो। खबरदार, मैं तुम्हें सावधान किये दे रही हूँ, नहीं तो मैं तुम्हें बरदाश्त न कर सकूँगी। मैं जहाँ जब तबीयत होगी जाऊँगी, जिसके साथ तबीयत होगी जाऊँगी। उसमें तुम्हें बोलने का कोई हक़ नहीं है। यह बात तुम याद रखो।'

प्रवेश सेन पमिली से यह अचानक आघात पाकर लड़खड़ाकर कुछ कहने जा रहा था लेकिन उसके पहले ही पमिली ने उसे रोक दिया।

बोली, 'चुप रहो, तुम्हारी और कोई बात सुनना नहीं चाहती। जाओ, चले जाओ यहाँ से।'

प्रवेश डर गया।

कहने लगा, 'पमिली, मैं...।'

पमिली चीख उठी, 'मैं कहती हूँ, कोई बात न करो, बाहर निकल जाओ!'

प्रवेश डर से दो क़दम पीछे हट रहा था।

पमिली फिर चिल्लायी, 'हटो, मेरी आँखों से दूर हो जाओ, भागो!'

पमिली का यह रूप सुरेन ने पहले कभी नहीं देखा था। डर के मारे वह थर-थर काँपने लगा। ज़रा आगे बढ़कर बोला, 'पमिली! ठहरो, ठहरो, मेरा ही क़ुसूर है, मैं चला जा रहा हूँ।'

पमिली ग़ुस्से के मारे सुरेन की शर्ट का कॉलर पकड़, एक किनारे कर बोली, 'तुम ठहरो।'

उसके बाद वह प्रवेश की ओर झपटी। बोली, 'भागो, बदमाश, कुत्ते, भागो!'

प्रवेश और चारा न देख गाड़ी पर बैठने जा रहा था। लेकिन उसके पहले ही गोयनकाजी की दी हुई नयी गाड़ी पर चढ़कर पुण्यश्लोक बाबू अन्दर घुसे। सामने का हाल देखकर उन्होंने समझा कि कुछ गड़बड़ हो गयी है।

झटपट गाड़ी से उतरते ही लड़की की ओर देखकर कहा, 'क्यों, हुआ क्या? प्रवेश को चले जाने को क्यों कह रही हो? उसने क्या किया,

पमिली ?'

पमिली का उस समय भी गुस्सा शायद कम न हुआ था। वह उस समय भी प्रवेश की ओर चिल्लाकर कह रही थी, 'भागो प्रवेश, मैं कह रही हूँ, चले जाओ !'

पुण्यश्लोक बाबू ने लड़की का हाथ पकड़ लिया। बोले, 'किससे क्या कह रही हो, पमिली ? वह प्रवेश है।'

पमिली उस समय गुस्से में भरी हुई थी। बोली, 'पहले वह निकल जाये, तब तुम्हारी बात का मैं जवाब दूंगी। पहले वह यहाँ से निकल जाये।'

'लेकिन उसने किया क्या, यह तो बताओगी ?'

पमिली ने उस बात का जवाब न देकर कहा, 'पहले वह निकल जाये, गुंडा ! सिर्फ मुझे तंग करने आता है। उसने समझा क्या है, मैं उससे शादी करूँगी ? मैं अगर सुरेन के साथ बाहर जाऊँ तो उसे क्या कहना है ? वह होता कौन है ?'

सुरेन ने और सब न सुना। सब-कुछ सुनने के पहले वह सबकी नजर बचा चुपचाप बागीचा पार कर गेट से हो बाहर सड़क पर आ पहुँचा। उसके बाद दुर्बल मन और शरीर से धुँधले अँधेरे में प्रवेश किया। उसके मन में उठने लगा, वह क्यों इस वक्त पमिली के घर आया था ? वह अगर न आता तो यह घटना न घटती। पमिली ने जो कहा—शायद वही ठीक हो, शायद इन्हीं सब कारणों से पमिली को कुछ अच्छा न लगता हो। इसीलिए शायद वह बीच-बीच में घर से बाहर चली जाती हो। इसीलिए शायद उसे इतना दुख हो रहा हो।

सोचते-सोचते प्रायः ट्राम की सड़क के पास आ गया। तभी पुण्यश्लोक बाबू के नौकर ने आकर पुकारा, 'दादा बाबू, दादा बाबू...!'

सुरेन ने पीछे घूमते ही उसे पहचाना। बोला, 'क्या ?'

नौकर बोला, 'आपको बाबू बुला रहे हैं।'

'क्यों ?'

'यह नहीं मालूम।'

सुरेन फिर लौटा। उसे सहसा पुण्यश्लोक बाबू ने फिर क्यों
उससे उनको क्या काम है ?

लेकिन बागीचे में आने पर वहाँ कोई दिखायी न
'बाबू अन्दर हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू के कमरे में घुसते ही उसने देखा कि

हैं। विलकुल उनके नजदीक प्रवेश सेन है। और पीछे हरिलोचन मुंशी दत्त-चित्त अपना काम कर रहे हैं। लेकिन पुण्यश्लोक वावू का मुँह दूसरे दिनों से अधिक गम्भीर था।

सुरेन के घुसने पर और दिनों की तरह पुण्यश्लोक वावू ने उससे बैठने को भी न कहा। सिर्फ़ गम्भीर आवाज़ में वोले, 'देखो, इसके वाद किसी भी दिन मैं तुमको इस घर में न देखूं।'

सुरेन चुपचाप वात सुन रहा था।

पुण्यश्लोक वावू फिर वोले, 'यही आख़िरी वार है। समझे?'

फिर भी सुरेन ने किसी वात का जवाव न दिया।

पुण्यश्लोक वावू ने जोर से मेज़ पर घूंसा मारा।

वोले, 'वात का जवाव क्यों नहीं दे रहे हो? सुना, या नहीं?'

सुरेन वोला, 'हाँ, सुना।'

पुण्यश्लोक वावू वोले, 'यह मैं तुम्हें आखिरी चेतावनी दे रहा हूँ। फिर अगर कभी तुम्हें यहाँ देखूंगा तो मैं तुम्हें गिरफ़्तार करा दूंगा। मैं अपने गेट के सिपाही को भी यही ऑर्डर दे दूंगा। थाने पर भी मैं अभी यह ऑर्डर दिये दे रहा हूँ। जाओ!'

सुरेन फिर न रुका। घूमकर धीरे-धीरे फिर वह वही वाग़ीचा पार कर सड़क पर आ गया। दिमाग़ में पुण्यश्लोक वावू की अन्तिम वातें उस वक़्त भी गूंज रही थीं: यह मैं तुम्हें आख़िरी चेतावनी दे रहा हूँ, फिर अगर कभी तुम्हें यहाँ देखूंगा तो मैं तुम्हें गिरफ्तार करा दूंगा। मैं अपने गेट के सिपाही को भी यही ऑर्डर दे दूंगा। थाने पर भी मैं अभी यह ऑर्डर दिये दे रहा हूँ। जाओ।

यह उसी सन् 1956 की वात है। भारतवर्ष के इतिहास ने तव अनेक संग्रामों का पथ रौंदकर नयी स्वतन्त्रता का सूर्योदय देखा था। वंगाल का आदमी, यह प्रदेश भारतवर्ष का एक छोटा टुकड़ा होने पर भी जाग रहा था जवकि दिल्ली, गुजरात, वम्बई, उड़ीसा, मध्य प्रदेश उस समय भी सो ही रहे थे। उन्होंने केवल यही जाना था कि देश स्वतन्त्र हुआ है। देश में पंच-वर्षीय योजनाएँ चली हैं। कुछ दिनों और धीरज रखो। और कुछ दिनों

कम खाओ, और कुछ दिनों मेहनत करो, फिर तुममें से हर-एक के लिए मकान होगा, हर-एक को भरपेट खाना मिलेगा !

ये सब बातें जिनके लिए कही गयीं उन्होंने नेहरूजी की बातों पर विश्वास किया। उन्होंने एक बार भी सवाल नहीं किया कि तुम क्यों धीरज नहीं रखते ? तुम क्यों मन्त्री बनने के लिए धक्कमधुक्का कर रहे हो ? अपना मन्त्रित्व सुरक्षित रखने के लिए तुम क्यों अपने अनुगतों को लाइसेंस-परमिट देने की परेशानी मोल लेते हो ? उन्होंने एक बार भी नहीं पूछा, तुम भी क्या कम खाते हो ? क्या तुम भी मेहनत करते हो ?

उन्होंने सवाल नहीं किया सही, पर सवाल किया बंगाल के लोगों ने।

इसीलिए बंगाल में ही पहले बन गयीं एकाधिक पार्टियाँ। इन्हीं सब पार्टियों के मेम्बर पहले कांग्रेस के ही मेम्बर थे। लेकिन अब उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी है। उन्होंने कहा, 'कांग्रेस है बिड़ला-गोयनका की दलाल।'

डॉक्टर बिधान राय के कानों में भी बात पड़ी। सभी ने पूछा, 'तो क्या होगा, डॉक्टर राय ?'

डॉक्टर राय बोले, 'बात तो झूठी नहीं है। जो इतने दिनों तक कांग्रेस को पैसे देकर मदद करते आये, अब अंग्रेजों के चले जाने के बाद वे गर्दन दबायेंगे ही। उन्हें रोका नहीं जा सकता।'

'तो ?'

डॉक्टर राय बोले, 'अब पार्टी टूट जायेगी।'

पुण्यश्लोक बाबू ने पूछा, 'फिर आप क्या करने को कह रहे हैं ?'

डॉक्टर राय बोले, 'फिर की बात मैं नहीं सोचता, वह तुम लोग सोचो। मेरे शासन के तो ये अन्तिम दिन हैं। मैं इतने दिनों जिन्दा ही नहीं रहूँगा।'

इसी से सब समझ गये कि कठिन दिन निकट आ रहे हैं। देवेश ने ही सुरेन को खबर दी थी। सुरेन घर पर अपने बिस्तर पर लेटा था। सहसा कुछ लोगों का एक दल आ पहुँचा। बोले, 'भूपति भादुड़ी बाबू हैं ?'

अन्दर खबर गयी। पहुँचते ही भूपति भादुड़ी आ पहुँचे।

'आपका ही नाम भूपति भादुड़ी है ? हम आये हैं वोट के लिए।'

'वोट ?' भूपति भादुड़ी ताज्जुब में पड़ गये। 'चुनाव हो रहा है क्या ?'

भूपति भादुड़ी चुनाव जैसे अनावश्यक काम के लिए दिमाग पर बहुत बोझ नहीं डालते।

सब आदमी ने कई कागज दिये। छपे कागज। 'इन्हें पढ़कर देखेंगे। और कांग्रेस के सम्बन्ध में आपसे और कुछ न कहना होगा। आप समझदार आदमी हैं। सभी तो जानते हैं। इस कांग्रेस के लिए तमाम लोगों ने

न्दगी दी है। अनगिनत परिवार समूल नष्ट हो गये, वह तो आप जैसे
ढ़-लिखे आदमी से अपरिचित नहीं है। और पुण्यश्लोक बाबू की तरह
र्वस्व त्यागी देशनायक की बात ज़्यादा क्या कहूँ! वे वकालत करते थे।
कालत में काफ़ी कमाते थे। इस कांग्रेस की पुकार पर ही उन्होंने सब
यागकर अब देश-सेवा में अपने को लगा दिया है। पिछली बार आपने
इन्हीं पुण्यश्लोक बाबू को ही वोट दिया था। इस बार भी आशा करते हैं,
आप उन्हें वोट देना न भूलेंगे।'

'अच्छा, लावण्यमयी दासी का नाम वोटर्स लिस्ट में है। वय पचहत्तर।
यह हैं न ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हैं, नहीं तो जायेंगी कहाँ, मशाई ? उन्हीं का तो
अपना घर है यह। लेकिन वे खाट पकड़े हैं, वोट देने न जा सकेंगी।'

सज्जन बोले, 'उससे क्या हुआ ? हम उन्हें पोलिंग तक ले जाने की
व्यवस्था कर देंगे। हम उनके लिए गाड़ी ले आयेंगे। स्ट्रेचर लायेंगे, डॉक्टर
लायेंगे। आपको कुछ फ़िक्र नहीं करना है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'न, न, वह सब नहीं होगा मशाई, डॉक्टर ने
हिलने-डुलने को बिलकुल मना कर दिया है।'

तभी अचानक सुरेन से सामना हो गया।

'आप ?'

'तुम ?'

प्रवेश भी ताज्जुब में पड़ गया। सुरेन भी अवाक्।

प्रवेश बोला, 'यह तुम्हारा घर है क्या ?'

सुरेन बोला, 'हाँ, मैं इसी घर में रहता हूँ।'

'तो यह लावण्यमयी दासी तुम्हारी कौन हैं ?'

सुरेन बोला, 'मेरी माँ जी हैं।'

'किस तरह की माँ जी ?'

सुरेन बोला, 'मेरी अपनी कोई नहीं। लेकिन वह मेरे परम आत्मीयों
से भी बढ़कर हैं। मेरी अपनी माँ नहीं हैं, इसीलिए मैं इन्हें ही अपनी म
की तरह समझता हूँ।'

प्रवेश बोला, 'ओ !'

बिलकुल इसी प्रवेश के आगे ही उस दिन पुण्यश्लोक बाबू ने उसे घ
से भगा दिया था, वह प्रवेश मानो भूल ही गया था—ऐसा दिखाया
सुरेन ने अच्छी तरह प्रवेश सेन को देखा। वह जैसे एकदम दूसरा आद
था। यही शायद असली दलाल हो। और दिनों सूट पहने रहते। अ
वोट माँगने के वक़्त खद्दर का धोती-कुर्ता पहने हैं। चप्पल पहनी है

चुनाव समाप्त होने के बाद फिर यह कोट पहनेंगे, पेंट पहनेंगे। तब फिर किसी को पहचानेंगे भी नहीं!

'अच्छा, यह जो सुखदा दासी का नाम देख रहा हूँ। यह हैं न?'

सुरेन बोला, 'नहीं।'

'यह कहाँ हैं?'

जवाब दिया भूपति भादुड़ी ने। कहा, 'वह अपनी ससुराल गयी हैं। उनकी शादी हो गयी है।'

प्रवेश सेन दल-बल लेकर आ रहा था। बाहर उनकी गाड़ी खड़ी थी। भूपति भादुड़ी भी साथ-साथ गये।

आँगन में उस वक़्त अकेला सुरेन उधर देख रहा था। सहसा पास आकर सुधन्य खड़ा हो गया। अभी तक उसने भी सारी बातचीत सुनी थी। बोला, 'कैसे हैं, दादा? सुना, आपको पुलिस की गोली लगी थी।'

सुरेन पहचान गया। बहुत दिन बाद भेंट हुई थी।

बोला, 'बूढ़े बाबू का क्या हाल है?'

सुधन्य बोला, 'उन्हें देखने ही तो रोज आता हूँ। और ज्यादा दिन नहीं रहेंगे। आपकी बात अक्सर करते रहते हैं। आप कभी उनसे मिल लें।'

सुरेन बोला, 'मैं तो अभी चलता हूँ। चलिये न!'

सुधन्य बोला, 'पता है, उनसे अब कोई नहीं मिलता? आजकल मैं किसी से कुछ नहीं कहता। खुद ही दवा-दारू, बनियाइन-धोती उनके लिए खरीद लाता हूँ।'

सहसा पीछे से ज़ोर से देवेश की आवाज़ सुनायी पड़ी। वह शोर मचाता हुआ दल लेकर आ पहुँचा।

बोला, 'क्या बात है, रे सुरेन? कैसा है?'

सुरेन देवेश को देखकर भौंचक्का हो गया। बोला, 'जेल से कब आया?'

देवेश बोला, 'आज। आज लौटते ही तेरी खबर मिली।'

'किससे?'

देवेश बोला, 'टुलू से। टुलू और तेरे बीच क्या हो गया है, रे? तूने क्या किया?'

उसके बाद बोला, 'वोट के लिए निकला हूँ। पूर्ण बाबू इस बार पुण्यश्लोक बाबू के मुक़ाबले में खड़े हैं।'

सुरेन बोला, 'यहीं अभी ज़रा पहले ही पुण्यश्लोक बाबू की ओर से लोग आये थे। प्रवेश सेन को पहचानता है न? खद्दर का धोती-कुर्ता पहन-

कर विलकुल देशी वनकर आया था।'

देवेश वोला, 'इस वार अव पुण्यश्लोक वावू जीत ही नहीं सकते। हमने चारों ओर अभियान शुरू कर दिया है। लोग कांग्रेस के झूठे वादों में अव नहीं आयेंगे। तेरा मामा किसे वोट दे रहा है?'

सुरेन वोला, 'मामा भाई पुराना आदमी है। कांग्रेस के सिवा किसी को नहीं जानता। और सारी पार्टियों को गुंडों का दल कहता है। मैं उस दिन तुम्हारे जुलूस में गया था, इसलिए वहुत डाँटा था। कितनी कोशिश की घर छोड़ने की, लेकिन देखो, फिर यहीं आना पड़ा।'

देवेश सुरेन को वुलाकर थोड़ी आड़ में ले गया। साथ के लड़के कुछ दूर खड़े थे। अभी तक सुधन्य पास ही खड़ा था। देवेश ने पूछा, 'यह छोकरा कौन है?'

सुरेन वोला, 'वह इस घर का नहीं है। यहाँ उसका वोट भी नहीं है।'

देवेश वोला, 'अच्छा ही हुआ। तुझसे चुपचाप थोड़ी वातें करनी हैं। तू वता कि टुलू से क्या झगड़ा किया था? वह अव पहले की तरह नहीं है। एकदम वदल गयी है। तेरी वात उससे पूछी तो वोली, कुछ पता नहीं। तुझसे क्या अव उसकी भेंट भी नहीं होती?'

सुरेन ने सारा मामला देवेश को साफ़-साफ़ वता दिया। उसके वाद वोला, 'इसमें मेरा क्या दोप है भाई, वता तो? मैंने तो कोई ग़लती नहीं की। वीच में वस एक ग़लतफ़हमी हो गयी। सभी ने मुझे ज़िन्दगी-भर ग़लत ही समझा, भाई।'

देवेश वोला, 'तो तेरे पास ही लड़कियाँ इतना क्यों आती हैं? पमिली मिनिस्टर की वेटी है, वे लोग दूसरी पार्टी के हैं। तू तो उनके पाँवों के नाख़ून वरावर भी नहीं है, फिर भी वह क्यों आती है? क़सम से, देखता हूँ कि तू तो विलकुल कलियुग का कन्हैया हो रहा है! मेरे पास तो कोई नहीं आतीं। कोई लड़का-लड़की मेरी छाया के पास भी फटकने की हिम्मत नहीं करते। असल में सव तेरा ही क़सूर है!'

सुरेन ने पूछा, 'मेरा क़सूर कैसे है?'

देवेश वोला, 'तो तू पमिली के पास क्यों जाता है? मैंने तुझ से मना किया न, कि वे भिन्न क्लास के लोग हैं, उनके साथ हमारा मेल नहीं खाता। तूने क्या सोचा है कि वह तुझसे शादी करेगी। उससे शादी करके तुझे उसके वाप की जायदाद मिलेगी? सो वह वेकार है, यह वताये देता हूँ।'

सुरेन शर्म से पानी-पानी हो गया। वोला, 'धत्, तू कहता क्या है?'

देवेश वोला, 'मैं जो कह रहा हूँ सही कह रहा हूँ। देवेश कभी किसी

का लिहाज रखकर बात नहीं करता। सब बात सीधे-सीधे कह देने में डर किस बात का ? इस बार चुनाव में हम अपनी ताकत दिखला देंगे। अब कांग्रेस सिर उठाकर खड़ी नहीं रह सकेगी। सुना है न, इस बार जाँच-कमीशन बैठ गया है ? विधान राय बात-बात कर मानने पर लाचार हुए।'

सुरेन बोला, 'बताओ तो, क्यों राजी हुए ?'

देवेश बोला, 'जबरदस्त का ठेंगा सर पर! लोगों को बन्दूक और कितने दिनों बहलावे में रखेंगे ? अब लोगों ने कहना शुरू कर दिया है, कांग्रेस राज से ब्रिटिश राज अच्छा था। नहीं तो सुना तो है कि विधान राय ने कभी भी चुनाव में वक्त सड़क की मिट्टी पर पैर नहीं रखा। अब बड़ा-बाजार में घर-घर में हाथ जोड़कर धरना देना शुरू कर दिया है। यही हार है। बन्दूक से क्या आदमी का पेट भरा जाता है ?'

उसके बाद प्रसंग बदलकर कहा, 'तुम्हें भी वोट माँगने चलना होगा। घर-घर हमारे साथ घूमना पड़ेगा।'

सुरेन बोला, 'तो घूमूँगा।'

देवेश बोला, 'फिर अब की जब आऊँगा, उस दिन तुझे साथ लेकर टुलू के घर जाऊँगा। मना नहीं कर सकेगा। टुलू से तुझे माफी माँगना होगा, यह कहे रखता हूँ। बार-बार पमिली के घर जा सकता है और टुलू के घर तो एक बार भी नहीं जा सका। क्यों टुलू आदि गरीब है, इसीलिए ?'

उसके बाद थोड़ा दम लेकर कहा, 'तुमसे आज यह कहे जा रहा हूँ—इन बेटे लोगों के दिन खतम हो गये हैं। तब वह पुण्यश्लोक राय गली-गली में भीख माँगते फिरेंगे। तब पमिली की सारी शोखियाँ निकल जायेंगी। तब कहाँ होगी गाड़ी, साड़ी और लिपस्टिक—सब देख लेंगे!'

बात करते-करते बहुत वक्त बीत गया। देवेश बोला, 'अब चलूँ, तू जरा अच्छा हो जा, तब तुझे लेकर मुहल्ले-मुहल्ले घूमेंगे। अब चलूँ।'

यह कहकर जिस तरह शोर मचाते हुए आये थे, उसी तरह फिर शोर करते-करते चले गये।

सुधन्य उस समय नहीं था। कोई भी न था, आँगन सूना था। सुरेन देवेश आदि की ओर देखता कुछ देर खड़ा रहा। देवेश ने पढ़ना-लिखना न सीखा, नौकरी-चाकरी भी न की। फिर कहाँ से वह इतनी शक्ति पाता है ? पुण्यश्लोक बाबू गली-गली जाकर भीख माँगेंगे। यह कहता क्या है ? इतने दिन जेल काटकर, गोली खाकर, लाठी खाकर भी न डरा। जितनी उमर होती जा रही है, उतना ही शोर करना बढ़ता जा रहा है।

और साथ-ही-साथ याद पड़ी टुलू की वात।

वड़ा आदमी होने से ही वह उस दिन पमिली के यहाँ गया था! और ग़रीब होने से टुलू के घर नहीं गया। शायद देवेश की वात झूठी नहीं है। शायद सच ही है। इसीलिए तो सुरेन को वह सज़ा मिली। उन लोगों के घर जाना सदा के लिए वन्द हो गया। पुण्यश्लोक वावू ने उसे हमेशा के लिए घर से भगा दिया था। अव पमिली से कभी भेंट न होगी। पमिली के साथ उसका सव सम्बन्ध हमेशा के लिए टूट गया।

दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट की गली का जीवन वहुत उलझन भरा था। इसके पहले सुखदा ने एक और गली में दिन विताये थे। लेकिन वह इस तरह की न थी। यहाँ दिन के वक़्त कोई शोर-शरावा न रहता। लेकिन शाम होने के वाद से एक दूसरा ही हाल हो जाता। यह व्रिटिश जमाने में भी जैसा था, अव इस 1956 साल के कांग्रेस राज में भी वैसा ही है। हू-व-हू एक-सा! कोई अन्तर नहीं।

वह वुढ़िया नौकरानी रोज आती। आकर सुखदा से प्रेम प्रदर्शित करती। कहती, 'सोचो मत दीदी, फ़िकर करने से सिर्फ़ शरीर ही विग-ड़ेगा। उससे अच्छा है, साज-सँवार करो। कल का जूड़ा पसन्द आया था न? आज दूसरी तरह का जूड़ा वना दूँगी। इसका नाम है प्रेमियों को लुभाने वाला जूड़ा!'

वुढ़िया वुरी न थी। नयी-नयी वातें सुनाती। अच्छा-अच्छा खाना ला देती। घी में तला पराँठा, उसके साथ अण्डे की चिड़चिड़ी—यह सव नये खानों का नाम। ये सव नाम सुखदा ने कभी न सुने थे।

उसके वाद साज-सँवार होने के वाद वह औरत आती। उसकी उम्र काफ़ी हो गयी थी लेकिन सज-सँवरकर, जूड़ा वाँधकर, चेहरे पर रंग लगाकर उम्र को कम करके दिखाती थी।

आते ही कहती, 'ओ माँ, क्या हुआ? लड़की, चुप क्यों वैठी है? रेडियो खोल दो न!'

कहकर खुद ही आगे वढ़कर रेडियो खोल देती। और साथ-ही-साथ गाने वजने लगते।

औरत कहती, 'अकेले नहीं रहते, समझी? औरतें अकेली नहीं रहतीं। अकेले रहने से दिमाग में तरह-तरह के अजीब-अजीब खयाल आते हैं। उनसे मन खराब हो जाता है।'

उसके बाद अचानक शायद सुखदा के जूड़े की ओर नजर पड़ जाती। कहती, 'ओ माँ, यह क्या बाँधने का ढंग है? यह किसने बाँधा है? अरी बूढ़ी, ओ बुढ़िया!'

कहकर चीखकर बुढ़िया नौकरानी को बुलाती।

बुढ़िया नौकरानी के आते ही कहती, 'यह क्या जूड़ा बाँधने का ढंग है भला? हमारी बेटी गँवई-गँवार लगती है। मैं कहती हूँ, मेरी भली-मानुस बेटी को पाकर जैसा-तैसा जूड़ा बाँध देती है। जूड़ा होता है औरतों की शोभा। वह ऐसे बनाना होता है?'

बुढ़िया नौकरानी कहती, 'यह तो प्रेमी को लुभाने वाला जूड़ा है, मौसी।'

मौसी एकदम झटके से सुखदा का जूड़ा खोलकर कहती, 'मर मुँहजल, यह जूड़ा देखकर प्रेमी खाक लुभायेगा, प्रेमी भागकर चला जायेगा। देख न, मैं बाँध के दिखाती हूँ।'

कहकर मौसी खुद ही सुखदा का जूड़ा बाँधने बैठती।

उसकी जैसी तबीयत होती वैसे ही वे सजा देतीं। दोनों वक्त नल के नीचे ले जाकर सारे बदन में साबुन घिस-घिसकर नहला देतीं।

मौसी कहती, 'मेरे आगे शरम मत करो, मैं तुम्हारी मौसी लगती हूँ। मैं कुछ भी गन्दा-मैला नहीं देख सकती। गन्दगी मेरी आँखों में जहर है।'

स्नान करने के बाद साया-ब्लाउज देती, साड़ी देती। पाउडर-स्नो-क्रीम-पोमेड देती।

भीगे गमछे से रगड़-रगड़कर पहले ही दिन माँग का सिंदूर पोंछ डाला था।

मौसी बोली, 'भतार अब देखता नहीं तो भतार की निशानी न रखना ही अच्छा। कहावत है न—खाना देने को न भतार घूँसा मारने को भगवान! तुम्हारा वही है। वह जब तुम्हारा खयाल नहीं रखता, तुम क्यों उसकी फ़िकर करो? यहाँ चली आयी, बड़ा अच्छा किया। जब ऐसा शरीर है तो ढेरों भतार आयेंगे। एक भतार की क्या फ़िक्र!'

कहकर महावर की शीशी निकालकर सुखदा के पैरों में डालता लगा देती। लगाते-लगाते कहती, 'मैं गन्दा-मैला नहीं देख पाती। गन्दगी मेरे आँखों में जहर है।'

शाम के पहले ही सुखदा की सेवा ज़्यादा शुरू हो जाती। ऐसा प्यार तो ज़िन्दगी में माँ जी ने भी उसे नहीं दिया था। जरा रात होते ही पास के कमरे से गाने-बाजने की आवाज़ आने लगती।

इन कुछ दिनों में ही सुखदा इतना तो समझ गयी कि और जो भी हो, यह मुहल्ला भला नहीं है।

उसके बाद फिर एक दिन भूपति भादुड़ी आये।

कमरे में घुसते ही भूपति भादुड़ी बोले, 'कैसी हो, बेटी ?'

सुखदा बोली, 'अच्छी हूँ।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मुहल्ला तो अच्छा नहीं है, लेकिन ये लोग भले हैं। इसीलिए तुम्हें यहाँ रखा है। कोई असुविधा होते ही मौसी को पुकार लेना, समझीं ? मौसी बड़ी अच्छी हैं, मौसी कहती हैं कि तुम भी उन्हें बड़ी अच्छी लगीं।'

सुखदा ने पूछा, 'मुक़दमा और कितने दिनों चलेगा ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मुक़दमे के लिए तुम्हें क्या चिन्ता है ? उसके लिए तो मैं हूँ। फिर तुमने तो अपना अपराध मान ही लिया है।'

'उससे क्या होगा ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'उससे और क्या होगा ? कुछ न होगा। बेक़सूर छोड़ देंगे। तुम्हारी उमर कम है, उस पर दूसरों ने तुम्हें चोरी के लिए उकसाया था। जिन्होंने उकसाया था, वे ही असली अपराधी हैं, उन्हें ही सजा होगी।'

'वह छोटे-दा ? उनका क्या होगा ?'

'नरेश दत्त की बात कह रही हो ? नरेश दत्त ही तो असली पाजी है। उसे तो दस बरस की जेल होगी ही, वही तो असली सरदार है। बच्चू खुद भी डूबे, औरों को भी ले डूबे। उस हरामज़ादे ने ही तो इतना कुछ किया है। नहीं तो तुम्हारी-सी भली लड़की की यह दुर्दशा होती ? भगवान् भी सिर पर हैं। जज के सजा देने के पहले भगवान् ही उसे सजा दे रहे हैं।'

'क्यों, क्या सजा दे रहे हैं ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अरे, वह शायद नहीं मालूम है। तुम्हें तो बताया ही नहीं। वह तो मरने-मरने को हो रहा है।'

'मरने-मरने के माने ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'वह लक़वे में पड़ा हुआ है। स्ट्रोक हुआ है। चल नहीं पाता, पैरों से काम नहीं ले सकता, बात भी नहीं कर सकता। अस्पताल में पड़ा-पड़ा भोग रहा है। कौन कहता है, भगवान् नहीं हैं ?

भगवान् न रहे तो ऐसा होता है ?'

गुलदा कुछ देर चुप रही। भूपति बोले, 'तो मैं अब चलूँ। मेरे उधर भी झमट हैं, माँ जी की हालत भी तो उधर खराब है। उन्हें भी तो मुझे देखना पड़ता है। डॉक्टर-वैद्य जो भी हो, सब मुझको ही तो करना पड़ेगा।'

'बात कर सकती हैं ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'बात करती तो फिर भी समझता। वह बात भी नहीं कर पाती, उठ भी नहीं पाती। क्या तकलीफ है, वही समझ में नहीं आती। तरला ही सब कर रही है। फिर अकेली तरला ही कितना कर सकेगी ? मुझे भी सब देख-भाल करना होती है।'

यह कहकर छाता लेकर भूपति भादुड़ी कमरे से निकल गये।

उसके बाद घर के अन्दर के बरामदे में आते ही मौसी ने पकड़ा।

बोली, 'क्या ? लड़की ने क्या कहा ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'न, अब कोई तकलीफ़ नहीं है। देखा, बहुत ही आराम से है। कुछ ही दिनों में शकल फूल-फाल आयी है।'

मौसी बोली, 'तो फूलेगी नहीं। बदन तो चलाना नहीं पड़ता। इन कुछ दिनों में कितना खर्च हो गया, पता है मैनेजर ? अण्डे, मांस, परौठा, बैठे-बैठे खिला रही हूँ। तुम्हें सौ रुपये और देना पड़ेंगे।'

'क्यों, तुम्हें उस दिन तो रुपये दे गया था। वह सब फूंक दिये ?'

'अरे, वह तो दो सौ रुपये-भर दे गये थे। उन रुपयों में कितना अण्डा, मांस, परौठा चलता है ? उस पर साड़ी, ब्लाउज, आलता, स्नो-क्रीम—सभी तो हैं। उसका भी तो जोरदार खर्चा है। न, न, सौ-एक रुपये लिये बिना नहीं छोड़ती। दो, रुपये दो।'

भूपति भादुड़ी दो क़दम पीछे हट गये।

बोले, 'अरे, मैं क्या भागा जा रहा है ? सौ रुपये के लिए क्या सोचती हो कि मैं भाग जाऊँगा ? मुझे ऐसा मत समझना।'

उसके बाद टेंट में से टटोल-टटोलकर कई नोट निकाले।

बोले, 'देखो, यह कितने रुपये हैं, गिनकर देखो।'

मौसी ने रुपये हाथ में लेकर गिनते-गिनते गिनना खत्म कर कहा, 'यह तो तीस हैं। तीस रुपये में मेरा नहीं चलेगा। ऐसा है तो मैं लड़की को घर से निकाल बाहर करूँगी...यही कहकर रखा था...।'

भूपति भादुड़ी डर गये। बोले, 'तुम खफ़ा क्यों हो रही हो, मौसी ? तुम मुझ पर अविश्वास करती हो ? मैं क्या वैसा आदमी हूँ ?'

मौसी भनककर उठी। बोली, 'मैंने बहुत आदमी देखे हैं। आदमी

-देखते मैं बूढ़ी हो गयी हूँ। मुझे ऐसे झाँसे मत दिखाओ, मैनेजर। ...ने आदमी इस घर में आये और गये। तुम किस खेत की मूली हो! ...ये के लिए सब बराबर हैं। जो रुपयों के लिए अपने घर की लड़की को ...र कहके पुलिस को पकड़वा सकता है, उसका क्या भरोसा? वह कैसा ...दमी है?'

भूपति भादुड़ी अब और डर गये। तुम तो देखता हूँ बहुत तेज़-तर्रार

बोले, 'चुप करो मौसी, चुप करो। ...ौरत हो। देखता हूँ कि तुम आदमी का खून भी पी सकती हो।'

कहकर दूसरी टेंट में टटोलकर बड़ी मुश्किल से बीस रुपये निकाले। ...वे रुपये मौसी के हाथों में देकर बोले, 'यह लो, हो गये न?'

मौसी बोली, 'यह बीस और तीस मिलाकर कुल पचास रुपये हुए। और बाक़ी पचास?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'और नहीं हैं बाबा, दूँ कहाँ से? पास में और नहीं हैं।'

मौसी बोली, 'तो कच्छा देखूँ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'देखता हूँ कि यह तो बड़ी मुश्किल हुई। कच्छा देखेगी क्या? तुम्हारे आगे मैं कच्छा खोलूँ?'

'हाँ, खोलो। तुम मर्दों का विश्वास नहीं। सब कर सकते हो। खोलो कच्छा।'

सो कच्छा खोलते ही तीस रुपये निकल पड़े।

'ये रुपये कहाँ से आये? बहुत कह रहे थे कि और रुपये नहीं हैं। अब कहाँ से निकले रुपये?'

सब मिलाकर अस्सी रुपये पाकर मौसी थोड़ा खुश हुई। रुपये आँचल में बाँधते-बाँधते बोली, 'और बाक़ी रहे बीस रुपये। वे रुपये कब दोगे?'

'सच ही है, लोग जो तुम्हें बाघ कहते हैं वह झूठ नहीं है। अरे, हमारे भाग जाने से तुम्हारा नुक़सान क्या था? माल तो तुम्हारे घर में है। माल तुड़ा-तुड़ाकर खाओगी।'

मौसी बोली, 'ऐसा ही तो सीधा है? पालकर बस में करना पड़ेगा। पालने का ख़र्च नहीं है? मेहनत नहीं है?'

भूपति भादुड़ी कम देकर छुटकारा पा फिर न रुके। सीधे सीढ़ियों से उतरकर एकदम रास्ते पर निकल अपने को छाते की ओट में कर लिया। उसके बाद छाते से मुँह ढककर ट्राम की सड़क की ओर चलने लगे। तक़-दीर से चुड़ैल ने फेंटे में हाथ नहीं लगाया। वहाँ भी सौ-एक रुपये छिपाये हुए थे। फेंटे में हाथ लगाकर देख लिया कि रुपये हैं या नहीं? हाँ, ठीक

हैं। वहाँ रखना सतरे के बाहर है। कलकत्ता के रास्तों पर जो चोर-डाकू चलते-फिरते हैं, उससे वहाँ छिपाकर रखे बिना कैसे रहें ?

उसके बाद ट्राम आते ही भूपति भादुड़ी चिल्ला उठे, 'एकदम रोक के, एकदम रोक के, बुड्ढा आदमी है बाबा, बहुत बुड्ढा आदमी है।'

उस दिन कुछ लोगों का एक अजीब दल आ पहुँचा। इस मुहल्ले में तरह-तरह के लोग आते दिखायी पड़ते हैं। पर इस तरह के लोगों को मौसी ने कभी नहीं देखा था।

दस बजे के वक्त के करीब मौसी के पास खबर पहुँची। मौसी उस वक्त सभी नहाना-धोना समाप्त कर, बाल लहराये, पान लगाने बैठी थी।

बूढ़ी नौकरानी ने आकर कहा, 'कहीं के बाबू लोग आये हैं, मौसी।'

'बाबू लोग ? कौन बाबू लोग, रे ?'

बुढ़िया बोली, 'यह नहीं मालूम।'

'तो यह मालूम कर आ। इतने सवेरे बाबू लोग क्या कभी आते हैं ? बाबू लोग तो इस वक्त घर जाकर अपने-अपने कमरों में सोते हैं। ये बाबू लोग कहाँ से आये हैं, पूछ आ। जा।'

बुढ़िया फिर गयी। फिर लौट आयी।

बोली, 'वोट के बाबू हैं, तुमसे बातें करेंगे।'

'वोट !' मौसी कुछ देर के लिए अवाक् हो गयी। क्या फिर चुनाव आ रहा है ? बहुत दिनों पहले एक बार गुट बाँधकर बहुत-से लोग मुहल्ले-मुहल्ले में घूमे थे। उस बार मौसी दल-बल लेकर सज-धजकर वोट देने गयी थी। अब फिर लगता है कि फिर वही चुनाव आया है। मौसी बदन के कपड़े ठीक कर संभलकर बैठ गयी।

बुढ़िया तीन-चार भले लोगों को लेकर कमरे में आयी।

प्रवेश दल का सरदार था। वह पहले कमरे में घुसा।

बोला, 'मानदा दासी किसका नाम है ?'

मौसी बोली, 'मेरा ही नाम है बेटा, तो तुमको शायद वोट चाहिए ?'

प्रवेश के पीछे-पीछे और सभी कमरे में घुस पड़े। अँधेरा कमरा, लेकिन खाट, अल्मारी—सब चमाचम कर रही थीं। मानदा दासी की

वढ़िया फ्रेम में मढ़ी जवानी की फ़ोटो दीवार पर टँगी थी।

प्रवेश वोला, 'न, हम वोट माँगने नहीं आये हैं, हम दूसरे काम से आये हैं।'

मानदा दासी मुस्कराकर वोली, 'क्या काम, वताओ वेटा।'

प्रवेश वोला, 'हमें दस के क़रीव लड़कियाँ किराये पर चाहिए।'

मानदा दासी वात समझ न सकी। पूछा, 'लड़कियाँ किराये पर ?'

'हाँ, दस लड़कियाँ होने से चल जायेगा।'

मानदा वोली, 'वह तो समझी। दस क्यों, वीस लड़कियाँ मानदा दासी जमा कर सकती है। मेरे पास लड़कियों की कमी नहीं है। लेकिन काम क्या है ?'

प्रवेश वोला, 'वोट देना होगा।'

'वोट ? लगता है कि फिर चुनाव आ रहा है ?'

प्रवेश वोला, 'हाँ, वही पाँच वरस पहले चुनाव हुआ था, फिर वही चुनाव तो हो रहा है। मैं जिन औरतों का नाम दूँगा, उन्हीं सव नामों से वोट दे आना होगा।'

मानदा दासी वोली, 'तो लड़कियाँ क्यों नहीं दे सकूँगी ? ख़ूव दे सकूँगी। तमाम कामों के लिए लड़कियाँ मैं दिया करती हूँ, यह तो छोटा काम है। पिछली वार के चुनाव में भी तो मैंने ही लड़कियाँ दी थीं। मेरी एक लड़की दस-दस, वारह-वारह वार वोट दे आयी थी। कोई कुछ पकड़ नहीं पाया।'

प्रवेश वोला, 'लेकिन वहुत तरह की उम्र की लड़कियाँ हमें चाहिए। कोई पूरी, कोई कम उम्र की, कोई अधेड़। कुछ हिन्दुस्तानी, कुछ मारवाड़ी, सव तरह के जात की औरतों की ज़रूरत है।'

मानदा दासी वोली, 'सव दे सकूँगी वेटा, तुम फ़िक्र मत करो। चीनी लड़की चाहिए तो चीनी लड़की तक दे सकती हूँ। रुपया देने से मैं जापानी औरत तक दे सकती हूँ।'

अव प्रवेश हँस पड़ा।

वोला, 'न, न, उसकी जरूरत न होगी। तो कव आऊँ, वता दें।'

मानदा वोली, 'तुम्हें कव जरूरत है, वह वताओ न। हमारे घर पर तो लड़कियाँ हमेशा ही मौजूद रहती हैं। हमें एक दिन पहले नोटिस देने से हो जायेगा।'

प्रवेश और कुछ न वोला। दल-वल लेकर वाहर निकल आया।

बुढ़िया इतनी देर पास ही खड़ी थी। वोली, 'वावू लोग क्या करने आये थे, जी ?'

मानदा बोली, 'धत् मुर्दैल, तुझे इन सब बातों में पड़ने की क्या जरूरत है? दे, मुझे चाय दे, सवेरे से अभी तक अच्छी तरह चाय नहीं पी सकी। आजकल समझ नहीं पाती कि तू कैसी चाय बनाती है। जप-तप करके उठकर जरा आराम से चाय पिऊँ, तेरे कारण वह भी पीना नहीं होता। चाय नहीं होती घोड़े का मूत होता है।'

कहकर मोटा शरीर लेकर मानदा ने कुर्सी से उठकर बिस्तर पर शरीर पसार दिया।

वह वही युग है। वह उसी युग की बात लिख रहा हूँ जब देश के लोगों में नींद से उठकर जप-तप निपटाकर जरा अच्छी तरह चाय पीने के लिए छटपटाहट जगी। कौन अच्छा है, कौन बुरा है—यह समझने की अक्ल भी तब नहीं आयी थी। किसी दिन अंग्रेज आये थे। वे राजा बनकर बहुत दिन बिता गये। अपने जमाने में किसी को नौकरी देकर, किसी को खिताब देकर उन्होंने अपने दल में खींच लिया। लोगों ने स्वदेशी आन्दोलन चलाया; कुछ लोगों ने बम-बारूद लेकर अंग्रेजों की हत्या की। विदेशी सम्पत्ति की लूटपाट की। अंग्रेज लोगों ने उन्हें जेल में डाल दिया और अपने दल के जी-हुजूरों को खिताब देकर खुश किया। किसी को 'राय साहब', किसी को 'राय बहादुर' और किसी को 'नाइट' की उपाधि दी। यही सब-कुछ बहुत दिनों तक चलता रहा।

लेकिन उनके चले जाने के बाद से गड़बड़ियाँ शुरू हुई। तब सभी दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट में नींद के नशे में थे। रातों के बाद रातें आती और अफीम के नशे में शरीर में ज्यादा खुमारी रहती। किसी को आँखें खोलने की तबीयत न होती। शम्भु चौधरी के मकान के अन्दर बूढ़े बाबू तख्त पर चित लेटे-लेटे केवल अन्तिम क्षण की इन्तजार करते रहते। भूपति भादुड़ी केवल जायदाद हथियाने के मतलब से टेंट में और कच्छे में सारा षड्यन्त्र छिपाये रखते। पमिली आदि बार-बार विलास में सारी यन्त्रणा भूलने के लिए चेष्टा करके भी यन्त्रणा न भूल सकने पर उसी यन्त्रणा में छटपटाती रहती! और कलकत्ता के लाखों लोग जुलूस के बाहर खड़े रहकर तमाशा देखते। मानो आँखों से देखकर भी वे कुछ देख न पाते हों। समझ न

पाकर यादवपुर ढकुरिया के लाखों लोग किस तरह अपनी जीविका चलाते हैं। और समझ में नहीं आता कि कामकाज छोड़कर इतने लोग क्यों राजनीति को लेकर दिमाग़ परेशान करते हैं !

ठीक इसी समय नाटक शुरू हुआ। जीवन-मृत्यु का यह पाँच-अंकों का मर्मांतक नाटक।

एकदम सवेरे के वक़्त ही सुरेन ढकुरिया में टुलू आदि के घर जा पहुँचा। लेकिन वहाँ पहुँचकर टुलू के दरवाज़े की कुंडी नहीं खटकाना पड़ी; टुलू ही सशरीर घर से निकल आयी थी। सामने सुरेन को देखकर अवाक् हो गयी।

टुलू को इतने सवेरे घर से निकलते देखकर सुरेन को भी कम ताज्जुब नहीं हुआ।

'इतने सवेरे तुम निकल रही हो ?'

टुलू पहले तो कुछ संकुचित हो गयी। उसके बाद अपने को संभालकर बोली, 'हाँ, लेकिन तुम ?'

सुरेन बोला, 'क्यों, तुम्हारे पास नहीं आना था ?'

टुलू बोली, 'नहीं, वह नहीं कह रही हूँ। लेकिन मैंने सोचा था कि तुमने मेरे साथ सब सम्बन्ध तोड़ दिया है। ज़रूर मेरी ही उस दिन ग़लती थी, वह भी स्वीकार करती हूँ।'

सुरेन बोला, 'तुम्हारी कोई ग़लती नहीं थी, टुलू। देवेश से उस दिन भेंट हुई थी। वह जेल से छूटकर हमारे घर वोट माँगते-माँगते आया था। उससे भी मैंने यही बात कही थी। इसी से आज नींद से उठते ही सोचा कि तुमसे मिलने चलूँ।'

टुलू बोली, 'अच्छा ही किया। चलो।'

'कहाँ ?'

टुलू बोली, 'वही वोट माँगने।'

सुरेन ने पूछा, 'किस तरफ़ ? हमारे मुहल्ले में ?'

टुलू बोली, 'वह तो ऑफ़िस जाकर जैसा हुक्म होगा वैसा करूँगी। पूर्ण-दा खड़े हुए हैं, वह तो मालूम है ?'

सुरेन बोला, 'सुना है। पुण्यश्लोक बाबू के विरुद्ध।'

टुलू बोली, 'हाँ। अब हम लोगों के जीवन-मरण की समस्या है।'

सुरेन बोला, 'चलो, मैं भी साथ चलूँ।'

टुलू बोली, 'लेकिन उससे तुम्हारा कुछ नुक़सान तो नहीं होगा ?'

सुरेन बोला, 'नुक़सान ? मेरा नुक़सान क्यों होगा ?'

'पुण्यश्लोक बाबू के खिलाफ़ वोट माँगने से पुण्यश्लोक बाबू निश्चय ही

तुमने समझा होगा। उनके सिवा, पुण्यश्लोक बाबू गुस्सा न हों, पुण्यश्लोक बाबू की लड़की तो लगा हो सकती है?'

'पद्मिनी? पद्मिनी की बात कह रही हो?'

'मुझे नहीं मालूम था कि वह पुण्यश्लोक बाबू की लड़की है। नहीं तो मैं कुछ न बोलती। देवेश-दा ने मुझे सब बताया।'

'देवेश ने तुम्हें बताया? और क्या कहा?'

'देवेश-दा ने बताया, उनके साथ तुम्हारी बहुत दिनों से जान-पहचान है। बहुत दिनों से तुम उनके घर जाते हो। मैं सच कह रही हूँ, मुझे यह सब-कुछ भी मालूम न था। जानती तो फिर मैं उस दिन उस तरह तुम्हारे घर बैठी न रहती, उनके आने के साथ-ही-साथ मैं उठकर चली आती।'

बस आ गयी थी। बस की भीड़ में टुलू औरतों की जगह में जाकर वहीं बैठ गयी। टुलू के साथ और कोई बात न हुई। पार्टी के ऑफिस के सामने आते ही टुलू बोली, 'आओ, यहीं उतरो।'

सुरेन टुलू के पीछे-पीछे उतर गया। बहुत दिनों के बाद फिर देवेश के ऑफिस आया था। ठीक वही पहले के ढंग थे। कुछ ज़रा भी नहीं बदला था।

सुरेन बोला, 'अब मैं चलूं, टुलू।'

टुलू ने झट सुरेन का हाथ पकड़ लिया। बोली, 'जाओगे क्यों? चलो।'

सुरेन बोला, 'आज तुम्हारी ही तरफ़ हम लोग जायेंगे, ज़रा ठहरो।'

सहसा देवेश भी शोर मचाता आ पहुँचा।

'यह क्या रे, तू?'

सुरेन बोला, 'टुलू के घर गया था। वहीं से आ रहा हूँ। टुलू जबर्दस्ती खींच लायी।'

देवेश बोला, 'ज़रा ठहरो, आ रहा हूँ।'

कहकर वह अन्दर चला गया। सवेरे-सवेरे ही बहुत तरह के लोग आकर जमा हो गये थे। सभी मानो बहुत व्यस्त हों। दीवार पर कतार-के-कतार पोस्टर लगे हुए थे। आज तक जितने पोस्टर छपे थे सभी कमरे-भर में चिपके थे। सुरेन खड़े-खड़े उन्हें देखने लगा। इतिहास के पन्नों से सारी घटनाओं ने मानो पोस्टरों में जगह पा ली हो!

सहसा अन्दर शोर जोर से और बढ़ गया। सभी ने मानो बहुत आनन्द मनाना शुरू किया था। सुरेन कुछ समझ न सका। उन लोगों को किस बात की खुशी थी? सहसा क्या हो गया? आवाज धीरे-धीरे जोर से और बढ़ने लगी।

देवेश भागता-भागता आकर बोला, 'चल।'

'कहाँ ?'

देवेश बोला, 'बहुत बढ़िया ख़बर है। डॉक्टर राय ने जाँच-कमीशन बिठाने का ऑर्डर दे दिया है। हम गवाह बनेंगे।'

सुरेन फिर भी समझ न सका।

बोला, 'किस बात के गवाह ?'

देवेश बोला, 'जाँच-कमेटी बैठी है। मैं जाकर गवाह के रूप में आज नाम दे आऊँगा। मैं गवाही दूंगा, टुलू गवाह होगी। सभी गवाही देंगे।'

सुरेन बोला, 'वहाँ जाकर क्या कहना होगा ?'

'तू भी गवाह बन सकता है। उस दिन तू भी तो हम लोगों के साथ था। तेरे हाथ में भी तो गोली लगी थी। लेकिन तेरा मामा तो कुछ न कहेगा ?'

सुरेन बोला, 'मामा के कहने से क्या, मामा की बातें सुन तो लीं।'

'लेकिन पुण्यश्लोक बाबू के ख़िलाफ़ भी तो तुझे कहना होगा। तुझे हर महीने डेढ़ सौ रुपये देकर कांग्रेस का इतिहास लिखने को कहा था। तू तो पुण्यश्लोक बाबू की सब कीर्ति जानता है। कह सकेगा न ?'

सुरेन बोला, 'वह सब कह सकूँगा।'

'लेकिन तेरी पमिली ? पमिली अगर बुरा माने ?'

सुरेन बोला, 'पमिली से मेरा अब कोई सम्बन्ध नहीं है। तुम्हें तो यह मालूम है !'

'यह क्या रे ? कब से ?'

सुरेन बोला, 'कुछ ही दिनों से।'

'क्यों, अचानक हो क्या गया ? झगड़ा हो गया ?'

सुरेन बोला, 'न, पुण्यश्लोक बाबू ने मुझे अपने घर से भगा दिया था। कहा था कि अब अगर कभी उनके घर जाऊँगा तो मुझे पुलिस से गिरफ़्तार करा देंगे।'

देवेश बोला, 'कुछ परवाह नहीं। न आने को कह दिया, अच्छा ही किया। मैंने तुझे शुरू से ही मना कर दिया था कि बड़े लोगों के घर न जाना। वे साले हमें आदमी नहीं समझते हैं।'

इसी बीच टुलू भी आ गयी। बोली, 'चलो, देवेश-दा।'

देवेश बोला, 'इस सुरेन को भी लिये चल रहे हैं।'

'सुरेन-दा भी क्या गवाह होंगे ?'

देवेश बोला, 'न, लगता है उसे डर लगता है, आखिर पमिली क्या सोचेगी ?'

सुरेन बोला, 'न भाई, मैं भी गवाह बनूँगा।'

'तू गवाह बनेगा ?'

सुरेन बोला, 'हाँ, बनूँगा।'

'लेकिन अन्त में मुझे दोष न देना।'

सुरेन बोला, 'पद्मिनी क्या सोचे या न सोचे, मैं जरा भी परवाह नहीं करता। तू मेरा नाम दे दे, मैं गवाह बनूँगा।'

यह सब बाहरी दुनिया की खबर है। बाहर जब राजनीति का षड्यन्त्र चल रहा था, उस वक्त माधव कुण्डू लेन के घर के अन्दर पुराना षड्यन्त्र और जटिल-कुटिल हो उठा था। नरेश दत्त और कालीकान्त विश्वास को तरकीब से अलग कर भूपति भादुड़ी कुछ देर के लिए निश्चिन्त हो गये थे। अब उनके चेहरे पर हँसी फूटना शुरू हुई थी। अब पहले की तरह किसी पर इतना खफा न होते।

रह गयी सुखदा। उसे भी लगभग काबू कर लिया था। उसके बाद एक बार जब मानदा के हाथों में जा पड़ी तो कोई डर नहीं। अभी जरा गेल जरूर खिला रही है, लेकिन और कुछ दिन वक्त पाने पर एकदम ऊँचे पर उठाकर गिरा देगी।

उस दिन कागज-पत्र लेकर भूपति भादुड़ी हरनाथ वकील के घर जा पहुँचे।

हरनाथ वकील यों ही कामकाजी आदमी! शम्भु चौधरी के जमाने में दोनों हाथों से पैसे लूटे थे। लेकिन वह गुजरे दिनों की बात है। तब चावल का भाव था तीन रुपये मन। अब वही भाव हो गया है बीस रुपये मन। हरनाथ वकील ने पहले दो रुपये फीस ली थी, अब वही फीस बढ़कर हो गयी है पच्चीस रुपये। उस पर भी वकील साहब कहते हैं, 'अब पच्चीस रुपये में नहीं होता भूपति, अब से पचास रुपये देना पड़ेंगे।'

भूपति भादुड़ी हाथ जोड़ देते। कहते, 'मुझे माफ करें वकील बाबू, मैं मर जाऊँगा, बिलकुल बेमौत मर जाऊँगा। इस वसीयत का कुछ फैसला हो जाये, फिर जो लेना होगा लीजियेगा, उसके पहले मुझे माफ करें।'

वकील साहब ने कहा, 'वसीयत के लिए तुम्हें इतनी फ़िक्र क्यों है ? वसीयत तो मैंने लिख ही दी है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'वसीयत तो लिख दी, लेकिन उस पर तो अभी तक दस्तख़त नहीं हुए हैं।'

'क्यों, दस्तखत क्यों नहीं हुए ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'दस्तखत हुए थे लेकिन वह वसीयत मुझे पसन्द नहीं आयी वकील बाबू, इसलिए फाड़ फेंकी।'

'क्यों, पसन्द क्यों नहीं आयी ? वसीयत की थी तुम्हारी माँ जी ने, उसमें तुम्हारी पसन्द-नापसन्द क्या रहती ? वे जो वसीयत करेंगी वैसा ही तो होगा।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'लेकिन उसमें मैंने जो इतना किया, मेरा क्या रहेगा ?'

'तुम्हारा ? तुम्हारा क्या रहेगा ? तुम तो बराबर हर महीना वेतन लेते रहे हो ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'वाह रे, वेतन कितना मिलता था ? साठ रुपये। साठ रुपये में क्या इतनी मेहनत होती है ?'

हरनाथ बाबू के घर पर भाग्य से कोई आदमी नहीं था। भूपति भादुड़ी का मतलब वे पहले से ही समझ गये थे। अब और भी साफ़-साफ़ समझ लिया।

बोले, 'देखो भूपति, तुम वसूली करते हो, और मैं भी वकालत करके खाता हूँ, मेरा ही इन पच्चीस रुपयों में कैसे चलता है ?'

'अगर नहीं चलता तो आप भी ज़रा रेट बढ़ा लीजिये। लेकिन उस वसीयत के बदले मुझे एक नयी वसीयत बना देना पड़ेगी।'

हरनाथ बाबू बोले, 'कैसी ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'पहली में सुखदा को जायदाद का कुछ हिस्सा देने की बात थी। गहने-गुहने, रुपया-पैसा में हिस्सा देने की बात भी थी। लेकिन वह तो अब है नहीं।'

'नहीं है माने ?'

भूपति भादुड़ी ने सारा मामला खोल साफ़ कर समझा दिया। उसके बाद बोले, 'अब सोचिये कि वह सुखदा तो वेश्या बन गयी। उसे जायदाद देने का तो अब सवाल ही नहीं है।'

'सच कह रहे हो कि वह लड़की वेश्या बन गयी ?'

'जी, अगर आपको विश्वास न हो तो आप दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट में जाकर देख आइये। उसकी घर की मालकिन मानदा दासी से जाकर पूछ

लीजिये। मैं क्या आपसे झूठ बात कह रहा हूँ?'

'और वह मुकदमा?'

'मुकदमे में बेकसूर पाकर रिहाई हो गयी।'

'क्यों?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'पुलिस को गवाह तो मिले ही नहीं।'

'गवाह क्यों नहीं मिले?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'जी, गवाह थी हमारे चौधुरी-बाड़ी की ललना, आदमी और धनंजय। ये सब कचहरी में जाकर उल्टी-सुल्टी बातें कहने लगे। इसके बाद जज साहब छोड़ नहीं देते तो क्या करते?'

हरनाथ बाबू इतने दिनों से वकालत करते आये थे, इतने लोगों को देखा था, लेकिन ऐसा चरित्र जिन्दगी में कभी नहीं देखा था!

बोले, 'तुम तो उस्ताद आदमी हो, मैनेजर। तुम हमारी वकालत की लाइन में आते तो बाजार को मात दे देते—यह तुमसे कहे देता हूँ, भूपति।'

भूपति भादुड़ी इतनी तारीफ से एकदम विगलित हो गये। हाथ जोड़कर विनयपूर्वक बोले, 'जी, आप क्या कह रहे हैं, मैंने तो आप लोगों की तरह लिखना-पढ़ना भी नहीं सीखा, वकील बाबू।'

हरनाथ बाबू बोले, 'पढ़ना-लिखना नहीं सीखा, यही खैरियत है, सीखा होता तो तुम बैरिस्टरों की रोजी ले बैठते, भूपति। तुमने अकेले यह सब खेल रचा कैसे लिया?'

'आप लोगों के आशीर्वाद से, और किस तरह? मेरी अपनी क्या बहादुरी है, मैं तो मामूली आदमी हूँ। अकेला आदमी हूँ, सब ओर मुझी को सम्भालना पड़ता है।'

हरनाथ बाबू बोले, 'और वह नरेश दत्त? वह नौकर?'

'उसका भाग्य खराब है, वकील साहब। वह बच्चू पुलिस की हवालात में ही हार्ट फेल होने से मर गया। ओह, उसने मुझे इतने दिनों तक बहुत तंग किया था।'

'जाने दो तब फिर तो तुम अब राजा भूपति हो। नरेश दत्त मर गया, उधर दामाद फरार है। अब छः लाख रुपयों की जायदाद तो सारी तुम्हारे कब्जे में आ गयी।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अब वसीयत पक्की कर दीजिये। मैं टन्-टन् की काली-बाड़ी में जाकर पूजा चढ़ा आऊँ।'

'लेकिन मुझे क्या दोगे, पहले तुम यह तो बता जाओ।'

'मैं आपका मुँह भर दूँगा, वकील बाबू। आप मेरा काम पहले पक्का कर दीजिये। आप जो लेकर खुश होंगे मैं वही दूँगा, वादा करता हूँ।

बिलकुल पक्का काम कर देना होगा, कच्चा-बच्चा नहीं। ऐसा कर दें जिससे माँ जी के मरने के बाद कोई मामला-मुक़दमा ही न हो।'

हरनाथ बाबू बोले, 'भूपति, मैं वकील आदमी हूँ, हम होते हैं खून चूसने वाली जात। हम किसी की बात का भरोसा नहीं करते। मेरे साथ लिखा-पढ़ी करना पड़ेगा।'

'कितनी रक़म—बताइये ?'

'मुझे पचास हज़ार देना होगा।'

'पचास हज़ार रुपये ?' भूपति भादुड़ी जैसे चौंक पड़े।

हरनाथ बाबू बोले, 'पचास हज़ार रुपये दो तो ऐसा पक्का काम कर दूंगा कि माँ जी के मर जाने के बाद तुम चैन से बैठकर हवा खाओगे, कुछ न करना होगा। और तुम्हारा भांजा ही जायदाद की देख-भाल करेगा।'

भूपति भादुड़ी भांजे का ज़िक्र आते ही चिढ़ गये। बोले, 'आप मेरे भांजे का नाम मत लीजिये। वह निकम्मा लड़का है। वह अगर आदमी होता तो आज मुझे क्या सोच था ?'

'क्यों ? उसने क्या किया ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'जी, वह कम्युनिस्टों के दल में जा भिड़ा है।'

'यह क्या ?'

'जी हाँ, मैं कहाँ उसके भले के लिए इतना सोचता था। इतने दिनों तक इतना रुपया खर्च कर उसे बी० ए० पास कराया। सोचा था कि उसे क़ानून पढ़ाऊँगा। क़ानून पढ़ने पर फिर भी जायदाद के मामले में मदद होगी। वह नहीं, वह बोला—न, क़ानून नहीं पढ़ूंगा।'

'क्यों ? क़ानून पढ़ने से तो अच्छा ही होता। क्यों नहीं पढ़ा ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मेरा भांजा क्या कहता है, जानते हैं ? कहता है—वकालत तो ठगों का काम है। कचहरी है जालियों-ठगों की जगह। जज-वज सब साले ठग हैं।'

हरनाथ बाबू बोले, 'ए, तुम्हारा भांजा तो देखता हूँ बिलकुल चौपट हो गया। उसकी अब शादी कर दो। अब देर मत करो।'

'ब्याह तो कर देता। इधर ये सब झंझट न होते तो मैं कबकी उसकी शादी कर देता। इतने दिन मेरे किस मुसीबत में कटे हैं, वह तो आपको मालूम ही है।'

हरनाथ बाबू बोले, 'तो हटाओ, आज एक दस्तावेज़ बना डालूं।'

'कैसा दस्तावेज़ ?'

'यही कि तुमको जायदाद मिलने पर तुम मुझे पचास हज़ार रुपये दोगे।'

सुखदा डर गयी थी। किसी अनजान मर्द को कमरे में घुसते देखकर पहले से ही वह सिकुड़ गयी थी। मौसी के उठते ही वह भी विस्तर से उठ खड़ी हुई।

मानदा बोली, 'बेटी, तू क्यों उठ रही है ? इससे तुझे क्या डर ? यह तो मेरा बेटा है, रे। आओ बेटा, आओ।'

आदमी ने हाथ में ली हुई सिगरेट का एक कश लिया।

उसके बाद सुखदा की ओर घूमकर बोला, 'आप उठ क्यों रही हैं, आप बैठिये न, मैं आपको खा नहीं जाऊँगा। मैं न तो शेर हूँ, न भालू।'

आदमी आराम से चारपाई पर बैठ गया। एकदम दोनों पैर उठाकर। उसके बाद मौसी की ओर घूमकर बोला, 'कहाँ, कोई राखदान तो दो, सिगरेट कहाँ झाड़ूँगा ?'

मानदा बोली, 'हाय राम, वही तो।'

कहकर खुद ही कमरे से बाहर निकल गयी। शायद राखदानी लेने गयी।

आदमी ने सुखदा की ओर देखकर कहा, 'यह क्या, मैं बैठ गया इस लिए तुम उठ खड़ी हुई ?'

सुखदा बोली, 'नहीं।'

'तो ? तुम अगर नहीं बैठतीं तो मुझे फिर उठ खड़ा होना पड़ेगा। मेरे साथ क्या एक विस्तर पर बैठोगी नहीं ? मैं क्या ऐसा घृणित आदमी हूँ ?'

कहकर वह सज्जन उठ खड़े हुए।

सुखदा बोली, 'आप उठे क्यों ?'

सज्जन बोले, 'मैं बैठ सकता हूँ, लेकिन तब तुम्हें भी बैठना पड़ेगा।'

सुखदा बोली, 'मैं इस कुर्सी पर बैठी जा रही हूँ।'

'न-न-न, वह नहीं होगा, बैठेंगे तो दोनों एक जगह ही बैठेंगे। फिर उसके सिवा तुम्हें डर किस बात का है ? मैं शेर हूँ या भालू हूँ ? देख रही हो—मेरे दो हाथ हैं, दो पैर हैं, दो आँखें हैं, दो होंठ हैं। सभी तो आदमी की तरह हैं।'

कहकर उस आदमी ने सुखदा का हाथ पकड़ लिया। पकड़कर बोला, 'आओ, खफ़ा मत हो, मन मिल जाये तो दोनों के लिए एक खाट बड़ी अच्छी रहेगी।'

सुखदा ने अपना हाथ छुड़ाने का प्रयत्न करते हुए कहा, 'हाथ छोड़िये।'

सज्जन कुछ देर के लिए आश्चर्य से भौंचक्के हो गये।

बोले, 'अरे बाबा, तुम्हारा सती-पना सोलहों आने पक्का है।'
सुखदा फिर बोली, 'हाथ छोड़िये।'
वह आदमी बोला, 'क्यों, तुम्हारा हाथ क्या घिस जायेगा?'
'कहती हूँ, हाथ छोड़ दीजिये।'
आदमी फिर भी जोर से दबाकर हाथ पकड़े था। पकड़े था और सुखदा की ओर देखकर हल्के-हल्के हँस रहा था।
'मेरी बात सुन नहीं रहे हैं? कहती हूँ, हाथ छोड़ दीजिये। नहीं तो कहे देती हूँ कि मैं शोर मचाऊँगी।'
आदमी शायद पहले से ही पिये हुए था। उसे डर हुआ कि कहीं कीमती नशा उड़ न जाये।
'हाथ छोड़िये।'
उस पर भी आदमी ने जब हाथ न छोड़ा तो सुखदा चिल्ला पड़ी, 'मौसीजी!'
चीख मानो घर-भर में प्रतिध्वनि गुंजाकर फिर अन्तर्हित हो गयी। और साथ-ही-साथ मानदा पानदानी लेकर कमरे में आयी। आकर हाल देखकर एकदम आग-बबूला हो गयी।
बोली, 'यह क्या री, चीखी क्यों?'
सुखदा बोली, 'देखो न, यह बदन को हाथ लगा रहा है। हाथ नहीं छोड़ रहा है।'
वह आदमी उस वक्त भी सुखदा का हाथ जोर से पकड़कर धीरे-धीरे हँस रहा था।
मानदा बोली, 'हाथ नहीं छोड़ रहा है तो क्या हो गया? तेरा हाथ घिस गया या सड़ गया?'
वह आदमी बोला, 'बताओ तो मौसी, तुम्हीं बताओ। ऐसा मक्खन-सा हाथ छूने की किसे तबीयत न होगी?'
मानदा बोली, 'हाँ री, लड़के ने जरा तेरा हाथ पकड़ लिया तो तेरी क्या जान चली गयी?'
सुखदा बोली, 'वह मेरा हाथ क्यों पकड़ेगा?'
मानदा बोली, 'तो अपनी जात लेकर क्या उसे धोकर खायेगी? जात धोकर खाने से तेरा पेट भरेगा?'
सुखदा बोली, 'लेकिन हाथ क्यों पकड़े? मैं उसकी कौन हूँ?'
मानदा बोली, 'अच्छा करेगा, हजार बार हाथ पकड़ेगा। तू बोलने वाली कौन है? मेरे लड़के ने तेरा हाथ पकड़ लिया, यह तेरे बाप के चौदह पुरखों का भाग्य है।'

उसके बाद मानदा उस आदमी की ओर देखकर बोली, 'पकड़ो तो बेटा, तुम फिर उसका हाथ पकड़ो तो, देखें क्या करती है, पकड़ो तो !'

उस आदमी ने इस बीच खींचतान में हाथ छोड़ दिया था। मानदा के कहने से फिर सुखदा का हाथ पकड़ने गया। सुखदा तब डर के मारे और दूर हट गयी थी।

मानदा बोली, 'जाओ, आगे बढ़ो, पकड़ो, जबर्दस्ती पकड़ो।'

आदमी झूमते हुए जितना आगे बढ़े सुखदा भी उतना ही पीछे हटती जाती।

मानदा बोली, 'तुम मर्द होकर उससे हारे जा रहे हो, बेटा ? उसे कस कर पकड़ नहीं सकते ?'

किसी तरह जब कुछ न हुआ तो मानदा फिर चुप रहकर दर्शक बनी खड़ी न रह सकी। खुद ही जाकर सुखदा को जकड़ लिया।

बोली, 'आओ बेटा, अब पकड़ो लड़की को, देखें अब कहाँ भागती है !'

अब सुखदा रो पड़ी।

बोली, 'मौसी, मुझे बचाओ मौसी, मैं उसके पास नहीं जाऊँगी।'

मानदा ने डाँटा, 'दूर हो हरामज़ादी, कहाँ तो मैं तेरे भले के लिए कर रही हूँ, और तू है कि लड़के के साथ गड़बड़ शुरू कर दी। मैंने तुझे इतने दिनों खिलाया-पहनाया नहीं ? जब आयी थी तो सूखी ठूंठ थी। अब जितना शरीर अच्छा हो गया है उतना ही तेरी हिम्मत बढ़ गयी है !'

सुखदा उस समय मौसी को पकड़े आँसू-भरी आँखों से रो रही थी। मौसी की छाती में मुंह छिपाकर अपनी इज़्ज़त बचाने की कोशिश कर रही थी।

मानदा उस आदमी की ओर देखकर बोली, 'तुम मुंह बाये क्या देख रहे हो, बच्चा ? लो, आओ। तुमने समझा है कि तुम मुंह बाये खड़े रहोगे और मैं तुम्हारे मुंह में खाना डाल दूंगी ? उतना नहीं कर सकूंगी बेटे, लो आओ, पकड़ो, अपनी चीज़ को तुम खुद पकड़ो।'

अब आदमी को देर न लगी। एक छलाँग में आकर सुखदा पर झपट पड़ा। मानदा सुखदा को छोड़कर खुद हट गयी।

सुखदा उस समय भी चिल्ला रही थी, 'मौसी ओ मौसी, मुझे छोड़-कर मत जाना मौसी, मुझे छोड़कर मत जाना, मौसी। मुझे छोड़कर मत जाना !'

लेकिन मौसी उस वक़्त कहाँ थी ? आदमी ऐसा मौक़ा कब चूकने वाला था। उसने दोनों हाथों से सुखदा को अच्छी तरह जकड़ लिया था।

मानदा ने उससे कहा, 'अब तुम जो करना हो करो।'
यह कहकर कमरे के बाहर जाकर कमरे की जंजीर चढ़ा दी।

उधर असली मुसीबत गयी, यही खैरियत हुई। नरेश दत्त क्या कम हरामजादा था? दुह-दुह कर कितने हजार रुपये निकाल लिये थे उसका क्या कोई ठीक है? बच्चू ने जिस तरह हरामीपन किया था, उसी तरह सजा मिली। थाने [illegible] सके मुंह में नहीं गया। [illegible]

नरेश [illegible] कालीघाट जाकर पूजा [illegible] 'माँ, अपने भक्त को देखो, माँ। मैं बड़ा अनाथ हूँ, माँ। मेरा कोई नहीं है। मेरी बहुत दिनों की साध है कि मैं चौधुरी-बाड़ी की जायदाद लूंगा। मेरी मनोकामना पूरी करो, माँ। जिस दिन मुझे जायदाद मिलेगी उस दिन पेटभरकर तुम्हें बकरे का खून पिलाऊँगा, माँ।'

उस के बाद वकील साहब के साथ भी सारी बात का पक्का बंदोबस्त हो गया था। छः लाख रुपयों की जायदाद के लिए पचास हजार रुपये कुछ नहीं होते। उतनी दलाली तो उचित ही है। अब बेरोक-टोक सब ठीक हो जाये तभी है।

रास्ता बहुत खराब है। मुहल्ले की आब-हवा भी अच्छी नहीं है। निरन्तर फेरी वालों और बड़ी तादाद में गुंडों की आवा-जाही रहती है। जरा कुछ गड़बड़ होते ही छुरे चल जाते हैं।

बाहर से उस वक्त भी सुखदा का आर्तनाद सुनायी पड़ रहा था। 'ओ मौसी, मौसी, मुझे अकेली मत छोड़ जाओ, ओ मौसी!'

नीचे भूपति भादुड़ी उस समय चुपचाप बैठे थे। बार-बार बाहर की ओर देख रहे थे। बहुत देर से बैठे थे। आज भूपति भादुड़ी खुद सुनकर जायेंगे कि सुखदा कायदे से लाइन पर आ गयी है या नहीं।

मानदा बोली, 'अरे, तुम फिक्र क्यों कर रहे हो, मैनेजर। मैंने ऐसी कितनी ही लड़कियाँ देखी हैं। इस लाइन में क्या यह पहली है? ज्यादा दोसी बघारने से मैं मार-मारकर हलाल कर दूँगी न! लोहे की छड़ गरम

कर उससे छौंका दे दूंगी न !'

'वह तो है।' विलकुल सही जगह पर ही भूपति भादुड़ी सुखदा को ले आये हैं। यहाँ से भागने की सुखदा को राह नहीं है। इस वस्ती के क़ायदे-क़ानून अलग हैं। यहाँ पुलिस को भी कुछ करने की क्षमता नहीं है। पुलिस कुछ करना चाहेगी तो उसे भी मानदा ने रुपये देकर हाथ में कर रखा है। इस वस्ती में मानदा की शक्ति अवाध है।

सदर रास्ते से घर में घुसने पर तंग गली से होकर आना होता है। उसके दोनों ओर मकान हैं। उसी रास्ते से सीधे जाने पर चौकोर आँगन है। वायीं ओर के कमरे में भूपति भादुड़ी चुपचाप वैठे हैं। मानदा से खवर मिलते ही उन्हें छुट्टी है। फिर यहाँ न आना पड़ेगा। तव माधव कुंडू लेन के मकान में जाकर पाँव-पर-पाँव रखकर आराम करेंगे।

सहसा वाहर किसी के पैरों की आहट सुनायी दी। दरवान ने पूछा, 'कौन ? किससे मिलना है ?'

किसी आदमी की आवाज़ सुनायी पड़ी। वह वोला, 'यह क्या मानदा दासी का मकान है ?'

दरवान वोला, 'हाँ।'

'मानदा दासी कहाँ हैं ?'

दरवान वोला, 'घर में।'

'ज़रा वुला सकते हो ? जाकर कहना कि हम पार्टी-ऑफ़िस से वोट के लिए आये हैं।'

दरवान ताज्जुव में पड़ गया। वोला, 'वोट ?'

सज्जन वोले, 'हाँ।'

दरवान ने कहा, 'आप इस कमरे में वैठिये, मैं वुला लाता हूँ।'

कहकर दरवान अन्दर चला गया। साथ-ही-साथ तीन आदमी कमरे में आये। भूपति भादुड़ी एक आदमी को देखते ही चौंक पड़े।

'क्यों रे तू ?'

सुरेन देवेश के पीछे-पीछे कमरे में घुसने जा रहा था। वह भी मानो साँप देखकर दस हाथ पीछे हट गया।

भूपति भादुड़ी वोले, 'वता, तू यहाँ क्या करने आया ?'

विलकुल इस तरह उस दिन भूपति भादुड़ी से उसका सामना हो जायेगा, यह सुरेन को क्या सपने में भी पता था ? और सुरेन का सारा जीवन ही इस तरह अप्रत्याशित घटनाओं से गुजरा है। कहाँ किस गाँव में वह पैदा हुआ, उस गाँव का नाम भी वह आज भूल गया है। उसके वाद भाग्य के

किस अदृश्य इंगित पर वह इस कलकत्ता शहर में चला आया। उसी दिन से गतिहीन जीवन के स्रोत में बहते-बहते वह यहाँ इस हालत तक आ पहुँचेगा, यह किसे मालूम था? किसे पता था कि कलकत्ता शहर के जीवन-केन्द्र में इस प्रकार वह इतनी घनिष्ठता से सम्बद्ध हो जायेगा?

आज भी आँखें बन्द करते ही सुरेन माँ जी के जीवन के उन अंतिम क्षणों को देख सकता था। दोनों आँखें बन्द थीं। शरीर में प्राण हैं भी या नहीं, यह समझ में नहीं आता था। अतीत जीवन की समस्त व्यर्थता के लिए, मानो एक जीवन इतिहास बिस्तर पर मुमूर्षु अवस्था में लेटा प्राण-वायु के लिए चुपचाप प्रयत्न कर रहा है।

भूपति भादुड़ी डॉक्टर लाकर खड़े थे। अन्तिम समय डॉक्टर साहब का चेहरा भी निराशा से दुखी था।

सुरेन की इच्छा हुई थी कि एक बार अन्तिम रूप से माँ जी को पुकारकर बात करे। लेकिन किससे बात करेगा? कौन उसकी बातों का जवाब देगा? अगर माँ जी में बात करने की सामर्थ्य होती तो वह पूछता, 'अब तुम्हें कैसा लग रहा है, माँ जी?'

सचमुच मृत्यु के पूर्व के क्षणों में इन्सान को कैसा लगता है, सुरेन की जानने की बहुत तबीयत थी। जीवन की सारी अभिज्ञता के अन्त में जब इन्सान अपने अन्तिम क्षण पर पहुँच जाता है तो कौन-सी कामना उसे पीड़ित करती है? यह क्या जीवित रहने की कामना होती है या यन्त्रणा से मुक्ति की कामना? या हज़ार यन्त्रणाएँ रहने पर भी इस जीवन से ही चिपटा रहना चाहता है?

उस दिन न जाने क्यों हरनाथ वकील भी आ पहुँचे थे। माँ जी के जीवन-मरण के साथ जैसे हरनाथ वकील का भी मरना-जीना जुड़ गया था।

बीच-बीच में भूपति भादुड़ी तिमंज़िले से भागकर उतर आते और हरनाथ वकील अशंकित होकर पूछते, 'क्या हुआ? दस्तख़त कराये?'

भूपति भादुड़ी की भी उस वक़्त जैसे साँस रुकने की हालत थी। एक बार ऊपर जाते, फिर एक बार नीचे आते। क्या करें, यह भूपति भादुड़ी की समझ में जैसे न आ रहा हो।

हरनाथ वकील को भी कम घबराहट न थी। उनके भी पचास हज़ार रुपये माँ जी के जीवन-मरण के साथ एकाकार हो गये थे।

भूपति भादुड़ी बोले, 'ज़रा भी होश नहीं आ रहा है।'

हरनाथ वकील बोले, 'तो किसी तरह अँगूठे की निशानी नहीं ले

सकते हो ?'

'जी, इतने लोगों के सामने किस तरह करूँ ?'

'अरे, तुमसे कुछ न होगा। कहता हूँ कि इतने दिन पहले वसीयत बन गयी थी, इस बीच एक बार भी थोड़ा वक़्त नहीं मिला ?'

भूपति भूादुड़ी बोले, 'आपने तो बस मेरा ही दोष देखा। आज एक बरस से यह स्त्री जो भोग रही है, बोलने की ताक़त नहीं, करवट तक नहीं ले सकती, मैं कब दस्तखत करा लेता ? सोचा था, ज़रा ठीक होते ही काम करा लूंगा।'

गुस्से से हरनाथ वकील की उँगली काटने की तबीयत हुई। बोले, 'तो फिर तुम करो, मैं क्या मरूँ ! मेरे ठेंगे से, जो कुछ नुक़सान होगा तुम्हारा होगा।'

उस दिन सुरेन बराबर यही देखता रहा, और मन-ही-मन मानव-स्वभाव की बात सोचकर लज्जा से अधमरा हो जाता था। यही तो दुनिया है। यहाँ मानव-कल्याण के लिए फिर भी पार्टी के लोग काम करते हैं। और जिन मनुष्यों के नाम पर वे काम करते हैं, उनका स्वरूप यह है। और इनका ही वोट है। इनका वोट है, इसीलिए पार्टी के तमाम लोगों को घर-घर जाकर वोट के लिए खुशामद करना पड़ती है।

याद है, उस दिन दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट में जाकर एक घटना हो गयी थी, उसका प्रभाव कई दिन तक रहा था।

घर आकर मामा ने कहा था, 'बता, तू वहाँ क्यों गया था ? वहाँ तेरा क्या काम था ?'

सुरेन ने कहा था, 'मैंने बताया तो कि वोट के लिए। उस बस्ती में भी तो सबके वोट हैं।'

'वोट हैं, यह तो जानता हूँ। लेकिन तुझसे वोट का क्या सम्बन्ध ?'

सुरेन बोला, 'वे लोग मुझे वहाँ ले गये थे।'

'वे लोग कौन ? वही तमाम निकम्मों का दल। उन बदतमीज़ों की शक्ल देखकर ही मैं समझ गया था कि वे पार्टी के लोग हैं। उनके न तो घर है न द्वार, तमाम आवारा लोग !'

यही सब-कुछ मामा के मुँह से सुनने का सुरेन अभ्यस्त हो गया था। इसीलिए उस दिन उस घर से निकलने के वक़्त देवेश ने कहा था, 'तुझे घर जाकर डाँट खाना पड़ेगी।'

सुरेन बोला, 'वह सब मुझे बर्दाश्त हो जाता है। चल, अब कहाँ चलेगा ? चल।'

देवेश बोला, 'आज और नहीं, बहुत हो गया। अब लौट चलें।'

उस वक्त उस मुहल्ले में शाम हो गयी थी। धीरे-धीरे अब बस्ती जाग उठेगी। मानदा दासी अब शाम की पूजा आदि पूरी कर ठाकुरद्वारे में जाकर शंख बजायेगी। उसके बाद एक-एक कर बाबू आना शुरू करेंगे। सब हर कमरे में मजलिस जम जायेगी। कहीं जमेगी गाने-बजाने की मजलिस, कहीं नाच-गाने की महफिल। उसी गाने-बजाने और महफिल के आनन्द की आवाज में गुलदा के गले की आवाज डूब जायेगी। लेकिन फिर भी वह चिल्लाती रहेगी, 'ओ मौसी, मौसी, मुझे अकेला मत छोड़ जाना, ओ मौसी...।'

देवेश के पीछे-पीछे सुरेन दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट पार कर चौड़ी सड़क पर आ पहुँचा।

प्रवेश उस वक्त बहुत व्यस्त था। अब उसके काम का अन्त नहीं था। एक तो उसका ऑफिस, उस पर चुनाव है और उसके साथ है जाँच-कमीशन। पुण्यश्लोक बाबू की घबराहट का भी अन्त नहीं। पाँच बरस किसी तरह कट गये। लेकिन पाँच बरसों में जैसे देश के सब लोग ही निष्प्राण हो गये थे।

बोले, 'हवा किस ओर बह रही है, बताओ तो प्रवेश, तुम तो सब ओर घूमते हो।'

प्रवेश बोला, 'वे चाहे जितना चीखें, जीतेगी कांग्रेस ही—यह मैं आपसे कहे देता हूँ।'

फिर भी पुण्यश्लोक बाबू का मन नहीं मानता। बोले, 'तुम ठीक कहते हो न?'

प्रवेश ने आवाज धीमी कर दी। बोला, 'तो आपसे बता दूँ। मैंने पाँच सौ के करीब झूठे वोटों का इन्तजाम कर डाला है।'

पुण्यश्लोक बाबू खबर सुनकर अजीब उदास हो गये। और किसी जमाने में कांग्रेस के नाम पर लोग हँसते हुए फाँसी चढ़ जाते थे!

बोले, 'लेकिन बताओ तो, ऐसा क्यों हुआ? हमने तो देश का कम काम नहीं किया है। इन्हीं नौ बरसों में देश के लोगों के पास कितना पैसा

बढ़ गया है ! विदेशों से कितनी चीज़ों का आना बन्द कर दिया गया है। चितरंजन जाकर देखो, हमारे इंजीनियरों ने ही एक रेल का इंजन बनाया है। और तमाम इंजन-मशीनरी बनेंगी। उनसे कितने करोड़ रुपये देश के बच जायेंगे ! यह सब-कुछ ही तो कांग्रेस ने किया है। ये सब बातें क्या लोगों के दिमाग़ में नहीं आतीं ?'

प्रवेश बोला, 'नमकहराम सर, नमकहराम ! तबीयत में आता है कि उन्हें खूब गालियाँ सुनाऊँ। उसके सिवा सोचिए तो कि आपने देश के लिए क्या नहीं किया ? वे बातें क्या किसी को याद हैं ? लेकिन उस सब की आप फ़िक्र न करें।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'और पिछली बार तो किसी से कहना भी नहीं पड़ा। किसी के भी घर नहीं गया। सभी अपने से आकर वोट दे गये थे।'

प्रवेश बोला, 'इस बार उस तरह नहीं होगा, सर। इसीलिए तो मैंने जीतने का रास्ता संभाल लिया है।'

पुण्यश्लोक अब बोले, 'अच्छा, तुम्हें पहले कितना रुपया दिया था ? कुछ हिसाब है तुम्हारे पास ?'

प्रवेश बोला, 'मेरे पास सब लिखा हुआ है। आपने मुझे अभी तक डेढ़ लाख दिये हैं।'

'सब ख़र्च हो गया क्या ?'

प्रवेश बोला, 'नहीं, नहीं, सब ख़र्च क्यों होगा ? अभी भी कुछ मेरे पास हैं, यही दस हज़ार के क़रीब होगा।'

'कुछ ख़याल है, और कितना लगेगा ?'

प्रवेश बोला, 'उस बार से कुछ ज्यादा लगेगा। उस बार मोटे तौर पर तीन लाख के क़रीब ख़र्च हुआ था। इस बार चार से ज्यादा न लगेगा। बहुत होगा तो साढ़े तीन।'

'ठीक है।'

पुण्यश्लोक बाबू ने मन-ही-मन हिसाब लगा लिया। बोले, 'तो गोयनका को आज ही एक टेलीफ़ोन कर दूं।'

प्रवेश बोला, 'सिर्फ़ अकेले गोयनका से कहने से क्या फ़ायदा ? पोद्दार से ज़रा कहें न ! रघुवीर पोद्दार को आपने इतना बड़ा होटल बनवाने का लाइसेंस दिला दिया। वह तो इस वक़्त होटल से लाखों रुपये कमा रहा है। उसकी गाँठ से भी कुछ गिरे। उससे भी कहिये कि लाख के लगभग देना होगा। चुनाव के वक़्त ही अगर न देगा तो वह कब देगा ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'यह ठीक है। देखूं, आज ही उसे ज़रा टेलीफ़ोन करूँ।'

प्रवेश बोला, 'हाँ, आप बेकार घर से रुपये क्यों निकालें ?'

पुष्पश्लोक बाबू सहसा प्रसंग बदलकर बोले, 'वालंटियरों को किस हिसाब से दे रहे हो ?'

प्रवेश बोला, 'वह तो बँधा रेट है। तीन रुपया रोज।'

'तो अब इनको पाँच रुपया रोज कर दो। वे और ज्यादा मेहनत करेंगे। सब खुश होकर काम करेंगे। और बीच-बीच में मुहल्लों में होकर 'वन्दे मातरम्' कहते हुए निकलें।'

प्रवेश बोला, 'नहीं पुष्प-दा, 'वन्दे मातरम्' का नारा आजकल अब कोई सुनना नहीं चाहता। पहले की तरह अब वे कहते हैं 'वोट फॉर कांग्रेस' और बीच-बीच में 'वोट फॉर पुष्पश्लोक राय।'

कहकर प्रवेश उठा। बोला, 'मैं अब जा रहा हूँ पुष्प-दा, फिर शाम के वक्त आऊँगा।'

लेकिन बात खत्म करने के पहले ही बाहर से एक और आवाज कानों में पड़ी। सुखिया स्ट्रीट से होकर भी जुलूस जा रहा था। वे ही चिल्ला रहे थे. 'इन्कलाब जिन्दाबाद; इन्कलाब जिन्दाबाद।'

आवाज पुष्पश्लोक बाबू के घर के आगे आकर जैसे ज्यादा जोरदार हो गयी। जैसे गलेबाजी में जोर आ गया हो। 'वोट फॉर सी० पी० आई०', 'वोट फॉर पूर्ण विश्वास', 'पूर्ण विश्वास जिन्दाबाद', 'कांग्रेस मुर्दाबाद', 'इन्कलाब जिन्दाबाद।'

एक के बाद एक नारा।

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'लगता है, बहुत बड़ा जुलूस है। उनके पास बहुत ज्यादा आदमी हैं क्या ?'

प्रवेश भी कान लगाकर सुन रहा था। बोला, 'देखते हैं, कैसी बदमाशी कर रहे हैं—ठीक इस घर के सामने आकर ही जोर से चिल्लाते हैं।'

पुष्पश्लोक बाबू बोले, 'तुम एक बार जाकर देख तो आओ, कितने लोग हैं उनके जुलूस में ?'

प्रवेश घर से निकला। निकलकर धीरे-धीरे बाग के किनारे दीवार के पास गया। वहाँ से देखा कि लड़के हवा में मुट्ठी बाँधे बढ़े जा रहे हैं और चिल्ला-चिल्लाकर कह रहे हैं, 'इन्कलाब जिन्दाबाद।'

फिर कहते हैं : 'वोट देंगे किसे—हँसिया धान की बाली को।'

जुलूस में ही था सुरेन। सुरेन भी चिल्ला रहा था। पुष्पश्लोक बाबू के घर के आगे आते ही उसने ऊपर की ओर देखा। पद्मिनी का कमरा दिखायी नहीं देता था। चारों ओर ऊँची दीवार थी। आवाज शायद पद्मिनी के भी कानों में पड़ रही थी। और अगर पुष्पश्लोक बाबू घर पर हैं तो जरूर

उनके कानों में भी पड़ रही है। उन्हीं पुण्यश्लोक बाबू ने डर दिखाया था—अगर वह फिर कभी भी उस घर में घुसेगा तो उसे गिरफ़्तार करा देंगे। यह ठीक है। वहाँ फिर कभी सुरेन जायेगा भी नहीं। समझते हैं कि जैसे वहाँ घुस न पाने पर उसे नींद न आती हो! पमिली के हज़ार कहने पर भी वह वहाँ नहीं जाने का।

टुलू भी लड़कियों के दल में जा रही थी। वह भी उसी तरह चिल्लाती जा रही थी। आज किसी को डर नहीं है। सभी जी-जान से पूर्ण-दा को जिताने की कोशिश करेंगे। सभी मानो जी-जान से उतर पड़े हों—जिस तरह भी हो, कांग्रेस को हराना ही होगा।

प्रवेश दीवार के छोटे-से छेद से देख रहा था। प्रायः दो हज़ार लोग उन लोगों ने जमा कर लिये हैं। आहिस्ता-आहिस्ता जुलूस एमहर्स्ट स्ट्रीट की ओर बढ़ रहा था।

सहसा सुरेन दिखायी दिया। वह भी उनके साथ जा रहा था। उसके हाथों में भी एक पोस्टर था। पोस्टर पर लिखा था : 'कम्युनिस्ट पार्टी को वोट दीजिये।'

सिर्फ़ उस दिन ही नहीं, कई दिनों से कलकत्ता शहर की छाती पर आवाज़ों के समुद्र का गर्जन होता रहा। सवेरे की ओर मोटे तौर पर एक दूसरा समाँ रहता। लोग बसों-ट्रामों पर लटकते-लटकते जाकर ऑफ़िसों, फ़ैक्टरियों, कचहरियों में जाते। लेकिन दो-तीन बजे के बाद से फिर बसें-ट्रामें न चलतीं। तबसे लेकर जितना दिन बढ़ता जितना वक़्त होता जाता, उतना ही सब-कुछ अचल हो जाता। शाम को पाँच बजे के बाद फिर कोई ऑफ़िस से ठीक वक़्त से घर न लौट पाता। बस-स्टॉप पर बसों में चमगादड़ से लटककर चढ़ने की कोशिश करके भी पिछड़ जाते।

कोई-कोई उत्सुक होकर पूछता, 'हाँ मशाई, अचानक क्या हो गया? बसों-ट्रामों को क्या हो गया?'

कोई सज्जन ऑफ़िस से लौटे बहुत देर से परेशान खड़े थे। बोले, 'अब क्या होगा, सालों का चुनाव चल रहा है!'

'तो चुनाव जिस दिन होना हो, हो न, सड़क के बीच में गड़बड़ क्यों

करते हैं ?'

सभी पार्टियाँ गड़बड़ क्यों करती हैं, इसे कोई समझ नहीं पाता। जो समझ सकते वे कहते, 'इसके पीछे बहुत मामले हैं, मशाई—बहुत मामले...।'

'क्या मामले ?'

सब-कुछ जानने वाले एक साहब बोले, 'सभी को रुपये मिलते हैं, पता है ?'

'रुपये ? कौन रुपये पाते हैं ?'

'यही जो 'वोट', 'वोट' करके चिल्लाते हैं, यही जो नारे लगाते हैं। इनकी मेहनत की मजदूरी नहीं देना पड़ेगी ? वे क्या गलेबाजी करके यों ही मेहनत करेंगे ?'

यह बात किसी को नहीं मालूम थी। जुलूस में रहकर, जुलूस के साथ चिल्लाने पर रुपया मिलता है, यह भीड़ में किसी को पता नहीं था।

'किस हिसाब से देते हैं ?'

'रुपया, सवा-रुपया के हिसाब से।'

'कौन देता है ? कांग्रेस या कम्युनिस्ट पार्टी ?'

'वे सभी देते हैं, मशाई। दो ही तो दल हैं। दोनों ही रुपये खर्च करते हैं।'

'उन लोगों को इतने रुपये मिलते कहाँ से हैं ?'

सज्जन बोले, 'रुपया देने वालों की क्या कमी है, मशाई ? कांग्रेस को देता है अमेरिका, और कम्युनिस्ट पार्टी को देता है रूस। मशाई, असल में हमारा देश नाम को ही स्वतन्त्र है, हमारा मन अभी भी पराधीन रह गया। नहीं तो यह हाल होता ? नहीं तो हम-आप भेड़ों की तरह चुप रहते ?'

यह सब आलोचना कस्बों-ग्रामों में सब जगह चलती। सभी सोचते—उन्हें तो कोई रुपये देता नहीं। अमेरिका का रुपया हो या रूस का रुपया हो, असल में रुपया तो रुपया है। उस रुपये पर किसी का नाम तो लिखा नहीं रहता। उसका ही कुछ हिस्सा अगर हमारे हाथ में आ जाता तो हम भी फिर खा-पहन पाते। तब फिर इस तरह गुलामी तो नहीं करना पड़ती। चैन से आराम के साथ राजनीति ही कर सकते।

जितने ही दिन बीतते उतना ही जैसे आसमान और हवा गरम होती जाती। किसी के साथ किसी की मुलाक़ात होते ही पूछते, 'किसे वोट दे रहे हैं ?'

नजदीक के सज्जन कहते, 'न मशाई, अब फिर कांग्रेस को वोट नहीं दूंगा।'

'ठीक है मशाई, मैंने भी तय किया है कि उनको नहीं दूंगा।

नौ वरसों तक देख लिया, वस महज वड़ी-वड़ी वातें। मिनिस्टर लोग हर पार्क की मीटिंगों में उपदेश देने में उस्ताद हैं। इधर दिन-पर-दिन घर के किराये किस तरह वढ़ रहे हैं, देखते हैं न ! अव सुन रहे हैं, हिन्दू कोड विल पास करेंगे। उससे लड़कियाँ भी लड़कों की तरह जायदाद में हिस्सा लेंगी।'

'हिस्सा लेंगी माने ?'

पास के सज्जन वोले, 'हिस्सा लेंगी माने, समझ लीजिये कि वाप के मरने के वाद अभी तक तो लड़कों ही में जायदाद का वँटवारा होता था, अव से लड़कियाँ होने पर वे भी भाइयों की तरह वरावर हिस्सा पायेंगी। लड़कियों की शादी करने में हजारों रुपये खर्च करना पड़ते हैं, तिस पर जायदाद में भी वरावरी का हिस्सा ! वीच में होगा क्या, भाई-वहनों में मुक़दमेवाज़ी होगी। वकील, अटॉर्नी रुपये लूटेंगे और जायदाद-आयदाद सव वेचकर मुक़दमे में लगा देना पड़ेगा।'

यह भी एक समस्या है। जव देश स्वतन्त्र हुआ था तो आदमी ने वहुत-से सपने देखे थे—'दो सौ वरस वाद अँग्रेज़ गये। अव हम लोगों का ही राज्य है, हमारा ही सव-कुछ है।'

लेकिन शनिवार के आते ही ज़्यादा जुलूस निकलते। उस दिन ऑफ़िस के लोगों की पहले-पहले छुट्टी रहती। लेकिन पहले-पहले छुट्टी होने से ही जल्दी-जल्दी घर लौट सकेंगे, ऐसी कोई वात नहीं रहती। उस दिन मॉनूमेंट के नीचे लाल शालू का लम्वा झंडा टाँग दिया जाता। लोग समझ जाते कि वहाँ मीटिंग होगी। कुछ वेकार लोग पहले आकर जमा हो जाते। उसके वाद इकट्ठा होते ऑफ़िस से लौटते लोगों के झुंड-के-झुंड !

वहाँ शाम होते ही पार्टी के लोग पहुँच जाते। एक मेज़ और दो टूटी कुर्सियाँ पहले से पड़ी रहतीं।

वहाँ पूर्ण वावू ही प्रेज़ीडेंट और पूर्ण वावू ही वक्ता रहते। वहुत दिनों से भाषण देते-देते और सुनते-सुनते कुछ लोगों को अरुचि हो चली थी। लेकिन चुनाव निकट आते ही फिर मीटिंगें गरम होना शुरू हो गयीं। फिर आजकल ज़्यादा लोग आकर जमा होने लगे। फिर गरमागरम भाषण सुनकर लोगों का खून गरमा जाता।

मीटिंग जव समाप्त होती तो फिर जुलूस वनाकर श्याम-वाज़ार और भवानीपुर की ओर नारे लगाते-लगाते वे लोग अलग-अलग दलों में चले जाते।

उस दिन मीटिंग के वाद देवेश भागता-भागता आया।

सुरेन वोला, 'क्या है, रे ? क्या वात है ?'

सुरेन उसी वक़्त घूम-फिरकर घर लौटा था। उस वक़्त तक हाथ-पैर

और मुंह नही धोये थे। सारे घर मे भी उस वक्त सन्नाटा था। माँ जी की हालत अब-तब हो रही थी।

देवेश बोला, 'सुना है ? सुव्रत की बहन गवाह बन रही है ?'

'सुव्रत की बहन ! पमिली ? कहाँ की गवाह ?'

देवेश बोला, 'अरे जाँच-कमीशन में। तेरा, अपना, टुलू—सभी का नाम दे आया हूँ, तुझे याद नही ?'

सुरेन बोला, 'लेकिन पमिली किधर की गवाह है ? अपने बाबा की ओर से ? माने कांग्रेस के पक्ष में ?'

देवेश बोला, 'वह कैसे मालूम होगा ? मैं तो तुझसे वही बात पूछने आया हूँ। तू एक बार जाकर पमिली से मिल आ न !'

सुरेन बोला, 'उस दिन जो धरमतल्ला के मोड पर उसकी गाडी जला दी थी। गुंडों ने पीछा किया था, शायद वह सब बातें बतायेगी।'

'तो तू जाकर ज़रा मिल आ न !'

सुरेन बोला, 'लेकिन पमिली के पास मेरे जाने का तो रास्ता बन्द हो चुका है।'

'क्यों ? तुझे क्या हुआ ? तू तो उनके घर इतना जाया करता था !'

सुरेन बोला, 'वह जाना बन्द हो गया है। पुण्यश्लोक बाबू मुझ पर खफा हो गये हैं।'

'क्यो, अचानक खफा क्यों हो गये ? तूने क्या किया था ?'

सुरेन बोला, 'पुण्यश्लोक बाबू को पता चल गया कि मैं तुम लोगो की पार्टी के साथ मेल-जोल रखता हूँ। तुम लोगो की मीटिंगो मे हिस्सा लेता हूँ, पूर्ण बाबू के लिए वोट इकट्ठे करता हूँ। उन्हे सब बातों का पता चल गया है। उस घर में जाने का अब मुझे मुमानियत है।

उन लोगों की बातों के बीच मे ही सुधन्य आकर खडा हो गया। उसका चेहरा उतरा हुआ लग रहा था।

सुरेन बोला, 'क्या हाल हैं ? बहुत दिनों से आप दिखायी नही पडे ?'

सुधन्य बोला, 'मैं तो रोज ही आता हूँ, आप ही नही दिखायी पडते। आप रोज सुबह ही निकल जाते हैं।'

देवेश बोला, 'तो मैं चलूँ, रे ?'

सुरेन बोला, 'अभी कहाँ जा रहा है ?'

देवेश बोला, 'अब आज कही नही जाऊँगा। कल सवेरे चार बजे से फिर शुरू होगा।'

'तुझसे फिर कब भेंट होगी ?'

देवेश उस समय दरवाजे की ओर बढ रहा था। सुरेन उसे छोडने के

लिए एकदम सड़क तक आ पहुँचा।

देवेश ने पूछा, 'वह आदमी कौन है, रे?'

सुरेन बोला, 'वह इस घर का कोई नहीं है।'

'इस घर का कोई नहीं है तो यहाँ क्या करने आया है? ज़रा भी शराफ़त नहीं जानता। हम दोनों बातें कर रहे हैं, इस बीच आकर नाक घुसेड़ता है। है कौन?'

सुरेन बोला, 'वह उसी तरह है। तुझसे मेरी क्या बात हो रही है, वही जानना चहता है। हमारी ही बातें नहीं, इस घर में जो कुछ होगा, उसमें वह नाक घुसेड़ता है। असल में इस घर में एक पहले का बहुत पुराना, बूढ़ा नौकर है, उसी का भतीजा है। नौकर की बहुत उमर हो गयी है। उसे देखने आता है, और क्या! तो कल-तू कहाँ रहेगा?'

देवेश बोला, 'कल मेरे साथ चलेगा? मैं वीरभूम की ओर जाऊँगा। सिर्फ़ कलकत्ता देखने से तो नहीं चलेगा। मफ़स्सल की ओर भी तो जाना पड़ेगा। वहाँ के वोटरों के घर-घर जाकर कह आना होगा।'

'तो तू तो उस बार वहाँ सब जगह घूम आया था?'

देवेश बोला, 'हवा देखने जा रहा हूँ। यह जो प्रवेश सेन है, पुण्यश्लोक बाबू सबसे ज़्यादा उसी पर विश्वास करते हैं। विश्वास करके सारा रुपया-पैसा उसी को देते हैं। लेकिन प्रवेश ने उसी रुपये से अपना एक मकान बनवा लिया है।'

सुरेन बोला, 'मैं तेरे साथ जाऊँगा।'

देवेश बोला, 'चल न, दो दिन रुककर चले आयेंगे। मेरे साथ तू घूम सकेगा? खेत-खेत में किसानों के साथ चिलकती धूप में तपना होगा।'

सुरेन बोला, 'वह कर सकूँगा।'

देवेश बोला, 'मैं ज़्यादा देर न लगाऊँगा। पहले तो चुनाव है, उसके बाद जाँच-कमीशन बैठेगा—कुछ जोड़-तोड़ तो मुझे ही करना पड़ेगा।'

'तो मैं तेरे यहाँ कब आऊँ?'

देवेश बोला, 'सवेरे चार बजे पार्टी-ऑफ़िस चले आना।'

सुरेन बोला, 'अच्छा।'

'मैं तेरे लिए इन्तज़ार करूँगा। टुलू को भी साथ लिये जा रहा हूँ।'

'ठीक है।'

कहकर देवेश चला गया।

सवेरा हो गया था। ठीक सवेरा नहीं, भोर होने को थी, यह कहना ही ठीक है। बहादुरसिंह उस समय तुरन्त नींद से उठकर सदर गेट खोल रहा था। सहसा एक गाड़ी आकर बाहर खड़ी हो गयी।

'सुरेन सान्याल है ?'

बहादुरसिंह ने गाड़ी देख ज़रा सम्मान के साथ दरवाज़ा खोल दिया। बोला, 'आप कहाँ से आये हैं, हुज़ूर ? क्या नाम बताऊँगा ?'

वह बोला, 'कह देना, उसका दोस्त सुव्रत है। सुव्रत राय, अमेरिका से आया है।'

बहादुरसिंह ने अमेरिका का नाम सुनकर और गाड़ी देखकर श्रद्धा के साथ सलाम किया। उसके बाद भाजे बाबू को बुलाने भागा। सुव्रत गाड़ी में ही बैठे-बैठे राह देखने लगा।

लेकिन उस वक़्त बहादुर को सुरेन कहाँ मिलता ? सुरेन उस दिन रात को तीन बजे नींद से उठा था। उस समय चारों ओर अँधेरा था। माधव कुंडू लेन का मकान तब नींद में बेहोश था। आहिस्ता-आहिस्ता बिस्तर छोड़कर वह नल के नीचे गया। आँगन की बत्ती जलायी। उसके बाद दुखमोचन के कमरे की ओर नल के कमरे में जाते ही पीछे से आवाज़ आयी, 'कौन ?'

सुरेन बूढ़े बाबू की आवाज़ सुनते ही पहचान गया।

पास जाकर बोला, 'मैं हूँ बूढ़े बाबू, मैं।'

'ओ, भांजे बाबू।'

सुरेन बोला, 'हाँ, आप सोये नहीं ?'

बूढ़े बाबू बोले, 'मुझे रात में नींद नहीं आती, भाजे बाबू। रात होने के पहले लगता है कि बहुत नींद आयेगी, आँखें बन्द कर लेटा रहता हूँ, लेकिन किसी तरह नींद नहीं आती। रात-भर जागकर काटता हूँ।'

सुरेन बोला, 'तब तो तुम्हें बड़ी तकलीफ है, बूढ़े बाबू ? सोये बिना आदमी ज़िन्दा कैसे रहेगा ? डॉक्टर क्या कहता है ?'

बूढ़े बाबू हथेली उलटकर बोले, 'डॉक्टर क्या कहेगा ? मैं तो गंगा की ओर पाँव किये ही बैठा हूँ। डॉक्टर मरे हुए आदमी को ज़िन्दा नहीं कर सकता।'

सुरेन बोला, 'वैसी बातें न सोचिये। आदमी के हाथ में तो कुछ सामर्थ्य नहीं है, भगवान् जैसा कर रहे हैं, वैसा ही होता है।'

बूढ़े बाबू बोले, 'यह बात जो आपने कही, वही असल बात है। तुमने जो इस उमर में भगवान् का नाम लिया, उसी से मुझे बड़ी खुशी हुई। तुम्हारी उमर में बेटा, मैं भगवान्-अगवान् कुछ नहीं मानता था, अब इसीलिए इतना भुगत रहा हूँ।'

सुरेन बोला, 'मैं भी पूरी तरह भगवान् को नहीं मानता, बूढ़े बाबू। मान नहीं पाता।'

'तुम भगवान् को नहीं मानते ? क्यों ?'

सुरेन बोला, 'कैसे मानूँ, बताइये ? क्या भगवान् है ? भगवान् अगर होता तो क्या आपकी यह दुर्दशा होती, या माँ जी को इतना दुःख और कष्ट होता ? माँ जी ने किसकी क्या बुराई की है कि इतना कष्ट भोग रही हैं ? माँ जी की बीमारी तो ठीक नहीं हो रही है।'

बूढ़े बाबू ने कोई जवाब नहीं दिया। सुरेन को लगा कि माँ जी की बात सुनकर मानो बूढ़े बाबू को कुछ कहने को नहीं रह गया हो। इतने दिनों से सुरेन बूढ़े बाबू को देखता आया है। उसने बूढ़े बाबू को बीमार के सिवा कुछ नहीं देखा। नल के नीचे स्नान समाप्त कर जब कपड़े बदल सड़क पर निकला तो उस वक़्त भी वे बातें सुरेन के दिमाग़ में चक्कर काटने लगीं। उसने छुटपन से ही यहाँ आकर कितना कुछ देखा है। सचमुच कितना देखा है, फिर भी और कितना ही देखने को रह गया है। वह पुण्यश्लोक बाबू, उन पुण्यश्लोक बाबू की लड़की पमिली, लड़का सुव्रत। वह देवेश, वह टुलू, उनकी वह पार्टी। सभी किस नशे में भाग-दौड़ कर रहे हैं ? उससे किसका क्या फ़ायदा-नुक़सान होगा ? उस आदिकाल से कितने हज़ारों, लाखों, करोड़ों इंसानों ने भी जन्म लिया, अब भी ले रहे हैं, और भविष्य में भी लेते रहेंगे। वे भी इसी तरह अर्थ के पीछे, सम्मान के लिए, मनुष्य के उपकार के लिए, और कोई-कोई मनुष्य की हानि के लिए जी-जान से कोशिश कर गये और करेंगे। लेकिन उससे किसका फ़ायदा या नुक़सान हुआ या होगा ?'

सोचने से अक्सर अचम्भा होता। सुरेन भी सोचकर आश्चर्य में पड़ जाता है। किसलिए वह इस दुनिया में पैदा हुआ ? वह क्या इस माधव कुंडू लेन के घर के मालिक की जायदाद लेने के लिए आया ? या देवेश के साथ घूम-घूमकर पार्टी का काम करने के लिए ? या इतिहास की यह जयमाला देखने के लिए ही ! अगर देखने ही आया है तो देखने से उसे क्या फ़ायदा या नुक़सान होगा ?

रात हल्की होती आ रही थी। रात के तीन बजने के वक़्त नहाकर वह घर से निकला। उसके बाद वह चलते-चलते बहू-बाजार में देवेदा की पार्टी के ऑफिस के पास आ पहुँचा। इस वक़्त सवेरे के चार बजे थे। अँधेरा इस वक्त हल्का हो गया था।

इतने सवेरे ही दरवाजा खुला था।

सुरेन जीने से ऊपर गया। एक-दो मेंबर उस वक़्त उठ गये थे। कई लोगों के चेहरे कुछ पहचाने-से थे।

सुरेन बोला, 'देवेदा उठा है क्या? जरा बुला देंगे।'

एक ने कुछ उत्सुकता दिखायी। बोला, 'देवेदा-दा? देवेदा-दा तो चले गये।'

'यह क्या? देवेदा बीरभूम चला गया? लेकिन मेरे साथ चलने की बात थी?'

लड़का बोला, 'यह तो नहीं मालूम। यही कुछ पहले चले गये।'

'जाते समय कुछ कह नहीं गये?'

'न, कुछ कहकर तो नहीं गये।'

'तो इस वक़्त सियालदह स्टेशन जाने से मुलाकात हो जायेगी?'

लड़का बोला, 'यह तो नहीं कह सकता।'

सुरेन और कुछ न बोला, सीधे फिर सीढ़ी से सड़क पर उतर आया। कितने बजे ट्रेन छूटती थी, इसका पता न था। बूढ़े बाबू से बात करने के कारण ही शायद देर हो गयी। बातें न करता तो शायद देवेदा से उसकी भेंट हो जाती। फिर भी पैदल ही सियालदह स्टेशन की ओर सुरेन चलने लगा।

सुव्रत सवेरे ही माधव कुंडू लेन चला आया था। सोचा था कि इतने सवेरे जरूर सुरेन से मुलाकात हो जायेगी। लेकिन इतने सवेरे वह कहाँ निकल गया! कलकत्ता उतरने के बाद सुव्रत अचम्भे में पड़ गया था। पहले भी यही कलकत्ता था। लेकिन आज वह इस कलकत्ता को पहचान नहीं पा रहा था। जैसे सब-कुछ बदल गया था। अमेरिका जाने के पहले के कलकत्ता के साथ जैसे इसका कोई मेल ही न हो।

प्लेन से उतरते ही सुव्रत अचम्भे में पड़ गया था।

सोचा था कि बाबा आयेंगे, या शायद फैमिली आयेगी।

लेकिन वैसा नहीं, सिर्फ जगन्नाथ अकेला गाड़ी लिये खड़ा था।

माल-असबाब उस समय छूटा नहीं था। जगन्नाथ देखते ही नजदीक आया। बोला, 'नमस्कार, दादा बाबू!'

'क्यों रे, जगन्नाथ है न ? गाड़ी ले आया है ?'

जगन्नाथ ने हँसकर जवाब दिया, 'हाँ ।'

'और कोई नहीं आया ?'

जगन्नाथ बोला, 'नहीं ।'

सुव्रत और कुछ न बोला । सिर्फ़ थोड़ा ताज्जुब में पड़ गया था। लेकिन रास्ते में आते-आते गाड़ी सहसा रुक गयी । एक लम्बा जुलूस एक सड़क भरकर चल रहा था । हिलने का नाम नहीं । बस-ट्राम-रिक्शा-साइकिल—सब जाम हो गये थे ।

सुव्रत तंग हो गया । पूछा, 'यह सब क्या है, रे ?'

जगन्नाथ बोला, 'इस तरह रोज़ होता है, दादा बाबू ।'

'यह किनका जुलूस है ?'

'इन्क़लाब ज़िन्दाबादी लोगों का ।'

'उसके माने ? इन्क़लाब ज़िन्दाबादी के क्या माने ?'

'जी दादा बाबू, यह रोज़ निकलता है । लाल झंडे वालों का जुलूस है । अब यहाँ एक घंटा रुके रहना पड़ेगा ।'

सो जगन्नाथ की बात ही सच हुई । एक घंटा के पहले जुलूस का चलना एक क़दम भी नहीं टला । सड़क-फ़ुटपाथ—सब आदमियों की भीड़ से एक-बराबर पट गये थे । लोग ऑफ़िस न जा सके, उतनी देर के लिए काम-काज सब बन्द हो गया । सुव्रत नाक पर रूमाल लगाकर गाड़ी में चुपचाप बैठा पसीने में तर-बतर हो गया ।

पूछा, 'हाँ रे, बाबा इन लोगों को कुछ कहते नहीं ?'

जगन्नाथ बोला, 'बाबू की बात अब वैसे कोई नहीं सुनता, दादा बाबू ।'

सुव्रत को ताज्जुब हुआ । बोला, 'ऐसी बात है ? क्यों रे, क्यों नहीं सुनते ?'

'न दादा बाबू, कांग्रेस की बात अब कोई सुनना नहीं चाहता । सुनते तो हैं कि इस बार चुनाव होगा, कोई कांग्रेस को वोट न देगा, बाबू को भी वोट न देगा ।'

'बाबा को वोट न देंगे ?'

जगन्नाथ बोला, 'नहीं ।'

'क्यों ?'

'यह नहीं पता ।'

कहकर फिर गाड़ी चलाने लगा । सुव्रत बोला, 'दीदी कैसे है, दीदीमणि आज एयरपोर्ट क्यों नहीं आयी ?'

जगन्नाथ बोला, 'दीदीमनि की तबीयत खराब है।'

'बीमार ? क्या बीमारी है ? मुझे तो बाबा ने चिट्ठी में कुछ नहीं लिखा। अब कैसी है ?'

जगन्नाथ बोला, 'अब भी तो घर से नहीं निकलतीं। सिर्फ चुपचाप लेटी रहती हैं। किसी से ज्यादा बात भी नहीं करतीं।'

बात सुनकर सुव्रत का मन अजीब खराब-सा हो गया। सुव्रत ने सोचा था, उसके कलकत्ता आने के साथ-साथ सारे घर में उत्सव की लहर उमड़ पड़ेगी। इतने दिनों के बाद वह लौट रहा था। इतने दिनों उसने इसी दिन की राह देखी थी। सोचा था कि और कोई न आये, पमिली जरूर आयेगी। लेकिन सब जैसे उलट-पलट गया।

'हाँ रे, मेरे उस दोस्त का क्या हाल है ? वही सुरेन। वही जिसके साथ मैं एक ही स्कूल में एक ही क्लास में पढ़ता था। वह हमारे घर आता है ?'

'पहले बीच-बीच में आया करते थे, अब नहीं आते।'

सुव्रत बोला, 'क्यों ब्याह-उब्याह करके वक्त नहीं मिलता शायद ?'

जगन्नाथ बोला, 'न, बाबू ने आने से रोक दिया है।'

'क्यों ? बाबा ने क्यों रोक दिया ? उसने क्या किया था ?'

जगन्नाथ बोला, 'सुरेन बाबू लाल झण्डा दल में जाकर मिल गये हैं।'

'यह क्या ?'

जगन्नाथ बोला, 'हाँ दादा बाबू, कम्युनिस्ट लोगों ने एक दिन दीदीमनि की गाड़ी जला दी थी।'

सुव्रत चौंक उठा, 'पमिली की गाड़ी ? जला दी ? क्यों ?'

जगन्नाथ बोला, 'बाबू कांग्रेस के आदमी हैं न। कांग्रेस वालों की गाड़ी मिलते ही जला देते हैं।'

'तो दीदी की गाड़ी कौन चला रहा था ?'

'मैं।'

सुव्रत बोला, 'तू ? तू चला रहा था ? तुझे कुछ नहीं हुआ ?'

'मैं साथ-ही-साथ भाग गया था। इसीलिए बच गया।'

'और दीदीमनि ?'

जगन्नाथ बोला, 'दीदीमनि को पुलिस बचाकर कांग्रेस-ऑफिस ले गयी थी। इसी सब मामले की जाँच-पड़ताल के लिए तो अब कमेटी रही है। उस कमेटी के आगे मुझे गवाह बनने को कहा गया है। मैं गवाही दूँगा।'

इसी बीच वे घर आ पहुँचे थे। गाड़ी से उतरते ही सुव्रत

पिता के कमरे में गया।

'बाबा, बाबा...!'

हरिलोचन मुंशी रोजमर्रा की तरह दफ़्तर में बैठे काम कर रहे थे। साहब के बेटे को आते देख उठ खड़े हुए।

'कैसे हैं, हरिलोचन बाबू ? सब ठीक है न ?'

हरिलोचन मुंशी के पिचके गालों पर हँसी फूटी।

बोले, 'हाँ, खोका बाबू, अच्छा हूँ।'

'बाबा कहाँ हैं ?'

हरिलोचन मुंशी बोले, 'वे तो चले गये हैं।'

सुव्रत बोला, 'ठीक है, आप काम कीजिये।'

उसके बाद सहसा कुछ याद आ गया। फिर कमरे में लौट आया। बोला, 'अच्छा हरिलोचन बाबू, जगन्नाथ कह रहा था कि बाबा ने सुरेन को इस घर में आने को मना कर दिया है ?'

हरिलोचन बाबू बोले, 'हाँ।'

हरिलोचन की आँखों के सामने उस दिन बात हुई थी। लेकिन बात खोका बाबू को बताना ठीक है या नहीं, इसका फ़ैसला नहीं कर पा रहे थे।

'क्यों निकाल दिया ? सुरेन ने क्या किया था ?'

हरिलोचन बाबू बोले, 'मुझे वह ठीक से नहीं मालूम।'

'ओः,' कहकर सुव्रत ज़ीने से झटपट चढ़ते-चढ़ते चिल्लाने लगा, 'दीदी, ओ दीदी, मैं आ गया, रे।'

कहकर पमिली के कमरे के सामने पहुँचकर दरवाज़े को धक्का दिया। तब पता चला कि दरवाज़ा बन्द है।

चिल्लाकर पुकारने लगा, 'ए दीदी, दरवाज़ा खोल, मैं आ गया, इतनी देर तक तू सोयी हुई है। खोल, दरवाज़ा खोल।'

पमिली ने अन्दर से कोई जवाब नहीं दिया। जैसे वह कुछ सुन न पा रही हो। तो क्या उसकी नींद टूटी नहीं ? इतनी देर तक दीदी सो रही है !

लेकिन और कितनी देर तक खड़े रहा जाये !

नीचे से भागते-भागते रघु आ पहुँचा। वह अपराधी की तरह आकर खड़ा हो गया।

सुव्रत बोला, 'अभी तक तू कहाँ था ? मैं कब का आ गया और तेरा पता नहीं।'

रघु ने उस बात का जवाब न देकर सहसा दादा बाबू के पैरों पर सिर

रखकर प्रनाम ठोंक दिया।

बोला, 'कैसे हैं, दादा बाबू ?'

सुव्रत जैसे पिघल गया। रघु की अक़्ल देखकर हँस पड़ा।

बोला, 'देखता हूँ, तेरी अक़्ल तो बहुत बढ़ गयी है। सोचा है कि प्रनाम करने से ही सारे क़सूर माफ़ हो जायेंगे ? कब का आया, तेरा कोई पता नहीं। दीदीमनि क्या आजकल इतनी देर तक सोती रहती हैं ?'

रघु बोला, 'अपने कमरे में चलिये दादा बाबू, आपका कमरा मैंने ठीक-ठाक कर रखा है। बाबू ने मुझसे सब ठीक-ठाक करने को कह दिया था।'

सचमुच पुण्यश्लोक बाबू ने बेटे के कमरे को ठीक-ठाक करके रखने को कहा था। नया फ़र्नीचर ख़रीदा गया था, सब-कुछ नया। लड़का अब बड़ा हो गया है। अमेरिका घूम आया है। उसकी रुचि के अनुसार कमरा सजा देना होगा। बहू-बाज़ार की एक दूकान को ऑर्डर देकर फ़र्नीचर बनवा लिया था। रुपये का सवाल नहीं था, असल बात थी रुचि की। जो लड़के की रुचि के साथ मिले, अनुकूल हो। असल में इस प्रतिष्ठा और सम्मान के सब-कुछ का हिस्सा मानो सुव्रत को मिला हो। पुण्यश्लोक बाबू ने ज़िन्दगी-भर अपनी प्रैक्टिस नष्ट की, जेल भुगती, बड़े आदमी के बेटे होने पर भी बस्तियों में घूमकर सामाजिक कार्य किया। किसके लिए किया था ? परोपकार करने के लिए ? परोपकार करना अच्छा है। उससे परलोक में सुख मिलता है। किन्तु परलोक तो मन और वाणी से अदृष्ट है। वे सब बातें बाद में सोची जायेंगी। पहले इह-काल का तो निस्तार हो। ऐहिक सुख के लिए ही तो इतना कुछ किया—यह कांग्रेस-फांग्रेस जो है तो इहकाल के उस धाम के लिए पूरा हिस्सा तो उन्हें मिल ही रहा है। अच्छा ही मिल रहा है। ख़ुद को जो मिल रहा है, वैसे ही वह लड़के को भी मिलता रहे, उसका इन्तज़ाम भी किये जा रहे हैं। यह जो चुनाव आ रहा है, इसमें तो उन्हें उतरना पड़ेगा। उतरकर जीतना होगा। उसके बाद जब वे न रहेंगे तो उनका लड़का भी चुनाव में उतरेगा। वह भी मिनिस्टर बनेगा। इस तरह उनकी तरह ही बेटे को भी बराबर हिस्सा मिलता रहेगा। उसके बाद उसके बेटे के बेटे को। बेटे के बेटे के बेटे को। वंशानुक्रम से इसी तरह उनकी पद-मर्यादा का झण्डा उनके उत्तराधिकारी फहराते चलेंगे। यही तो उनकी कामना है, यही तो उनकी आकांक्षा है।

शाम को पुण्यश्लोक बाबू घर आये। आते ही जगन्नाथ को पुकारा। बोले, 'दादा बाबू को लेने एयरपोर्ट गया था ?'

जगन्नाथ बोला, 'गया था।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'कुछ असुविधा तो नहीं हुई ? ठीक वक़्त पर प्लेन आ गया था ?'

जगन्नाथ बोला, 'हाँ।'

'दादा बाबू घर पर हैं ?'

जगन्नाथ बोला, 'नहीं, वे बाहर गये हुए हैं।'

'यह क्या ? आते ही निकल गया ? खाना-पीना ?'

'खा-पीकर निकले हैं।'

'कहाँ गया है, रे ? गाड़ी ? गाड़ी लेकर निकला है ?'

जगन्नाथ बोला, 'हाँ, दीदी की गाड़ी लेकर निकले हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू और कुछ न बोले। उस वक़्त बहुत-सी समस्याएँ उनके दिमाग़ में चक्कर काट रही थीं—चुनाव की चिन्ता, जाँच-कमीशन की फ़िक्र, पार्टी में ओहदा मिलने की फ़िक्र। उन्हें कुछ कम चिन्ताएँ हैं क्या ? सिर्फ़ हिस्सा ही तो नहीं, पूंजी भी तो लगानी पड़ती है ! बड़ी भारी पूँजी—इतने दिनों जेल भुगतना, इतने दिनों का सामाजिक कार्य ! इसीलिए तो वे आज मिनिस्टर हैं। अब वे जहाँ जाते हैं वहाँ लोग उनकी बात सुनते हैं। लोग उनका सम्मान करते हैं। लेकिन यह सम्मान कितने दिनों तक करेंगे ? इस बार के चुनाव में उन्हें अगर ठीक से वोट न मिलें तो ?

यह बात सोचने में भी उन्हें डर लगता। पाँच बरसों के बाद इस डर का सामना करना पड़ता है। जीवन में कुछ भी तो चिरस्थायी नहीं है। जिस तरह रुपया चिरस्थायी नहीं—सम्मान, प्रतिपत्ति, प्रतिष्ठा भी वैसे ही हैं। कोई नहीं कह सकता कि उनकी उम्र कितने दिनों की है ? विशेष रूप से राजनीति में तो वह और भी अधिक क्षण-भंगुर है। वे राजनीति में आये ही क्यों ? उन्हें इस लाइन में कौन ले आया ? आज जो सम्मान उनकी मुट्ठी में है, कल क्या वह रहेगा ?

पुण्यश्लोक बाबू का सारा दिन बड़ी यन्त्रणा में बीतता। कभी कांग्रेस-ऑफ़िस, कभी राइटर्स बिल्डिंग—कहीं भी उन्हें शान्ति नहीं मिलती। फ़ाइलें मेज़ पर पहाड़ बन गयीं। ऑफ़िस के क्लर्क भी जैसे समझ गये हों कि मिनिस्ट्री बदल जायेगी। पहले की तरह भय-भक्ति वे लोग नहीं दिखाते थे। तो क्या वह उन सबकी आँखों में सहसा बहुत छोटे हो गये थे ? इतने दिनों तक जो उन्होंने जेल काटी, इतने दिनों तक तमाम नौकरियाँ दीं, तमाम लाइसेंस-परमिट बाँटे, वह क्या इसीलिए ? उसका क्या कोई मूल्य नहीं ? मुझे ही अगर तुम लोग नहीं देखोगे तो मैं ही तुम्हारी फ़िक्र क्यों करता रहा ?

'बाबू, आपका खाना लगा दूं ?'

अचानक पुण्यश्लोक बाबू को ध्यान आया।

बोले, 'हां रे, खोका आ गया ?'

'नहीं, बाबू।'

पुण्यश्लोक बाबू ने घड़ी की ओर देखा। रात के नौ बजे थे। रात के नौ तक वह कहां है ? कलकत्ता शहर में उसके जाने की इतनी जगहें कब हो गयी ? आज ही अमेरिका से लौटकर उनसे मिलकर जाता तो उसका क्या हो जाता ? यह सच है कि मैं घर पर नहीं था, लेकिन मैं भी तो काम-काजी आदमी हूं। पूरे देश की समस्या मेरी अपनी समस्या है। मैं अगर खुद एयरपोर्ट न जा सका तो ऐसा जुल्म क्या हो गया ?

'हां रे, दीदीमणि खोका को लेने गयी थी ?'

रघु बोला, 'ना, जगन्नाथ अकेले ही गाड़ी लेकर गया था।'

'क्यों ? मैंने पमिली से एयरपोर्ट जाने को कहा था ?'

'ना, दीदी बहुत देर से सोकर उठी। दादा बाबू से भेंट ही नहीं हुई।'

पुण्यश्लोक बाबू ताज्जुब में आ गये। इतने दिनों बाद सुव्रत आया और पमिली ने उससे भेंट ही नहीं की। यह कैसा सम्बन्ध है ? लेकिन पहले तो ऐसा नहीं था। पहले तो दोनों खूब झगड़ते थे। झगड़ते भी थे और प्यार भी करते थे। अचानक इन कुछ ही बरसों में क्या हो गया कि सब-कुछ बदल गया ?

'हां रे, दीदीमणि कमरे में है ?'

रघु बोला, 'हां, है।'

पुण्यश्लोक बाबू उठे। बोले, 'आज मैं खाऊंगा नहीं, बाहर से खा आया हूं। दीदीमणि अगर खायें तो उन्हें खाना दे आ।'

रघु बोला, 'दीदी ने खा लिया है।'

यह क्या ! पुण्यश्लोक बाबू कुछ देर रघु की ओर एकटक देखते रहे। जैसे वे रघु में पमिली को ही देख रहे हों। ऐसा तो नहीं होता था। इतनी तरह से मन के खिचाव में भी तो पमिली जिस रोज घर में रही है उस दिन पुण्यश्लोक बाबू के साथ ही खाने बैठी। उसके सिवा अब सुव्रत आया है। इतने दिनों के बाद घर आया है। इस हालत में उसने झटपट खा क्यों लिया ?

'अच्छा, तू जा।'

कहकर धीरे-धीरे पमिली के कमरे की ओर चलने लगे। रघु पहले ही अपने निजी काम से चला गया था। पुण्यश्लोक बाबू जाकर पमिली के

कमरे के सामने खड़े हो गये।

पुकारा, 'पमिली, पमिली !'

बहुत देर पुकारने के बाद पमिली ने अन्दर से दरवाज़ा खोल दिया। पुण्यश्लोक बाबू ने ग़ौर से पमिली के चेहरे की ओर देखा।

बोले, 'तुझे क्या हो गया है, रे पमिली ? तबीयत खराब है क्या ?'

पमिली दरवाज़ा खोलकर फिर बिस्तर पर जाकर बैठ गयी। पुण्यश्लोक बाबू भी आहिस्ता-आहिस्ता अन्दर आ गये। उसके बाद एक कुर्सी पर बैठ गये।

बोले, 'बेटी, तुम्हें क्या हो गया है ? सुना है कि सुव्रत से तुम्हारी भेंट ही नहीं हुई है। इतने दिनों के बाद सुव्रत आया, उससे तुमने एक बार भेंट नही की। उसने क्या सोचा होगा, बताओ तो ?'

पमिली ने कोई जवाब नहीं दिया।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'क्यों, कोई जवाब नहीं दे रही हो ?'

पमिली बोली, 'मुझे कुछ अच्छा नहीं लगता।'

'अच्छा नहीं लगता, माने ?'

पमिली बोली, 'बताया तो, कुछ अच्छा नहीं लगता।'

'क्यों कुछ अच्छा नहीं लगता ?'

पमिली बोली, 'वह नहीं मालूम।'

पुण्यश्लोक बाबू ने जोर से कहा, 'क्यों नहीं मालूम ? तुम्हें कुछ अच्छे न लगने का सबब क्या और लोगों को पता होगा ? बोलो, जवाब दो।'

पमिली चुप किये रही।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम्हें क्या हो गया है, बताओ तो ? क्या हो गया है ? तुम क्या चाहती हो ?'

पमिली बोली, 'मैं कुछ भी नहीं चाहती। तुम इस कमरे से अब जाओ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'क्यों जाऊँ ? तुम्हारे अच्छे-बुरे के बारे में जानने का मुझे अधिकार है। बताओ, तुम्हें क्या हो गया है ? अब तुम क्लब क्यों नहीं जातीं ?'

पमिली बोली, 'मैंने कहा तो, मैं नहीं चाहती।'

'लेकिन क्यों नहीं चाहतीं ? किसने तुम्हें चाहने से रोका है ? मैंने बैंक में तुम्हारे नाम से एकाउंट खोल दिया है, उसमें तुम्हें और रुपयों की ज़रूरत है ?'

'नहीं।'

'साड़ी, गहना ?'

'न, न, मुझे कुछ भी नहीं चाहिए, मैं बार-बार कह रही हूँ कि मुझे कुछ नहीं चाहिए। फिर भी तुम बेकार मुझे बार-बार तंग करते हो।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मैं तुम्हारा पिता हूँ। तुम्हारी माँ नहीं है। छुटपन से मैं ही तुम्हारा पिता, मैं ही तुम्हारी माँ हूँ। मुझसे कुछ बताने में शर्म मत करो। बताओ, तुम शादी करोगी?'

'न।'

'किसी को प्यार करती हो? बताओ, शरमाओ मत।'

पमिली सहसा गुरमा हो गयी। बोली, 'ओः, तुम क्या मुझे मार डालना चाहते हो? मैंने तुम्हारा क्या नुकसान किया है कि तुम मुझसे ऐसी बातें कह रहे हो? तुम मेरे कमरे में क्यों आये? तुमको तो बाहर बहुत काम है। तुम अपने काम में लगे रहो न! तुम्हारी कांग्रेस है, तुम्हारा चुनाव है, तुम्हारी राइटर्स बिल्डिंग है, मुझे तंग करने तुम क्यों आते हो?'

कहकर साड़ी के पल्ले से मुँह ढककर मानो अपनी लज्जा, अपनी यन्त्रणा को ढक लिया। और पुण्यश्लोक बाबू को लगा कि पमिली मानो आँचल की ओट में चुपचाप फफक-फफककर रो रही है।

पुण्यश्लोक बाबू कुछ देर तक हतवाक् रहे। क्या करें, कुछ समझ में नहीं आया। जीवन-भर वे अपनी उन्नति के प्रयत्न में पागल रहे थे। जिनकी खुशामद करके उन्नति की सीढ़ी के डंडों को अनायास पार किया जाये, कांग्रेस के उन सब महारथी-सरदारों की खुशामद करते आये थे। वर्किंग कमेटी के मेम्बरों के घर-घर जाकर अवसर मिलते ही चापलूसी कर-कर आज इस हालत में पहुँचे हैं। लेकिन उसके बदले में? उसके बदले में क्या यही पुरस्कार उन्हें पाना था?

लेकिन आज बहुत देर तक पुण्यश्लोक बाबू अपने को दबाकर न रख सके।

बोले, 'मुँह खोलो पमिली, मुँह खोलो। मेरी बात का जवाब दो। बात करो।'

पमिली ने तब तक अपने को सभाल लिया था। मुँह से आँचल उतार दिया।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'एक खबर सुनी है, तुम बताओ वह सच है या नहीं?'

'क्या खबर?'

'जाँच-कमीशन में तुमने पुलिस के खिलाफ गवाह के रूप में नाम दिया है, यह सच है?'

बोली, 'हाँ, सच है।'

'तुम गवाह बनने क्यों गयीं ?'

पमिली बोली, 'मेरी तबीयत।'

'तुम्हारी तबीयत माने ? तुमने क्या सोचा है कि तुम्हारी जो तबीयत होगी वही करोगी ? मेरी तबीयत नाम की भी तो कोई चीज़ है। तुम जानती हो, मैं मिनिस्टर हूँ। समाज में, गवर्नमेंट में मेरी एक प्रतिष्ठा है। तमाम लोग मेरी बातें सुनते हैं।'

पमिली बोली, 'इसीलिए तो मैं गवाह बनी हूँ। तुम्हारी बातें सब सुनते हैं और मेरी बात कोई नहीं सुनता। इसीलिए मैं चाहती हूँ कि मेरी बात भी कोई सुने।'

'अलग से तुम्हारी क्या बात है ?'

'अपनी बात मैं जज के आगे जाकर सुनाऊँगी।'

'लेकिन तुम्हारी बात क्या है, वही मुझे बताओ। तुम्हारी उम्र ही कितनी है कि तुम्हारी कोई वैसी बात होगी ? बताओ, तुम वहाँ जाकर क्या कहोगी ? गवर्नमेंट के विरुद्ध तुम्हारे कहने की क्या बात हो सकती है ? तुम गवर्नमेंट के बारे में कितना जानती हो ?'

पमिली बोली, 'मैं सब जानती हूँ।'

'सब भला क्या ?'

'मैंने कहा न, वह मैं जज के सामने कहूँगी।'

'फिर भी बताओगी नहीं ? मैं ही तो गवर्नमेंट हूँ। बताओ, तुमने गवर्नमेंट की क्या ग़लती देखी ? गवर्नमेंट के विरुद्ध कहोगी, माने मेरे ख़िलाफ़ कहोगी ? मेरी पुलिस के ख़िलाफ़ ? कांग्रेस के ख़िलाफ़ ?'

पमिली बोली, 'बार-बार तुम मुझसे इतनी बातें मत पूछो। मैं नहीं जानती, कौन गवर्नमेंट है, कौन कांग्रेस है ? मुझे वह सब जानना बाक़ी है। आई डोन्ट केयर टू नो आइदर।[1] मैं जो जानती हूँ उतनी ही मैं गवाही दूँगी।'

पुण्यश्लोक बाबू गम्भीर हो गये।

बोले, 'तो क्या तुम मेरी जीवन-वृत्ति को ही नष्ट करना चाहती हो ?'

पमिली बोली, 'तुम्हारी जीवन-वृत्ति नष्ट होने से मेरा क्या ? मैं तो गवर्नमेंट नहीं हूँ, कांग्रेस की भी कुछ नहीं हूँ।'

'उसके माने ?'

'सीधी ज़बान में ही क्या समझाकर कहना होगा ?'

---

1. न मैं उसे जानने की परवाह ही करती हूँ।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'देखो, इंसान के सहने की भी एक सीमा होती है। तुम वह सीमा पार किये जा रही हो, पमिली ?'

पमिली भी कड़ी पड़ गयी। बोली, 'तुम क्या मुझे डर दिखा रहे हो ?'

'लेकिन याद रखो, तुम मेरी आश्रिता हो। अभी भी मेरे रुपये लेकर ही तुम्हारी सारी ऐशो-इशरत है। पता है, एक क्षण में मैं तुम्हें दिये जाने वाला जेब-खर्च वग़ैरह बन्द कर सकता हूँ ?'

पमिली बोली, 'लेकिन मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि तुम मुझे डर दिखा रहे हो। तो यह भी समझ लो कि मैं डरने वाली लड़की नहीं हूँ। तुम्हारे पैसे-वैसे बन्द करने से भी मैं डरूँगी नहीं। मैंने जो सोचा है वह करूँगी ही।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'लेकिन अगर मैं तुम्हें गवाह न बनने दूँ ?'

'तुम मुझे घर पर रोक रखोगे ?'

'मान लो अगर वही करूँ ?'

'किस तरह तुम रोकोगे ? कमरे में ताला लगाकर बन्द रखोगे ? तुम क्या इतने नीच हो सकते हो ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'पमिली, अभी भी कह रहा हूँ कि तुम अपनी राय बदल दो।'

पमिली बोली, 'क्यों बदल दूँ ? तुम्हारे डर से ?'

'डर से न बदलो नही, मेरे अनुरोध से ही बदल दो।'

पमिली बोली, 'क्यों, मेरी स्वतन्त्र इच्छा नाम से कुछ नहीं है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हज़ार बार है। तुम्हारी स्वतन्त्र इच्छा में दख़ल देने का किसी को अधिकार नहीं है। लेकिन तुम्हारी स्वतन्त्र इच्छा अगर दूसरे लोगों की स्वतन्त्र इच्छा पर बाधा डाले, तो ? अगर उससे दूसरे का नुक़सान हो, तो ?'

'मेरे किये यदि तुम्हारी हानि हो तो मैं क्या कर सकती हूँ ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'देखो पमिली, मैं इस बारे में और कुछ कहना नहीं चाहता। लेकिन एक बात समझ रखो। जो राजनीति करते हैं वे भावना-शावना के नज़दीक भी नहीं फटकते। वैसा अगर हुआ तो मैं भी ख़तरनाक साबित हो सकता हूँ।'

पमिली बोली, 'इसके मतलब ?'

'उसके मतलब मुझसे मत पूछो। जो करूँगा वह मैं ही जानता हूँ।'

'क्या करोगे, साफ़-साफ़ कहो न।'

सहसा रघु बाहर आ खड़ा हो गया।

पुण्यश्लोक बाबू ने उसे देखकर पूछा, 'क्या है, रे ? कुछ कहना है ?'

रघु बोला, 'दादा बाबू आ गये हैं।'
और साथ-ही-साथ सुव्रत आकर कमरे में घुसा।
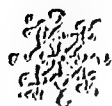
उस दिन जो कुछ उस कमरे में हुआ उसने सुव्रत को आश्चर्य में डाल दिया। बहुत दिनों से वह कलकत्ता आना चाहता था। विदेश जाकर उसे लगा था जैसे वह प्रवासी हो। किसी तरह से भी विदेश को अपने देश में रूपान्तरित नहीं कर सका। बार-बार हूक उठती थी कि वह कलकत्ता कब लौटेगा! लेकिन जितनी बार उसने लौटना चाहा उतनी ही बार पुण्यश्लोक बाबू ने लिखा—और भी कुछ दिनों वहां रहो। रोज-रोज तो अमेरिका जाने का सुयोग नहीं मिलेगा। वहाँ अगर अच्छा न लगे तो कॉन्टिनेन्ट जाओ। कॉन्टिनेन्ट में कुछ दिन घूम-फिर आओ। रुपयों की जब कमी नहीं है, तो तुम्हारे घूमने में हर्ज क्या है? घूमना भी तो एक तरह की शिक्षा है। मैं जब तक हूं, उतने दिन तक तुम्हें किस बात की फ़िक्र है! अभी घूम लो। उसके बाद जब जीविका के जुए में फँस जाओगे तो फिर छुट्टी नहीं मिलेगी।

लेकिन आख़िर सुव्रत रुक न सका। उसका दिन का वक़्त तो वहाँ अच्छा कटता। किसी तरह कॉलेज, दूकान और उसकी चीज़ों, सड़कों, आदमियों को देखते-देखते कट जाता। चारों ओर भाग-दौड़! सभी जैसे भाग रहे हों। किसे पता, किसलिए भाग रहे हैं! कोई भाग रहा है रुपये-पैसे के लिए, कोई सम्मान के लिए, या कोई आनन्द के लिए। लेकिन असल में भागते-भागते सब परेशान हो जाते! क्यों भाग रहे हैं वे लोग, यह भी उस वक़्त भूल जाते थे। जैसे भागने के लिए ही भाग रहे हों। और जब रात उतरती तो लेते ट्रैंक्वलाइज़र, स्लीपिंग पिल्स। उन्हीं को मुंह में रखकर बिस्तर पर लुढ़क जाते। एक नींद में रात बीत जाती।

यहाँ के जीवन के साथ वहाँ के जीवन का मानो आकाश-पाताल का अन्तर है। वहाँ सुव्रत ने कई बरस काट ज़रूर दिये थे, किन्तु वहाँ के जीवन में वह घुल-मिल नहीं सका था। बार-बार उसे केवल घर की ही बात याद आती। जिस दिन काम ख़त्म हो गया, उस दिन एक मुहूर्त भी रुकने की उसकी तबीयत न हुई। सीधे देश की ओर क़दम बढ़ा दिये।

दीदी को चिट्ठी लिख दी, मैं आ रहा हूँ। लेकिन उधर से वैसा कोई जवाब न पाकर सुव्रत बहुत मुसीबत में पड़ गया। तो क्या यह कोई नहीं चाहता कि वह घर लौट आये ?

एयरपोर्ट पर उतरकर जब उसने किसी को न देखा तो उसकी धारणा मानो और पक्की हो गयी। उसे लेने सिर्फ जगन्नाथ आया है। और कोई क्यों नहीं आया ? बाबा क्यों नहीं आये ? और बाबा न सही, उन्हें बहुत काम रह सकते हैं, लेकिन पमिली ? जाने के दिन तो पमिली ही एयरपोर्ट आकर उसे चढ़ा गयी थी। अब लौटते वक्त क्यों नहीं आयी ? उसे ऐसा क्या काम आ पड़ सकता है ? उसके लौट आने से क्या कोई खुश नहीं है ?

उसके बाद घर आकर भी किसी से भेंट न हुई। पमिली को क्या मालूम न था कि वह आज लौटकर आ रहा है ?

सुव्रत का मन यों ही भारी हो गया था, उस पर किसी से भेंट न होने से और भी भारी हो गया। बाबा क्या उसके लिए सारा काम-काज कुछ घंटों के लिए भी स्थगित न रख सकते थे ?

वह गाड़ी लेकर तभी निकल गया। कहाँ जाये ? फिर भी वह छुटपन का कलकत्ता घूमकर देखने गया। लेकिन उस कलकत्ता को वह जैसे पहचान न सका। इस शहर का क्या से क्या हो गया है। कलकत्ता के पार्कों की यह क्या शक्ल है ! वह पहले से कर्ज़न पार्क का स्वरूप इस तरह का हो गया है ? जहाँ हरी घास और मैदान थे वहाँ विस्थापितों का बाजार जुट गया है। यह सब क्या हुआ ? यह सब क्यों हुआ ?

गाड़ी लेकर चलते-चलते एक जगह आकर वह रुका। गाड़ी को रास्ते के किनारे पार्क कर ताला लगाकर वह एक फुटपाथ पर उतरा। फुटपाथ पर झुंड-के-झुंड लोग खड़े थे, चल-फिर रहे थे। जैसे यह दूसरा ही कलकत्ता वह देख रहा था। जैसे यह कोई दूसरा ही शहर हो।

एक सज्जन सुव्रत की ओर बड़ी देर से देख रहे थे। सुव्रत ने भी उधर देखा।

बोला, 'आप मुझसे कुछ कहना चाहते हैं ?'

सज्जन बोले, 'अच्छा, आपसे एक बात पूछूं ? आपका नाम क्या देवाशीष है ? देवाशीष सेन ?'

सुव्रत बोला, 'नहीं तो, मेरा नाम सुव्रत है। सुव्रत राय।'

'ओ, मैंने गलती की। लेकिन बुरा न मानें। देवाशीष बिलकुल आपकी तरह है।'

कहकर सज्जन ने बहुत लज्जित होकर मुँह फेर लिया। लेकिन सुव्रत

बोला, 'न, मुझे बुरा मानने को क्या है ! ऐसा धोखा हो ही सकता है।'

उसके बाद फिर बोला, 'मैं बहुत दिन से कलकत्ता में नहीं था। इसीलिए कलकत्ता देखने जरा घूम रहा हूँ।'

सज्जन उत्सुक हो गये, 'कहाँ थे ?'

सुव्रत बोला, 'अमेरिका में।'

सज्जन मानो अचानक मुखर हो उठे। बोले, 'तो अमेरिका में थे तो लौटे क्यों, मशाई ? ऐसा आराम का देश छोड़कर कोई इस गन्दे देश में आता है ? न लौटते तो अच्छा था।'

सुव्रत बोला, 'आप कह क्या रहे हैं ? अपनी जन्मभूमि को लौटकर न आता ?'

'अरे मशाई, इस देश को अपनी जन्मभूमि कहने में शर्म आती है। ऐसा घृणित देश दुनिया में कहीं है ? यह देखिये न, एक घंटे से बस की इन्तज़ार में खड़ा हूँ। चमगादड़ की तरह लटककर सब आदमी चलते हैं। यह सब देखने वाला कोई नहीं है। इसका इलाज करने वाला कोई नहीं है। जानवर बने बिना इस देश में कोई नहीं रह सकता।'

सुव्रत ने पूछा, 'आप कितनी दूर जायेंगे ?'

'मैं जादवपुर जाऊँगा। मैं मध्यवित्त आदमी। जादवपुर ढकुरिया छोड़कर कहाँ रहूँ ? और कहीं तो हमारी तरह के लोगों के लिए किराये का मकान मिलता नहीं।'

सुव्रत बोला, 'तो अगर आपको आपत्ति न हो तो चलिये न, मेरी गाड़ी है, मैं आपको वहाँ पहुँचा सकता हूँ।'

'गाड़ी है ?' सज्जन जैसे बहुत विह्वल हो गये।

बोले, 'एक दिन गाड़ी चढ़ने से तो हमारी तकलीफ़ दूर न होगी। तो चलिये, आपका थोड़ा पेट्रोल जलेगा। आप किधर रहते हैं ?'

कहकर भले आदमी सुव्रत की गाड़ी पर बैठ गये। सुव्रत ने भी गाड़ी चला दी।

सुव्रत के पास बैठकर चलते-चलते सज्जन बोले, 'आप लोग मशाई, बड़े आदमी के बेटे हैं ! आपको क्या फ़िकर ? हमें मेहनत कर खाना होता है, मेहनत करते-करते हमारी जान प्रायः खत्म हो गयी है।'

सुव्रत बोला, 'मुझे भी अब मेहनत करके खाना होगा। हमेशा तो बाप के होटल में रहना नहीं चल सकता।'

'आपके बाबा निश्चय ही बड़े आदमी हैं।'

सुव्रत हँसा, 'हाँ, वे बड़े आदमी हैं, यह बात अस्वीकार नहीं की जा सकती।'

'तो ? आप हम लोगों की तकलीफें कैसे समझेंगे ?'

'कुछ-कुछ तो समझूँगा ही । आप कहिये न ?'

सज्जन बोले, 'कधे पर, बगल में, हाथ पर टाँग कर राशन लाना क्या होता है, वह आपको मालूम है ? आप नही जानते । राशन की दूकान क्या होती है, वह भी आपने कभी अपनी आँखों से नही देखी । नही देखी, क्योंकि आपके बाबा बड़े आदमी हैं ।'

गाड़ी चलाते-चलाते सुव्रत बोला, 'मैं मानता हूँ कि मैं बड़ा आदमी हूँ । बड़े आदमी का बेटा हूँ । बड़े आदमी का बेटा होना अगर अपराध हो तो मैं अपराधी हूँ ।'

सज्जन बोले, 'आप बुरा न मानें । मैं व्यक्तिगत रूप से आपको नही कह रहा हूँ । हमारे देश के नेता लोग अगर एक बार समझते कि बस-ट्राम में लटक-लटककर आने-जाने मे कैसी मुश्किल है तो फिर इस तरह की बद-इंतजामी न चलती रहती ।'

सुव्रत बोला, 'तो आप लोग इसका विरोध क्यों नही करते ?'

सज्जन बोले, 'किसके आगे विरोध करें ? देश के राजा कौन है ?'

सुव्रत बोला, 'क्यों, कांग्रेस ।'

सज्जन बोले, 'कांग्रेस माने तो गुंडे, मशाई । वह अब क्या पहले की महात्मा गाधी की कांग्रेस है ?'

सुव्रत ताज्जुब में आ गया । बोला, 'क्यों वह कांग्रेस नहीं है ?'

सज्जन बोले, 'आप बाहर थे इसीलिए जानते नहीं, मशाई । असल मे सब धोखेबाज हैं । सबके ऊपर डॉक्टर विधान राय हैं । वे डॉक्टर हैं । डॉक्टरी करके रहते, वह नही, राजनीति में उनको आने की क्या जरूरत थी, मशाई ? और एक हैं पुण्यश्लोक राय । भले आदमी वकील थे । वकालत में कमाई थी नहीं, आ गये कांग्रेस मे ।'

सुव्रत बड़ी मुसीबत में पड़ गया । बोला, 'आप पुण्यश्लोक राय को पहचानते हैं ?'

सज्जन बोले, 'अरे मशाई, किसी की हाँडी की बात जानने के लिए क्या उन्हें पहचानना जरूरी है ? यह सब खबरें हवा में बहती हैं । उनकी एक लड़की है, पता है ? वह शराब पीती है और लड़कों के साथ महफिल जमाती फिरती है । ये सब बातें किसी को जानने को बाकी नहीं हैं— लड़की का नाम है पमिली । आप कलकत्ता शहर में जिससे पूछेंगे वही बता देगा ।'

'आपको ठीक पता है ?'

सज्जन बोले, 'मुझे गलत बात बताने से फायदा क्या, मशाई ? आप

सड़क पर किसी आदमी को पकड़कर पूछें न, हाथ कंगन को आरसी क्या ?'

सज्जन उसी बात को खींचकर कहने लगे, 'अभी कुछ दिन पहले जो तमाशा हो गया, आप शायद जानते हैं...।'

सुव्रत को पता नहीं था। बोला, 'क्या तमाशा ?'

सज्जन बोले, 'अरे मशाई, लाल झंडे वाले जुलूस बनाकर जा रहे थे। उस पर पुलिस ने गोली चलाकर कई लोगों को तो मार ही डाला—पुण्यश्लोक बाबू की लड़की की गाड़ी तक बाद में गुस्से से लाल झंडे वालों ने जलाकर खाक कर दी।'

'ऐसा है क्या ? उसके बाद क्या हुआ ?'

सज्जन बोले, 'क्या होगा ! लड़की उस वक्त शराब के नशे में चूर थी। उसी हालत में उसे पुलिस उठाकर कांग्रेस-भवन में ले गयी।'

सुव्रत अभी तक उत्कंठित होकर सुन रहा था। बोला, 'लेकिन पुलिस ने गोली चलायी ही क्यों ?'

'सज्जन बोले, 'उन लोगों के गुण्डे हैं न !'

'किन लोगों के ?'

'वही पुण्यश्लोक बाबू के। उनके पाले तमाम गुण्डे हैं। उन्हीं सब गुण्डों में से किसी को परमिट दी है, किसी को लाइसेंस दिये हैं। इसी तरह सबको उन्होंने इतने दिनों से पाल रखा है। अब जरूरत पड़ी तो जुलूस तोड़ने के लिए उन्हें काम में लगा देते हैं। वे जुलूस में घुसकर पुलिस की ओर ताककर सोडे की बोतल फेंकते हैं, बम फेंकते हैं, और उसके बाद ही पुलिस मौक़ा पाकर गोली चलाती है। यह सब पुण्यश्लोक बाबू की चाल है। बहुत मक्कार आदमी है।'

सहसा सज्जन बोल पड़े, 'अब पहुँच गया। यहीं रोक दीजिये। और नहीं जाना है। सचमुच बहुत उपकार किया, मशाई। आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।'

सज्जन गाड़ी से उतर गये। हाथ जोड़कर नमस्कार दिया।

सुव्रत बोला, 'एक बात है, आपने जो बातें बतायीं, वे सब सच ही हैं न ?'

सज्जन बोले, 'मेरी बात का विश्वास न हो तो वह जो आदमी जा रहा है, उसे पुकारकर पूछिये, देखिये न क्या कहता है।'

'और यह जो बतायी पुण्यश्लोक बाबू की लड़की की बात। पमिली की बात। वह भी क्या सच है ?'

सज्जन बोले, 'देखिये, कुछ भी मेरी अपनी आँखों का देखा नहीं है। सब सुनी-सुनायी बातें हैं। आप तो यहाँ रहते नहीं थे। नहीं तो आपके

कानों में भी बातें पड़ती।'

उसके बाद बोले, 'यह देखिये, वह है मेरा मकान।'

'आपका अपना मकान है?'

'न, हम किरायेदार हैं। अगर कभी इधर आयें तो दर्शन दीजियेगा। शाम को घर पर ही रहता हूँ। आपको बहुत तकलीफ दी। लेकिन आपका नाम नहीं पूछा!'

'मेरा नाम सुव्रत राय है।'

सज्जन बोले, 'मेरा नाम,सुरेश, सुरेश भट्टाचार्जी, मैं मर्कंटाइल ऑफिस में क्लर्क हूं।'

सज्जन ने बहुत बार सुव्रत को धन्यवाद दिया। गाड़ी से धर्मतल्ला से चढ़ाकर घर लाकर पहुंचा दिया था, यह उस पर बहुत उपकार हुआ था। उसके सिवा कुछ पैसे बस के किराये के भी बच गये थे।

सज्जन के चले जाने के बाद सुव्रत ने गाड़ी घुमा ली। कहाँ अमेरिका और कहाँ कलकत्ता! उसका कोई खास वक्त नहीं लगा। लेकिन उसे लगा कि जैसे इस एक दिन के कलकत्ता में ही उसने फिर से नये ढंग से ससार की परिक्रमा कर ली। इन कुछ बरसों में ही कलकत्ता में ऐसा परिवर्तन हो गया है! सिर्फ कलकत्ता का परिवर्तन नहीं, परिवर्तन उसके बाबा का, सब का...।

गाड़ी तब और जोरों से उत्तर की ओर चली जा रही थी।

उस दिन सुव्रत बहुत ही ताज्जुब में पड़ गया था। जब वह कलकत्ता छोड़कर गया था तब तो ऐसा न था। तब पुण्यश्लोक बाबू का नाम सुनकर लोग श्रद्धा-भक्ति दिखाते थे। तमाम लोग उनके घर आते थे। बाबा के बैठने के कमरे में सवेरे से भीड़ लग जाती थी। तमाम लोगों के कितनी तरह के काम रहते थे। लेकिन इस बार कलकत्ता लौटने पर बैठक खाली देखकर सुव्रत आश्चर्य में पड़ गया था। तभी वह गाड़ी लेकर सड़क पर निकल पड़ा। उसको कहीं जाने का मतलब नहीं था। और वह जाता ही कहाँ? कॉलेज-स्ट्रीट में हैरिसन रोड पकड़कर हावड़ा की ओर गया। वहाँ से धरमतल्ला। एक दूकान पर बैठकर खा लिया। लोग जो आपस में

वातचीत कर रहे थे उसे कान खोलकर सुनने लगा। सभी जगह वही एक वात। सभी मानो खफ़ा हों। कोई खुश न था। जीवन से खुश नहीं, गवर्नमेंट से खुश नहीं, आदमियों से खुश नहीं, और तो और अपने से भी खुश नहीं। ऐसा तो पहले नहीं था। इन कुछ वरसों में ऐसा क्या हो गया जिससे सव उलट-पलट गया? सभी चुनाव की वातें कर रहे हैं, जाँच-कमीशन की वातें करते हैं। कहते हैं, इस वार फिर कांग्रेस को वोट नहीं देंगे।

फिर सुरेन की वात याद आयी। जगन्नाथ ने वताया था कि उसे वावा ने घर में आने को मना कर दिया था। वह तो माधव कुंडू लेन में रहता था। अभी भी क्या वहीं है?

उसके वाद गाड़ी घुमाकर सीधे उसी माधव कुंडू लेन के अन्दर गाड़ी ले गया। वही पुराना घर था। मकान की शकल वही पुरानी तरह की ही थी।

वही पुराना दरवान वैठा हुआ था।

पास जाकर पूछा, 'सुरेन वावू घर पर हैं?'

दरवान ने जवाव दिया, 'भांजे वावू तो वाहर निकल गये हैं।'

'कव आयेंगे??'

दरवान वोला, 'यह नहीं मालूम।'

सुव्रत चला आ रहा था। फिर कुछ मन में आया, लौटकर पूछा, 'कल सवेरे आने पर भेंट होगी?'

दरवान वोला, 'जी हाँ।'

सुव्रत और कोई वात न कहकर गाड़ी स्टार्ट कर सीधे ट्राम की सड़क पर आ गया। एक वार मन में आया कि घर चले। लेकिन इस वक़्त घर जाकर ही क्या होगा! उससे अच्छा है, उस कलकत्ता को ही और अच्छी तरह देख ले। सीधे धरमतल्ला की ओर चलने लगा। फिर वही धरम-तल्ला। घूम-घूमकर थकता नहीं, तवीयत भी नहीं भरती। जैसे वहुत दिनों से पहचाने आदमी को वह जी-भरकर घूम-फिरकर देखना चाहता हो।

जव क़रीव-क़रीव वक़्त खत्म होने लगा तो उसी आदमी से मुलाक़ात हो गयी। वही सुरेश भट्टाचार्जी। वह मर्कंटाइल ऑफ़िस का एक वावू था। उस आदमी की वात से लगा कि उसने कलकत्ता के सारे लोगों के मन की वात कही थी। उसके मुंह से ही कलकत्ता के सारे लोगों के मन की वातें निकल आयी थीं।

उसके वाद जव घर की ओर लौटा तो रात हो गयी थी; जव घर के

अन्दर घुसा तो सारा घर कैसा निस्तब्ध था !

रघु भागा आया। सुव्रत ने पूछा, 'हाँ रे, दादा अभी तक घर नहीं आये ?'

रघु बोला, 'हाँ बाबू, आ गये हैं।'

'कहाँ हैं ?'

रघु बोला, 'दीदी के कमरे में बातें कर रहे हैं।'

सुव्रत गाड़ी को गैरेज में रखकर बोला, 'सबका खाना हो गया है न ?'

रघु बोला, 'नहीं। बाबू आपको पूछ रहे थे। मैंने बता दिया कि दादा बाबू गाड़ी लेकर निकल गये हैं।'

रघु सुव्रत के आगे सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। पुण्यश्लोक बाबू तब दीदी के साथ बातें कर रहे थे।

बोला, 'बाबू, दादा बाबू आये हैं।'

तभी सुव्रत भी पीछे-पीछे कमरे में घुस आया।

बहुत दिनों बाद लड़के से मुलाक़ात हुई थी। कुछ क्षण विस्मय में बीत गये। सुव्रत में बहुत परिवर्तन हो गया हो। जैसे इतने दिनों में सुव्रत पूरा, बड़ा आदमी हो गया हो। उनसे कुछ संभ्रम के साथ बात करना होगा।

पुण्यश्लोक बाबू ने जबर्दस्ती चेहरे पर मुस्कान लाने की कोशिश की। बोले, 'आओ, दिन-भर कहाँ रहे ?'

पमिली भारी मुँह किये सामने ही बैठी थी। उसने भी नज़र उठाकर सुव्रत की ओर देखा। सुव्रत भी पमिली की शकल देखकर अवाक् हो गया। यही क्या उसी की दीदी है ? जो दीदी शराब पीकर जिस-तिसके साथ घूमती-फिरती थी ! वह सुरेश भट्टाचार्जी इतनी देर तक इसी की बात तो कह रहा था !

लेकिन क्षण-भर में सुव्रत ने अपने को संभाल लिया। बोला, 'यही घूम-घूमकर कलकत्ता शहर देख रहा था।'

पुण्यश्लोक बाबू पहले तो समझ नहीं पाये कि क्या कहें। बहुत दिनों के बाद सुव्रत से भेंट हुई थी। उनका अकेला लड़का, और यह एक लड़की। स्त्री की मृत्यु के बाद इन्हें आदमी बनाने में ही वे अपना धन और समय खर्च कर जीवन बिता सकते थे। लेकिन उन्होंने वह नहीं किया। उन्होंने केवल अपनी उन्नति की बात ही सोची। यह सही है कि वे उनके ही धन से बड़े हुए, किन्तु उनकी ओर उन्होंने उस हिसाब से घूमकर देखा भी नहीं। हो सकता है, उसी तरह हमेशा चलता रहता है। लेकिन आज सहसा

इस स्थान पर पहुँचकर उन्हें पीछे लौटकर देखना पड़ा।

'तुम्हें कोई असुविधा तो नहीं हुई, सुव्रत ? गाड़ी ठीक वक़्त पर एयर-पोर्ट पहुँच गयी थी ?'

सुव्रत बोला, 'हाँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मैं एक जरूरी काम में फँस गया था। वहाँ से ठीक वक़्त पर आ न सका। तो तुम दिन-भर कहाँ रहे ? मैंने आकर सुना कि तुम घर आते ही निकल गये थे ? कहाँ थे सारा दिन ?'

सुव्रत बोला, 'कहीं नहीं, यों ही घूम रहा था।'

'घूम रहा था माने ? कहाँ घूम रहे थे ?'

सुव्रत बोला, 'कलकत्ता की सड़कों पर घूम रहा था।'

'यह क्या ? सड़कों पर ? क्यों ? सड़कों पर घूमकर क्या देखा ?'

सुव्रत बोला, 'देखा कि इस शहर की शकल क्या से क्या हो गयी है।'

'तो तुम तो इतने दिन न्यूयार्क में थे, उसके आगे यह कलकत्ता क्या है ! यहाँ देखने को है ही क्या ? यहाँ तो बस गन्दगी और कूड़ा है, सिर्फ़ इन्क़लाब, जिन्दाबाद का शोर। कोई जुलूस नहीं मिला ?'

'हाँ, मिला।'

'देखा न गुण्डों की करतूतें ? यहाँ आजकल यही सब-कुछ हो रहा है। इसीलिए तो तुम्हें लिखा था कि अभी तुम्हें यहाँ आने की ज़रूरत नहीं है। चुनाव के बाद आते तो अच्छा होता। कलकत्ता का आदमी बहुत बुरा हो गया है। चुनाव के बाद हम इन्हें ठीक कर देंगे। उसके पहले हमें बहुत व्यस्तता रहेगी।'

उसके बाद सहसा जैसे याद आ गया हो। बोले, 'अभी तो तुम्हें खाना है ? तुम्हारा खाना नहीं हुआ है न ?'

सुव्रत बोला, 'नहीं।'

'तो जाओ, खा लो। मैं खाकर आया हूँ—मैं और कुछ नहीं खाऊँगा।'

सुव्रत ने पमिली की ओर देखा। बोला, 'दीदी नहीं खायेगी ?'

पुण्यश्लोक बाबू ने पमिली की ओर देखा। पमिली इतनी देर तक चुप्पी साधे बैठी थी, जैसे कि उसके कानों में कोई बात ही न पड़ी हो।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मैं पमिली के काम और उसकी अक़्ल कुछ भी समझ नहीं पाता। बहुत दिनों से वह किसी के साथ अच्छी तरह बात भी नहीं करती। देखो न, मैं उससे एयरपोर्ट तुमको रिसीव कर लाने को कह गया था, लेकिन अब सुना कि वह नहीं गयी।'

सुव्रत ने पमिली की ओर देखकर पूछा, 'क्यों रे दीदी, तुझे क्या हो

गया है ?'

पमिली ने कुछ जवाब न दिया। जिस तरह चुप बैठी थी, वैसी ही बैठी रही।

सुव्रत ने फिर पूछा, 'क्यों रे दीदी, बात क्यों नही कर रही है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वह उसी तरह है, मुझसे भी कई दिनों से बात नहीं करती—उसे क्या हो गया है पूछो तो, मेरी बात का तो वह जवाब नहीं देगी। देखो, अगर तुम्हारी बात का जवाब दे।'

पमिली अचानक बोली, 'मैं क्या जवाब दूं, सब लोग देख ही तो रहे हो, मैं कैसी हूं।'

सुव्रत बोला, 'लेकिन मैं इतने दिनों बाद आया, मुझसे कुछ बात तो करो। तुझे क्या हुआ है, यही बता न ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'एक जाँच-कमीशन कांग्रेस के विरुद्ध बैठ रहा है, उसमें वह गवाह बनेगी।'

सुव्रत बोला, 'तो गवाह बनने में नुकसान क्या है ? बने न !'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम कह क्या रहे हो ? मेरी बेटी होकर मेरे ही विरुद्ध गवाही देगी ? देश में मेरी एक पद-मर्यादा है—मैं अभी तक यही बात समझ रहा था। उसने कहा, उसकी भी बहुत बातें हैं। वह चाहती है कि उसकी बातें सबको मालूम हों, सभी सुनें।'

सुव्रत बोला, 'क्या, कैसी बातें ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'क्या पता, क्या बातें हैं ! मैं नहीं समझ पाता कि उसकी क्या बातें है। मैंने उससे क्लब जाने को कहा—उसे चार-पाँच क्लबों का मेम्बर भी बना दिया था। पहले-पहल वह जाती भी थी, लेकिन अब वह भी छोड़ दिया है।'

सुव्रत जवाब में कुछ न बोला। वही सड़क वाला वह आदमी—सुरेश भट्टाचार्जी से सुन आया था, वही कहने की एक बार तबीयत हुई। लेकिन उसके बाद कुछ सोचकर फिर वह बात न उठायी।

बोला, 'जाऊँ, मैं खा आऊँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ चलो, मैं भी चलूं, तुम्हारे साथ मुझे कई बातें करनी हैं।'

सुव्रत के साथ पुण्यश्लोक बाबू भी खाने के कमरे में जा बैठे। बेटे के साथ उन्हें बहुत-सी बातें करनी थीं। बेटा अब छोटा नहीं रहा। अब वह बड़ा हो गया है। उसके साथ दोस्तों की तरह बातें करना अच्छा है। उसके सिवा इतने दिनों वह बाहर रहा। वहाँ का समाज वह देख आया है। वृहत्तर संसार का सामना होने से वह भले-बुरे का अन्तर स[illegible]र है।

उसकी नज़र उदार हो गयी है। वह पुण्यश्लोक बाबू की बातें समझ सकेगा। लेकिन बात कैसे उठायें ? वही सोचने लगे। वे उसके पिता ही तो नहीं हैं, वह प्रदेश के एक मिनिस्टर भी हैं। सारे देश के भले-बुरे के धारक और वाहक भी हैं।

'तुमसे कुछ बातें करना हैं, सुव्रत।'

सुव्रत ने खाते-खाते कहा, 'कहो।'

'देश में वापस आकर तुमने क्या करने की सोची है ? अब कुछ नौकरी-औकरी करना होगा न ? तुम अगर नौकरी करना चाहते हो तो बताओ, मैं इन्तज़ाम भी कर सकता हूँ। पहले तुम यह बताओ कि तुम्हें किस तरह की नौकरी पसन्द है।'

सुव्रत बोला, 'मेरी कोई भी पसन्द-नापसन्द नहीं है। मैं स्कूटर इंजीनियरी सीखकर आया हूँ। मेरी इच्छा थी कि मैं स्कूटर बनाने की एक फ़ैक्टरी लगाऊँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'नॉट ए बैड आइडिया।[1] तो मुझे एक बार दिल्ली जाना होगा। क्योंकि इस व्यापार में केन्द्र की अनुमति पाये बिना कुछ नहीं किया जा सकता। तो तुम्हें कुछ दिन बैठे रहना पड़ेगा। कितनी पूंजी लगेगी ? तुम मुझे एक स्कीम बनाकर दो।'

सुव्रत बोला, 'मैं दूंगा।'

'एक बात और।'

पुण्यश्लोक बाबू कुछ रुककर फिर बोले, 'एक बात और है। तुम जो कलकत्ता देखकर गये थे वह कलकत्ता अब नहीं है। आज तुम वह सब ज़रूर अपनी आँखों से देख आये। कम्युनिस्टों की संख्या अब कलकत्ता में बढ़ गयी है। बात-बात में गुंडई, मारपीट, सोडा की बोतलें फेंकना शुरू हो गया है।'

सुव्रत बोला, 'मैं जान गया हूँ।'

'तुम समझ गये न ? आज भी क्या कहीं हो रहा था ?'

सुव्रत बोला, 'हुआ नहीं, लेकिन मैंने लोगों के मुँह से सुना कि आजकल वह सब बहुत हो रहा है। और भी कई बातें सुनीं। सारा कलकत्ता ही घूमा न !'

'और क्या सुना ?'

सुव्रत बोला, 'दीदी की बात सुनी।'

पुण्यश्लोक बाबू सीधे होकर बैठ गये। पूछा, 'पमिली की बात ? पमिली की क्या बात सुनी ?'

---

1. ख़याल बुरा नहीं है।

सुव्रत बोला, 'वे सब बातें आपको न सुनना ही अच्छा है।'

'फिर भी कहो न। मैं जरूर सुनूँगा।'

सुव्रत बोला, 'पमिली शायद सड़कों पर शराब पीकर बेहाल होकर घूमती है। सभी ने देखा है।'

'यह क्या? लोग ये बातें करते हैं? तुमसे किसने कहा?'

सुव्रत बोला, 'सड़क के एक आदमी ने, और कौन कहेगा! वह पहचानता नहीं था कि पमिली मेरी बड़ी बहन है। मैंने भी कुछ नहीं बताया। बस सुनता रहा। देखा कि कांग्रेस के नाम पर भी सब बिगड़ उठते हैं। बोला कि इस बार चुनाव में कांग्रेस को कोई वोट न देगा।'

'तुमसे सबने वही बात कही?'

'हाँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'ओह, वे ही हैं सब कम्युनिस्ट। मैंने तुमसे कहा न, अब उनकी ताकत शहर में बहुत बढ़ रही है। कोई किसी को नहीं चाहता। वह तुम्हारा क्लास-फ्रेंड, क्या नाम है उसका, सुरेन, उसे मैंने अपने घर आने से रोक दिया है, पता है?'

सुव्रत ने खाते-खाते मुँह उठाया। बोला, 'रोक दिया है? क्यों?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'वह भी कम्युनिस्ट है! वह पूर्ण बाबू के दल में जा मिला है। पूर्ण बाबू को जानते हो? ओरियंटल सेमिनार में तुम्हें बंगला पढ़ाता था। वह पूर्ण बाबू ही तो मेरे विरुद्ध चुनाव में खड़े हुए हैं।'

'लेकिन सुरेन ने क्या किया था?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'देखो, मैंने उसे कई बार मदद करने की कोशिश की। उसे हर महीने डेढ़ सौ रुपये महीना पर अपनी लायब्रेरी में काम भी दिया था। लेकिन देखा कि वह बिलकुल बिगड़ गया था। मुझसे रुपये लेकर उनकी पार्टी का काम करता था। और उसके सिवा पमिली में जो इस तरह का परिवर्तन हुआ यह भी तो सुरेन की वजह से। पहले तो पमिली ऐसी न थी।'

ठाकुर खाना परोस रहा था। सहसा रघु आकर बोला, 'आपका टेलीफोन।'

टेलीफोन की बात सुनते ही पुण्यश्लोक बाबू उठे। बोले, 'वही, लगता है—डॉक्टर राय ने टेलीफोन किया है। मैं आ रहा हूँ, तुम खाओ।'

कहकर वे बाहर चले गये।
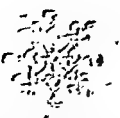
जाँच-कमीशन के लिए कई दिनों से जोड़-तोड़ चल रहा था। धरमतल्ला स्ट्रीट के जुलूस पर पुलिस के गोली चलाने के मामले में सारे कलकत्ता में गुनगुनाहट शुरू हो गयी थी। साथ-ही-साथ यह खबर भी किसी तरह फैल गयी कि पुण्यश्लोक बाबू की लड़की भी कमीशन में गवाह बनकर आयेगी।

चुनाव का जोड़-तोड़ भी जोरों से चल रहा था। शहर-भर के लोगों के मुँह पर उन दिनों मानो और कोई भी बात नहीं रहती। ऑफ़िस-कचहरी के बाबू लोगों में ज़ोरों की बहसें चलतीं। इस बार कांग्रेस हारेगी। इस बार बच्चू लोगों की खैरियत नहीं है। बहुत दिनों तक तुमने राज किया। आज नौ बरसों से तुमको देखते आ रहे हैं। अब फिर तुम्हें वोट न देंगे। इस बार हम कुर्सी पर बैठने वालों की शकलें बदलेंगे। बसों और ट्रामों में हमें लटकते-लटकते चलना पड़ता है; चीज़ों के दाम आसमान छू रहे हैं। हम क्या इंसान नहीं हैं? तुमने अपने लड़के-लड़कियों को खूब अच्छी-अच्छी नौकरियाँ दिला दीं। खुद इतनी-इतनी महँगी और ऐश्वर्य-पूर्ण जायदाद बना ली। हमारी ओर एक बार आँखें घुमाकर देखा तक नहीं। गुण्डे पालकर, हमें डर दिखाकर इतने दिनों तक जो चाहा किया, अब हटना पड़ेगा।

सड़क के हर मोड़ पर छोटी-छोटी मीटिंगों में लोग इकट्ठा होते। वहाँ खड़े होकर देवेश लेक्चर देता। कहता—जनसाधारण के सहन करने की सीमा पार कर चुकी है। मेहनतकश आदमी ने आज दुनिया में सब जगह सिर ऊँचा कर लिया है। सदियों से चलते आ रहे स्वार्थ का ज़माना अब खत्म हो गया है। आप लोग अगले चुनाव के लिए शपथ लें—वामपंथी सरकार क़ायम करेंगे, जनता का राज क़ायम करेंगे। इन्क़लाब ज़िन्दा-बाद!

अकेले देवेश ने ही प्रायः पूरे शहर को लेक्चर देकर मुग्ध कर रखा था। साथ में रहता सुरेन। देवेश के लेक्चर सुन-सुनकर सुरेन भी लेक्चर देना कुछ-कुछ सीख गया था।

देवेश कहता, 'अब तू खड़ा हो।'

पहले-पहल सुरेन को डर लगता। इतने लोगों के आगे खड़े होकर लेक्चर देना आसान बात है क्या? लेकिन देवेश हिम्मत बढ़ाता। कहता,

'डर किस बात का ? इस तरह लेक्चर देने के लिए खड़े न होने पर ज़िन्दगी में किसी भी दिन डर नहीं छूटेगा। खड़ा हो, मैं तो यही हूँ।'

सुरेन बोलना आरम्भ करता, 'बन्धुगण, आज हम इतिहास के एक संधि-क्षण पर आ खड़े हुए हैं। एक ओर कांग्रेस सरकार और दूसरी ओर मेहनतकश इन्सान है। इस मेहनतकश की सहने की सीमा पार हो गयी है। सारी दुनिया के मेहनती इन्सान आज सिर ऊँचा किये हुए हैं। कांग्रेसी स्वार्थ के दिन आज खत्म हो रहे हैं। आप लोग आज शपथ लें कि आगामी चुनाव में आप वामपंथी सरकार कायम करेंगे, जन-गण का राज कायम करेंगे। इन्कलाब ज़िन्दाबाद।'

पहले दिन सुरेन का दिल बहुत काँपा। देवेश ने आकर सुरेन की पीठ ठोंक दी।

बोला, 'शाबाश ! बहुत अच्छा हुआ, रे। बहुत अच्छा हुआ। एकदम बढ़िया !'

सुरेन बोला, 'भाई, लेकिन मेरा कलेजा बहुत काँप रहा था। मैं क्या बोला, मुझे खुद ही पता नहीं लगा।'

देवेश बोला, 'न, तू इस टुलू से पूछ कि मैं ठीक कह रहा हूँ या नहीं ?'

टुलू भी पास खड़ी हुई थी। बोली, 'नहीं सुरेन-दा, आपका भाषण बहुत अच्छा हुआ। सुनने वालों को भी बहुत अच्छा लगा।'

इसी तरह देवेश आदि अक्सर सड़क के हर मोड़ पर मीटिंग करते और सुरेन रोज़ ही लेक्चर देता। उसका लेक्चर सुनकर ही सड़क के लोगों का खून गरम हो जाता। वे जितने ही जोश में भर जाते उतना ही सुरेन का लेक्चर भी अच्छा हो जाता।

उस दिन लेक्चर देकर उतरते ही पूछा, 'क्यों रे देवेश, कैसा हुआ ?'

देवेश बोला, 'बहुत अच्छा, यही तो चाहिए, अब तेरी आवाज़ बहुत ठीक हो गयी है।'

टुलू भी बोली, 'हाँ, आजकल आपकी अटक बिलकुल दूर हो गयी है।'

सहसा पीछे से जैसे किसी ने पुकारा, 'ओ सुरेन...!'

सुरेन पीछे घूमा। लेकिन पहले पहचान न पाया।

'मुझे पहचाना नहीं ? मैं सुव्रत हूँ, रे।'

सुव्रत ! सुरेन के चेहरे पर क्षण-भर के लिए आश्चर्य की मुस्कराहट फैल गयी। साथ-ही-साथ एकदम दोनों हाथों से सुव्रत को चिपटा लिया।

'तू कब आया ? मुझे तो कुछ मालूम नहीं हुआ।'

सुव्रत बोला, 'मैं आते ही तो तेरे माधव कुंडू लेन के मकान पर गया था, तू सुबह-सुबह ही कहीं निकल गया। तू तो बड़ा अच्छा लेक्चर देता है। और पहले कैसा शर्मीला था!'

'तुझे अच्छा लगा?'

सुव्रत बोला, 'बहुत अच्छा लगा। अब तो मीटिंग खत्म हो गयी, अब तो तू घर जायेगा?'

सुरेन बोला, 'हाँ, कितने दिनों बाद तुझसे भेंट हुई...।'

'तो चल।'

इस बीच सुरेन को जैसे याद आ गयी देवेश की बात, टुलू की बात। बोला, 'इस देवेश को तू जानता है, मेरा वही देवेश, रे!'

सुव्रत देवेश की ओर देखकर हँसा। बोला, 'क्यों? कैसे हो?'

देवेश गम्भीर मुँह बनाकर बोला, 'अच्छा हूँ।'

'और यह है टुलू, हमारी मित्र।'

सुव्रत ने दोनों हाथ उठाकर उसे नमस्कार किया। टुलू ने भी सुव्रत को नमस्कार किया।

सुरेन बोला, 'पता है, यह बहुत काम की लड़की है। पार्टी के लिए जान मारकर मेहनत करती है।'

सुव्रत कुछ देर बाद बोला, 'चलना है तो चल। अब यहाँ तेरा कुछ काम है?'

सुरेन बोला, 'नहीं, काम और क्या है?'

सुव्रत सुरेन का हाथ पकड़ खींचकर ले चला। बोला, 'तू अब हमारे घर क्यों नहीं आता? मैंने आते ही तेरी बात पूछी। पमिली भी कुछ नहीं बोलती। वह तो किसी से बात नहीं करती। बस चुपचाप कमरे में पड़ी रहती है। सब क्या हो गया, बता तो? इतने दिनों बाद कलकत्ता आकर देखता हूँ—यहाँ का सब-कुछ एकदम, ऊपर से नीचे तक बदल गया है।'

कहकर सुरेन को गाड़ी पर बैठा लिया। उसके बाद इंजन स्टार्ट कर गाड़ी चला दी।

सुरेन ने पूछा, 'मुझे कहाँ लिये जा रहा है?'

सुव्रत बोला, 'अपने घर।'

'तेरे घर?'

'क्यों क्या हर्ज है?'

'अगर कोई कुछ कहे?'

'मकान तो हमारा है, कौन क्या कहेगा?'

सुरेन बोला, 'लेकिन तेरे बाबा ने तेरे घर में घुसने को मुझे मना

किया है।'

सुव्रत बोला, 'बाबा जो चाहें कहें, मैं खुद तुझे लिये जा रहा हूँ, तुझे डर किस बात का ?'

कहते-कहते गाड़ी एकदम सुखिया स्ट्रीट में पुण्यश्लोक बाबू के घर के अन्दर घुस गयी।

रास्ते के मोड़ पर खड़ी टुलू तब बोली, 'देवेश-दा, वह लड़का कौन है ?'

देवेश के चेहरे से उस वक्त गुस्सा हटा न था। बोला, 'वही ही तो सुव्रत है, पुण्यश्लोक बाबू का बेटा। वह अभी-अभी अमेरिका से देश वापस आया है।'

सुरेन को पहले तो इस घर में आते डर लगा था। जिस घर से उसे भगा दिया गया था, वहाँ वह किस मुँह से जायेगा ? ठीक है कि सुव्रत उसका दोस्त है, लेकिन सुव्रत तो इस घर का मालिक नहीं है। इस घर के मालिक तो उसके पिता हैं।

सुव्रत ने सीढ़ियाँ चढ़ते-चढ़ते सहसा पूछा, 'वह लड़की कौन है रे, सुरेन ? वही जो तेरे पास खड़ी थी ?'

सुरेन बोला, 'वह तो टुलू है। वह एक विस्थापित लड़की है।'

'शायद तेरी पार्टी में काम करती है ?'

सुरेन बोला, 'हाँ, क्यों ?'

सुव्रत बोला, 'नहीं, यही पूछ रहा था। पहले तो यहाँ ऐसा न था। इस बार कलकत्ता आकर देखता हूँ कि बहुत-कुछ बदल गया है।'

सुरेन ने पूछा, 'अमेरिका से तू क्या-क्या सीख आया है ?'

'स्कूटर मैकेनिज्म।'

'तू स्कूटर का कारखाना खोलेगा क्या ?'

सुव्रत बोला, 'ठीक नहीं कह सकता। कुछ तो करना ही होगा। महज बाप के होटल में बैठके खाने से तो नहीं चलेगा।'

सुरेन बोला, 'तेरे बाबा हैं, तुझे किस बात की फिक्र है ? फिक्र मामूली लोगों को होती है, जिनको देखने वाला कोई नहीं।'

उसके वाद अचानक जैसे याद आ गया। वोला, 'तेरे वावा घर पर तो नहीं हैं ? तेरे वावा होंगे तो मुझे देखकर ख़फ़ा होंगे।'

'लेकिन तुझ पर वावा का ग़ुस्सा किसलिए है, वता तो ?'

सुरेन वोला, 'पुण्यश्लोक वावू का खयाल है कि मैं कम्युनिस्ट हूँ।'

सुव्रत वोला, 'किसने कहा कि तू कम्युनिस्ट है ? तू क्या पूर्ण वावू की पार्टी का मेम्वर है ?'

'नहीं।'

'तो ?'

सुरेन वोला, 'तू तो जानता है, देवेश के साथ हम एक क्लास में पढ़ते थे। तू अमेरिका चला गया। उसके वाद से ही मैं उससे मिलता-जुलता रहा। दोस्त के साथ मिलना-जुलना ही क्या कम्युनिस्ट वन जाना होता है ? और कम्युनिस्ट खराव लोग होते हैं क्या ?'

सुव्रत वोला, 'लेकिन तुझे तो मालूम है कि वावा उन्हें पसन्द नहीं करते।'

सुरेन वोला, 'यह तो मालूम है।'

'और यह भी जानता है कि वावा चुनाव में कांग्रेस की ओर से खड़े होंगे। और पूर्ण वावू उनके विरुद्ध।'

सुरेन वोला, 'हाँ, वह भी मालूम है।'

'और मैंने तो ख़ुद ही सुना कि तूने वावा के ख़िलाफ़ लेक्चर दिया। तू क्या सोचता है कि मेरे वावा सचमुच वुरे आदमी हैं ? वावा ने क्या देश के लोगों के लिए कुछ नहीं किया ? तो फिर ज़िन्दगी-भर जेल क्यों काटी ? क्या सोचता है कि वावा ने कोई त्याग, वलिदान नहीं किया ?'

सुरेन वोला, 'मुझे ये सव वातें सुनाने के लिए ही तू यहाँ ले आया है ? यह सव चर्चा न ही करता। तू मेरा दोस्त है, मैं तेरा दोस्त हूँ, यही सम्वन्ध रहे तो अच्छा है।'

सुव्रत वोला, 'न, तूने ठीक ही कहा था। लेकिन तू जानता है न कि देश में लौट आने के दूसरे दिन से ही मुझे वहुत खराव लग रहा है।'

'क्यों ?'

'मेरे कानों में सव-कुछ सुनायी पड़ा है। सवको पता चल गया है कि पमिली शराव पीकर सड़कों पर हुल्लड़ करती है। सवको ही पता चल गया है कि मेरे वावा कांग्रेस में आकर काफ़ी रुपयों के स्वामी हो गये हैं। यह जो कलकत्ता में कोई वस और ट्राम में चढ़ने की जगह नहीं पाता, वह भी कांग्रेस का क़सूर है; चीज़ों के दाम दिन-दिन वढ़ रहे हैं, वह भी कांग्रेस का दोप है; लोगों को सस्ते किराये के मकान नहीं मिल रहे हैं, वह

भी कांग्रेस का कसूर है।'

मुरेन बोला, 'तो क्या यह झूठ बात है?'

सुव्रत ने सुरेन की ओर देखा। बोला, 'तूने भी यही बात कही!'

सुरेन बोला, 'तो पुण्यश्लोक बाबू इस्तीफ़ा क्यों नहीं दे देते? इन नौ बरसों में तो मन्त्री बनकर काम चलाया।'

तभी वे पमिली के कमरे के आगे आ पहुँचे थे। सुव्रत दरवाज़े पर खड़ा होकर पुकारने लगा, 'पमिली, यह देख किसे ले आया! सुरेन आया है।'

दरवाज़ा शायद अन्दर से खुला ही था। सुव्रत के उसे धक्का देते ही खुल गया। कमरे में घुसते ही सुरेन पमिली को देखकर चौंक पड़ा। उसकी यह क्या शक्ल हो गयी है! कुछ देर तक उसके मुँह से कोई बात ही न निकली। वह एकटक पमिली की ओर देखता रहा। पमिली ने भी उसे देखा।

सुव्रत बोला, 'सुना है कि बाबा ने उसे घर में आने से रोक दिया है, इसीलिए उसे बहुत समझा-बुझाकर ले आया हूँ।'

उसके बाद सुरेन की ओर देखकर बोला, 'क्यों रे, इतनी शर्म क्यों कर रहा है? मीटिंग में खड़े होकर बहुत लम्बा-लम्बा भाषण दे रहा था। उस वक्त तो तुझे शर्म नहीं आ रही थी?'

सहसा पमिली बोल उठी।

बोली, 'तुम हमारे घर फिर क्यों आये?'

सुरेन बात सुनकर भौंचक रह गया।

पमिली ने फिर कहा, 'तुम्हें जिस घर से निकाल दिया गया था, उस घर में आने में तुम्हें शर्म नहीं आयी?'

सुव्रत मुश्किल में पड़ गया। बोला, 'पमिली, मैं इसे ज़बर्दस्ती साथ ले आया, इसीलिए यह आया, नहीं तो यह आना नहीं चाहता था। तू उससे यह बातें क्यों कह रही है?'

पमिली बोली, 'कह रही हूँ, अच्छा कर रही हूँ। वह यहाँ क्यों आये? यह नन्हा बच्चा है क्या? उसमें ज़रा भी आत्म-सम्मान नहीं है? तेरे ज़बर्दस्ती ले आने से ही अपना अपमान भूलकर यह चला आयेगा?'

जवाब में क्या कहे, यह सुरेन की समझ न आया। सिर्फ बोला, 'अच्छा, मैं चला जाता हूँ।'

कहकर दरवाज़े की ओर पैर बढ़ाये, लेकिन सुव्रत ने एक हाथ पकड़कर कहा, 'नहीं, तू न जा सकेगा। दीदी ने कहा, इसीलिए तू चला जायेगा? दीदी तो तुझे बुलाकर नहीं लायी। मैं तुझे बुलाकर लाया हूँ, तू जा न

सकेगा, ठहर।'

लेकिन पमिली उस वक्त चिढ़ गयी थी। झटपट सुरेन का दूसरा हाथ पकड़कर खींचने लगी।

बोली, 'वह रुकेगा नहीं, उसे चले जाना होगा।'

उसके बाद सीधे सुरेन की ओर देखकर बोली, 'जाओ, तुम यहाँ से अभी चले जाओ...।'

दोनों की खींचातानी में पड़कर सुरेन हाँफने लगा। बोला, 'मैं आना नहीं चाहता था पमिली, लेकिन सुव्रत मुझे जबर्दस्ती यहाँ ले आया।'

पमिली बोली, 'लेकिन क्या तुम ज़रा-से दुधमुँहे बच्चे हो? तुम्हें जरा भी आत्म-सम्मान की समझ नहीं है? तुम यहाँ आये कैसे?'

सुरेन बोला, 'सुव्रत से सुना कि तुम किसी से भी बोलती नहीं हो, इसीलिए तुमसे मिलने चला आया।'

'मुझसे मिलने? मुझसे मिलने में क्या है? अपने आत्म-सम्मान से मुझसे मिलना तुम्हें बड़ा लगा? मैं तुम्हारी कौन हूँ कि मुझसे मिलने तुम चले आये?'

सुरेन जवाब में कुछ न कह सका। वह कुछ देर पमिली की ओर, फिर सुव्रत के मुँह की ओर देखता रहा। उसके बाद सुव्रत से बोला, 'मुझे छोड़ दे सुव्रत, मुझे जाने दे।'

सुव्रत बिगड़ गया। बोला, 'क्यों जाने दूँ? दीदी के डर से?'

सुरेन ने पमिली की ओर देखा। बहुत ही करुण वह दृष्टि थी। बोला, 'पमिली, तुम दोनों का झगड़ा है, मुझे क्यों उस झगड़े में खींच रही हो?'

पमिली बोली, 'उस दिन पुलिस की गोली खाकर तुम ऐसी जल्दी उसे भूल गये? इससे अच्छा उस दिन अस्पताल में ही क्यों न मर गये? वह इससे कहीं अच्छा होता। उससे ही समझती कि तुम में अपने व्यक्तित्व नाम की फिर भी कोई चीज़ है। जाओ, अब भी कह रही हूँ, चले जाओ।'

सहसा नीचे एक गाड़ी आने की आवाज़ हुई। सुव्रत ने झाँककर देखा—बाबा आ गये हैं। बोला, 'वह बाबा आ गये...।'

पुण्यश्लोक बाबू के आने की खबर पाकर सुरेन और भी संकुचित हो गया। पुण्यश्लोक बाबू को घर आते ही किसी से पता चल गया था। एकदम सीधे ऊपर चढ़ आये। आते ही सारा हाल देखकर बिगड़ उठे। बोले, 'क्या हुआ? यहाँ फिर क्यों आये? मैंने तुमसे यहाँ आने को मना किया था न?'

सुरेन ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। सुव्रत ने भी उसका हाथ छोड़ दिया।

पुण्यश्लोक बाबू ने फिर हुंकारा, 'हू टोल्ड यू टू कम हियर ?'[1] तुमसे यहाँ आने को किसने कहा ? अभी निकल जाओ !'

एक बार यह कहने से हो जाता कि मैं अपनी तबीयत से नहीं आया, सुव्रत मुझे जबर्दस्ती ले आया है। या सुव्रत खुद ही वह बात कह सकता था। लेकिन सुव्रत भी उस वक्त चुप था।

पुण्यश्लोक बाबू फिर बोले, 'खड़े क्यों हो, चले जाओ।'

सुरेन सारे अपमान का बोझ सिर पर लिये चले जाने को कर ही रहा था कि पमिली एक हरकत कर बैठी। सहसा विरोध कर उठी, 'न, वह नहीं जायेगा।'

'नहीं जायेगा माने ?'

पमिली शेर की तरह गुस्से में भरकर खड़ी हो गयी। बोली, 'न, मेरा हुक्म, यह नहीं जायेगा।' कहकर सुरेन का हाथ पकड़ लिया।

पुण्यश्लोक बाबू दिन-भर पार्टी के कामों के झमेलों में चूर-चूर होकर घर आये थे। सोचा था कि यहाँ आकर रात-भर के लिए शान्ति मिलेगी। लेकिन यहाँ आने पर भी वही झंझट। पमिली का साहस देखकर वे स्तंभित हो गये। उनके सेक्रेटेरियट में अगर कोई उनके मुँह पर ऐसी बात कहता तो वे उसी वक़्त उसे मुअत्तल कर देते। उसके नाम चार्जशीट जारी करते। लेकिन यह उनका दफ्तर तो नहीं था। यह तो उनका घर था। और पमिली उनकी बेटी थी। बेटी के मुँह की ओर देखकर वे उसकी स्पर्धा पर आश्चर्य में आ गये।

बोली, 'तुम उसे छोड़ोगी नहीं ?'

'नहीं।'

पुण्यश्लोक बाबू फिर गरज उठे, 'तुम उसे नहीं छोड़ोगी ?'

पमिली भी आवाज़ को उसी तरह ऊँची कर बोली, 'न, न, न।'

कहकर वहाँ न रुकी। सुरेन को एक झटके से खींच अपने कमरे में ले जाकर दरवाज़ा बन्द कर लिया।

कमरे के बाहर सुव्रत अब तक चुपचाप खड़ा सब देख और सुन रहा था। अब घटनाओं की इस अस्वाभाविक परिणति पर वह अवाक् हो गया था। आश्चर्यान्वित होकर पुण्यश्लोक बाबू की ओर गौर से देखा। पुण्यश्लोक बाबू का गोरा मुँह उस वक्त लज्जा से, क्षोभ से, धिक्कार से, अपमान से लाल हो गया।

वे सहसा बोल उठे, 'देखा न, सुव्रत ? देखा न ? पमिली की हरकत

---

1 किसने तुमसे यहाँ आने के लिए कहा ?

:खी ? मैंने तुमसे पहले कहा था, पमिली दिन-दिन बेकार होती जा रही ३। मेरे जीवन में एक सिरे से दूसरे सिरे तक अशान्ति पैदा कर रही है। आज तो तुमने अपनी आँखों से देख लिया। इसीलिए मैंने तुम्हें अभी देश लौटने को मना किया था। इसीलिए मैंने उस सुरेन को घर में आने को मना कर दिया था। यह होने पर भी तुम उसे आज इस घर में क्यों बुला लाये ?'

सुव्रत बोला, 'मैं तो यह सब जानता नहीं था।'

'नहीं जानते थे तो मुझसे पूछा क्यों नहीं ? मैं तुम्हें सब समझा देता। तुमको अभी आने को क्यों मना किया था, क्यों सुरेन को इस घर से भगा दिया था, सभी मैं तुम्हें समझा देता। लेकिन तुमने मुझसे ज़रा भी पूछ-ताछ नहीं की ?'

सहसा ज़ीने से प्रवेश चढ़ रहा था। वह सबको वहाँ इस हालत में देखकर ताज्जुब में पड़ गया।

बोला, 'क्या हुआ, पुण्य-दा ?'

पुण्यश्लोक बाबू को जैसे अचानक होश आया। बोले, 'तुम इस वक़्त ?'

'मैं आया था एक काम से। हरिलोचन बाबू ने बताया कि आप ऊपर हैं। और भी कुछ रुपयों की ज़रूरत थी, पुण्य-दा।'

'तुम कल सवेरे आना, प्रवेश। मैं इस वक़्त बहुत उत्तेजित हूँ। पमिली आज फिर बेढब हो गयी है।'

प्रवेश ने पूछा, 'पमिली ने फिर क्या किया ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुमको तो मालूम है कि मैंने सुरेन को इस घर से भगा दिया था ?'

'हाँ, वह तो मालूम है। तो वह फिर आया है क्या ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, यह देखो न, इस कमरे में पमिली और वह दोनों हैं, घुसकर दरवाज़ा बन्द कर लिया है।'

'यह क्या ? अब ? अभी वह अन्दर है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, मैंने तुमसे बार-बार कहा कि कुछ इन्त-ज़ाम करो। वह तो तुमने किया नहीं। अब क्या करूँ, बताओ ?'

'तो वह यहाँ किस हिम्मत से आया ? उसे कौन ले आया ?'

अभी तक सुव्रत चुप खड़ा था। बोला, 'मैं ही उसे बुला लाया था।'

अब प्रवेश ने सुव्रत की ओर देखा। बोला, 'तुम्हें शायद कुछ मालूम न था ?'

सुव्रत बोला, 'मैंने सब सुना है।'

'तो सब जानकर भी उसे तुम इस घर में ले आये ?'

सुव्रत बोला, 'लेकिन मैंने सुना है कि आप भी इसके लिए जिम्मेदार हैं।'

'मैं जिम्मेदार हूँ ?' प्रवेश मानो आसमान से गिरा हो।

बोला, 'किसने कहा, मैं जिम्मेदार हूँ ?'

'मैं कलकत्ता आकर कई दिन सड़कों, रास्तों, गलियों में घूमा हूँ। तमाम लोगों से मिला हूँ। सब को सब-कुछ पता है। सभी ने बताया, पमिली के इस हाल के लिए आप ही नहीं, हमारे बाबा भी जिम्मेदार हैं।'

पुण्यश्लोक बाबू बहुत उत्तेजित हो गये। बोले, 'तुमसे ये सब बातें किसने कहीं ?'

सुव्रत बोला, 'लोग कहते हैं। और कौन कहेगा ? मैं और कहाँ से जानूँगा ? तुम अपनी पार्टी लेकर बैठते हो, और मिनिस्ट्री लेकर बैठते हो, दीदी को देखने वाला कोई नहीं है। उसे प्रवेश के हाथों में छोड़कर निश्चिन्त होना चाहते थे।'

'लोगों ने तुमसे ये सब बातें कहीं ? उनका नाम क्या है ?'

सुव्रत बोला, 'उनका नाम भी मुझे नहीं मालूम, मेरा नाम भी वे नहीं जानते। मैंने जो सुना वह तुमको बता दिया। और अब तो अपनी आँखों सब देख रहा हूँ। अब सोचता हूँ कि उन्होंने जो कहा वह झूठ नहीं है।'

प्रवेश भी उत्तेजित हो गया।

बोला, 'लेकिन पमिली ? पमिली का क्या विचार है ? पमिली भी क्या यही कहती है ?'

'यह आप पमिली से ही पूछें।'

प्रवेश ने और बहस कर समय नष्ट नहीं किया। दरवाज़े पर धक्का देने लगा। 'पमिली, पमिली दरवाजा खोलो।'

अब सहसा अप्रत्याशित रूप से दरवाजा खुल गया। दरवाज़ा खुलते ही पमिली बाहर निकल आयी। और पीछे-पीछे निकल आया सुरेन। पमिली ने इस बीच साड़ी बदल ली थी। बाल, जूड़ा, साज-सँवार ठीक कर लिया था। उसके बाद किसी ओर देखे बिना, बिना कुछ नजर डाले सुरेन का हाथ पकड़ एकदम सीधे ज़ीने से नीचे उतर गयी। और उसके बाद एकदम पोर्टिको पार कर गैरेज के पास जाकर गाड़ी में बैठ गयी।

प्रवेश अब तक खड़ा-खड़ा सब देख रहा था। अब खड़ा न रह सका। बोला, 'पमिली गाड़ी पर बैठी है—गाड़ी स्टार्ट कर रही है।'

जगन्नाथ पास ही खड़ा था। वह आगे आकर बोला, 'मैं [illegible],

मानदा का मुँह तमतमा उठा। बोली, 'मुर्दा आ गया ? बुला यहाँ मुर्दे को ! अभी उसे तमाशा दिखाती हूँ।'

भूपति भादुड़ी भागते-भागते आकर हाँफ रहे थे। बोले, 'मुझे तुमने बुलाया था ?'

भूपति भादुड़ी को सचमुच तकलीफ़ हुई थी। उधर माँ जी नहीं मर रही हैं, इधर बार-बार मानदा दासी को रुपया भी देना पड़ रहा है। यही शर्त थी। इसके पहले नरेश दत्त ने भी इसी तरह कई हज़ार रुपये ढीले करवा लिये थे। ज़िन्दगी-भर इसी तरह रुपये दे-देकर दिवालिया बनना पड़ा है। इसके बाद माँ जी कब मरेंगी, उसका भी कुछ ठीक-ठाक नहीं है। अब भाग्य है। भाग्य पर भरोसा रखकर ही भूपति भादुड़ी ज़िन्दा हैं। इस भाग्य के बदलने की आशा में ही दोनों वक़्त ठनठन की कालीबाड़ी का ध्यान कर भक्ति से प्रणाम करते। कहते—'हे माँ, हे माँ काली, अब नहीं खींचा जाता माँ, अब माँ जी को उठा लो।'

यहाँ आने के पहले ही भूपति भादुड़ी ठनठन घूमकर आये थे। वहाँ माँ काली के निकट अपनी मनोकामना बताकर बोले थे—'हे माँ काली, मानदा मेरा और रुपया न ढीला करे। और कुछ दिनों वह सुखदा को खिलाये-पिलाये।'

उनकी आने की तबीयत न थी। लेकिन मानदा ने दरबान से बुलवा भेजा था। आना ही पड़ा। साथ में ज़्यादा रुपये भी न लाये थे। पचास रुपये तीन-चार जगह दबा-छुपाकर रख दिये थे। तीस रुपये लाये थे कच्छे की खूंट में, दस रखे थे टेंट में, और दस रुपये कुरते की छाती की जेब में। जेब के दस रुपये देकर अगर छुटकारा मिल जाये तो फिर टेंट के रुपये नहीं निकालना पड़ेंगे।

लेकिन मानदा दासी सूखी जोंक को भी हरा कर देने वाली थी। अपने ग्राहकों से रुपये छीन-छीनकर ही वह आज इतनी बड़ी हुई थी। सोनागाछी के छः मकानों की मालिक बन गयी थी। एक ऐम्बैसडर गाड़ी की भी वह मालिक थी।

'मुझे तुमने बुलाया था, मौसी ?'

मानदा दासी के सामने विनय का अवतार बनना ही अच्छा था। इससे प्रायः काम बन जाता था।

लेकिन मानदा दासी इस तरह पिघलने वाली औरत ही न थी। विनय से बोझल प्रशंसा पाने में अन्त में नुक़सान होता है, उसने यह भी अच्छी तरह समझा हुआ था।

बोली, 'बुलाया था क्या किसी शौक़ के लिए ? भूत की मार से

परेशान होकर बुला भेजा था। तुम्हारी लड़की को तो अब मैं रख नहीं सकती। अब तुम मुझे छुटकारा दो, भाई। उस सांड़ लड़की से तो हमारी गोशाला सूनी ही अच्छी है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'सांड़ लड़की क्यों कह रही हो ? शरीर की ऐसी गठन तुम्हें कितनी लड़कियों में मिलती है ?'

मानदा दासी बोली, 'तो दूध न दे तो सांड़ न कहूँगी ? दूध देने का नाम नहीं, बस ग्वाले को सींग मार देगी। यही सब तो सांड के लक्षण हैं। लड़कियों को चराते मेरे बाल सफेद हो गये, मुझे तुम लड़कियों की पहचान सिखाओगे ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'न, न, न, वह कैसे सिखाऊँगा ! जिसका जो कार-बार है, वही उसे जानता है। तुम लड़की-लड़कों का रोजगार करती हो, तुम्हीं लड़के-लड़कियों को पहचानती हो। मैं घर-जायदाद का कार-बार करता हूँ, मैं किरायेदार को पहचानता हूँ। लेकिन लड़कियों को बिलकुल नहीं पहचानता—ऐसा तो नहीं है। पहचानता हूँ। किसे सांड़-समान लड़की कहते हैं, यह जानता हूँ।'

मानदा दासी का चेहरा गुस्से से तमतमा उठा। बोली, 'सांड-सी लड़की अगर पहचानते हो तो उस लड़की को मेरे सिर पर क्यों थोप दिया ? मैंने तुम्हारा क्या अपराध किया है ? तुम मुझे ठीक से रुपये भी नहीं देते हो, और यह सांड़ लड़की गले मढ़ दी, अब मैं क्या करूँ ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो सुखदा के जरिये तो तुम्हें रुपये मिल रहे हैं। नहीं मिलते ?'

'खाक मिलती है, खाक ! ऐसी लड़की है कि लड़कों का मुँह देखकर उसे उल्टी होती है। वह लड़की किस तरह रोजगार करेगी ?'

· भूपति भादुड़ी बोले, 'तो दिन-भर सुखदा करती क्या रहती है ?'

मानदा दासी बोली, 'और क्या करेगी, बस तकिये में मुँह डालकर बिस्तर पर लेटी रहती है। मेरे घर में तो इतनी लड़कियाँ हैं, सभी शाम होते ही साज-सिंगार करती है, बेल-फूल वाले से हार लेकर दूकान सजाकर बैठ जाती हैं। ग्राहक लक्ष्मी होता है, लक्ष्मी की विनय-प्रार्थना के बिना क्या लक्ष्मी पास भी आती है ?'

उसके बाद कुछ रुक कर बोली, 'पर मुझे इतनी बातों से क्या फायदा, तुम्हारी लड़की है. तुम समझो, मुझे इस बीच में बेकार क्यों पकड़ रखा है, भाई ? मेरा जो रुपया बरबाद हुआ है वह चुकता कर तुम लड़की के लिए दूसरी जगह देखो, मैं छुटकारा पाऊँ, हाँ।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो इसीलिए शायद मुझे बुलाया है ? तो वही

वात मुझसे साफ़-साफ़ कहो !'

कहकर जेब से एक दस रुपये का नोट निकालकर मानदा की ओर वढ़ा दिया।

मानदा दासी रुपयों को देखकर वोली, 'कितने दे रहे हो ?'

'एक।'

'दस रुपये का एक नोट ! ये रुपये मुझे नहीं लेना है, तुम अपनी जेव में रख लो।'

भूपति भादुड़ी मानदा दासी की ओर देखकर वोले, 'तुम अभी यही ले लो न ! और दो दिन हैं। दो दिन वाद ही तो वुढ़िया मर जायेगी।'

मानदा दासी वोली, 'तुम्हारी वुढ़िया भी नहीं मरेगी, और हमारा झंझट भी दूर न होगा। वुढ़िया अगर न मरे तो सिर पर लाठी मारकर खत्म नहीं कर सकते हो ?'

भूपति वोले, 'तुम इतनी ख़फ़ा क्यों हो रही हो ? मैं अपने हाथों तो वुढ़िया की हत्या नहीं कर सकता। वुढ़िया जितने दिनों नहीं मरती उतने दिनों के लिए लड़की को तुम्हारे पास रखता हूँ। तुमसे तो कहा ही है, थोड़े-से ही तो दिन हैं, उसके वाद मैं लड़की को ले जाऊँगा।'

मानदा दासी वोली, 'आज छः महीने से तो वस यही वात सुन रही हूँ। आखिर में मेरे मरने पर तुम लड़की को ले जाओगे। लेकिन अव मैं नहीं सुनती। मुझे आज पाँच सौ रुपये चाहिए।'

'पाँच सौ रुपये ?'

मानो रुपयों की संख्या सुनकर भूपति भादुड़ी घवरा गये।

वोले, 'भला वताओ तो पाँच सौ रुपये मैं कहाँ पाऊँगा ? क्या सोचा है कि मेरे पास रुपयों का पेड़ है ? मुझे काटकर भी पाँच सौ रुपये नहीं मिलेंगे।'

मानदा दासी वोली, 'अच्छा, तव फिर तुम अपनी लड़की को ले जाओ। मैं लिये आती हूँ।'

कहकर झटपट एकदम अन्दर चली गयी।

भूपति भादुड़ी पुकारने लगे, 'अरे, सुनो, सुनो !'

और सुनो ! मानदा दासी एकदम सीधे सुखदा के कमरे में चली गयी। सुखदा उस वक़्त विस्तर पर मुंह गाड़े लेटी हुई थी। मानदा दासी उसका हाथ पकड़ हरहराती हुई खींचते-खींचते एकदम एक-मंज़िले की वैठक के कमरे में भूपति भादुड़ी के आगे ले आयी।

भूपति भादुड़ी वैठे थे। सुखदा को आगे कर सीधे उठ खड़े हुए।

मानदा दासी ने सुखदा को भूपति भादुड़ी की ओर वढ़ाकर कहा, 'लो,

इसे ले जाओ। सुख से मेरी शान्ति अच्छी है।'

भूपति भादुड़ी पहले समझ न सके कि क्या करें। उसके बाद सहसा बोले, 'तुम्हें देखने की बड़ी तबीयत थी, बेटी। इसीलिए जरा बुला भेजा। तुम कैसी हो ?'

सुखदा डकराकर रो पड़ी। बोली, 'मैनेजर बाबू, मुझे यहाँ से ले चलिये, यहाँ मुझे अच्छा नहीं लगता। यह जगह अच्छी नहीं है। यहाँ रहकर मैं मर जाऊँगी।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मैं तो तुम्हें ले जा सकता हूँ, लेकिन तुम्हारा मुकदमा चल रहा है। मुकदमा खत्म होते ही तुम्हें घर ले जाऊँगा।'

'लेकिन मुकदमा और कितने दिनों चलेगा ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाय रे भाग्य, मुकदमा क्या मेरे हाथों में है ? मेरे हाथों में होता तो मैं बता सकता कि कब मुकदमा खत्म होगा। पर मुकदमा हमेशा तो चल नहीं सकता, किसी दिन तो खत्म होगा ही। लेकिन यह तो फौजदारी का मुकदमा है, यह ज्यादा दिन नहीं चलेगा। समझ लो कि दो-एक महीनों में खत्म हुआ। तब बेटी, मैं तुम्हें घर ले जाऊँगा। इन कुछ दिनों थोड़ी तकलीफ उठाकर यहाँ रहो।'

सुखदा बोली, 'लेकिन यहाँ मुझे और रहना अच्छा नहीं लगता।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो अपनी तकलीफ इन मौसी को बताओ। कहने पर मौसी तुम्हारी तकलीफ दूर कर देंगी। फिर तकलीफ किसे नहीं है ? मुझे तकलीफ नहीं है ? इन तुम्हारी मौसी को तकलीफ नहीं है ? और माँ जी की तकलीफ की बात ज़रा सोचो तो।'

माँ जी की याद आते ही सुखदा की आँखें जैसे भर उठीं। बोली, 'अब माँ जी कैसी हैं ?'

'अरे, अब उनका रहना ! उन माँ जी को लेकर ही तो दिन-रात काम में लगा रहना पड़ता है। नहीं तो मैं जल्दी-जल्दी तुम्हारे पास आ सकता। अब उनका जाना ही अच्छा है, बेटी। वह कष्ट अब आँखों से देखा नहीं जा सकता। इसीलिए तो दिन-रात भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि अच्छे-अच्छे माँ जी चली जायें।'

'मेरी बात कुछ नहीं कहतीं ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम्हारी बात सोच-सोचकर ही तो माँ जी को इतनी तकलीफ है। बस कहती हैं—सुखदा का मुँह अब नहीं देख पाऊँगी। जिस लड़की के लिए मैंने इतना किया, उसी ने मेरा ऐसा सत्यनाश किया ?'

सुखदा ने मन लगाकर बातें सुनीं, लेकिन बोली कुछ नहीं।

भूपति भादुड़ी बोले, 'उसके लिए मन खराब मत करो, बेटी। माँ जी

जो भी कहें, मैं तो हूँ, मैं तो अभी नहीं मरा हूँ। माँ जी के मरने के दूसरे दिन ही मैं तुम्हें माधव कुंडू लेन ले जाऊँगा। और तब तक मुक़दमा भी खत्म हो जायेगा। तुम मन खराब मत करो। मैं तुमसे कहे दे रहा हूँ, मैं खुद आकर तुम्हें टैक्सी से ले जाऊँगा।'

मानदा दासी इतनी देर बाद बोली। कहा, 'लेकिन मैनेजर, तुमने भी बातें कीं और उसने भी मन से सुनीं। अब शाम हो गयी है, अब मेरे सब लड़के आयेंगे, ज़रा समझा तो दो सजने-सँवरने के लिए।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाँ बेटी, मौसी तो ठीक बात ही कहती हैं। सज-सँवरकर तैयार हो जाना ही अच्छा है। भले आदमियों के लड़के आयेंगे। वे मन बहलाने यहाँ आते हैं। भूतों की तरह शक्ल देखकर वे क्या सोचेंगे, बताओ तो? लो बेटी, सज-सँवरकर तैयार तो हो जाओ।'

सुखदा बोली, 'लेकिन वे लोग तो शराब पीते हैं, मैनेजर बाबू।'

भूपति भादुड़ी ने ताज्जुब में पड़ने का भाव दिखाया, 'शराब पीते हैं? तो शराब कौन नहीं पीता? आजकल तो सभी शराब पीते हैं। शराब पीने के लिए सरकार का शराब का मंत्री है। शराब पिये बिना गवर्नमेंट कैसे चलेगी? देखा तो, नरेश दत्त कितनी शराब पीता था, कालीकान्त विश्वास कितनी शराब पीकर हुल्लड़ करता था। मैंने कभी कुछ कहा? सोचा, चलो भाई, रहे उसकी शराब, देश की उन्नति तो होगी।'

सुखदा बोली, 'लेकिन आपको नहीं मालूम। एक दिन बिस्तर पर क़ै कर दी थी।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो आदमी क्या बीमार नहीं पड़ता? माँ जी बिस्तर पर लेटे-लेटे टट्टी और उल्टी करती हैं। मुझे क्या अच्छा लगता है? लेकिन बीमार होने पर आदमी क्या करे? बीमारी पर तो किसी का बस नहीं है। और जिस दिन उल्टी करे, उस दिन बिस्तर पर न सोना। उस दिन मौसी के कमरे में जाकर सोना। दो दिन तकलीफ़ सह लो, बेटी। उसके बाद तो मैं फिर तुम्हें माधव कुंडू लेन ले ही जाऊँगा।'

सुखदा किसी भी बात का जवाब न देकर चुप रही।

कुछ देर बाद बोली, 'और किसी घर में मुझे नहीं रख सकते हैं?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'और जिस घर में तुम जाओगी, वहाँ भी वही हाल होगा। कलकत्ता में क्या आदमी रहते हैं? सब जानवर हो गये हैं। सब बस शराब, लड़की और रुपयों के लिए मारे-मारे घूमते हैं। तुम तो घर के अन्दर रहती हो, इसी से कुछ देख नहीं पाती हो। मैं तो सब देखता हूँ। देखता हूँ और सोचता हूँ कि देश का क्या हो गया!'

उसके बाद कुछ सोचकर बोले, 'हटाओ, ये सब बेकार बातें हैं। अब

शाम हो गयी, तुम सज-सँवरकर तैयार हो जाओ। अब मैं चलूँ।'

मुखदा फिर न रुकी। धीरे-धीरे अन्दर चली गयी।

भूपति भादुड़ी मानदा दासी की ओर देखकर बोले, 'क्यों मौसी, अब तो हो गया? तुम अच्छा कहती थीं कि अड़ियल लड़की है, अब? तुम्हारे लड़कियों के रोजगार करने से क्या होगा! मैंने शादी तो नहीं की, फिर भी लड़कियों का कार-बार मैं तुम्हें सिखा सकता हूँ, समझीं?'

मानदा दासी फिर भी दबने वाली औरत नहीं थी। बोली, 'लेकिन असली बात तुम क्यों उड़ाये जा रहे हो? रुपये निकालो। रुपये निकाले बिना मैं तुम्हें यहाँ से आज जाने नहीं दूँगी। निकालो, रुपये निकालो!'

भूपति भादुड़ी ने जेब से वही दस रुपये का नोट फिर निकाला। बोले, 'रुपये तो तुम्हें दे रहा हूँ। तुम ही नहीं ले रही हो।'

मानदा दासी बोली, 'उस रुपये पर मैं पेशाब करती हूँ। तुम्हारे काछ में कितने रुपये हैं? वही तो पहले दिखाओ। मैं तुम्हारी शैतानी निकाले देती हूँ।'

भूपति भादुड़ी दो कदम पीछे हट गये।

बोले, 'तुम मेरी काछ खोलोगी क्या?'

मानदा दासी बोली, 'क्या काछ ही खोलूँगी? तुम्हें मैं नंगा करके छोड़ूँगी। मैं सोनागाछी की खानगी हूँ। मुझसे चालाकी? तुम्हारे पास से क्या सीधे उँगली से घी निकलेगा?'

कहकर मानदा दासी भूपति भादुड़ी की धोती की काछ पकड़कर खींचने लगी। भूपति भादुड़ी भी लाचार होकर कमरे के इस कोने से उस कोने में जाने लगे। बोले, 'अरे, यह क्या मुसीबत है! छि', छि', आखिर तुम मुझे बेइज्जत करके छोड़ोगी?'

'ओह, तुम्हारी और इज्जत! तुम्हारी इज्जत होती तो बेइज्जत करती!'

भूपति भादुड़ी बोल उठे, 'कसम से यह क्या मजाक कर रही हो, बताओ तो, मौसी। मुझे यह अच्छा नहीं लगता।'

मानदा मौसी भी छोड़ने वाली न थीं। बोलीं, 'तुमसे मैं मजाक करूँगी? तुम्हारे साथ क्या मेरा मजाक का रिश्ता है कि तुम्हारे साथ मजाक करूँगी? मजाक करने के लिए क्या मुझे लोगों की कमी है? जब तुम्हारी उमर थी तब इस घर में मजाक करने आये नहीं। उन दिनों की बात क्या मैं भूल गयी हूँ? आओ, कह रही हूँ, चले आओ।'

भूपति भादुड़ी दोनों हाथों से धोती की काछ दबाकर बोले, 'मैं तो कह रहा हूँ कि मेरे पास रुपये नहीं हैं। कसम से सच कह रहा हूँ, मेरे पास

रुपये नहीं हैं।'

मानदा दासी बोली, 'ओः, एकदम सच के अवतार उतर आये हो! रुपये नहीं हैं? अभी तो सुखदा के आगे झूठ बोले हो।'

'क्या झूठ बोला?'

मानदा दासी बोली, 'तुमने कहा नहीं कि मुक़दमा अभी चल रहा है। तुम ही मुझ से उस दिन कह गये थे कि सुखदा का मुक़दमा ख़ारिज हो गया है। पुलिस ने मुक़दमा उठा लिया है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अरे, वैसा कहना पड़ता है। वैसा न कहने से अभी ही माधव कुंडू लेन के घर जाना चाहेगी। कितनी मुश्किल से तो लड़की को उस घर से हटाया है।'

मानदा दासी भी कुछ कहने जा रही थी कि तभी दरवान भागा हुआ कमरे में घुसा।

बोला, 'माईजी, सदर दरवाज़ पर पुलिस आ गयी है।'

'पुलिस?'

मानदा दासी पुलिस का नाम सुनकर ठिठक गयी।

पुलिस का इस घर में आना कोई नयी बात नहीं थी। पुलिस का सामना करने की मानदा दासी को आदत हो गयी है। पुलिस को रुपये देते ही वे ठंडे पड़ जाते हैं। सबके पास से चूसकर और पुलिस को हाथ में रखकर ही मानदा दासी ने आज इतनी सम्पत्ति की मिल्कियत हासिल की है। लेकिन वे सब तो इस रोज़गार में शाम को नहीं आते। उनकी जो कुछ कारगुज़ारी है वह दिन के प्रकाश में होती है। इस समय वे अचानक कैसे आ गये?

भूपति भादुड़ी की ओर देखकर मानदा दासी बोली, 'तुम टप से जाकर भीतर छिप जाओ।'

भूपति भादुड़ी को छुटकारा पाकर जैसे जान में जान आयी। और कुछ कहे बिना एकदम अन्दर जाकर छिप गये।

उसके बाद दरवान थाने के बड़े दारोग़ा को लेकर अन्दर आया। बड़े दारोग़ा के पीछे कांस्टेबिल थे।

मानदा दासी ने भक्तिपूर्वक हाथ जोड़ सिर नीचा कर प्रणाम किया।

'आइये बड़े दारोग़ा बाबू, आइये। मेरा सौभाग्य, आपके पैरों की धूल ग़रीब के घर पड़ी! शर्बत पीजियेगा? शर्बत तैयार करने को कह दूं?'

बड़े दारोग़ा बाबू गम्भीर होकर बोले, 'न, शर्बत का वक़्त नहीं है। मैं एक तलाश पर आया हूं। अभी तुम्हारे घर में सुखदा नाम की कोई

लड़की है ? मुखदावाला विश्वास ?'

'मुखदा ? मुखदावाला विश्वास ?'

नाम सुनकर मानदा दासी मानो आसमान से गिर पड़ी।

बड़े दारोगा बाबू बोले, 'हाँ, उसे यहाँ लाकर छिपा रखा है, उसके पति ने रिपोर्ट लिखवायी है।'

मानदा दासी पहले तो कुछ डर गयी थी। पुलिस का उसके घर आना कुछ नया नहीं था। इन सब बातों की उसे आदत पड़ गयी थी।

बड़े दारोगा बाबू बोले, 'मुझे खबर मिली है, सुखदा दासी नाम की एक विवाहिता लड़की यहाँ है।'

'ओ माँ, यह कैसी बात है! आप कैसी बात कह रहे हैं? इस नाम की तो मेरे घर में कभी कोई लड़की नहीं थी।'

बड़े दारोगा बाबू बोले, 'तो फिर तो हमें मकान की तलाशी लेना होगी।'

भूपति भादुड़ी अन्दर घुसकर एकदम दो-मंजिले पर चढ़ गये थे। उसके बाद एकदम सुखदा के कमरे में।

'ओ माँ, माँ!'

सुखदा चौंक पड़ी। पीछे घूमते ही देखा कि दरवाजा खोलकर भूपति भादुड़ी सामने खड़े हैं। भूपति भादुड़ी बोले, 'मेरी भाग्य की मुसीबत है, इसीलिए फिर आया हूँ।'

'कहिये, क्या कहना है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'घर ही चला जा रहा था, फिर भी आ गया। सोचा, लड़की को जरा दिलासा दे आऊँ। कुछ बुरा न मानो, बेटी। मेरे अपने दिमाग में कुछ ठीक नहीं; तरह-तरह की परेशानियाँ हैं, इसीलिए जब-तब हर-एक से कुछ-न-कुछ कह देता हूँ। तुमने कुछ बुरा तो नहीं माना?'

सुखदा बोली, 'नहीं, मैंने कुछ बुरा नहीं माना।'

'मुझे मालूम था कि तुम बुरा नहीं मानोगी। तुम तो मेरी लक्ष्मी माँ हो। लेकिन माँ जी को क्या हुआ है, कि तुम्हारा नाम तक अब बर्दाश्त नहीं कर पातीं! मैंने तुम्हारी बात कही थी, पर क्या कहा, मालूम है? बोलीं—सुखदा का मुँह तक मैं नहीं देखना चाहती।'

सुखदा ने बात सुनी, लेकिन कुछ जवाब न दिया।

'तुम कुछ बुरा न मानो। मुकदमा खत्म होते ही, तुम पहले रिहाई पाओ, तो मैं खुद आकर तुमको माधव कुड़ू लेन के घर ले जाऊँगा। अभी मौसी के पास थोड़ी तकलीफ भी उठाकर रहो।'

कहकर भूपति भादुड़ी उठे। लेकिन उसके पहले ही मानदा मौसी आ पहुँची।

बोली, 'क्या हुआ, लड़की का गरमाया मन कुछ ठीक हुआ ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाँ, मन ठीक करने के लिए ही तो आया था। मैंने उससे सब समझाकर कहा, अब ठंडी हो गयी है।'

मानदा दासी बोली, 'चलो, अब बाहर चलो। तुम से बात करना है।'

भूपति भादुड़ी को लेकर मानदा दासी बाहर आयी। भूपति भादुड़ी ने पूछा, 'क्यों जी मौसी, क्या हुआ ? पुलिस चली गयी ?'

मानदा दासी ने फ़ौरन बात का जवाब न दिया। अँधेरी सीढ़ियों से नीचे उतरकर बोली, 'तुम्हारे कारण मेरे लिए यह क्या नयी मुसीबत उठ खड़ी हुई ?'

भूपति भादुड़ी अवाक् हो गये। बोले, 'क्यों, मैंने क्या किया ?'

मानदा दासी बोली, 'तुम्हारी वजह से मुझे पाँच सौ रुपये हरजाना देना पड़ा।'

'किसे हरजाना देना पड़ा ?'

'और किसे ? पुलिस को। मुझे अभी पाँच सौ रुपये दो। रुपये पाये बिना आज मैं छोड़ूँगी नहीं।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो तुमने पुलिस को रुपये दिये क्यों ?'

मानदा दासी बोली, 'रुपये न देती ? तुम्हारी वजह से तो रुपये देना पड़े। तुम्हारी लड़की को तलाश कर इस घर से खोजना चाहते थे। कहते थे कि मैंने सुखदावाला दासी को छिपा रखा है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो तुमने क्या कहा ?'

'मैंने कहा कि सुखदा नाम की मेरे घर में कोई लड़की नहीं है।'

'उसके बाद ? कुछ और नाम बताकर टाल क्यों न दिया ?'

मानदा दासी गुर्रा उठी। बोली, 'तो तुमने सोचा कि मैंने कहा नहीं ? मैंने तो कहा था कि सान्त्वनावाला दासी नाम की लड़की हमारे घर नयी-नयी आयी है...।'

'तो उसके बाद ?'

'उसके बाद पुलिस ने कहा कि घर की तलाशी लेंगे। घर की अगर तलाशी लेते तो भंडा फूट न जाता ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो एकदम से पाँच सौ रुपये दे दिये ! पचास रुपये देने से ही मामला खत्म हो जाता।'

मानदा दासी बोली, 'तो थाने से बड़े दारोग़ा बाबू को बुला लाऊँ ?

उनके सामने तुम यही बात कह देना !'

भूपति भादुड़ी हँसे। बोले, 'अरे नहीं, नहीं, ऐसा नहीं। मैं कह रहा हूँ कि एकदम पाँच सौ रुपये देने की क्या जरूरत थी ?'

मानदा दासी बोली, 'तो देती नहीं ? पुलिस क्या रुपये लिये बिना चली जाती ?'

भूपति भादुड़ी डर गये। बोले, 'पाँच सौ रुपये मुझे अभी कहाँ से मिलेंगे, बताओ तो ?'

'रुपये तुम्हारे पास ही हैं। रुपये दिये बिना तुम आज जाओगे नहीं। दो, रुपये दो।'

भूपति भादुड़ी मानदा के आगे हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

बोले, 'कसम से कह रहा हूँ, मेरे पास रुपये नहीं हैं, मुझ पर विश्वास करो।'

'रुपया नहीं है माने ? तुम्हारे पास रुपये नहीं होंगे, क्या मैं यह विश्वास कर लूँ ? रुपये पाये बिना मैं तुम्हें यहाँ रात-भर रोके रखूँगी।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो रुपये न रहने पर मैं कहाँ से दूँगा ? मैं क्या रुपयों के बच्चे पैदा करूँगा ?'

मानदा अब आगे बढ़ आयी। बोली, 'देखूँ, तुम्हारी जेब देखूँ।'

मानदा ने झप से भूपति भादुड़ी की छाती वाली जेब जोरों से पकड़ ली।

भूपति भादुड़ी बोले, 'जेब में तो बस दस रुपये हैं, यह तो तुम लोगी नहीं।'

'दस रुपये लेकर क्या मैं उन्हें धोकर पीऊँगी ? मेरे कुरकुरे पाँच सौ रुपये सन्दूक से निकल गये, वे रुपये लिये बिना मैं नहीं छोड़ती।'

लेकिन रुपये कहाँ ! छाती की जेब की तलाशी ली गयी, बगल की जेब भी खोजी गयी। कहीं रुपये नहीं। आखिर में मानदा बोली, 'देखूँ, देखूँ, अब तुम्हें न छोड़ूँगी, अब तुम्हारी काछ देखूँगी ही।'

यह कहकर काछ को सर्र से खींचते ही वह खुल गयी।

'अरे, तुम क्या सचमुच मुझे नंगा कर दोगी ? यह क्या तमाशा है ?' कहकर काछ को भूपति ने कसकर पकड़ लिया।

लेकिन मानदा दासी इस मकान की मालकिन यों ही नहीं बन गयी थी। बड़ी मुसीबतों से कमाया हुआ उसका धन था। बड़ी मुश्किल से वह दूसरों की जेबें काटकर इतनी बड़ी बनी थी। लज्जा, संभ्रम, मान-अपमान का ज्ञान रखने से कुछ नहीं होता। वह शरीर की ताकत से काछ खींचने लगी। 'छोड़ो, पहले काछ छोड़ो...।' भूपति गिड़गिड़ाने

सहसा बाहर से पुकार आयी, 'मौसी, ओ मौसी...!'

मानदा का हाथ सहसा रुक गया।

भूपति भादुड़ी की तब जान में जान आयी।

मानदा बोली, 'भागना मत, मैं आ रही हूँ।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अब यह कौन हैं?'

मानदा बोली, 'यह पार्टी के लड़के हैं, वोट के लिए आये हैं—तुम ठहरो, भाग न जाना...।'

कहकर बाहर चली गयी।
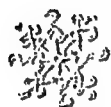
देवेश के पार्टी-ऑफ़िस में काम की कमी नहीं थी। कहाँ किस ऑफ़िस में लेबर-यूनियन का झगड़ा चल रहा है, उसका फ़ैसला देवेश करेगा। बीच-बीच में टुलू भी साथ रहती थी। लेकिन कभी-कभी उसे यूनियन के काम के लिए अकेले भी निकलना पड़ता।

उस दिन देवेश उस समय भी नहीं आया था। जाँच-कमेटी बैठी थी। बीच-बीच में किसी-किसी की गवाही होती थी। उसी काम से पार्टी के वकील के पास जाना होता। वकील के साथ सलाह करना पड़ती। दूसरे दिन जिसकी गवाही ली जायेगी उसे सिखा-पढ़ा देना होता। शहर-भर के दूसरे दिन अख़बार में छपी रिपोर्टें पढ़ने के लिए उत्सुक रहते।

कोई कहता, 'न मशाई, देख लेंगे, कुछ न होगा। सब गवर्नमेंट की झाँसा-पट्टी है।'

फिर कहता, 'अरे मशाई, धर्म की कल आकाश में चलती है। देखेंगे, इस बार कांग्रेस पार न जायेगी।'

नजदीक खड़ा एक आदमी बोला, 'रहने दीजिये मशाई, वह युग अब नहीं है। अब जज, मजिस्ट्रेट भी वैसे ही हैं, अब उनका भी कोई विश्वास नहीं करता। अब तो जो रक्षक है वही भक्षक है।'

लेकिन जाँच-कमीशन के आगे हर रोज वकील-ऐडवोकेटों की गाड़ियाँ आ पहुँचतीं। जज साहब ठीक वक़्त पर आकर कुर्सी पर बैठ जाते। ठीक वक़्त पर सुनवायी शुरू होती। अख़बारों के रिपोर्टर ठीक समय पर आकर काग़ज़-पेंसिल ले अपनी-अपनी कुर्सियों पर बैठे खस-खसकर अपनी-अपनी

वे मिलें चलाते रहते।

दूसरे दिन ऑफिसों और कचहरियों में जोरों की बहसें चलती।

कोई कहता, 'देख रहे हैं भाई, कांग्रेस की कारिस्तानी देखते हैं?'

पास खड़ा आदमी कहता, 'यह सब देखने से कोई फायदा नहीं भाई, देखेंगे कि इस्तगासा सब रद्द कर देगा। आप लोग कानून के दाँव-पेंच नहीं जानते।'

ट्रक हर रोज ही आती थी। और जब सब खत्म हो जाता तो पार्टी-ऑफिस लौट आती। साथ के गवाह भी साथ-ही-साथ लौट आते। उनमें कोई पार्टी का आदमी रहता, कोई पार्टी का नहीं भी होता। एक-एक जिरह के जवाब में वे साफ-साफ जवाब देते।

सफाई का वकील पूछता, 'दुर्घटना के वक्त आप कहाँ थे?'

गवाह कहता, 'धर्मतल्ला स्ट्रीट में।'

'धर्मतल्ला स्ट्रीट आप क्यों गये थे?'

'मुझे काम था।'

'क्या काम?'

गवाह कहता, 'चाँदनी में मैं एक चीज खरीदने गया था।'

'आपको कब पता लगा कि वहाँ गोली चल रही है?'

गवाह कहता, 'मैंने आँखों से देखा कि जुलूस शान्त भाव से चल रहा था, और कहीं कोई गड़बड़ नहीं थी, अचानक जुलूस पर सोडे की बोतलें गिरने लगीं।'

'आपको क्या पता, किसने सोडे की बोतलें फेंकीं?'

वकील ने पूछा, 'पुलिस से एक वार वात करने से ही क्या कोई पुलिस का आदमी हो जाता है ?'

गवाह बोला, 'लेकिन जब उस आदमी ने पुलिस की आँखों के आगे ही जुलूस पर ईंट फेंकी, तब पुलिस ने उससे कुछ नहीं कहा। उसी से मुझे शक हुआ कि वह आदमी पुलिस की ओर का है।'

इसके बाद गवाह से और कोई सवाल नहीं किया गया। गवाह से वकील ने कहा, 'अच्छा, आप बैठ जाइये।'

उस दिन भी ठीक ऐसी ही जिरह चल रही थी।

एक गवाह से खड़े होते ही वकील ने पूछा, 'आपका नाम ?'

गवाह ने अपना नाम बताया।

'पेशा ?'

'दलाली।'

'आप उस तारीख को धर्मतल्ला स्ट्रीट क्यों गये थे ?'

गवाह ने कहा, 'मैं अपने लड़के का कुर्ता खरीदने गया था।'

'वहाँ क्या देखा ?'

'देखा कि एक लम्बा जुलूस जा रहा है और वे लोग नारे लगा रहे हैं।'

'देखकर क्या लगा ?'

'लगा कि कम्युनिस्ट पार्टी का जुलूस है।'

'कैसे समझे कि कम्युनिस्ट पार्टी का जुलूस है ?'

गवाह बोला, 'देखा कि लाल झंडे हैं, और 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगा रहे हैं।'

'कांग्रेस के जुलूस में क्या नारे लगाते हैं ?'

'वन्दे मातरम्।'

'आप किस पार्टी के मेम्बर हैं ? कम्युनिस्ट पार्टी या कांग्रेस पार्टी के ?'

गवाह बोला, 'मैं, सर, किसी पार्टी का मेम्बर नहीं हूँ। मैं एक मामूली भद्र आदमी हूँ।'

कोर्ट में दबी हुई हँसी की आवाज़ उठी।

'उसके बाद गोली चलना कब देखा ?'

गवाह बोला, 'मैं उस वक़्त फ़ुटपाथ पर कपड़ा ख़रीद रहा था। सहसा धाँय से बन्दूक छोड़ने की आवाज़ हुई।'

कमीशन के आगे इसी तरह बाक़ायदा विभिन्न गवाहों से जिरह चलती। पार्टी के वालंटियर भी आते। वे कई दिनों से जोश में फटे पड़ रहे थे।

एक सिद्धान्त की विजय के लिए वे बेचैन होकर प्रतीक्षा करते थे। सिर्फ़ यही नहीं। दूसरी ओर चुनाव भी तो नजदीक था। पार्टी के लड़के-लड़कियाँ वोट के लिए घर-घर जाते। सवेरे ही वे घरों से निकल पड़ते। उसके बाद अपने-अपने अंचलों के ऑफिस में इकट्ठा होते। वहाँ पोस्टर लिखे जाते। छपे पोस्टर लेकर घरों की दीवारों पर लगा आते। और घने जाड़े की रातों में तारकोल की टीन लेकर निकलते। बड़े-बड़े अक्षरों में तारकोल से लिख देते :

'मेहनतकशों के हित के लिए वामपंथी दल के उम्मीदवार
पूर्णचन्द्र विश्वास को वोट दें।'

उधर पुण्यश्लोक बाबू के दल के लड़के भी बैठे नहीं थे। वे भी दूसरे दिन उसी के पास तारकोल में बड़ा-बड़ा लिख जाते :

'चीन के दलालों को पहचान रखें।
पुण्यश्लोक बाबू को वोट दें।'

सड़क पर चलते-चलते या बसों-ट्रामों में जो आवा-जाही करते हैं वे दीवार पर लिखे हुए को पढ़कर तरह-तरह की बातें करते।

कहते—इस बार कांग्रेस की खैरियत नहीं है।

कोई कहता—रुपयों का श्राद्ध है भाई, बस रुपयों का श्राद्ध। जो रुपये ढाल सकेंगे वे ही जीतेंगे। यह जमाना तो रुपयों का जमाना है।

दूसरी ओर से एक दल कहता—इस बार रुपये नहीं भाई, खून बहेगा! रुपये से खून का दाम ज्यादा है। अब की खून देकर आदमी कांग्रेस का सामना करेगा।

एक दार्शनिक किस्म के आदमी बोल पड़े—खून देकर खून का कर्ज़ चुका दिया जायेगा।

कितनी तरह के लोग कितनी तरह की बातें करते हैं, उसका क्या कोई लेखा-जोखा है? जो निरीह लोग हैं, वे अखबार-भर पढ़कर देश की हालत पर सोचते, डर के मारे काँपते। कहते—हाय, वह पुराना जमाना अब लौटकर नहीं आयेगा।

पुराने जमाने में कितना सुख था—वे लोग उसकी सूची विस्तार से देते: एक रुपये में एक कमीज, साढ़े तीन रुपये जोड़ा जूते, रुपये का बारह सेर दूध। वह जमाना अब लौटकर नहीं आयेगा। अब केवल रुपये का युग है। रुपया देकर सब-कुछ खरीदा जा सकता है। तुम्हें खरीदूंगा, तुम्हारी मान-मर्यादा, तुम्हारे पाप-पुण्य, तुम्हारी विवेक-विवेचना तक खरीदकर तुम्हें अपना गुलाम बनाकर रखूंगा। मुझे वोट देने के लिए तुम बाध्य हो। मुँह से मैं तुम्हारे लिए बहुत आशाओं के पुल बाधूंगा। गरीबों को अमीर

वना देने के झूठ दिलासे व आश्वासन दूंगा। मैं कहूंगा—मुझे तुम वोट दो, मैं ही तुम्हें वचाऊंगा। मैं हर मैदान में, हर लेक्चर में घोषणा करूंगा—आओ ग़रीवो, मज़दूरो, कुली, किसान, रिक्शे वालो, टैक्सी ड्राइवरो, तुम सव मेरे भाई हो। तुम्हारे ख़ून देने से हम स्वतन्त्र हुए हैं, इसलिए समाज में सवसे ऊँचा स्थान तुम्हारा है। आज तुम सव आगे आओ, हमारे गले लग जाओ! ये सव वातें हमें कहना होती हैं, इसलिए कहेंगे ही। लेकिन हम तुम्हारे साथ वैसे शरीक न होंगे, घुल-मिल न पायेंगे। हमें तुम लोग अपने साथ सड़क-सड़क पर पैदल चलने को मत कहो। हम आगे की क़तार में गाड़ी पर चढ़कर चलेंगे। और तुम हमारे पीछे पैदल आओगे। क्योंकि हम तुम्हारे साथ पैदल किस तरह चलेंगे? हम लीडर हैं। तुम क्या हमारी वरावरी कर सकते हो? तुम्हारे साथ एक हो जाने से तुम लोग हमारी भय-भक्ति भला क्यों करोगे? लोग हमें क्यों मानेंगे? तव फिर हम तुम पर शासन कैसे करेंगे? तुम हमारे सिर पर चढ़ वैठोगे। तुम सिर चढ़ गये तो हमारा काम नहीं चलेगा।

वहुत देर वाद पमिली वोली।

कहा, 'क्या हुआ, तुम चुप क्यों हो? वात नहीं कर रहे हो?'

सुरेन चुपचाप पास वैठा था। वोला, 'वताओ, क्या कहूं? अपराधी को कुछ कहने को रह जाता है?'

पमिली वोली, 'तुम अपराधी हो?'

सुरेन वोला, 'निश्चय ही। सवके सामने, सवकी इच्छा के विरुद्ध तुम मुझे गाड़ी पर चढ़ाकर ले आयीं। सवकी नज़रों में तो मैं ही अपराधी ठहरा।'

पमिली वोली, 'हमेशा सिर झुकाये-झुकाये रहने से ही तुम्हारे मन में एक गाँठ वँध गयी है। उसके मजवूत हो जाने से आदमी धीरे-धीरे जानव[र] हो जाता है।'

'तो उसी जानवर को तुमने इस तरह सम्मान क्यों दिया?'

पमिली वोली, 'समझ लो कि तुम्हें आदमी वनाने के लिए।'

'लेकिन मुझे आदमी वनाने की ज़िम्मेदारी तुम अपने कंधों पर लि[ए] ले रही हो? और उसके सिवा यह कि मैं आदमी नहीं हूं, यह तुमसे कि[सने] कहा?'

पमिली शायद सहसा सुरेन के मुंह से इस वात की उम्मीद नहीं र[ख] थी। इसीलिए वह चुप रही।

सुरेन फिर वोला, 'उससे अच्छा है कि तुम मुझे यहाँ उतार दो।'

'यहाँ से तुम किस तरह घर जाओगे ?'

'हम कहाँ हैं ?'

अभी तक सुरेन ने यह गौर नहीं किया था कि वह कहाँ, कितनी दूर आ गया था। अब चारों ओर गौर से देखा। लेकिन जगह को पहचान न सका।

पूछा, 'यह कहाँ ले आयी ?'

पमिली बोली, 'डायमंड हार्बर के रास्ते हम जा रहे हैं।'

'लेकिन इधर क्यों आयीं ?'

पमिली बोली, 'क्यों, क्या तुम्हें डर लग रहा है ?'

सुरेन बोला, 'डर नहीं लगेगा, तुम जितनी तेजी से गाड़ी चला रही हो ? अगर कहीं दुर्घटना हो जाये ?'

पमिली निर्विकार चेहरे से बोली, 'दुर्घटना हो जाने से मर जायेंगे।'

सुरेन बोला, 'क्या कहा ?'

पमिली बोली, 'कहा कि मर जायेंगे। क्यों, तुम्हारी मरने की तबीयत नहीं होती ?'

सुरेन बोला, 'वाह, यों ही मरने की तबीयत क्यों होगी ? क्या तुम्हारी मरने की तबीयत होती है ?'

पमिली बोली, 'बहुत !'

कहकर वह हँसने लगी। उसके बाद हँसते-हँसते बोली, 'आओ न, आज दोनों एक साथ मर जायें।'

सुरेन बोला, 'यह क्या ? तुम क्या पागल हो गयी हो ?'

पमिली बोली, 'लेकिन सुरेन, कभी-कभी मेरी मरने की बहुत इच्छा होती है। मन में आता है कि अगर साथी मिल जाता तो एक साथ मरते। सारे अखबारों में दूसरे दिन खबर निकलती—एक जोड़ा प्रेमी-प्रेमिका का चरम आत्म-निवेदन...।'

'लेकिन तुम्हारी ऐसी इच्छा होती ही क्यों है ? तुम्हारे पास बहुत-सा रुपया है, कितना नाम है, कितनी प्रतिष्ठा है, तुम्हें क्या तकलीफ़ है कि मरोगी ?'

पमिली ने उस बात पर ध्यान न देकर कहा, 'देखो, सामने के उस बड़े भारी पेड़ से जाकर एक जोरों की टक्कर लगाऊँ ?'

सुरेन ने झटपट पमिली का एक हाथ दबा दिया। बोला, 'दुहाई है तुम्हें पमिली, दुहाई है, पागलपन न करो।'

पमिली खिलखिलाकर हँस पड़ी।

बोली, 'मैंने सबको पहचान लिया। आज तुम्हें भी पहचान लिया।

कोई मेरे साथ मरने को तैयार नहीं है।'

सुरेन बोला, 'लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि तुम किस दुःख से मरना चाह सकती हो ?'

पमिली बोली, 'क्या सिर्फ़ दुःख से ही आदमी मरता है ? ज़्यादा सुख से भी तो आदमी मरना चाहता है।'

'सुख से आदमी मरना चाहता है ? तुम कह क्या रही हो ?'

पमिली बोली, 'तुम बच्चे हो, इसी से नहीं जानते। सुख जब गले तक आ जाये तो इस सुख को चिरस्थायी बनाने के लिए भी कोई-कोई इंसान मरना चाहते हैं।'

'लगता है कि अब तुम्हारी वही स्थिति हो गयी है ?'

पमिली बोली, 'हाँ, आज मेरी तरह कोई सुखी नहीं है।'

'क्यों ? इतना सुख किस बात का है ?'

पमिली ने कोई जवाब न दिया। जिस तरह गाड़ी चला रही थी, उसी तरह चलाती रही।

'क्यों, बताया नहीं, किस बात का इतना सुख है ?'

पमिली ने सहसा गाड़ी रोक दी। बोली, 'तुम्हारे लिए !'

'मेरे लिए ?' कहकर ताज्जुब से सुरेन ने पमिली की ओर देखा।

पमिली अचानक एक हरकत कर बैठी। एकदम सुरेन की ओर झुक गयी। सुरेन की समझ में न आया कि क्या करे ! झटपट सरकते-सरकते बोला, 'कर क्या रही हो, क्या कर रही हो ?'

लेकिन तभी पमिली ने जो करना था वह कर डाला। सुरेन पर झपटकर उसके कंधे पर अपने दाँत गड़ा दिये। पमिली का सारा शरीर क्षण-भर में जैसे एक दैत्य में परिणत हो गया था।

असह्य यंत्रणा से सुरेन चीख़ उठा, 'ओह...!'
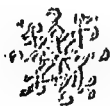
रात बीत जाती है, सवेरा होता है। और सवेरा भी बीतते-बीतते एक समय रात के अंधकार में विलीन हो जाता है। कलकत्ता के जीवन में मनुष्य का कभी सवेरा हुआ था। उस दिन विश्वास दृढ़ था, संघर्ष कठिन था। लेकिन अब वह विश्वास भी नहीं है, संघर्ष भी नहीं। अब मानव दिशाहीन

होकर केवल आकाश की ओर देखता रहता है। उनकी रक्षा कौन करेगा? और जो कोई किसी तरह विशेष विचलित न होते, वे दुर्गा के नाम का जाप करते-करते बाकायदा ऑफिस की ओर भागते और दिन-भर की थकान लेकर, घर लौटकर बेहोश-से पड़े रहते। उनके जो रक्षक हैं वे कहते—हम जनता के रक्षक हैं। जनता ही हमारी राजा है। तुम हमें ही वोट दो।

लेकिन इसी बीच एक दल और निकल आया। वह कहता—हम ही जनता के असली रक्षक हैं। जनता ही हमारी एकमात्र राजा है। तुम अगर अपना भला चाहते तो हमें वोट दो।

वास्तव में कौन असली रक्षक है, यह कोई समझ नहीं पाता। समझ नहीं पाता—इसीलिए एक बार पूर्ण बाबू का भाषण सुनने जाता है। फिर एक बार पुण्यश्लोक बाबू की सभा में जाता है। दोनों की बातों में ही तर्क है, दोनों ही जेल गये हैं। फर्क सिर्फ एक मामले में है। पूर्ण बाबू का अपना कहने को कुछ नहीं है। और पुण्यश्लोक बाबू गृहस्थ हैं—उनका बेटा अमेरिका से लौटा है, और लड़की शराबखोर है!

जिसे सन्देह होता वह पूछता, 'अच्छा, क्या सचमुच पुण्यश्लोक बाबू की लड़की शराब पीती है?'

जो सब-कुछ जानते हैं वे कहते, 'अरे मशाई, मैंने अपनी आँखों से उसे शराब पीते देखा है।'

जो पुण्यश्लोक बाबू का रुपया खाते हैं, वे कहते, 'शराब कौन नहीं पीता? शराब पीने से क्या खराबी हो जायेगी? जवाहरलाल नेहरू शराब नहीं पीते? रवि ठाकुर शराब नहीं पीते थे? उसके सिवा शराब भी तो पीने ही की चीज है, मशाई। शराब अगर पीने की चीज न रहे तो गवर्नमेंट फिर शराब के लिए परमिट-लाइसेंस क्यों दे? और क्या सिर्फ शराब ही पीती है, पुण्यश्लोक बाबू की लड़की सिगरेट भी तो पीती है।'

'यह क्या मशाई, वह लड़की सिगरेट भी पीती है?'

वह आदमी कहता, 'हाँ, पीती है, अपने बाप के पैसे से पीती है! आपके पास पैसा हो तो आप भी पीजिये न, किसने रोका है?'

बहस बढ़ते-बढ़ते जब झगड़े में बदलने को होने लगती, तो जो लोग शान्तिप्रिय होते वे चुप हो जाते। वे और कोई बात न करते। इतना झगड़ा बढ़ाने की क्या जरूरत? जब वोट देने का वक्त होगा तब देखा जायेगा कि किसे देंगे।

उस दिन पार्क की मीटिंग समाप्त कर पुण्यश्लोक बाबू देर से घर आये।

अपने कमरे में जाकर रोशनी जलायी। उसके बाद खद्दर का कुर्ता उतारा। मन की गहराई में एक चिन्ता बीज बनकर बढ़ना चाह रही थी। सचमुच उनके जीवन में मानो एक दिन के बाद फिर रात उतर आयी। इस रात के फिर कितने दिनों बाद सवेरा होगा, किसे पता? बहुत दिनों पहले अंग्रेजों के जमाने में उनके जीवन में रात उतर आयी थी। बरस के बाद

[illegible]

भी नहीं छोड़ा। इतने दिनों का इतना त्याग करने का परिणाम क्या यही है? अब लोग उन्हें 'अमेरिकी दलाल' कहते हैं। आज के युग के कलकत्ता के लड़के उन दिनों की बात भूल गये। इसीलिए तो वे इतिहास लिखकर रख जाना चाहते थे। जिस इतिहास में कांग्रेस की भी कहानी लिखी रहती, महात्मा गांधी की बात लिखी रहती, उनका जेल भुगतना, उनके त्याग की बातें भी लिखी रहती। लेकिन वह भी तो नहीं हुआ। अब लगता है कि सब गड़बड़ा गया है।

सहसा टेलीफोन बज उठा।

पुण्यश्लोक बाबू ने रिसीवर उठा लिया। बोले, 'हलो!'

उसके बाद जो खबर सुनी, उससे उनके ब्लड-प्रेशर ने जैसे सहसा असंगत ढंग से बढ़ जाना चाहा।

बोले, 'सिर्फ गाड़ी पड़ी है?'

'हाँ।'

'गाड़ी वहाँ कौन ले गया?'

'यह नहीं मालूम।'

'आसपास तलाश करके देखा?'

'जी, देखा। एकदम डायमण्ड हार्बर रोड पर गाड़ी खाली पड़ी है। ब्लू बुक में आपका नाम देखकर आपको टेलीफोन कर रहा हूँ।'

'गाड़ी की चाभी? गाड़ी की चाभी कहाँ है?'

आदमी बोला, 'गाड़ी की चाभी भी नहीं है।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तो एक मोटर-मैकेनिक बुलाकर चाभी का कुछ इन्तज़ाम कर गाड़ी जिस तरह भी हो मेरे घर भेज दो।'
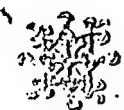
बहुत दिनों बाद टुलू इस घर में आयी थी—इस माधव कुंडू लेन के घर में। उसे कुछ शक हुआ था कि उसकी पार्टी से सुरेन-दा को वे लोग तोड़कर लिये जा रहे हैं। अब सड़कों के फ़ुटपाटों पर, पार्कों में, गाँवों में, शहरों में सब जगह मीटिंगें हो रही थीं—चुनाव की मीटिंगें। जिस तरह हो अपनी पार्टी के उम्मीदवार को जिताना ही होगा। सन्दीप-दा ने उस दिन सब लोगों से यह बात कह दी थी। चुनाव का वक़्त ही सबसे खतरनाक था। इसी वक़्त तो कांग्रेस चारों ओर करोड़ों रुपये बिखेरेगी। मारवाड़ी, गुजराती, बंगाली, पंजाबी कारबारी लोग कांग्रेस को रुपये देंगे, क्योंकि रुपये बहाये बिना उनका हित कौन देखेगा ?

लेकिन असल में सुरेन-दा कौन हैं ? कोई भी नहीं। सुरेन सान्याल नाम से कोई एक लड़का अगर पार्टी छोड़कर चला जाये तो उससे किसी का कोई नुक़सान नहीं। पार्टी का भी कोई नुक़सान नहीं। दुनिया की सारी पार्टियों में ऐसा हुआ है। तमाम पार्टियों के कितने ही मेम्बरों की हत्या की गयी, पार्टी से निकाल दिया गया। पार्टी जब बड़ी हो जाती है तो कितनी ही तरह के बुरे लोग ग़लत मतलब लेकर उस पार्टी में घुस पड़ते हैं। जब वे पकड़े जाते हैं, तो उनको डण्डे मारकर निकाल बाहर करने में भी किसी को दुविधा नहीं होती।

सहदेव बाबू कहते, 'ओ रे, और कितने दिनों तक तू इस तरह चलायेगी ? अब कुछ कामकाज कर।'

टुलू कहती, 'कामकाज ही तो कर रही हूँ, बाबा।'

सहदेव बाबू कलकत्ता के समाज के बारे में कुछ भी नहीं समझते। अंधे आदमी की आँखों में वही पहले के देखे हुए समाज का चित्र ही जैसे झलकता। वही पहले के युग के मानदण्ड से वह मनुष्य को लेकर विचार करते। सहदेव बाबू जानते थे कि लड़की बड़ी होकर शादी करेगी। लड़के-लड़कियाँ होंगी, घरबार चलायेगी। यही लड़कियों के जीवन का आदर्श है। लेकिन टुलू-फुलू आदि के जीवन का यह क्रम उन्हें अच्छा नहीं लगता। जिस लड़की की शादी की उमर हो गयी उसके लिए इस तरह बाहर-बाहर घूमना-फिरना अच्छा नहीं लगता। लेकिन अच्छा न भी लगे तो सहदेव बाबू क्या करें ? पेट के लिए सब सहना पड़ता है। लड़की का बाहर जाना

भी सहना पड़ता है। लड़की का देरी कर घर आना भी सहन करना पड़ता है।

उस दिन मीटिंग में सहसा सुरेन के चले जाने के बाद ही टुलू को जैसे होश आया। उसे बात कुछ अच्छी न लगी। किसी आदमी ने अचानक आकर कुछ कहा और सुरेन चला भी गया, यह किसी को भी क्या अच्छा लग सकता है?

मामला किसी तरह भी टुलू भूल न सकी। जब मीटिंग के बाद सभी पार्टी के ऑफिस में जा पहुँचे, तरह-तरह के कामों में लग गये, तब भी टुलू इस बात को भूल न सकी। बहुत रात को ठकुरिया के घर में लौटी। लेकिन तब भी मन में जैसे कचक-कचकर यही बात खटक रही थी।

सहदेव बाबू हमेशा लड़की के लौटने तक जागते ही रहते थे। जब तक टुलू घर न आये तब तक उनकी अंधी आँखों में नींद नहीं आती। बार-बार फुलू से पूछते, 'क्यों रे फुलू, तेरी दीदी अभी तक नहीं आयी?'

फुलू को ऐसी फिक्र नहीं रहती। वह भात लेकर बाबा को खिलाकर, खुद खा, बर्तन-भाँड़े उठा अपनी जगह पर लेट जाती। सहदेव बाबू की बात उसके कानों में भी नहीं पड़ती।

उस दिन टुलू के घर आते ही सहदेव बाबू ने पूछा, 'क्यों रे, बहुत देर हो गयी?'

टुलू बोली, 'आजकल जरा देर होगी, बाबा।'

सहदेव बाबू बोले, 'इतना काम करने से अन्त में तेरा शरीर टूट जायेगा?'

टुलू बोली, 'नहीं बाबा, मेरा शरीर टूटेगा नहीं।'

सहदेव बाबू ने नहीं छोड़ा। बोले, 'अभी उस दिन इतनी बड़ी दुर्घटना से उठी, मुझे डर लगता है, बेटी।'

टुलू बोली, 'चुनाव जितना आगे आ रहा है, हमारा काम भी उतना बढ़ रहा है। और कुछ महीनों की थोड़ी मेहनत है। उसके बाद आराम।'

'तुझे और आराम? मेरे मरने पर ही तुझे आराम मिलेगा।'

टुलू बाबा की बात का जवाब तो देने वाली थी, लेकिन उसका मन कहीं और पड़ा था। सहसा बोली, 'बाबा, जानते हो अगर इस बार चुनाव में हम जीत जायें तो मैं तुम्हारी साध पूरी कर दूँगी।'

सहदेव बाबू का मुँह आशा से भर उठा। बोले, 'मेरी साध इस जीवन में पूरी न होगी। मैं और अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहूँगा।'

टुलू बोली, 'अपने जीवित रहते-रहते ही सब देख जाओगे, बाबा।'

सहदेव बाबू बोले, 'खाक देखूँगा रे, खाक! तू शादी कर लेती तो

फिर भी मन की एक साध पूरी होती।'

'शादी मैं करूँगी, बाबा। शादी क्यों नहीं करूँगी!'

सहदेव बाबू जैसे लड़की की बात पर खुशी से उछले पड़ रहे थे। बोले, 'तू ब्याह करेगी बेटी, तू ब्याह करेगी?'

टुलू बोली, 'हाँ बाबा, तुम देखना, चुनाव खत्म होते ही मैं ब्याह करूँगी।'

सहदेव बाबू बोले, 'हाँ बेटी, वही होना चाहिए, अपने जाने के पहले तेरा ब्याह देखकर जा सकूँ। वही तो सोचता था, तू बाहर-बाहर इतना घूमती है और कोई तुझे पसन्द नहीं आया!'

टुलू बोली, 'अब पसन्द आ गया है, बाबा।'

सहदेव बाबू मानो खुशी से चंचल हो गये। बोले, 'लड़का कैसा है, रे? तेरे मन का है न?'

'हाँ, बाबा।'

सहदेव बाबू के कलेजे से एक चैन की साँस निकली। दोनों हाथ जोड़ सिर से लगाकर किसी को प्रणाम किया। उसके बाद बोले, 'अच्छा हो तभी अच्छा है; आजकल कुछ अच्छा होगा, यह सोचने में डर लगता है। भगवान् क्या हमारी लाज रखेंगे?'

उसके बाद सहसा सहदेव बाबू को कुछ शक हुआ। बोले, 'क्यों रे, तूने खाया नहीं?'

'मैं पार्टी-ऑफ़िस से खाकर आयी हूँ, अब और न खाऊँगी।'

कहकर वह अपने बिस्तर पर लेट गयी। बत्ती जल रही थी, उसे भी हाथ बढ़ाकर बुझा दिया। कमरा अँधेरा हो गया, लेकिन अँधेरे में भी टुलू का मन अकेला न रह सका। मन में आया जैसे चारों ओर से सभी उसे बहुत घेरे हुए हैं। जैसे पार्टी-ऑफ़िस का सारा प्रोग्राम उसे खा जाने को आ रहा है। नये-नये मेम्बर बनाना होंगे। नयी वोटर-लिस्ट बनाना पड़ेगी, नए चुनाव-क्षेत्रों में जाकर वोट माँगने होंगे। उसे कितना काम है! क्या सिर्फ़ काम ही, उसके सिर पर कितनी ज़िम्मेदारी है! और फिर हैं जाँच-कमीशन। वकील के पास जाकर सलाह लेना। सन्दीप-दा को पूरी रिपोर्ट देना। कितने-कितने काम हैं उसे! काम करते-करते उसकी कितनी उमर हो गयी, फिर भी काम का जैसे अन्त ही न हो। कब वह देश छोड़कर सियालदह स्टेशन पर भाई-बहनों का हाथ पकड़कर आयी थी। भाई स्टेशन के प्लेटफ़ार्म पर मर गया। उसके बाद धीरे-धीरे आँखों के सामने कलकत्ता शहर बदल गया। पहले के आदमी और भी हिंस्र, और भी कुटिल हो गये। गन्दा शहर और भी गन्दा हो गया। आदमी में लालच

बढ़ गया। फूल-फालकर कितने लोगों के सन्दूकों में जाकर रुपये के पहाड़ जमा हो गये। और जिन्हें कुछ नहीं मिला वे पाने के लिए दुस्साहसी बन गये। तब पूर्ण-दा, सन्दीप-दा नयी पार्टी बनाने के लिए आगे आये। याद है, देवेश-दा ने ही एक दिन उससे कहा था, 'तुम हमारी पार्टी में काम करोगी?'

टुलू की उस वक्त ऐसी कुछ उम्र न थी। क्या सोचकर उसने कहा था, 'आप लोग रुपये देंगे?'

देवेश-दा चौंक पड़े थे, 'वाह रे, जरा-सी लड़की, इसी उमर में पैसे को इतना पहचानने लगी?'

टुलू बोली थी, 'वाह रे, दूसरों के घर काम करके मुझे पैसे मिलते हैं। वे वेतन देते हैं और आप वेतन नहीं देंगे?'

उसी दिन देवेश-दा को टुलू बहुत पसन्द आ गयी थी। बहुत होशियार और चालाक लड़की है। पाकिस्तान से विस्थापित। ये ही अच्छा काम करेंगी। बस्ती में और भी कई लड़के-लड़कियों का इन्तजाम हो गया।

देवेश-दा बोले, 'तुम सबको दिन का एक रुपया दूँगा। राजी हो न? मुझे और भी काम करने वालों का इन्तजाम करना पड़ेगा।'

पहले-पहल यह काम टुलू का ही था—बस्ती-बस्ती से लड़के-लड़कियों में से पार्टी के कार्यकर्ताओं को जमा करना। उसके बाद शुरू हुआ चन्दा जमा करने का काम। एक बड़े से लाल कपड़े के चारों कोनों को पकड़ चौरंगी के फुटपाथ पर भीख माँगना। कोई पैसा देता, कोई आँखें दिखा-कर, बककर चला जाता। फिर भी दिन-भर में जो मिलता उसे गिनकर बाँधकर ला देना पड़ता पार्टी-ऑफिस में सन्दीप-दा के हाथों में। इसी तरह रोज होता। उसके बाद आया चुनाव। वह 1952 साल था। पूर्ण बाबू आदि एक जगह में भी न जीत सके। देवेश-दा बोले, 'इससे घबराने की बात नहीं। अगली बार देखेंगे।'

उसके बाद पाँच बरस बीत गये। अब फिर चुनाव आया है। यह पाँच बरस किधर कट गये, उसका टुलू को पता भी न चला। इन पाँच बरसों में ही जैसे टुलू ने बहुत-कुछ देखा, बहुत-कुछ सीखा। देखा, दिन-पर-दिन उनका दल जैसा बड़ा हो गया, उसी तरह उनका काम भी बढ़ गया है। अब सिर्फ चन्दा जमा करना ही काम नहीं रह गया। अब उसी चन्दे के पैसे से फैक्टरी के मजदूरों की यूनियन का काम शुरू हुआ। अब ऐसी कितनी यूनियनों ने उनके खातों में अपना नाम दर्ज करा लिया है—उसका अन्त नहीं। अब कारखाने के मजदूर पूर्ण बाबू की ओर मुँह बाये देखते। वे कहते, 'इस बार आपको वोट देंगे, बाबू। हमारे वेतन आदि अ'

लोग बढ़वा देंगे न ?'

देवेश-दा कहते, 'ज़रूर बढ़वा देंगे। एक बार आप-लोग हमारे काम-रेड पूर्ण बाबू को वोट देकर देखिये, तब देखेंगे आपकी हालत में तरक़्क़ी होती है या नहीं। सिर्फ़ यही नहीं, मनुष्य जहाँ भी मनुष्य पर अत्याचार करता है, वहीं हमारी पार्टी बेरहमी से चोट करेगी।'

ये सारी बातें सुनते-सुनते टुलू को भी याद हो गयी थीं। उनकी पार्टी सत्ता हाथ में आते ही पहले ग़रीबों की हालत सुधारेगी। मुट्ठी-भर बुर्जुआ लोगों के हाथों से सारे अधिकार छीनकर सर्वहारा लोगों में उन्हें बाँट देगी। देश में एक शोषण-हीन समाज की स्थापना करेगी। इन्हीं सर्वहारा लोगों का राज स्थापित करना ही हमारा काम है। 'मार्क्सवाद ज़िन्दाबाद! भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ज़िन्दाबाद।'

मज़दूर लोग एक साथ चिल्ला पड़ते : 'ज़िन्दाबाद, ज़िन्दाबाद।'

इसी तरह इतने दिन, इतने बरस निकल गये। किधर से, किस तरह दिन कटते जा रहे थे, उधर घूमकर देखने की भी फ़ुर्सत उसे नहीं थी। पार्टी के काम में व्यस्त रहने से कब उम्र बड़ी हो गयी, वह भी समझ में नहीं आया। पार्टी का काम करना होगा, यूनियन का काम करना होगा। सर्वहारा लोगों के राज की स्थापना करना होगी, यही उसकी दिन-रात की प्रतिज्ञा थी। लेकिन अचानक एक ख़ास दिन से उसे ऐसे लगा कि वह औरत है। बस की टक्कर लगकर जब वह अस्पताल में बिस्तर पर लेटी थी, ठीक उसी दिन। सुरेन-दा एक दिन उसे देखने आये। बुख़ार है कि नहीं, यह देखने के लिए माथे पर हाथ लगाकर देखा। साथ-ही-साथ टुलू को लगा कि जैसे पूरे शरीर में नये सिरे से फिर उसे बुख़ार हो गया हो!

सुरेन बोला, 'यह क्या, तुमने कहा कि बुख़ार नहीं है, इधर तो शरीर जला जा रहा है।'

वही पहली बार था। उसके बाद से ही टुलू मर गयी थी। लेकिन उसे लगा कि अगर आख़िर मरना ही है तो इस तरह से उसकी बेहिसाब मौत क्यों हो! निःशब्द यन्त्रणा के बिना इस तरह किसका क्या नुक़-सान था? इसी दुःख, दारिद्रय, दुर्दशा के साथ क्यों उसने एक और के जीवन को लपेटना चाहा? उसने तो टुलू का कोई नुक़सान नहीं किया था।

सोचते-सोचते अभ्यासवश ही उसे जैसे ऊँघ आ गयी। तन्द्रा के बीच में भी सहदेव बाबू के ख़र्राटों का शब्द कानों में पड़ने लगा। बाबा को जैसे आज सचमुच शान्ति मिल गयी हो। ऐसे निर्विघ्न, निश्चिन्त होकर जैसे बाबा बहुत दिनों से न सोये हों। सच हो या झूठ हो, बाबा को मन में जो

एक शान्ति मिली है इसी में टुलू को शान्ति है। टुलू तो बाबा को इतने दिनों तक कोई भी सान्त्वना देकर सुखी न कर सकी। अब बाबा अगर एक रात के लिए थोड़ी शान्ति पा जायें तो कोई बुरी बात नहीं है।

सहसा दरवाजे की कुंडी खड़की। कुंडी खड़कने से उसकी नींद खुल गयी। आँखें खोलकर देखा कि बाबा सो रहे हैं। फुलू भी उस वक़्त पास ही गहरी नींद में सो रही थी।

लेकिन इतने तड़के किसने दरवाजे को धक्का दिया?

झटपट चादर हटाकर उसने बाहर आकर दरवाजा खोला।

'यह क्या सुरेन-दा, तुम? तुम इतने सवेरे?'

सुरेन बोला, 'कल रात-भर मैं सोया नहीं, टुलू।'

टुलू को लगा कि वह जैसे वहाँ खड़े-खड़े ही रो पड़ेगा।

'तुम बाहर क्यों खड़े हो? आओ, अन्दर आओ।'

सुरेन फिर भी एक कदम न हटा।

कुछ देर बाद बोला, 'उस दिन तुमने कुछ बुरा तो नहीं माना?'

'कब? क्यों? क्या हुआ था?'

'तुमसे कुछ कहे बिना मैं सहसा उस वक़्त मीटिंग से सुव्रत के साथ चला गया था।'

टुलू की समझ में न आया। बोली, 'सुव्रत? सुव्रत कौन है?'

सुरेन बोला, 'वही पुण्यश्लोक बाबू का लड़का, मेरा पुराना दोस्त। हम कभी एक साथ पढ़ते थे न! और वह तो इतने दिनों अमेरिका में था, अभी-अभी लौटा है। बहुत दिनों बाद पहले-पहल उससे मुलाकात हुई थी। वही...।'

टुलू हँसी। बोली, 'तो तुम अपने दोस्त के साथ जाओगे तो उसमें हर्ज क्या है?'

सुरेन बोला, 'न, सोचा शायद तुमको बुरा लगा हो, इसीलिए...।'

टुलू उसी तरह हँसते-हँसते बोली, 'तो मैंने क्या सोचा क्या नहीं सोचा, उससे तुम्हारा क्या आया-गया, सुरेन-दा? और उसके सिवा मैं तुम्हारी कौन हूँ जो मेरे लिए तुम इतने तड़के इतना रास्ता तय कर हमारे घर आये?'

सुरेन जैसे और न रुक सका। बात सुनने के साथ-ही-साथ एकदम छाती के करीब आकर बहुत निकट होकर खड़ा हो गया। बोला, 'मुझे क्या तुमने ऐसा पराया समझ लिया है, टुलू?'

टुलू उसी तरह बोली, 'मैं पराया न सोचूँ सही, लोग तो जानते हैं कि मैं तुम्हारी कोई नहीं हूँ।'

सुव्रत बोला, 'तो चलिये न, पूछ आयें।'

टुलू पहले तो समझ न सकी कि क्या कहे। उसके बाद बोली, 'आपके साथ सुरेन-दा का कितना पुराना परिचय है?'

सुव्रत बोला, 'सुरेन मेरा छुटपन का दोस्त है। और आप? आपके साथ कितने दिनों की जान-पहचान है?'

टुलू बोली, 'मेरे साथ ज़्यादा दिनों की नहीं।'

सुव्रत बोला, 'लेकिन इतनी रात तक बाहर उसको क्या काम रहता है, समझ में नहीं आता।'

टुलू ने उस बात का जवाब न दिया। बोली, 'तो मैं चलूं।'

कहकर बाहर की ओर जाने लगी। सुव्रत भी साथ-ही-साथ आ रहा था। गेट के बाहर ही सुव्रत की गाड़ी खड़ी थी।

सुव्रत गाड़ी के पास खड़ा होकर बोला, 'आप कुछ ख़याल न करें तो मैं आपको घर पहुंचा सकता हूं। मुझे कोई असुविधा न होगी।'

टुलू बोली, 'लेकिन आपने मुझसे गाड़ी से चलने को कहा, मुझे तो आप ठीक से पहचानते भी नहीं।'

सुव्रत बोला, 'पहचानता तो नहीं, लेकिन आप भी तो सुरेन की मित्र हैं!'

टुलू बोली, 'मित्र हूं या नहीं, यह कैसे जाना? दुश्मन भी तो हो सकती हूं।'

सुव्रत मुस्कराया। बोला, 'आप औरत हैं, रात भी बहुत हो गयी है, इतनी रात को आपकी मदद करना मेरा कर्तव्य है। आप सुरेन की मित्र हों या शत्रु हों, उससे मेरा कुछ आता-जाता नहीं! उसके सिवा एक बात और है—शत्रु होने पर क्या इस बेवक़्त आप सुरेन के घर आतीं?'

बात मज़ाक की थी। लेकिन टुलू यह बात सुनकर हंस न सकी। ज़बर्दस्ती बात करने की यह आदत भी जैसे अच्छी न लगी।

बोली, 'न, आपको तकलीफ़ न करना होगी, मैं जा रही हूं।'

सुव्रत ने भी ज़िद न की। अपनी गाड़ी पर जा बैठा। गाड़ी चलाकर थोड़ा आगे बढ़ एक मोड़ घूमकर गाड़ी फिर लौटा लाया। उसके बाद गली से चौड़े रास्ते की ओर आते देखा कि टुलू धीरे-धीरे ट्राम की सड़क की ओर बढ़ रही है।

सहसा टुलू के बग़ल में सुव्रत ने गाड़ी खड़ी कर दी।

बोला, 'फिर एक बार आपसे अनुरोध कर रहा हूं, चलेंगी?'

टुलू बोली, 'माफ़ करें, मैं बस से जाऊंगी।'

सुव्रत बोला, 'लेकिन मैं तो इसी ओर जा रहा हूं, आपको बिठा लेने

में मेरा कोई ज्यादा पेट्रोल भी नहीं जाया होगा।'

टुलू बोली, 'आपके पास करोड़ रुपये हैं, पेट्रोल जाया जाने में आपका कोई भी नुकसान नहीं, लेकिन मैं क्यों उसके लिए जिम्मेदार बनूं ?'

सुव्रत बोला, 'आप किधर रहती हैं ?'

टुलू बोली, 'ढाकुरिया में, बहुत दूर।'

सुव्रत बोला, 'गाड़ी में दूरी क्या ? घंटे-भर में आपको पहुंचाकर आ सकता हूं।'

टुलू बोली, 'आपकी बहुत दया है, लेकिन मेरे लिए आपको इतनी तकलीफ नहीं करना होगी।'

सहसा बातों के बीच ही सुरेन आ खड़ा हुआ। उसके बिखरे बाल, उखड़ी-उखड़ी शकल, सब-कुछ मानो बड़ा अप्रत्याशित था!

'क्यों रे सुरेन, इतनी रात को कहां से लौट रहा है ?'

सुरेन उस सड़क पर इतनी रात को टुलू और सुव्रत को देखकर कम ताज्जुब में न पड़ा। बोला, 'तुम लोग यहां ?'

उसके बाद टुलू की ओर घूमकर बोला, 'तुम सुव्रत को पहचानती हो क्या ?'

टुलू उस बात का जवाब न देकर बोली, 'मैं अब चली सुरेन-दा, बहुत रात हो गयी है, मुझे बहुत दूर जाना है।'

सुरेन बोला, 'अभी चली जाओगी ? मुझसे मिलने आयी थीं, मिले बिना ही चली जाओगी ?'

टुलू और देर बर्दाश्त न कर सकी। बोली, 'न, मैं चलूं, मुझे लौटने में देर हो जायेगी, बाबा बहुत फिक्र करेंगे।'

सुरेन बोला, 'तुम्हें देर न होगी, सुव्रत की गाड़ी है, सुव्रत तुम्हें गाड़ी में घर पहुंचा देगा।'

सुव्रत की ओर देखकर सुरेन बोला, 'तू टुलू को जरा पहुंचा सकेगा न ?'

सुव्रत अभी तक गाड़ी से उतरकर सड़क पर खड़ा था। बोला, 'मैं इतनी देर से यही बात उनसे कर रहा था। वे तो किसी तरह भी गाड़ी पर बैठना नहीं चाह रही थीं।'

सुरेन दोनों का एक-एक हाथ पकड़कर खींचने लगा। बोला, 'आओ, आओ, इतनी दूर आकर तुम लोग घर क्यों लौट जाओगे ? मुझे लौटने में जरा देर हो गयी। चलो, अन्दर चलो।'

लेकिन टुलू ने हाथ खींच लिया। बोली, 'न सुरेन-दा, मुझे छोड़ दीजिये। मुझे सचमुच देर हो जायेगी।'

'हम दोनों एक साथ पढ़े हैं न ! तो दोस्ती नहीं होगी ?'

'वह अगर है तो तुम्हारे साथ हमारा अब कोई सम्बन्ध रखना सम्भव नहीं है।'

कहकर टुलू चली जा रही थी। सुरेन ने पुकारा, 'सुनो टुलू, सुनो, सुनो !'

सहसा भूपति भादुड़ी घर से आने के रास्ते पर यह हाल देखकर भौंचक्के रह गये। दिन-भर तमाम झंझट में कटा। दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट से गये थे हरनाथ वकील के घर। वहाँ भी बहुत झंझट रहा। नया क़ानून बन रहा है, वही बात सुनकर भूपति भादुड़ी का दिमाग़ गरम हो गया था। वही बात सोचते-सोचते घर आने के रास्ते पर ही यह तमाशा देखकर ठिठककर खड़े हो गये। उसके बाद एक बार सुव्रत की ओर, और फिर अपने भांजे की ओर देखने लगे।

उसके बाद बोले, 'यहाँ क्या है, रे ? ये लोग कौन हैं ? सड़क के बीच खड़ा-खड़ा क्या कर रहा है ?'

इस नये हंगामे से टुलू रुकी नहीं। वह उस समय भी सीधी जाने को थी।

सुरेन ने मामा की बात पर ध्यान न देकर टुलू को फिर पुकारा, 'टुलू सुनो, चली मत जाओ !'

कहकर सड़क की ओर बढ़ने लगा। भूपति भादुड़ी वहाँ कुछ देर ताज्जुब में खड़े रहे। एक तो उनका सारा दिन झंझटों में बीता, छः लाख रुपयों की जायदाद की फ़िक्र उनके दिमाग़ में थी, उस पर घर के सामने आकर भी एक नया झमेला। लड़की के साथ सुरेन का क्या सम्बन्ध है, कौन जाने ! भूपति भादुड़ी सीधे उनकी ओर बढ़ गये।

पास जाकर बोले, 'क्यों रे, मैं पुकार रहा हूँ, सुनायी नहीं पड़ता ?'

सुरेन बोला, 'तुम इस वक़्त यहाँ से चले जाओ न ! मैं थोड़ी देर में घर आ रहा हूँ।'

भूपति भादुड़ी को सुरेन की यह बात बुरी लगी।

बोले, 'ये लोग कौन हैं, रे ? दिन नहीं, रात नहीं, हमेशा ये लोग तेरे पास क्यों आते हैं ?'

उसके बाद सुरेन के जवाब की राह न देखकर सुव्रत की ओर देखकर पूछा, 'तुम लोगों को कोई काम-काज नहीं है बच्चा, इतनी रात तक गुजुर-गुजुर, फुसुर-फुसुर करने आते हो ? तुम्हारे घर माँ-बाप भी कोई कुछ नहीं कहते ?'

उसके बाद टुलू की ओर देखकर बोले, 'और तुमसे भी कहता हूँ

बेटी, तुम हो औरत। ब्याह के लायक उमर हो गयी। तुम लड़कों की तरह भाग-भागकर सुरेन के पास क्या करने आती हो? तुम क्या लाल झण्डा दल के लोग हो? और लाल झण्डा दल के लोग हो, इसलिए भले-बुरे का ज्ञान नहीं रखा जाता है क्या?'

सुरेन चीख उठा। बोला, 'तुम यहाँ से चले जाओ न, तुमसे यहाँ आने को किसने कहा था? तुम्हें क्या कोई काम-काज नहीं है? तुम फिर अगर मेरे बीच में बोलने आये तो मैं फिर घर से निकल जाऊँगा।'

घर से निकल जाने की बात सुनकर भूपति भादुड़ी मानो डर गये। जैसे कुछ मुलायम आवाज में बोले, 'तू गुस्सा क्यों हो रहा है बेटे, मैं तो तेरे भले के लिए ही कह रहा हूँ। इतनी गड़बड़ करने से क्या तेरी तबीयत ठीक रहेगी? बीमार होने पर मुझे ही तो देखना पड़ेगा।'

सुरेन बोला, 'अच्छा, अच्छा, बहुत हुआ, अब तुम जाओ।'

भूपति भादुड़ी जल्दी-जल्दी चलते हुए घर की ओर चले गये।

सुव्रत हँसने लगा। बोला, 'देख रहा हूँ, तेरे मामा अभी भी उसी तरह है।'

सुरेन बोला, 'नहीं, उसी तरह नहीं है, अब रुपया-रुपया रट कर और पागल हो गये हैं—फिर इतने रुपये लेकर क्या करेंगे, समझ में नहीं आता।'

टुलू को तब शर्म सी लग रहा था। बोली, 'मुझे और रोककर मत रखो सुरेन-दा, मैं जा रही हूँ...।'

उसके बाद सुव्रत की ओर देखकर कहा, 'अच्छा चली, नमस्कार।'

सुव्रत बोला, 'बार-बार फिर आप से अनुरोध नहीं करूँगा, नहीं तो आप समझेंगी कि मेरा कोई मतलब है।'

अब टुलू हँस दी। बोली, 'हम लोगों की तकलीफ तो हमेशा की है। एक दिन के लिए आपकी गाड़ी पर चढ़कर तो हमारी तकलीफ मिट नहीं जायेगी।'

सुरेन बोला, 'हमारे देश में एक कहावत है कि परोसी थाली और चढ़ी चिलम कभी नहीं छोड़ना चाहिए। तू टुलू को ले जा, सुव्रत। गाड़ी से घर पहुँचा दे।'

टुलू गाड़ी पर चढ़ी। सुव्रत गाड़ी का दरवाजा बन्द कर खुद भी बैठा। उसके बाद मोटर स्टार्ट कर दी।

कलकत्ता शहर के लोगों के जीवन में जैसे एकाएक उलट-पलट आ गयी। एक ओर चुनाव, दूसरी ओर जाँच-कमीशन। दिमाग़ चकरा देने वाली चीजों की आदमी को कमी नहीं। सभी अपना-अपना काम ठीक रखने के नशे में छटपटाते। पुण्यश्लोक बाबू, पूर्ण बाबू, देवेश को—किसी को भी स्थिर होकर कुछ सोचने का समय नहीं था। सामान्य मनुष्य को ही क्या सुस्थिर होकर कुछ सोचने का समय शेष रहा है ? दो सौ बरस बेफ़िक्री में बिता-कर सहसा मानो वासुकी ने फिर अपने फन हिलाये हैं ! लगता है, धरती अब करवट लेगी !

पुण्यश्लोक बाबू घर के सामने ही चुपचाप बैठे थे। सहसा एक टैक्सी आयी।

टैक्सी के आते ही अन्दर से पमिली ने नीचे उतरकर गाड़ी का किराया दे दिया। उसके बाद जल्दी-जल्दी ज़ीने से ऊपर चढ़ने जा रही थी।

नीचे से पुण्यश्लोक बाबू ने पुकारा, 'पमिली, सुनो !'

पमिली के कानों में बात पड़ी या नहीं, कुछ समझ में नहीं आया। वह जिस तरह ज़ीना चढ़ रही थी, वैसे ही चढ़ती रही।

पुण्यश्लोक बाबू ने फिर पुकारा, 'पमिली, सुनो !'

आख़िर तक जब पमिली ने इस बार भी न सुना तो पुण्यश्लोक बाबू खुद ही पमिली के पीछे-पीछे गये। पमिली उस समय अपने कमरे में घुस रही थी।

पुण्यश्लोक बाबू ने पीछे से फिर पुकारा, 'पमिली !'

लेकिन पमिली ने तभी अन्दर घुसकर दरवाजे की ज़ंजीर लगा ली थी। पुण्यश्लोक बाबू बन्द दरवाजे के आगे कुछ देर खड़े रहकर फिर आहिस्ता-आहिस्ता नीचे की ओर उतरने लगे।

देश के लोगों के विचार-जगत् में जो उलट-पलट शुरू हुई थी, उसमें ही अव्यवस्थित रूप से सुरेन भी अपना जीवन बिता रहा था। विशेष रूप से पमिली के साथ सम्बन्धों में जटिलता ज्यादा बढ़ गयी थी। घर की समस्या अलग से थी। लेकिन उस समस्या को सुलझाने की जब कोई विशेष आशा नहीं थी, तब उसके लिए दिमाग़ पर ज्यादा जोर डालने की जरूरत नहीं

थी। वह तो रहेगी ही। घर मानें ही सिर छिपाने का सहारा, और उसके साथ खाना-पीना मिलने की सुविधा। मामा उसे अपने स्वार्थ के लिए ही वह तो उसे देता ही रहेगा। और उसके सिवा अगर किसी भी दिन घर में घने भी जाना पड़े तो देवेश का पार्टी-ऑफिस तो है ही। पार्टी के पास आजकल बहुत काम हैं। पार्टी की ओर से वह भी सड़क-सड़क पर चन्दा जमा करता घूमेगा, जिस तरह देवेश आदि करते हैं।

लेकिन पमिली ?

डायमंड हार्बर की सड़क पार कर उस रात की बात भी उसे याद आयी। शुरू ही में पमिली ने पूछा था, 'सहसा मुझे लेकर तुम इस अकेली जगह क्यों आयी ?'

पमिली ने कहा था, 'क्यों, तुम्हें मुझसे क्या डर लग रहा है ?'

सुरेन ने कहा था, 'डर ? डर अगर लग ही रहा है तो उसमें कुछ गलत है ?'

'तो तुमने क्या सोचा है कि तुम्हारी हत्या करने तुम्हें यहाँ ले आयी हूँ ?'

'नहीं, यह क्यों सोचोगी ? मेरी हत्या करने से तुम्हें क्या फायदा ? फिर उसके सिवा मैं जानता हूँ कि तुममें माया-ममता नाम की भी कोई चीज है।'

पमिली ने कहा था, 'तो एक बात का जवाब दो। आदमी जब पागल हो जाता है, तो उसके जीते रहने का कोई मतलब है ?'

'इसके मानें ? तुम क्या सोचती हो कि तुम पागल हो गयी हो ?'

पमिली ने कहा था, 'हाँ, पागल होने पर आदमी में जो-जो लक्षण दिखलायी देते हैं...।'

सुरेन ने उसे बात पूरी न करने दी और कहा, 'इतनी रात को यह बात कहने के लिए ही तुम मुझे यहाँ ले आयी हो ?'

पमिली बोली, 'हाँ, उसके सिवा मैं ये सब बातें तुम्हारे अलावा और किससे कहूँ ? कौन सुनेगा मेरी बातें ?'

सुरेन बोला, 'क्यों, ये बातें क्या कलकत्ता शहर में किसी रेस्त्राँ में चाय पीते-पीते नहीं कही जा सकती थीं ?'

पमिली बोली, 'सब बातें क्या सब जगह कही जा सकती हैं ?'

सुरेन बोला, 'लेकिन इतनी रात को इस तरह मैदान में क्यों उतर गयीं ? गाड़ी में बैठे रहकर भी तो कहा जा सकता था ?'

पमिली बोली, 'गाड़ी के अन्दर रहकर तुम बात ठीक से समझ न सकते। चलो, किसी पेड़ के नीचे चलकर बैठें।'

सुरेन डर गया। बोला, 'तुम्हें क्या साँप-आँप का डर नहीं है, पमिली ? पता नहीं है, इन सब जगहों में साँप रहते हैं !'

पमिली बोली, 'रहें, साँप तो फिर भी आदमी से बहुत अच्छे होते हैं। साँप को समझा भी जा सकता है, लेकिन आदमी को तो मैं किसी तरह नहीं समझ सकती।'

सिर पर जाड़े का आकाश और पैरों के नीचे धान के खेत। किसान लोग धान कब के काटकर ले गये थे। अब तो सिर्फ़ छोटे-छोटे धान के पौधों के नुकीले डंठल खेत में खड़े थे।

और उसी पर वह दुर्घटना घटी।

आसपास कहीं कोई भी इंसानों की बस्ती नहीं थी। दूर पर सड़क के ऊपर बिजली की रोशनी कुहासे में धुँधली पड़ गयी थी। हू-हू कर उत्तर की हवा आकर शरीर को लगती। यह कैसी परिस्थिति है, यह कौन दिगन्त है ? सारे जीवन में इस प्रकार के अस्वाभाविक आतंक से सुरेन कभी नहीं घिरा था। परिस्थिति यदि भिन्न रहती तो इस प्रकार का अकेलापन उसे अच्छा ही लगता।

पमिली एक पेड़ के नीचे बैठ गयी। उसके बाद सुरेन का हाथ पकड़कर खींचा। बोली, 'यहाँ बैठो।'

सुरेन बोला, 'यहाँ बैठकर क्या करेंगे ?'

पमिली बोली, 'वही बातें तुमसे कहूँगी।'

'कौन-सी बातें ? तुम कहो. मैं सुन रहा हूँ।'

पमिली सहसा रोने लगी। दोनों हाथों से मुँह ढक लिया।

सुरेन बोला, 'यह क्या, तुम्हें क्या हो गया ? रो क्यों रही हो ? अरे, मुझे यह रोना सुनाने के लिए यहाँ ले आयीं ? यह तुम्हारा कैसा पागलपन है ? उठो, उठो, पागलपन छोड़ो।'

पमिली फिर भी हाथों से मुँह ढके वहीं बैठी रही।

बोली, 'मुझे तुम जहर दे दो सुरेन, थोड़ा जहर लाकर दे दो।'

सुरेन अब रुक न सका। पमिली का एक हाथ जोर से पकड़कर खींचने लगा। बोला, 'देख रहा हूँ कि तुम सचमुच पागल हो गयी हो। तुम खुद मुसीबत में पड़ोगी, मुझे भी मुसीबत में डालोगी। उठो। और अगर तुम नहीं उठतीं तो मैं चला जा रहा हूँ।

पमिली जैसे कुछ शान्त हुई। बोली, 'तुम इतने भीरु हो, यह नहीं जानती थी।'

सुरेन बोला, 'तुम्हारी ये सब बचकानी बातें सुनने की फ़ुरसत मुझे नहीं है। तुम चलोगी या नहीं, यह बताओ ?'

पद्मिनी बोली, 'अगर न जाऊँ अगर ट्रेन में ही रात बिता दूँ ?'

सुरेन बोला, 'उससे तुम्हारी इज्जत नहीं बढ़ेगी, पद्मिनी।'

पद्मिनी बोली, 'तुम अपनी बदनामी की बात सोचकर डर रहे हो न ? यही हो, आदमी इसी तरह अपने को धोखा देता है।'

सुरेन बोला, 'तुम तो यह कहोगी ही, क्योंकि तुम पुष्पकिशोर बाबू की बेटी हो, और मैं सामान्य, यहाँ के किसी कूपनि आदमी का भांजा ! मेरी बात का कौन विश्वास करेगा ?'

पद्मिनी बोली, 'उससे अच्छा है—आओ न, दोनों एक साथ जहर खायें।'

'जहर ? जहर इस वक्त कहाँ से मिलेगा ?'

पद्मिनी बोली, 'जहर मेरे पास है।'

कहकर अचानक अपने बैग में से एक छोटी-सी शीशी निकाली। बोली, 'यह स्लीपिंग पिल्स है—इस तरह की दो पूरी शीशियाँ मेरे पास हैं।'

सुरेन अवाक् हो गया। उसे बड़ा डर लगने लगा। तो क्या मरने की सोचकर ही पद्मिनी उसे यहाँ ले आयी है ?

बोला, 'तब तुमने यहीं मुझसे जरा पहले ही जहर खा लेने को क्यों कहा था ?'

पद्मिनी हँसी। एकदम हँसी से खिलखिला उठी। उसके बाद हँसी रोककर बोली, 'देख लिया कि तुममें कितनी हिम्मत है ! तुम इतने कायर हो, यह मैं पहले ही जानती थी।'

कहकर फिर हँसने लगी।

सुरेन को कुछ सन्देह हुआ। पूछा, 'तुमने क्या फिर शराब पी है ?'

पद्मिनी बोली, 'लोग शराब पीकर ही शायद मरना चाहते हैं ?'

सुरेन बोला, 'शराब बिना पिये इस तरह इतनी रात को कोई गाड़ी छोड़कर ट्रेन में आकर कविता करता है ? शराब पिये बिना कोई बैग में स्लीपिंग पिल्स लेकर मरना चाहता है ? शराब पिये बिना कोई दूसरे आदमी के गले से लिपटकर मरने को कहता है ?'

पद्मिनी बोली, 'शराब मैं नहीं पीती, यह बात मेरे दुश्मन भी नहीं कहेंगे। लेकिन जो आत्महत्या करते हैं वे क्या सभी शराब पीकर करते हैं ? शराब से भी बड़ा नशा क्या कोई नहीं है ?'

'शराब से भी बड़ा नशा ! वह कौन-सा है ?'

पद्मिनी की बातें जैसे उलझती जा रही थीं। बोली, 'क्यों, जीवन ? जीवन का नशा क्या कुछ कम रहता है ?'

'तो अगर जीना ही चाहती हो तो फिर मरना क्यों … ?'

पमिली बोली, 'इतने दिनों जिन्दा रहकर उस जीवन से मुझे नफ़रत हो गयी है।'

सुरेन बोला, 'यह क्या ? जीवन से नफ़रत हो गयी है के माने ? कितने लोग तो जीवित हैं, वे फिर भी और ज़्यादा दिन ज़िन्दा रहना चाहते हैं। ज़रा बीमार होने पर दवा ख़रीदकर खाते हैं। और तुम्हें जीवन से नफ़रत हो गयी है !'

पमिली मुंह नीचा किये बोली, 'तुम वह बात कैसे समझोगे ? तुम्हें मैं कैसे समझाऊँ कि बड़े आदमी की लड़की बनने की-सी पीड़ा दुनिया में कहीं नहीं है। उससे तुम्हारी उस टुलू की तरह ग़रीब होना बहुत अच्छा है।'

'टुलू का दुख अगर तुम जानतीं तो यह बात न कहतीं।'

पमिली बोली, 'फिर भी मुझसे वे बहुत सुखी हैं। किसी दिन अगर उनके पास रुपया हो जाये तो सब तकलीफ़ दूर हो जायेगी। लेकिन मेरा ? मेरा दुख कैसे दूर होगा ? मुझे कौन-सी आशा जीवित रखे ?'

सुरेन बोला, 'लोगों से ये सब बातें मत कहना पमिली, वे लोग सुनकर हँसेंगे। कहेंगे, यह तुम्हारा वैचारिक विलास है, एक तरह का दुख-विलास।'

पमिली बोली, 'लोग जो चाहें कहें, कहने दो, लोग तो मेरे बारे में बहुत-सी बातें कहते हैं। न हो तो कुछ और ज्यादा कहेंगे। उससे मुझे डर नहीं लगता। लेकिन मैं उनसे तो कहने नहीं जा रही हूँ। मैं तो बस तुमसे कह रही हूँ। तुम भी क्या मुझे ग़लत समझोगे ?'

सुरेन बोला, 'असल में लोग तुमसे ईर्ष्या करते हैं पमिली, कहते हैं—तुम्हारी तरह सुखी कोई नहीं है, मिनिस्टर की बेटी हो तुम, तुम्हें कितना सुख है, तुम्हारा कितना सम्मान है !'

'लेकिन तुम तो मेरे बारे में सब-कुछ जानते हो सुरेन, तुम भी क्या वही कहते हो ?'

सुरेन बोला, 'मेरी बात छोड़ दो। मेरी बात नहीं सुनी, न सही।'

पमिली बोली, 'सच कहो न, मेरी सुनने की बड़ी तबीयत है। लोग जो भी कहें, तुम भी क्या मुझे पागल कहते हो ?'

सुरेन बोला, 'तुम्हारे बारे में मेरा कुछ कहना ठीक नहीं, पमिली।'

'क्यों, ठीक क्यों नहीं ?'

सुरेन बोला, 'तुमसे मेरी क्या बराबरी ?'

'क्यों, बराबरी क्यों नहीं ? मैं बड़े आदमी की लड़की हूँ, क्या इसलिए आदमी नहीं हूँ ? मेरे भी जिस तरह मन है, तुम्हारा भी तो उसी तरह है।

जैसे मुझे कुछ अच्छा नही लगता, वैसे ही तुम्हे भी तो कुछ अच्छा नही लग सकता है ? तुम्हे भी तो मेरी तरह घर में रहना अच्छा नही लगता। फिर अन्तर कहां है ?'

सुरेन बोला, 'फिर भी तुम और मैं एक-से नही है पमिली, हम-तुम अलग-अलग है।'

'लेकिन हम दोनो क्या एक नही हो सकते हैं ?'

सुरेन बोला, 'असम्भव !'

पमिली ने सुरेन का एक हाथ पकडा। बोली, 'तुम असम्भव क्यों कह रहे हो ? मैंने क्या कसूर किया है ?'

सुरेन बोला, 'कसूर तुम्हारा नही, कसूर मेरा है।'

'क्यों, तुम्हारा क्या कसूर ? तुमने क्या कसूर किया है ?'

सुरेन बोला, 'मैने कसूर नही किया ? तो मैं गरीब घर मे क्यों पैदा हुआ ? मैं अगर गरीब न होता तो तुम्हारे पिता मुझे तुम्हारे घर से भगा देते ? फिर उसके सिवा क्या मैं अकेला ही गरीब हूँ ? किसी भी गरीब को क्या तुम्हारे पिता देख-सह सकते है ? देख-सह नही सकते, इसीलिए तो वे लोग आज दल बाँधकर सिर ऊँचा किये खडे है।'

'लेकिन बाबा की बात क्यो उठा रहे हो ? उनकी बातों को क्या मैं मानती हूँ ? मैं अगर शराब पीती हूँ, जब जहाँ मन हो जाती हूँ, वह सब क्या बाबा की सलाह से करती हूँ ? मैं जो यहाँ मरने के लिए ये स्लीपिंग पिल्स खरीदकर लायी हूँ, इसमे भी क्या सोचते हो कि मैंने बाबा की राय ली है ?'

सुरेन ने सहसा पमिली का बैग अचानक छीन लिया।

पमिली सिहर उठी। दोनो हाथ बढाकर बोली, 'दो, मेरा बैग दे दो—मेरा बैग क्यों ले लिया, दो।'

'किसी तरह न दूँगा। तुम जो चाहे करो।'

कहकर सडक की ओर चलने लगा।

'मेरा बैग दो सुरेन, बैग दो।'

कहकर पमिली भी भागी आयी। आते ही सुरेन पर झपट पडी। बोली, 'दो, मेरा बैग दो।'

सुरेन नही देगा और पमिली छीन लेगी। सुरेन ने बैग को पमिली के हाथों की पहुँच के बाहर रखकर कहा, 'मैं दे सकता हूँ, लेकिन अन्दर की दोनों शीशियाँ निकालकर। वे तुम्हे किसी तरह नहीं मिलेंगी।'

'दे दो, बड़े अच्छे हो, दे दो। वह नही रहेगी तो मैं जिन्दा न रहूँगी।'

सुरेन एक हाथ से पमिली को हटाकर और दूसरे हाथ में बैग उसकी

पहुँच के वाहर रखकर बोला, 'न, तुम्हें मैं किसी तरह मरने नहीं दूंगा।'

'दो, तुम बहुत भले हो, तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ। मेरा वैग दे दो। मेरा सारा सोचा-विचारा बिगड़ जायेगा। आज न मरी तो किसी और दिन मरना न हो सकेगा।'

सुरेन बोला, 'न, पहले वादा करो कि फिर कभी इस तरह आत्महत्या करने की कोशिश नहीं करोगी।'

'तुम कह क्या रहे हो? तुम इसे आत्महत्या कहते हो? इस तरह आत्महत्या कर मैं जी जाऊँगी, सुरेन! तुम्हें पता नहीं, जिन्दा रहने की मेरी कितनी कामना है! मेरी तरह ऐसे और किसी ने पहले ज़िन्दा रहना नहीं चाहा। लेकिन कोई मुझे जिन्दा रहने नहीं देना चाहता। सभी चाहते हैं कि मैं गाड़ी को लेकर, क्लब को लेकर, ह्विस्की को लेकर मौज में डूबी रहूँ। तब वे बहुत आराम से बेफ़िक्री से दिन बिता सकेंगे। दुनिया में कोई मेरा भला नहीं चाहता।'

सुरेन बोला, 'ऐसी बातें मत करो, पमिली। और लोग जो भी चाहें, सुव्रत तो तुम्हारा भला ही चाहता है।'

'सुव्रत की बात अभी रहने दो।'

सुरेन बोला, 'प्रवेश सेन भी तुम्हारा भला चाहता है, मैं जानता हूँ। तुम्हारे लिए कई दिन मेरे आगे रोया है। तुम्हारे ख़फ़ा होने से प्रवेश बाबू का कलेजा फट जाता है, जानती हो?'

'उसकी बात मत छेड़ो, लेकिन तुम?'

सुरेन बोल उठा, 'तुम पागलों की तरह बातें मत करो, पमिली। सोच-समझ के बोलो।'

'मैं सच बात कह रही हूँ सुरेन, मैंने आज सवेरे से एक बूंद भी शराब होंठ से नहीं छुई। और केवल आज सवेरे ही नहीं, आज डेढ़ महीने से मैंने शराब छूना तक छोड़ दिया है। मैं जो कह रही हूँ वह पूरे होश से कह रही हूँ।'

तभी दोनों बातें करते-करते डायमंड हार्बर की सड़क के पास आ पहुँचे थे। सहसा दोनों को दिखायी पड़ा कि गाड़ी नहीं है। गाड़ी कहाँ गयी? कोई चुरा ले गया क्या? तो घर किस तरह जायेंगे?

उसके बाद किसी तरह चलते-चलते डायमंड हार्बर जाकर एक टैक्सी पकड़ी—और भी बहुत-सी बातें हैं, छोड़ें। वहाँ से लौटकर पमिली को घर उतारकर माधव [illegible] गली के [illegible] फिर सुव्रत और टुलू से भेंट हो जायेगी, [illegible] भी [illegible] था।

अपने कमरे में [illegible] सु[illegible] रहा था।

उन्मुक्त मैदान के बीच पमिली का वह प्रलाप ! हां, प्रलाप ही तो था। प्रलाप न हो तो कोई इस तरह की बातें करता है ? कहां वह एक बेसहारा आदमी और कहां पुण्यश्लोक बाबू की बेटी पमिली ! सोचकर भी हंसी आती है। लेकिन समझदारी से उसने स्लीपिंग पिल्स की दोनों शीशियां छीन लीं—यही कुशल हुई। नहीं तो पमिली उसी खेत में उसकी आंखों के सामने ही उन्हें मुंह में डाल लेती। तब ? तब वह क्या करता ? पुलिस को वह क्या कहता ?

दोनों शीशियां अलमारी में रखकर सुरेन बत्ती बुझाकर लेट गया।

एक जगह पहुंचते ही टुलू बोली, 'यहां रोकिये।'

सुव्रत ने गाड़ी में ब्रेक लगाकर चारों ओर देखा। अँधेरी बस्ती की तरह यह जगह थी।

बोला, 'आपका घर कौन-सा है ?'

टुलू ने सड़क पर उतरकर उँगली से दिखा दिया। बोली, 'वह, वह है।'

एक बेहया के धुंधले अँधेरे के सिवा सुव्रत को और कुछ न दिखायी दिया। बोला, 'कौन-सा ?'

'वह जो टीन की छाजन है, उसी का एक हिस्सा।'

सुव्रत बोला, 'अच्छा तो अब मैं चलूं।'

टुलू बोली, 'रात हो गयी है। आपको देर हो जायेगी। नहीं तो अपने घर थोड़ा बैठने के लिए कहती—लेकिन सच कहने में क्या, आप-से लोगों को घर में बैठने को कहने में भी हमें डर लगता है !'

सुव्रत बोला, 'सुरेन आप लोगों के यहां आता है न ?'

टुलू बोली, 'कभी-कभी।'

सुव्रत बोला, 'तो मैं भी कभी-कभी आऊंगा, मुझे आने से रोकेंगी तो नहीं ?'

टुलू बोली, 'सुरेन-दा के क्या आप इतने अभिन्न हैं ?'

सुव्रत बोला, 'अभिन्न क्यों नहीं हूँ ? हम तो कभी दोनों एक ही स्कूल में एक क्लास में पढ़ते थे, देवेश भी कभी हमारा क्लास का दोस्त था। बड़े

के साथ-साथ ही क्या आदमी अलग हो जाता है? मैं अमेरिका चला था, इसी से कोई मेरे दस हाथ तो नहीं हो गये हैं?'

टुलू बोली, 'वह पता नहीं, पर आप लोग तो बड़े हैं, देश के नेता-ग कहते हैं—जो बड़े लोग हैं, जो देश के नेता हैं, उनके दसों हाथ हैं। नके दसों हाथ जो चाहें करें।'

सुव्रत बोला, 'आप लोगों ने यह ठीक ही किया है, उनके दस हाथ ाट दें।'

टुलू ने सुधार किया। बोली, 'न, दस हाथ नहीं, आठ हाथ काट देंगे। दो हाथ छोड़ देंगे, जिससे खाने-पहनने का काम वे करते रह सकें।'

'क्यों, वे दो ही क्यों छोड़ देंगी? उन दोनों को भी काट सकती हैं कि जिससे उनका खाना-पहनना भी न हो पाये!'

टुलू हँसी नहीं, बोली, 'क्या आप कहना चाहते हैं कि हम निष्ठुर हैं, निर्मम पिशाच हैं, हममें दया-माया कुछ नहीं है?'

सुव्रत बोला, 'रास्ते में खड़े-खड़े इतनी बातों का जवाब नहीं दिया जा सकता है। फिर किसी दिन बात होगी।'

'वही ठीक है। तो आप से फिर कब भेंट होगी?'

सहसा पीछे से किसी ने पुकारा, 'टुलू, क्या बात है?'

सुव्रत ने जैसे भूत देखा हो। देवेश! देवेश और भी दो-चार लड़कों के साथ वहाँ आ पहुँचा।

सुव्रत को वहाँ टुलू से बात करते देखकर देवेश जैसे क्षण-भर के लिए ठिठककर खड़ा हो गया।

सुव्रत ही पहले बोला। वह बोला, 'देवेश तू?'

देवेश बोला, 'तू? तू यहाँ?'

सुव्रत बोला, 'उसे गाड़ी में यहाँ तक छोड़ने आया था।'

बात सुनकर देवेश और भी ताज्जुब में पड़ गया। टुलू की ओर देखा तो वह बोली, 'हाँ देवेश-दा, सुव्रत बाबू ने मुझे दया करके यहाँ पहुँचा दिया।'

इतनी देर बाद सुव्रत ने बात की, 'क्यों, मैंने कुछ ग़लती कर डाली है क्या ?'

देवेश बोला, 'ग़लती क्यों, तूने दया की। तुम लोग तो हमेशा से ग़रीबों पर दया करते आये हो ! यह क्या कोई नयी बात है ?'

सुव्रत बोला, 'देखता हूँ कि तू पहले की ही तरह है।'

देवेश बोला, 'ठीक पहले की तरह नहीं, बहुत बदल गया हूँ। पहले सोचता था कि हाथ जोड़कर काम निकाला जाता है। अब समझ गया, ज़बर्दस्ती छीन लेना न जानने से जीवन में बहुत बुरी दुर्गति होती है।'

'वाह, देखता हूँ कि तूने तो आजकल बहुत अच्छी-अच्छी बातें सीख ली हैं !'

देवेश बोला, 'सिर्फ़ अच्छी-अच्छी बातें ही नहीं सीखीं, अच्छे-अच्छे काम करना भी सीख लिया है। देखता हूँ कि अच्छी-अच्छी बातों से कुछ नहीं होता। अच्छे-अच्छे काम भी करने पड़ते हैं।'

'क्या अच्छे काम कर रहा है ? कांग्रेस की बुराई करना ही शायद बहुत अच्छा काम है ?'

'ज़रूर अच्छा काम है। जिसने इन टूलू आदि जैसे लोगों को विस्थापित किया, उन्हें गालियाँ देना अच्छा काम नहीं है ? उससे अच्छा दूसरा कौन-सा काम है ? एक ओर जो इंसानों का सब-कुछ ख़त्म कर दें और दूसरी ओर उन्हें मोटर पर घर पहुँचाकर दया दिखायें, उन्हें गालियाँ देने को हम अच्छा काम समझते हैं।'

सुव्रत का चेहरा गुस्से से लाल हो गया। जैसे उसके मुँह की बोलती सहसा बन्द हो गयी हो। लेकिन तुरन्त ही उसने अपने को सँभाल लिया। बोला, 'ठीक है, मैंने इतना सब सोचकर यह काम नहीं किया।'

देवेश बोला, 'सोचकर काम नहीं किया कहने से अपराध का गुरुत्व कुछ कम नहीं हो जाता है। अपराध अपराध ही रहता है।'

[illegible] मतलब है ? [illegible] ?'

[illegible] स्थापित लड़की को श्याम-बाज़ार से ढकुरिया पहुँचा देने के माने क्या होते हैं ?'

टूलू अब आगे आ गयी। बोली, 'देवेश-दा, तुम रुको। तुम यह सब क्या कह रहे हो ?'

'तुम चुप रहो, टूलू। सुव्रत को मैं ख़ूब पहचानता हूँ। मैं उसे, उसके वंश के एक-एक आदमी को पहचानता हूँ। इतनी रात में तुम्हें इतनी [illegible] गाड़ी में घर पहुँचा देने के मतलब समझने की अक़्ल मुझमें है।'

टुलू देवेश के मुँह के आगे आकर वाधा वनकर खड़ी हो गयी। वोली, 'दुहाई तुम्हारी देवेश-दा, तुम चुप रहो। सुरेन-दा ने वहुत ज़िद करके कहा तो मैं सुव्रत वावू की गाड़ी पर वैठने को तैयार हुई। तुम वेकार में उनका अपमान मत करो।'

देवेश वोला, 'अपमान करने की वात कर रही हो? मैंने किसका अपमान किया है? मैं अगर सचमुच अपमान करता तो यह यहाँ पैरों पर खड़ा रहता?'

सुव्रत सहसा टुलू की ओर देख हाथ जोड़कर वोला, 'मुझे आप माफ़ करें। इतनी गड़वड़ होगी, यह जानता तो मैं किसी तरह भी आपको गाड़ी पर विठाकर न लाता। अव मैं जा रहा हूँ।'

कहकर सुव्रत गाड़ी पर वैठने जा रहा था। टुलू सहसा वोल उठी, 'आप ज़रा ठहरिये, सुव्रत वावू।'

कहते-कहते वह गाड़ी की ओर वढ़ गयी। उसके वाद पास जाकर वोली, 'दया करके आप हम लोगों पर ग़ुस्सा न करना। आप इतने दिन तक देश के वाहर थे, इसी से नहीं जानते। असल में हम लोग दूसरी पार्टी के आदमी हैं। इसी से आपके साथ हमारी किसी तरह नहीं वनेगी। आपके हज़ार अच्छा व्यवहार करने पर भी नहीं वनेगी। आप हमें ग़लत न समझियेगा।'

उत्तर में सुव्रत ने सिर्फ़ 'नमस्कार' कहा।

कहकर गाड़ी का इंजन स्टार्ट कर धूल उड़ाता चौड़ी सड़क की ओर चला गया।
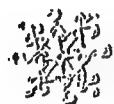
माधव कुंडू लेन में हर दिन की तरह उस दिन भी सवेरा हुआ था। उस दिन भी हमेशा की तरह दुखमोचन ने झाड़ू से आँगन वुहारा था। शिवशम्भु चौधुरी के ज़माने में झाड़ू लगाने के वाद फिर कहीं ज़रा-सी धूल दीख जाने पर वे नये सिरे से झाड़ू लगवाते। यह दुखमोचन अव वुड्ढा हो गया है। शरीर में पहले की तरह शक्ति अव नहीं रही। लेकिन अभी भी वह अपने हाथों सारे आँगन में झाड़ू लगाता। उस दिन भी उसी तरह वह सवेरे नींद से उठा था, और अपने लड़के अर्जुन को नींद से उठा

कर बोला, 'उठ, अर्जुन, उठ।'

अर्जुन कभी मैनेजर बाबू के भाजे के साथ खेला-कूदा करता था। उसके बाद कितने बरस बीत गये, अब अर्जुन की दूसरी मण्डली बन गयी है। वह उन लोगों के साथ मिलता-जुलता है, उनके साथ ही बातें करता है। कभी दूर से भाजे बाबू को देखता। देखता कि कितनी तरह के लोग भाजे बाबू के पास आते। लड़के आते, लड़कियाँ आतीं। तमाम गाड़ियाँ आकर घर के आगे खड़ी रहतीं। घर का काम करते-करते भाजे बाबू को देखकर कहता, 'कल तुमसे कोई मिलने आया था, भाजे बाबू।'

सुरेन पूछता, 'कौन ?'

अर्जुन कहता, 'वह क्या मालूम, अपना नाम नहीं बता गया।'

इस तरह से तमाम लोग सुरेन के पास आते। लेकिन कितनों के साथ उसका मेल-जोल था ? हो सकता है देवेश हो, या टूलू हो। या नहीं तो पमिली हो। और आजकल सुव्रत भी आता। अमेरिका से लौटकर सुव्रत ने फिर उसके घर आना-जाना शुरू कर दिया था।

उस दिन सुरेन को रात-भर नींद नहीं आयी। सहसा लगा कि जैसे कोई खिड़की को खटखटा रहा है। पहले तो कुछ समझ में न आया। अन्त में सुरेन को कुछ शक हुआ। इतनी रात को कौन उसे बुलाने आ गया ?

सुरेन ने पूछा, 'कौन ?'

कोई जवाब नहीं। बाहर का आदमी अगर हो तो उसके लिए तो बहादुरसिंह है। बहादुरसिंह तो अनजान आदमी को अन्दर आने न देगा। अनजान आदमी होने से तो वह फाटक का ताला ही नहीं खोलेगा। तो क्या कोई जान-पहचान का है ?

'दरवाजा खोलिये, दरवाजा खोलिये।'

अब कुंडी जोरों से खटखटायी जा रही थी।

सुरेन अब चुपचाप बिस्तर पर लेटा न रह सका। झटपट उठ दरवाजा खोलकर देखा—पुलिस। नींद-भरी आँखें मलते हुए फिर अच्छी तरह देखा। हाँ, सचमुच पुलिस है। एक पुलिस-इन्स्पेक्टर है और साथ में दो कांस्टेबिल।

सुरेन का सारा शरीर जैसे झनझना उठा। साथ ही याद आ गयी देवेश की बात। शायद देवेश पकड़ा गया है, टूलू भी। शायद पार्टी-ऑफिस के सभी को गिरफ्तार करने का हुक्म हुआ है।

'आपको गिरफ्तार कर रहे हैं। आपका ही नाम तो सुरेन सान्याल है ?'

सुरेन के मुंह से किसी तरह शब्द निकला, 'हाँ।'

'हमारे साथ थाने चलिये।'

सुरेन बोला, 'वह तो जाऊँगा, लेकिन मैंने किया क्या है?'

इंस्पेक्टर बोला, 'दफ़ा 302। तीन सौ दो धारा।'

'उसके मतलब?'

'आपने ख़ून किया है।'

'ख़ून?'

'हाँ, ख़ून।'

सुरेन ने आँखें फाड़कर इंस्पेक्टर के चेहरे की ओर देखा। बोला, 'आप सही कह रहे हैं कि मैंने ख़ून किया है? किसका? किसका ख़ून किया है?'

'पमिली राय का।'

'पमिली राय?'

'हाँ, आप उसे बहकाकर डायमंड हार्बर ले गये थे। उसके बाद वहाँ से बहुत रात को घर पहुँचा दिया। घर पहुँचाने से पहले उसे शराब के साथ ख़ूब-सारी स्लीपिंग पिल्स खिला दीं। वह घर पहुँचते ही बेहोश हो गयी।'

'उसके बाद?'

'वह मर गयी।'

'मर गयी! लेकिन, लेकिन मैंने उसे स्लीपिंग पिल्स खिलायीं, यह किसने कहा?'

इंस्पेक्टर बोला, 'उस बात का जवाब आप थाने पर सुनेंगे। अभी चलिये। आपके कमरे की हम तलाशी लेंगे।'

सुरेन बोला, 'क्यों, मेरे कमरे की क्यों तलाशी लेंगे? मेरे कमरे में क्या है?'

'हम देखेंगे कि स्लीपिंग पिल्स की शीशियाँ हैं या नहीं?'

कहकर इंस्पेक्टर के साथ के पुलिस-कांस्टेबिलों को इशारा करते ही सब जबर्दस्ती उसके कमरे में घुस पड़े। सुरेन का कलेजा डर के मारे थर-थर काँपने लगा। अगर सचमुच ये लोग दोनों शीशियाँ खोज निकालें! अलगनी पर उसका कुर्ता लटक रहा था। उसकी जेबों में हाथ डालकर देखने लगे। बिस्तर उठाकर उलट-पलट कर दिया। उसके बाद चाभी माँग कर ट्रंक खोल डाला। उसके बाद अन्दर के कपड़े-लत्ते इधर-उधर फैलाकर तमाम बिखरा दिये। कहीं कुछ न मिला। उसके बाद अलमारी। अलमारी की एक दर खोलते ही काग़ज़-पत्र के बीच निकल आयीं स्लीपिंग

फिल्म की शीशियाँ।

'ये मिल गयीं।'

कहकर दोनों शीशियाँ निकालकर सुरेन को दिखायीं। सुरेन के शरीर से तब झर-झर कर पसीना बहने लगा।

'चलिये, आप थाने चलिये।'

इंस्पेक्टर का चेहरा देखकर सुरेन को रुलायी आ गयी। बोला, 'आप विश्वास कीजिये, मैंने हत्या नहीं की।'

'लेकिन आपके कमरे में ये दो शीशियाँ स्लीपिंग पिल्स की क्यों रहती हैं? यह दोनों शीशियाँ आपको कहाँ से मिलीं?'

सुरेन बोला, 'मैंने पमिली के पास से ही ये दोनों शीशियाँ छीनी थीं।'

'क्यों?'

'कल पमिली ये गोलियाँ खाकर आत्महत्या करने जा रही थी। मैंने उसके हाथ से छीनकर उन्हें अपने पास रख लिया था।'

'लेकिन अगर मैं कहूँ कि आपके पास तीन शीशियाँ रही होंगी? एक शीशी की गोलियाँ खिलाकर ही काम खत्म हो गया, इसीलिए बाकी दोनों को काम में नहीं लाये?'

सुरेन इसका क्या जवाब देता?

वह सिर्फ यह बोला, 'लेकिन मैं तो कह रहा हूँ कि मैंने पमिली की हत्या नहीं की। और मैं पमिली की हत्या करूँगा ही क्यों? आदमी जिसे चाहता है उसकी कोई हत्या करता है?'

इंस्पेक्टर समझदार की तरह धीरे से हँसा। बोला, 'करता है, करता है, अभी इतना कुछ समझाने का वक्त नहीं है। जो समझाना होगा वह कचहरी का मजिस्ट्रेट ही आपको समझा देगा—चलिये।'

सुरेन चलने में कुछ आगा-पीछा कर रहा था, लेकिन दोनों सिपाहियों ने आगे बढ़कर उसके हाथ पकड़ लिये। इंस्पेक्टर साहब जोर से चिल्ला पड़े, 'चल रहा हूँ, चलिये।'

और उस चिल्लाने के साथ ही उसकी नींद टूट गयी। डर के मारे हड़बड़ाहट से चारों ओर देखा। खिड़की से बाहर का अँधेरा दिखायी पड़ा। वैसा घना अँधेरा नहीं, जैसे थोड़ा हल्का-हल्का होकर अँधेरा आ रहा हो। तब क्या भोर होने को है? इतनी जल्दी रात खत्म हो गयी? अभी कुछ देर पहले ही तो वह सोया था। लेकिन कैसा सपना था! ऐसा सपना क्यों देखा? सपना क्या सच हो सकता है?

में तो सपना झूठा ही होता है। लेकिन इतने सारे सपनों में से यही बुरा सपना उसने क्यों देखा ?

झटपट बिस्तर छोड़, उठकर कमरे की रोशनी जलायी। कमरे का सामान जो जैसा था सब बिलकुल वैसा ही है। ट्रंक भी बन्द है। सच ही तो, बहादुरसिंह फाटक के पास ही रहता है। फाटक में भी ताला बन्द रहता है। रात में बाहर का कोई आता तो बहादुरसिंह जान ही जाता।

'यह क्या भांजे बाबू, आज इतने भोर में उठ गये ?'

नल के कमरे में जाने के रास्ते पर अर्जुन आँगन झाड़ रहा था। अर्जुन को देखकर सुरेन ने पूछा, 'आज तुम झाड़ू लगा रहे हो ? दुखमोचन कहाँ है ?'

'बीमार है बाबूजी, वह लेटा है।'

सुरेन और कुछ न बोला। नल के कमरे में आँखों और मुँह पर पानी छिड़ककर उसे कुछ ताज़गी पहुँची। उसके बाद बाहर निकल आया। पड़ोस की ओर बूढ़े बाबू का कमरा था। उधर से कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। लगता था सो रहे थे, या जागते हुए ही लेटे थे। सुरेन को बड़ी दया आयी। इस तरह आदमी को ज़िन्दा रखकर भगवान को क्या फ़ायदा होता है ? मार ही डालना अच्छा रहता। शायद किसी दिन मर भी जायें। कमरे में तख्त पर ही मरे पड़े रहेंगे। कोई देख भी न सकेगा, जान भी न सकेगा कि वह आदमी मर गया !

सुरेन का मन बहुत ख़राब हो गया। वह जो माँ जी हैं—माँ जी भी क्यों ज़िन्दा हैं ? उनके ज़िन्दा रहने से किसका क्या फ़ायदा हो रहा है ?

उस वक़्त भी सड़क की बत्तियाँ जल रही थीं। सुरेन कुर्ता पहनकर सड़क पर निकल पड़ा। उसे कुछ अच्छा नहीं लग रहा था। उसने ऐसा सपना क्यों देखा ? पमिली की उसने हत्या की है, यह सपना उसने देखा ही क्यों ? कल रात की घटना भी याद आ गयी। उस अँधेरे खेत पर पमिली की वे बातें भी उसके कान में बजने लगीं। और यह बातें कहने से कोई क्या विश्वास करेगा ? कोई क्या समझ सकेगा कि पुण्यश्लोक बाबू की एकमात्र बेटी को इतना दुःख हो सकता है ?

कुछ देर इधर-उधर घूमने के बाद पाँच रास्तों के मोड़ पर आकर वह खड़ा हो गया। तब ट्राम और बसों का चलना शुरू हो गया था। अख़बारों के हॉकरों ने साइकिलों पर अख़बार लादकर भाग-दौड़ शुरू कर दी थी। अख़बार के पहले पन्ने पर बड़े-बड़े अक्षरों में जाँच-कमीशन की ख़बरें छपी थीं। इस बार कांग्रेस के लिए वक़्त बुरा था। डॉ० विधान राय ने वक्तव्य दिया था—देश में शान्ति बनाये रखने के लिए राष्ट्रीय

कांग्रेस को शक्तिशाली बनाइये।

वही एक खबर, एक ही ढंग। हमेशा से, एक ही तरह में, सब-कुछ चल रहा है। सिर्फ अखबार वालों को ही फायदा है। जितनी अशान्ति बढ़ती है उनके अखबार उतने ही अधिक बिकते हैं। सड़क पर लोग अखबारों पर टूट पड़ते हैं। नींद से उठते ही वे ऐसी कुछ खबर सुनना-पढ़ना चाहते हैं जिससे कि कुछ रोमांच हो! बारह पैसे खर्च कर बावन तरह के मज़े।

सड़क के इस ओर की रेलिंग तब खाली थी। थोड़ी देर के बाद वह कैलेंडर वाला आकर रेलिंग पर क़तार-के-क़तार कैलेंडर सजा देगा। एक तरफ विवेकानन्द की पगड़ी पहने तस्वीर, उसके पास ही पंखेवाली नंगी औरत की तस्वीर होगी।

'ओ हो भाजे बाबू, शायद सुबह-सुबह का टहलना हो रहा है?'

सुरेन पहले तो पहचान नहीं पाया। उसके बाद हलका-सा एक सूत्र पकड़कर धीरे-धीरे याद आया।

बोला, 'बहुत पहचाना-पहचाना-सा लग रहा है। आप कालीकान्त विश्वास मशाई हैं न?'

उस आदमी के मुंह पर एक कुत्सित मुस्कराहट फैल गयी। बोला, 'जाने दो, फिर भी अच्छा है, तुम पहचान तो पाये।'

'लेकिन आपकी यह हालत कैसे हुई? यह क्या शकल हो गयी है!'

कालीकान्त विश्वास कातर हो उठा। बोला, 'होगी नहीं? तुम्हें पता नहीं, तुम्हारे मामा ने हमारा क्या सत्यानाश किया? मेरी पत्नी को वेश्या बना दिया है!'

सुरेन मानो आसमान से गिर पड़ा हो। बोला, 'यह क्या कह रहे हो?'

कालीकान्त विश्वास बोला, 'क्यों, तुम कुछ नहीं जानते? कुछ नहीं सुना?'

सुरेन बोला, 'कहाँ, नहीं तो।'

कालीकान्त ने उत्तेजना में जेब से एक पूरी बीड़ी निकालकर सुलगायी। बोला, 'तब तुमने क्या सुना? तुम क्या कलकत्ता शहर में रहते हो? इस बात का तो सभी को पता है। तुम्हारा बदमाश मामा हत्यारा है—उसने क्या किया है, तुम्हें कुछ पता है?'

सुरेन बोला, 'किया क्या है?'

'अरे, देखता हूँ कि तुम्हें कुछ खबर नहीं है। छोटे-दा मर गये, जानते हो?'

सुरेन बोला, 'कौन छोटे-दा ?'

'अरे, तुम छोटे-दा को नहीं जानते ? हाटखोला के इतने बड़े राजवंश का लड़का, उसे तो सभी जानते हैं । तुमने नरेश दत्त का नाम नहीं सुना ? वह तो हवालात में मर गये ।'

'हवालात में ?'

फूंक मारते-मारते कालीकान्त की बीड़ी उस वक़्त ख़त्म हो गयी थी। बोला, 'तो तुमको सब बात शुरू से बताना होगी । बहुत वक़्त लगेगा । चलो, ज़रा चाय पिला दो, भाई। सवेरे से एक कप चाय भी पेट में नहीं गयी है। चलो, उस चाय की दूकान पर चलें ।'

सुरेन बोला, 'मैं इस वक़्त ज़रा व्यस्त हूँ, आप यहीं रुककर कहिये न ।'

कालीकान्त बोला, 'चाय पीने में कितनी देर लगेगी ? चलो, चलो, एक कप चाय तो पिलाओगे । इतने में तुम्हारे कौन-से बड़े काम का नुक़सान हो जायेगा ?'

कहकर कालीकान्त सुरेन का एक हाथ पकड़कर ज़ोर से खींचते-खींचते चाय की दूकान की ओर ले गया। उस वक़्त दूकान में बड़ी भीड़ थी । अन्दर क़तार-की-क़तार बेंचें पड़ी थीं। वहाँ बैठकर घुड़-दौड़ की किताब लेकर ज़ोरों से खोज चल रही थी । सिगरेट और चाय के धुएँ से कमरा भरा हुआ था। उसी में एक खाली जगह कालीकान्त ने सुरेन को ले जाकर बैठा दिया। उसके बाद चिल्लाकर कहा, 'दो डबल हाफ़ चाय देना भाई, और चार-चार गरम समोसे ।'

सुरेन बोला, 'न, न, मैं कुछ खाऊँगा नहीं ।'

'क्यों, चाय नहीं पीओगे ?'

'न, मुझे चाय का नशा नहीं है। और समोसे हज़म नहीं कर सकूँगा।'

कालीकान्त बोला, 'यह क्या जी ? शराब पी नहीं, भाँग पी नहीं, बीच ही में पेट के बारह बज गये हैं ?'

सुरेन बोला, 'नहीं, वह बात नहीं, पेट के लिए नहीं, मुझे इतने सवेरे खाने की आदत नहीं है । आज मेरा मन भी अच्छा नहीं है । आधी रात को नींद टूट गयी । फिर नींद नहीं आयी, इसीलिए सड़क पर निकल पड़ा ।'

'तो तड़के को नींद टूटेगी ही। इसीलिए तो हम लोग रात को शराब पीते हैं । शराब क्या शौक़ से पीते हैं ! शराब उसी नींद के लिए पीते हैं। शराब पीना शुरू करो, देखोगे नींद के ज़ोर से फिर आँख खुल न सकेगी ।'

उसके बाद दूकानदार को लक्ष्य कर कहा, 'दो कप नहीं देना है। एक डबल हाफ ही दो—और समोसे आठ ही दो, बहुत भूख लगी है।'

कहकर कालीकान्त ने एक बीड़ी और सुलगायी। सुलगाकर लम्बा धुआँ छोड़कर बोला, 'हाँ, जो बात बता रहा था। मेरी तरह रोज शाम को दो नम्बर के एक पाइंट के हिसाब से लो, तो देखोगे कि वह अनिद्रा-फनिद्रा कहाँ पों-पों कर भाग गयी!'

सहसा सुरेन बोला, 'अच्छा कालीकान्त बाबू, आप रात में सपने देखते हैं न?'

कालीकान्त भाजे बाबू की बात सुनकर ताज्जुब में पड़ गया।

बोला, 'यह क्या जी, सपने कौन नहीं देखता है?'

सुरेन बोला, 'न, यही कह रहा हूँ, सपना सच्चा होता है?'

'अरे हटो, सपना कभी सच होता है? मैंने तो कितनी बार सपने में देखा कि घुड़दौड़ में टिपल टोट मार दिया। सपने में बहुत उछलता हूँ, जागने पर एकदम चौपट।'

सुरेन चुप रह गया। तभी चाय आ गयी। डबल हाफ चाय का कप उठाकर, चुस्की लेकर कालीकान्त विश्वास बोला, 'वाह, बढ़िया बनायी है। तो तुम दाम दे दो, भाजे बाबू। आठ समोसे और एक डबल हाफ। कुल दस आने।'

सुरेन जेब में हाथ डालकर ताज्जुब में पड़ गया। जल्दी-जल्दी निकलने में जेब में पैसे लाना तो वह भूल ही गया था। ताज्जुब की बात है।

सुरेन बोला, 'विश्वास मशाई, पैसे तो मैं लाया नहीं।'

कालीकान्त विश्वास चाय पीते-पीते चौंक पड़ा। मुंह में चाय अचानक बड़ी कड़वी लगी।

बोला, 'जेब में पैसे नहीं हैं? तब क्या होगा? मेरी जेब में भी पैसा नहीं है। तो एक काम करो न, भागकर घर से जाकर ले आओ न! यहीं पास में ही तो माधव कुडू लेन है।'

'आपके पास पैसे नहीं है?'

कालीकान्त बोला, 'मेरे पास पैसे रहते तो मैं तुमसे देने को कहता?'

सुरेन बोला, 'तो फिर बैठिये, मैं अभी जाकर घर से ले आता हूँ। गया और आया।'

उसने झटपट घर की ओर कदम बढ़ाये। तभी कलकत्ता मह[illegible] भी चहल-पहल बढ़ गयी थी। सड़कों पर अधिक संख्या में लोग [illegible] लगे थे। सुरेन जल्दी-जल्दी घर की ओर चलने लगा। ताज्जु[illegible] आदमी पर। दुनिया में कितना-कुछ होता जा रहा है, कुछ भी [illegible]

देता। उसके लिए न कांग्रेस है, न कम्युनिस्ट पार्टी। जिस तरह भी हो सके, दोनों वक़्त मौज उड़ाने से ही मतलब है। कालीकान्त विश्वास की तरह और भी ऐसे कितने ही तो लोग हैं। शायद ज्यादातर उसी तरह के हैं। उसका अपना मामा ही क्या है? मामा भी तो उसी तरह का है। रुपया छीनने-झपटने के सिवा और तमाम बातों को बेकार समझता है। रुपया कमाने के सिवा उसके लिए मानो और कोई भी करने लायक़ काम नहीं है।

बहादुरसिंह ने उस समय स्नान कर लिया था। अभी काम पर जा जुटेगा। सामने ही खड़ा था। सुरेन के अन्दर घुसते ही उसने सलाम किया —'राम-राम, भांजे बाबू।'

सुरेन बोला, 'राम-राम।'

उसके बाद अपने कमरे में जाकर मेज़ की दराज़ से रुपये-पैसे निकाले। निकालकर उसी हालत में बाहर आया।

बहादुर उस वक़्त भी खड़ा था।

सुरेन ने पूछा, 'अच्छा बहादुर, रात को घर में कोई घुसा था? तुम्हें कुछ पता है?'

बहादुर बोला, 'नहीं हुज़ूर, कौन घुसेगा?'

सुरेन बोला, 'पुलिस।'

बहादुर बोला, 'पुलिस? पुलिस क्यों घुसेगी? पुलिस आती तो मुझे पता चलता, हुज़ूर।'

सुरेन समझ गया कि कुल मामला किसी सपने-सा अजीब था! एकदम अजीब सपना! सपना न हो तो कोई इस बात को सोच सकेगा कि उसने पमिली का ख़ून किया है? पमिली ने उसका क्या बिगाड़ा है?

उसके बाद सोचते-सोचते सुरेन सड़क पर आ गया। कालीकान्त विश्वास शायद अभी तक चाय की दूकान पर सड़क की ओर आँख लगाये बैठा है। सुरेन के गये बिना दूकान छोड़कर जा नहीं सकता। पैसे के बिना उसकी बेइज़्ज़ती होगी। सुरेन झटपट पैर बढ़ाकर चलने लगा।
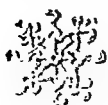
आज इतने दिनों के बाद उस दिन की बातों को सोचकर सुरेन को अजीब-

देवेश बोला, 'माने मैं तो कभी उनके घर बहुत आता-जाता था। तेरे साथ तो पमिली की एक तरह की घनिष्ठता भी थी।'

सुरेन बोला, 'तू कह क्या रहा है ? मैं कहाँ का कौन और वे कौन हैं! उनके साथ मेरी क्या तुलना ?'

देवेश बोला, 'वह सब चालाकी की बातें छोड़। एक काम कर सकेगा ? तेरी बात तो पमिली बहुत मानती है। बीच-बीच में तुझसे भेंट

उन दिनों जांच-कमीशन की सुनवायी रोज चल रही थी। दोनों पार्टियों की ओर से गवाही-सबूतों का जोड़-तोड़ चल रहा था। पुण्यश्लोक बाबू की ओर से प्रवेश सेन सारा कलकत्ता घूम-घूमकर पैरवी करता फिरता। और इधर देवेश था। देवेश आदि गवाहियों से प्रमाणित कराना चाह रहे थे कि कांग्रेस, पुलिस के इस हमले के पीछे जुड़ी थी। उन्हों के षड्यन्त्र से इतने लोगों की रायफलों की गोलियों से जानें गयीं।

माधव कुंडू लेन जहाँ ट्राम की सड़क पर आकर मिलता था, वहीं उस दिन सहसा देवेश का सुरेन से सामना हो गया।

सुरेन को इतने सवेरे देवेश ने देखने की आशा नहीं की थी। पूछा, 'क्यों रे, तू इतने सवेरे?'

देवेश बोला, 'कल रात को टुलू से सब सुना।'

'कल टुलू तो मेरे घर आयी थी। तब बहुत रात थी। तुमसे कहाँ भेंट हुई?'

देवेश बोला, 'उनके ढकुरिया स्ट्रीट के घर पर कल हम गये थे। देखा कि हमारा सुव्रत भी उसके घर गया था!'

सुरेन बोला, 'मैंने ही सुव्रत को जरा गाड़ी में घर छोड़ आने को कहा था।'

देवेश बोला, 'देखा कि सुव्रत टुलू के घर के सामने अँधेरे में खड़ा-खड़ा बहुत जमकर उससे प्यार करने की कोशिश कर रहा था। भेंट हो तो तू सुव्रत से कह देना कि बूर्जुआ लोगों के साथ हमारा मेल नहीं है। मुझे लगता है कि इसके पीछे उसका कोई मतलब है।'

सुरेन बोला, 'कैसा मतलब? सुव्रत का क्या मतलब हो सकता है?'

देवेश बोला, 'मैं इसी लिए तो तेरे पास आया हूँ। मुझे लगता है कि सुव्रत टुलू को चाहता है। जाँच-कमीशन के सामने उसकी गवाही को बेकार कर देगा।'

'किस तरह बेकार करेगा?'

देवेश बोला, 'क्यों? बहुत आसान है, गवाहों को तोड़कर।'

'लेकिन टुलू क्या उस तरह की लड़की है? टुलू को तोड़ लेना क्या आसान है? वह क्या सुव्रत को पहचानती नहीं? जानती नहीं कि सुव्रत किस आदमी का बेटा है? सब-कुछ तो जानती है।'

देवेश बोला, 'न, वह नहीं कर सकेगा, लेकिन सुव्रत के कोशिश करने में क्या हर्ज है? और एक बात है, तेरे साथ उसकी बहन का क्या सम्बन्ध है, रे?'

'मतलब?'

जानना पड़ता है। तूने कहा ही है कि पमिली गवाह बनने को तैयार थी।'

सुरेन बोला, 'लेकिन मेरी बात से वह पिता के विरुद्ध गवाही क्यों देगी ?'

'ज़रूर देगी। तुम लोग तो साथ-साथ अक्सर घूमते हो ?'

'किसने कहा कि साथ-साथ घूमते हैं ? किसने तुझसे कहा ?'

देवेश बोला, 'क्यों, टुलू ने कहा।'

'टुलू ने क्या मुझे पमिली के साथ घूमते देखा है ?'

देवेश बोला, 'तो कल रात तू कहाँ गया था ? इतनी रात तक तू कहाँ था ? टुलू ने तेरे घर रात में आकर तुझे नहीं पाया। बता, कहाँ था ?'

सुरेन चुप रहा। उसे कोई जवाब न सूझा।

'बता, कहाँ था ? बता, तू पमिली के साथ नहीं घूम रहा था ? पमिली के साथ इतनी रात को तू कहाँ घूम रहा था ?'

सुरेन कुछ देर चुप रहा। उसके बाद बोला, 'मुझे ज़बर्दस्ती गाड़ी पर बैठाकर ले गयी थी।'

'कहाँ ?'

'डायमण्ड हार्बर की ओर।'

देवेश बोला, 'क्यों ? तेरे प्रति पमिली को ऐसा अनुराग क्यों है ? पमिली है बड़े आदमी की लड़की, और तू मध्यवित्त बेकार लड़का ? तेरे साथ पमिली का सम्बन्ध कैसे है ?'

सुरेन चुप रहा। कोई भी जवाब न दिया।

देवेश बोला, 'तू क्या हमेशा ऐसा ही रह जायेगा ? बड़ा आदमी होने से ही क्या तू उन लोगों के पैर चाटेगा ? देख, कहा गया है—पति परम गुरु! औरतों के जूड़े की कंघी में पहले बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा रहता था। तेरे भी देखता हूँ वही है। तू भी अपने शरीर पर एक साइन-बोर्ड लटका ले और उस पर लिख ले—पूंजीपति परम गुरु ! पूंजीपति लोगों पर तुझे इतना प्यार क्यों है ? तू हमारी पार्टी का मेम्बर है न ? हमारी पार्टी का मेम्बर होकर तू क्यों पमिली के साथ घूमता-फिरता है ? वह तुझे रुपये देगी ? वह तुझसे शादी करेगी ?'

सुरेन बोल पड़ा, 'तू यह कह क्या रहा है ?'

देवेश बोला, 'ठीक ही कह रहा हूँ। तू यह कभी मत सोचना कि तू उससे व्याह कर सकेगा। बूर्जुआ लड़कियाँ बहुत चालाक होती हैं। वक्त देखकर तुम्हें डंडे मारकर नाली में ढकेल देंगी। तू बूर्जुआ लोगों को अभी भी पहचान नहीं पाया। वे एक ही शैतान होते हैं। पता है ?'

सुरेन बोला, 'पता है।'

देवेश बोला, 'खाक पता है ! जानता तो लड़की के पैर चाटने हावड़ा-हावड़ा न जाता !'

उसके बाद थोड़ा रुककर बोला, 'सो नहीं हुआ। चल, यह तो अच्छा किया। तो पमिली से अगर तेरा इतना ही लगाव है तो तू उससे अपना काम निकाल ले।'

सुरेन समझ न सका। बोला, 'क्या काम ?'

देवेश बोला, 'यही बात कहने तो इतने तड़के सब काम छोड़ तेरे पास आया हूँ। तो सुन। अगर अपना भला चाहता है, अगर तू देश का भला चाहता है तो मैं जो कहता हूँ वह कर।'

सुरेन बोला, 'क्या ? पमिली से न मिलूं ?'

देवेश बोला, 'न, तू मिलेगा, मिलना-जुलना और भी ज्यादा बढ़ायेगा। इस बारे में तेरे साथ अकेले में बैठकर बातें करना होंगी। रास्ते में खड़े होकर नहीं होंगी। तेरे कमरे में आकर बैठकर कहूँगा, चल—तेरे कमरे में चलें।'

देवेश को लेकर सुरेन अपने निजी कमरे में आकर बैठ गया।

इतने सवेरे उस समय भी बिस्तर साफ नहीं हुआ था। सारा कमरा ही अस्त-व्यस्त-सा हो रहा था।

देवेश एकदम सुरेन के बिस्तर पर ही बैठ गया।

बोला, 'यह बात कहने के लिए ही सब छोड़कर आया। असल में टुलू ने ही हमारे दिमाग में अकल जगायी।'

सुरेन बोला, 'क्या ?'

देवेश बोला, 'तेरे साथ सुव्रत और पमिली का बहुत स्नेह है। तुम लोगों का परस्पर आना-जाना है। जिस तरह भी हो, पमिली को अपने दल में लाना होगा। जैसे भी हो। उस में अगर जोर-जबर्दस्ती करना पड़े, वह भी तुझे करना होगी।'

'जोर-जबर्दस्ती ? उसके मतलब ?'

देवेश बोला, 'जोर-जबर्दस्ती के मतलब नहीं समझता ? माने फोर्स। ताकत लगाना पड़ेगा। आसानी से तो कोई संस्कार से छुटकारा पाना नहीं चाहता। निरन्तर तो वे पुण्यश्लोक बाबू के आश्रय में पले-पुसे, बड़े हुए हैं। पुण्यश्लोक बाबू का रुपया, प्रतिष्ठा, सम्मान—सब उनके खून में मिलकर एकाकार हो गये हैं। उस सब प्रभाव से निकल आना क्या आसान है ? तुझे उसको खींचकर बाहर लाना पड़ेगा।'

उसके बाद थोड़ा रुककर बोला, 'तू एक काम कर। उनकी बातों में तू उठना-बैठना शुरू कर दे। अन्त में उन लोगों को अगर तू पसन्द है, तो

एक दिन तेरी बात मानकर ही वे उठने-बैठने लगेंगे।'

'उस से फ़ायदा ?'

देवेश बोला, 'उससे हमारी पार्टी का फ़ायदा है। तू जो कहेगा वे लोग वही सुनेंगे। तू अगर उनके पिता के विरुद्ध गवाही देने को कहेगा तो वे वही देंगे। अपने पिता के विरुद्ध वोट भी देंगे।'

सुरेन बोला, 'ऐसा भी कभी कोई करता है ?'

देवेश बोला, 'निश्चय ही तेरे थोड़ा जोर-जबर्दस्ती करने से ज़रूर ही ऐसा होगा।'

'किस तरह जोर-जबर्दस्ती करूँगा ?'

'तो वह भी क्या तुझे सिखाना होगा ? तू मर्द आदमी है, वह भी नहीं जानता ? एक साथ तो तुम घूमने निकलते हो ! अकेले में बातचीत भी करते हो, करते हो न ?'

सुरेन बोला, 'वह तो करते हैं।'

'और क्या करते हो ?'

'और क्या करेंगे ? बस बातें करते हैं।'

'बस बातें करते हो ? ऐसी तुम लोगों की क्या बातें हैं ?'

सुरेन बोला, 'क्या बताऊँ, उनके कोई अर्थ नहीं। इधर-उधर की तरह-तरह की बातें ही होती हैं। कल तो पमिली मुझे जबर्दस्ती डायमंड हार्बर की ओर ले गयी। बिलकुल निर्जन धान के खेत के पास खींचकर बैठा लिया।'

'उसके बाद ?'

सुरेन बोला, 'उसके बाद बहुत-सी बातें हुईं ! पमिली बहुत तकली में है, पता है ? तू किसी से कहना मत, वह तो आत्महत्या करना चाह है।'

देवेश बोला, 'यह क्या, रे ? तुम क्या प्रेम में पड़ गये हो ? प्रेम में कर डुबकियाँ खाने में अक्सर उसी तरह आत्महत्या करने की इच्छ है। देखता हूँ कि तू मरेगा, ज़रूर मरेगा।'

सुरेन बोला, 'धत्, वह नहीं। मुझे जबर्दस्ती पकड़ ले गयी करता ?'

देवेश बोला, 'तो आत्महत्या क्यों करना चाहती थी ? बात की है ? तुझसे शादी करना चाहती है क्या ?'

'धत् ! वह क्यों करेगी ? तमाम लोगों के रहते मुझ-से शादी क्यों करेगी ? मेरे घर-द्वार क्या कुछ है ?'

देवेश बोला, 'वह सब बातें छोड़, प्रेम के मामल

जरूरत नही होती । तेरी इतनी उमर हो गयी और यह नहीं समझा ? देखता हूँ कि इस मामले मे तू अभी भी बच्चा है । जो भी हो, बड़े मजे का मामला है न ? उसके बाद ? उसके बाद क्या हुआ ?'

सुरेन बोला, 'वही सब बातें तो तुझसे कह रहा हूँ, किसी से कहना मत ।'

'अच्छा, न सही, नही कहूँगा । लेकिन उसके बाद क्या हुआ, बता न ?'

सुरेन बोला, 'उसके बाद बैग से नीद की गोलियों की दो शीशियाँ निकालकर खाने जा रही थी, मुझसे भी खाने को कह रही थी । कह रही थी, दोनो एक साथ मरेंगे...।'

देवेश उत्तेजित हो उठा। बोला, 'बहुत मजेदार बात है—उसके बाद ?'

'उसके बाद मैंने दोनों शीशियाँ छीन लीं । लेकर चला आ रहा था, अन्त मे कोई चारा न देख वह मेरे पीछे-पीछे चली आयी । क्योंकि तभी कुछ लोगो की आवाज सुनायी पडी। लेकिन सडक पर आकर देखते हैं कि उसकी गाड़ी गायब हो गयी है । अन्त में बडी मुश्किल से डायमड हार्बर लौटकर एक टैक्सी पकड़ उसको घर पहुँचा दिया ।'

'उसके बाद ?'

सुरेन बोला, 'उसके बाद रात को सोते मे भाई, एक विचित्र सपना देखा । सपना देखा कि पुलिस जैसे मुझे गिरफ्तार करने आयी है। पुलिस कह रही थी, मैंने पमिली की हत्या की है । लेकिन तभी मेरी नीद टूट गयी ।'

उसके बाद जरा रुककर बोला, 'तभी से फिर नीद नही आयी । तभी से मन ऐसा खराब हो रहा है। उसके बाद घर से निकल गया था ।'

देवेश बोला, 'तब तो बडी अच्छी खबर है ।'

'क्यों ?'

'अच्छी ही तो खबर है ।'

देवेश को जैसे सहसा इतने दिनो बाद एक बदला लेने की सी चीज मिल गयी । वह जोश में उठ खडा हुआ । बोला, 'बहुत अच्छी खबर है । तू बिलकुल फिक्र न करना, मैं किसी से नही कहूँगा । अब तेरा एकमात्र काम पमिली से रोज मिलना-जुलना है । उससे अबसे तुझे बहुत-से काम कराना होंगे । बूर्जुआ लोगो को हराने के लिए इस से बड़ा दूसरा हथियार नहीं ।'

सुरेन फिर भी कुछ समझ न सका । बोला, 'तू कह क्या रहा है, मैं

समझ नहीं पा रहा हूँ।'

देवेश वोला, 'उसे जाँच-कमीशन में एक गवाह वना दे न! वहाँ वह अपने पिता की पार्टी के खिलाफ़ कहे—उसके वाद चुनाव आ रहे हैं, उसी चुनाव में पिता के खिलाफ़ काम करे।'

सुरेन वोला, 'लेकिन उस मामले में वह मेरी वात क्यों मानेगी?'

देवेश वोला, 'उसकी क्या ताक़त है कि न माने? तुझसे इतना मिलती है, और तू उसकी कमज़ोरी का फ़ायदा नहीं उठा सकता?'

'अगर यह न कर सकूँ?'

देवेश वोला, 'पहले से ही निराश क्यों हो रहा है? कोशिश कर, ज़रूर कर सकेगा। रूस की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास नहीं पढ़ा है? ट्रॉट्स्की का क्या हुआ?'

सुरेन वोला, 'ट्रॉट्स्की की तो हत्या हो गयी थी। मैं भी क्या हत्या करूँ?'

देवेश वोला, 'ज़रूरत पड़ी तो नहीं करेगा?'

हत्या की वात सुनकर सुरेन का कलेजा धक्-धक् कर काँप उठा। कल रात की वात याद आयी। सपने की वात भी याद आयी। देवेश के मुँह की ओर आश्चर्य से देखकर सुरेन ने वातों के अर्थ समझने की कोशिश की। देवेश यह क्या कह रहा है? पमिली की हत्या करने को कह रहा है?

हत्या! हत्या की कल्पना करते ही सुरेन की आँखों के आगे खून की एक झलक आ गयी। लाल चमकता ताज़ा खून। उसका सिर चकराने लगा। क्या ज़रूरत होने पर वह पमिली का खून कर सकता है?

देवेश उस समय भी खड़ा था।

सुरेन की हालत देखकर उसे दिलासा देने लगा। वोला, 'तू इतना सोच क्यों रहा है? मैं क्या तुझसे सचमुच खून करने को कह रहा हूँ? कह रहा हूँ कि अगर अन्त तक राजी न हो तो तुझे खून ही करना होगा। हत्या का डर दिखाना पड़ेगा। विना उग्र हुए कुछ न हो सकेगा। वूर्जुआ लोगों को आसानी से हटाया नहीं जा सकता। उन लोगों ने सव जगह ऐसा जाल विछा रखा है कि वहाँ से उन्हें हटाने में हमारी मीटिंगों और जुलूसों से ही काम नहीं चलेगा, हमें आक्रामक भी वनना पड़ेगा।'

सहसा वाहर जैसे किसी के जूतों की आवाज़ हुई। जूतों की आवाज़ सुनकर देवेश चुप हो गया। सुरेन ने वाहर झाँककर देखा कि मामा आ रहे हैं।

भूपति भादुड़ी सीधे कमरे में घुसकर देवेश को देख ज़रा ठिठककर

खड़े हो गये।

देवेश बोला, 'ठीक है, तो वह बात रही। मैं चला।'

कहकर चला गया।

भूपति भादुड़ी ने पूछा, 'वह छोकरा कौन है, रे?'

सुरेन बोला, 'तुम बताओ, क्या कहने आये हो, वह मेरा एक दोस्त है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो दोस्त इतने सवेरे आ गया? कल इतनी रात को भी दोस्त, और आज इतने तड़के भी देख रहा हूँ दोस्त। देखता हूँ कि तेरे दोस्त ही तुझे खा जायेंगे। कोई भली सलाह देने का नाम नहीं, बस, अपनी गरज लिये तेरे पीछे फिरते रहते हैं। वे लोग क्या चाहते हैं, रुपये? शायद तेरा रुपया देख लिया है! और अगर रुपये की बात नहीं है तो ऐसी कौन-सी बातें हैं? तुम लोगों में इतनी क्या बातें हो सकती हैं? रात में बातें खत्म नहीं हुई, फिर सवेरे आ पहुँचे?'

सुरेन बोला, 'हमारे मामले में तुम्हें इतना सरदर्द क्यों, तुम क्या कहने आये थे, कहो न।'

भूपति भादुड़ी समझे कि सुरेन खफा हो गया है। इसीलिए वे थोड़ा नरम हो गये। बोले, 'अरे, तू बिगड़ क्यों रहा है? मैंने तुझसे गुस्से की क्या बात कही?'

कहकर टेंट से दस-दस रुपये के दो नोट निकले। बोले, 'यह रख, रख ले, बड़ा लड़का है, तुझे हाथ-खर्च के लिए तो रुपयों की जरूरत होगी, ले।'

सुरेन बोला, 'अभी तो मेरे पास रुपये हैं।'

'होंगे, अभी ले। उसके बाद जब तेरा अपना रुपया होगा, तो न हो तो तू ही मुझे देना। अभी रुपये ले।'

सुरेन ने दोनों नोट लेकर जेब में डाल लिये।

भूपति भादुड़ी को कुछ आशा बँधी। आवाज जरा धीमी कर बोले, 'अरे, तेरे भले के लिए ही मैं इतना कहता हूँ, नहीं तो किसके लिए मुझे इतनी फिक्र? मैं और कितने दिन जीऊँगा? अब यह सारी जायदाद तो तेरी ही होगी। तब तू ही आराम से पैर-पर-पैर रखकर बैठा रहेगा। तब समझेगा कि तेरे मामा ने तेरे लिए क्या किया था।'

सुरेन अब बोला, 'जो कुछ कहना हो कहो, इतनी भूमिका क्यों? कुछ काम है क्या?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'काम की बात कहने ही तो आया हूँ। तो मुझ से इतना चिढ़ क्यों रहा है? मैं तो तेरे भले के लिए ही कह रहा हूँ।'

सुरेन सहसा बोला, 'सुखदा को तुम दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट में रख आये हो ?'

भूपति भादुड़ी आसमान से गिर पड़े। बोले, 'सुखदा ? सुखदा को मैं कहाँ रख आया कह रहा है ?'

'दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट में।'

'दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट में मैं सुखदा को रख आया हूँ ? तुझसे किसने कहा ? किस हरामजादे ने कहा ? उसे मेरे पास बुलाकर ला। देखता हूँ कि वह कितना बड़ा सत्यवादी है ? मेरे मुँह पर वह बात कहे। कितनी चौड़ी छाती है उसकी, देखूं तो। बुला ला उसे।'

सुरेन बोला, 'तुम सब कर सकते हो, मामा ! तुम्हारे लिए असाध्य कुछ नहीं है। रुपये के लिए तुम सब कर सकते हो।'

भूपति भादुड़ी का गला भर आया। आँखें थोड़ी गीली-गीली-सी हो गयीं। सहसा सुरेन के आमने-सामने तख्त पर बैठ गये।

बोले, 'हाँ रे, तूने आज मुझसे यह बात कही। जिसके लिए चोरी करो वही कहे चोर। रुपये क्या मैं अपने लिए चाहता हूँ ? रुपये लेकर क्या मैं स्वर्ग जाऊँगा ? तेरा बाबा जब मरा था तो मैं न होता तो तुझे कौन देखता ? कौन तुझे छुटपन से खिला-पिलाकर आदमी बनाता ? किसने तुझे गाँठ का पैसा लगाकर बी० ए० पास कराया ? अब मैं ही तेरा कोई नहीं हूँ, और तेरे लिए तेरे दोस्त ही सब-कुछ हैं ? वे हो गये अपने, और मैं पराया ?'

सुरेन चुप रहा।

भूपति भादुड़ी कुछ ठंडे पड़े। बोले, 'तो गुस्से की बात छोड़, काम की बात कह रहा हूँ। वकील बाबू आये थे, समझा ? उनसे कह-कहाकर सब ठीक-ठाक किया है, तुझे एक बार उनके पास जाना होगा। कब जा सकेगा ? कल तुझे वक्त होगा ? सवेरे ?'

'होगा।'

'तो ठीक याद रहे। मुझे फिर न याद दिलाना पड़े।'

कहकर भूपति भादुड़ी बाहर निकल गये।

उस समय कैसी मुश्किल आ पड़ी थी, वह सुरेन को आज तक याद है। देवेश की बातों ने उस वक़्त भी उसके मन में आग सुलगा दी थी। एक ओर देवेश का अनुरोध, दूसरी ओर ज़िन्दगी का तकाज़ा। सब लोगों की सब माँगों को पूरा कर जीवित रहने के उस संघर्ष की बात क्या वह किसी दिन भूल सकता है ? वह जाँच-कमीशन, चुनाव, हत्या का आसामी बनकर कचहरी के कठघरे में खड़ा होना। कितने तूफ़ान उसके जीवन पर से निकल गये।

'बताइये, फरियादी की लड़की का ख़ून करने के पीछे आपका क्या स्वार्थ था ?'

'मैंने ख़ून नहीं किया है।'

'आपने अगर ख़ून नहीं किया है तो आपके चले जाने के बाद ही क्यों उसकी लाश मिली ?'

बीच-बीच में उसके दिमाग़ में अभी भी बातें गूँजतीं। अकेला रहने पर ही आजकल ढेर-सी चिन्ताएँ आकर दिमाग़ में घुमतीं और लगता कि किसी बात की आशा करने की कोई जगह नहीं; आकांक्षा रखने का भी कोई अवसर नहीं। वह मानो अचल, अनुभूति-शून्य होकर जीवन-यापन कर रहा है।

किधर होकर वे दिन, वे महीने, वे वर्ष निकल गये, आज सोचने पर भी आश्चर्य होता है। तब केवल सोचता, किस तरह वह उस यन्त्रणा से छुटकारा पायेगा ? किस तरह मामा के षड्यंत्र से वह अपने को अलग करेगा ? किस तरह वह देवेश की पार्टी की छाया से भी दूर कहीं चला जाये ?

कई बार तो वह घर से ही निकल पड़ता। कहीं जाकर भी चैन न पाता, और घर पर भी मानो उसको आश्रय नहीं था। सवेरे के वक़्त वह खा-पीकर बेमतलब सड़कों पर निकल पड़ता। कई बार गंगा के किनारे जहाज़-घाट के किनारे चुपचाप बैठा रहता। वहाँ पर कुली-मज़दूर सिर पर बोझा ढोते। जहाज़ बिना कुछ कहे-सुने सहसा पागलों की तरह भोंभों कर उठता। फिर कभी देखता कि पैरों के पास देवेश की पार्टी की तरह चींटियों का झुण्ड टेढ़ी-मेढ़ी क़तार बाँधकर कहीं हमला करने चला है। दूर

से कभी-कभी आवाज़ आती : 'इन्क़लाब जिन्दाबाद', 'इन्क़लाब जिन्दा-बाद।'

फिर कभी-कभी कान में पड़ता : 'वन्दे मातरम्', 'वन्दे मातरम्।'

एक दिन सुरेन ने सवेरे के वक़्त उस सड़क पर जाते-जाते देखा कि एक साधु को घेरकर कुछ लोग जमा हैं। अन्दर से धूनी की आग से धुआँ उठ रहा है और साधु वावा एकाग्रचित्त होकर गाँजे की चिलम में दम लगा रहे हैं।

सुरेन आहिस्ता-आहिस्ता जाकर वहाँ खड़ा हो गया। अधिकतर कुली-मजदूर लोग थे। देवेश जिन्हें मेहनतकश कहता, वे थे। वे सव साधु वावा को हाथ दिखा रहे थे। सव का एक ही सवाल था : 'वावा, वता दो मेरा क्या होगा ?'

सहसा उनमें एक वूर्जुआ वर्ग के आदमी को देखकर सभी ने शायद थोड़ा सम्मान करके उसे वैठने की जगह छोड़ दी। लेकिन सुरेन वैठने जाकर भी वहाँ वैठा नहीं। खड़े-खड़े ही साधु वावा की हरकतें देखने लगा। साधु गाँजा पीता और सवका भविष्य वताता।

याद है कि उस दिन वह साधु से कुछ भी न पूछ सका था। या फिर उसकी पूछने की तवीयत ही नहीं हुई। अपने मन की दुनिया में जो क़ैद है, वहाँ तो वाहरी व्यक्ति का प्रवेश निषिद्ध है।

घर लौटकर आते ही हर दिन वहादुरसिंह खवर देता कि कौन-कौन व्यक्ति भांजे वावू की तलाश में आया था।

सुरेन के मन में उठता, आयें। सव लोग उसकी तलाश में आया करें। आते हैं तो वही आयेंगे—वही देवेश, या टुलू। अथवा सुव्रत, या पमिली। और नहीं तो वह कालीकान्त। लेकिन सभी तो उसके जीवन के साथ सट-कर उसकी यन्त्रणा के कारण वने हैं। उन सवको अलग हटाने के लिए ही तो सवसे कटकर वह अपने को खोजता फिरता है।

उस दिन साधु वावा विलकुल अकेले वैठे थे। ऐसा कभी नहीं होता था। चारों ओर जली लकड़ियाँ, राख की ढेरी और गाँजे की चिलम लिये अकेला वैठा था।

साधु वावा ने सुरेन को पुकारा। वोला, 'आ, वेटा, आ!'

सुरेन के सामने जाकर वैठते ही साधु वावा टूटी-फूटी हिन्दी में उसके भूत, भविष्य वर्तमान की सारी समस्याएँ जल्दी-जल्दी वताने लगा।

'वेटा, वहुत सावधान रहना, तेरे आगे वहुत मुसीवत है।'

इतने दिनों वाद उसी साधु वावा से और एक वार मिलने पर सुरेन और भी वहुत-सी वातें पूछता। लेकिन उस दिन उसकी वातों पर क्यों

विश्वास नहीं हुआ ? असम्भव, अवास्तविक और तर्कसंगत न मानकर ? लेकिन इतने दिनों के जीवन में सुरेन आज भी नहीं कह सकता कि क्या अस्वाभाविक है और क्या असम्भव !

'किसी दिन तुझे फाँसी होगी, बहुत सावधान रहना ।'

फाँसी ? डर के मारे सुरेन नीला पड़ गया था। ऐसी बात की तो उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

पूछा, 'फाँसी क्यों होगी ? किस अपराध के लिए ?'

'हत्या के अपराध में। तू किसी का खून करेगा, बेटा। तेरे भाग्य में बहुत परेशानी है, बेटा। राम नाम का जप कर, तेरी सब तकलीफें दूर हो जायेंगी।'

'किसकी हत्या करूँगा ?'

'एक औरत की।'

जीवन में उत्तम मुहूर्त का क्षण एक बार ही आता है। उसी उत्तम मुहूर्त में अगर कोई बाधा आ जाती है तो वह स्थायी हो जाती है। उन सारे दिनों की बात सोचने बैठकर आज भी सुरेन की आँखें छलछला आती हैं। झूठ में आदमी को कितने दिनों दिलासा मिलती है ? सच को ढँका रखकर किसी दिन झूठ ही स्थायी होकर जीवन को व्यर्थ का कष्ट-भोग कराता रहेगा। तब झूठ ही सच बन जायेगा।

सुरेन के साथ इस समय वही हुआ। पिछले दिनों की ओर देखकर सारा जीवन ही एकदम रिक्त लगता। लगता कि उसका सारा जीवन ही व्यर्थ बीता है।

कोर्ट में उस दिन भी एक तरह से जिरह चल रही थी। वही एक सवाल, वही एक ढंग का जवाब।

सवाल हुआ, 'जिस दिन जुलूस निकला था उस दिन आप कहाँ थे ?'

गवाह ने जवाब दिया। बोला, 'मैं धरमतल्ला खरीदारी के लिए गया था।'

'आपको क्या पुलिस दिखायी पड़ी थी।'

गवाह ने जवाब दिया, 'देखी थी। देखा था, झुंड-के-झुंड पुलिस वाले लाठियाँ, बन्दूकें लिये फुटपाथ पर पहरा दे रहे थे।'

'अन्दाज से कितनी पुलिस होगी ?'

'अन्दाज से पाँच-छः सौ पुलिस होगी ही।'

'क्या जुलूस शान्त था ? क्या वे मुट्ठियाँ उठाकर नारे लगा रहे थे ?'

'जुलूस के लड़के-लड़कियाँ बहुत शान्त भाव से नारे लगाते-लगाते बढ़

रहे थे।'

'तो पुलिस सहसा अकारण बिगड़ उठी ? पुलिस पर प्रहार हुए बिना वह जुलूस पर क्यों हमला करेगी ? कोई किसी से चोट खाये बिना भी किसी पर हमला करता है ? एक हाथ से कहीं ताली बजती है ?'

गवाह ने जवाब दिया, 'बजती है !'

'किस तरह ?'

गवाह बोला, 'अगर दो पार्टियों में झगड़ा हो तो एक पार्टी के लोग अक्सर दूसरी पार्टी को भड़काकर गुस्से से भर देते हैं।'

सवाल हुआ, 'यहाँ किसने भड़काया था ?'

गवाह बोला, 'पुलिस ने। कांग्रेस के हाथ में ही इस वक्त पुलिस है। कांग्रेस गवर्नमेंट के हाथों में ही पुलिस की नौकरी निर्भर करती है। उसी कांग्रेस गवर्नमेंट ने ही पुलिस के द्वारा जुलूस के लोगों को भड़काया था जिससे कि जुलूस बिगड़ उठे।'

'आपने यह सब कैसे समझा ?'

गवाह ने जवाब दिया, 'सड़क पर के लोग वही बातचीत कर रहे थे।'

'तो रास्ते के लोग सच बात कह रहे थे, यह आपने कैसे जाना ?'

गवाह बोला, 'जब सभी एक ही बात कहें तो उसमें कुछ सच बातें रहती हैं या नहीं ?'

'वह बात छोड़ो, आपने खुद वहाँ खड़े-खड़े क्या देखा ?'

गवाह ने जो-जो देखा था सब कह गया। किस तरह से पुलिस ने निरीह, निरस्त्र जुलूस के लोगों पर गोलियाँ चलायी थीं। किस तरह सड़क पर जिसको पाया, उसे जुलूस का आदमी समझकर मारा-पीटा, लांछित किया। सारे हॉल के लोग निर्वाक् स्तब्ध भाव से बैठे-बैठे वह सब विवरण सुनने लगे। सिर्फ़ एक आदमी नहीं, एक पार्टी नहीं, विभिन्न लोगों के चेहरों पर वह एक ही बात सुनते-सुनते लोग सरकार की निष्ठुरता पर, बीभत्सता पर अचम्भे में पड़ गये। लोगों को लगा कि वे जैसे सोलहवीं, सत्रहवीं, अठारहवीं सदी के सामन्ती युग में रह रहे हों, जैसे बीसवीं सदी कलकत्ता में नहीं आयी, अतीत के अफ्रीका के जंगलों में जैसे वे रह रहे हों। उसके बाद जब वे हॉल छोड़कर बाहर आये तो बाहर के प्रकाश से झलमलाते रास्तों, मोटर, नियॉन साइनों को देखकर वे हैरत में पड़ जाते हैं। उन्हें लगता कि यह कहाँ आ गये ? यही क्या सदा के परिचित कलकत्ता का सही स्वरूप है ? यही क्या उनकी, और उनके पुरखों की चिरकाल की जन्मभूमि है ?'

उस दिन सहसा प्रवेश सेन गाड़ी से जाते-जाते एकदम सुरेन के निकट आकर खड़ा हो गया।

सुरेन अकेले ही सड़क पर जा रहा था। अचानक एक गाड़ी के पास आकर रुकते ही वह एक कदम पीछे हट गया।

'यह क्या मिस्टर सान्याल, तुम यहाँ ?'

सुरेन ने अवाक् होकर देखा कि प्रवेश सेन स्टीयरिंग पकड़े बैठा है। बोला, 'आप !'

प्रवेश चुरुट को मुँह से हटाकर हँसा। बोला, 'मेरी बात छोड़ दो। मुझे तो सवेरे से नहाने-खाने का वक्त नहीं। कब सवेरे से निकला हूँ, अभी तक पेट में कुछ नहीं पड़ा।'

'ऐसा क्या काम है ?'

प्रवेश सेन बोला, 'और क्या, चुनाव का। तुम भी तो चुनाव का काम कर रहे हो ?'

'मैं ?'

सुरेन फिर बोला, 'मैं किसके चुनाव का काम कर रहा हूँ ? मैं तो कोई काम ही नहीं कर रहा हूँ। नौकरी-ओकरी भी नहीं जो ऑफिस-कचहरी जाऊँ।'

प्रवेश बोला, 'क्यों, पुष्प-दा ने तो तुमको नौकरी दी थी। तुम्हीं ने तो छोड़ दी।'

सुरेन बोला, 'ठीक-ठीक छोड़ी नहीं थी, उन्होंने ही मुझे निकाल दिया।'

प्रवेश सेन वे सारी बातें जानता था। बोला, 'तुम नौकरी करना चाहते हो ? करना चाहो तो बताओ।'

सुरेन बोला, 'नौकरी कौन नहीं करना चाहता, बताइये ? नौकरी-चाकरी के तो मतलब ही हैं मेहनत की कमाई करना। कौन अपनी कमाई पर नहीं रहना चाहता है ? मेरी तो अपनी कमाई नाम की कोई चीज़ नहीं है।'

प्रवेश सेन बोला, 'तो इतने दिनों तक यह बात क्यों नहीं कही ?'

सुरेन बोला, 'मैंने तो पहले ही आपसे कहा था। नौकरी की तलाश

में ही तो आपके ऑफ़िस गया था। वहीं तो पहले-पहल आपसे बातचीत हुई थी।'

प्रवेश सेन बोला, 'तो आओ, मेरी गाड़ी पर बैठ जाओ, बैठो।'

कहकर गाड़ी का दरवाज़ा खोल दिया।

सुरेन गाड़ी पर बैठकर बोला, 'कहाँ जायेंगे ?'

प्रवेश सेन बोला, 'मेरे घर ही चलो न, अभी तुम्हें कोई काम नहीं है न।'

सुरेन बोला, 'अभी आपके घर जाकर बेकार क्या करूँगा ?'

प्रवेश ने उस समय गाड़ी चलाना शुरू कर दिया था। चलाते-चलाते बोला, 'सारा दिन बड़ी मेहनत में बीता, इसीलिए इस वक़्त घर जाना चाहता हूँ।'

सुरेन बोला, 'फिर किसी दिन आऊँगा, मुझे ग्रे स्ट्रीट के मोड़ पर उतार दीजिये।'

प्रवेश सेन बोला, 'तो तुम लोग किस तरह काम कर रहे हो ? तुम लोगों की तो बड़ी मेहनत पड़ रही है।'

सुरेन बोला, 'मेरी बात कर रहे हैं ? मैं कहाँ मेहनत कर रहा हूँ ?'

'क्यों ? पूर्ण बाबू की ओर से तुम मेहनत नहीं कर रहे हो ? मैंने तो देखा था कि तुम सड़कों के हर मोड़ पर गरम-गरम लेक्चर देते हो ?'

सुरेन बोला, 'वे तो रटी-रटाई बातें होती थीं।'

'रटी-रटाई बातें होने पर भी मुझे सुनने में बहुत अच्छी लगी थीं। तुमने तो खूब अभ्यास कर लिया था। बहुत अच्छा अभ्यास कर लिया था—सो तुमको वे लोग किस हिसाब से रुपया देते थे ?'

सुरेन ताज्जुब में आ गया। बोला, 'इसके मतलब ?'

प्रवेश सेन बोला, 'तुमको वे लोग कुछ देते थे न, तुम्हें कितना रुपया मिलता था ? चुनाव का कुछ खर्च-वर्च है न !'

सुरेन बोला, 'ख़र्च तो था लेकिन लेक्चर देने के लिए क्या रुपया ख़र्च करना पड़ता है ?'

प्रवेश बोला, 'वह ख़र्च नहीं करना पड़ता है ? यह जो मैं पुण्यश्लोक बाबू के लिए मेहनत करता हूँ तो रुपये नहीं मिलते ?'

'आप रुपये लेते हैं ?'

प्रवेश सेन बोला, 'तो काम करूँगा और पैसे नहीं लूँगा ? हमारी पार्टी की ओर से जो भी काम करते हैं वे पैसे लेते हैं। अँग्रेजी ज़माने में जो काम करते थे वे पैसा नहीं लेते थे। अब स्वदेशी ज़माना है, अब तो तिनका उठाने का भी पैसा मिलता है। अब तो रुपया छोड़कर कोई बात ही नहीं

होती। अब सब काम में पहले रुपया है। रुपये भी पेशगी चाहिए।'

सुरेन ने पूछा, 'आपकी पार्टी में जो लोग लेक्चर देते हैं उन्हें किस हिसाब से मिलता है?'

प्रवेश बोला, 'जो लेक्चर देते हैं वे थोड़ा ज्यादा पाते हैं। रोजाना पन्द्रह रुपये।'

'पन्द्रह रुपये!'

सुरेन बोला, 'लेक्चर देना तो बहुत आसान है। उसके लिए भी पन्द्रह रुपये?'

प्रवेश बोला, 'सब चीजों के ही तो दाम बढ़ रहे हैं। पहली बार जो दस रुपये के हिसाब से दिया जाता था, इस बार बढ़ाकर पन्द्रह रुपये हो गये हैं। तुम हमारी पार्टी में आ जाओगे न। तुम्हें रोज पन्द्रह रुपये के हिसाब से दूँगा। तो तुम्हें किस हिसाब से मिलते हैं?'

सुरेन बोला, 'मुझे तो कुछ नहीं मिलता था।'

प्रवेश बोला, 'यह क्या? एक पैसा भी नहीं?'

सुरेन बोला, 'नहीं।'

'सच कह रहे हो?'

सुरेन बोला, 'झूठ क्यों कहूँगा? मैं सचमुच कुछ नहीं पाता था। और मिलने पर भी मैं न लेता।'

'क्यों, लेते क्यों नहीं?'

सुरेन बोला, 'पैसा लेकर देश के काम पर भाड़े का टट्टू बनने में मैं विश्वास नहीं करता।'

प्रवेश सेन बोला, 'देख रहा हूँ कि तुम अभी भी बच्चे ही हो। जमाना बदल गया है, यह नहीं मालूम? अब रुपया देकर सब चीजों की परख होती है, यह तो मालूम है?'

सुरेन बोला, 'लोगों के परखने पर भी मैं उस ढंग से चीजों को नहीं देखता। विश्वास करता हूँ कि देश-सेवा में रुपये की कूत नाम को भी नहीं रहती।'

प्रवेश सेन गाड़ी चलाते-चलाते ही ठठाकर हँस पड़ा।

बोला, 'देखता हूँ कि तुम महापुरुष हो।'

यह कहकर फिर चुरुट का कश खींच धुआँ छोड़ता हुआ बोला, 'तुम्हारी ये सब धारणाएँ बहुत दिनों तक नहीं रहेंगी। उमर थोड़ी बढ़ने पर बदल जायेंगी।'

सुरेन बोला, 'मेरी काफ़ी उमर हो चुकी है, ये धारणाएँ अब बदलने की नहीं।'

प्रवेश सेन बोला, 'अगर बीस रुपये रोज दूं ?'

सुरेन बोला, 'बीस हज़ार रुपये रोज देने पर भी नहीं।'

प्रवेश सेन ने अब सुरेन की ओर एक बार एकटक देखा।

बोला, 'मेरे सामने जो कहा सो कहा, यह बात किसी और से न कहना।'

'क्यों ?'

प्रवेश सेन बोला, 'लोग हँसेंगे।'

सुरेन बोला, 'हँसें। दुनिया में कम-से-कम एक आदमी तो रहे जो इस सबके ख़िलाफ़ खड़े होकर विद्रोह कर सके।'

प्रवेश सेन बोला, 'अच्छा, अच्छा—वेरी गुड।'

उसके बाद ज़रा रुककर बोला, 'देखो, किसी चीज़ की ज्यादा अति अच्छी नहीं होती।'

तभी ग्रे स्ट्रीट का मोड़ आ गया था।

सुरेन बोला, 'यहाँ ज़रा रोकिये, मैं उतरूँगा।'

प्रवेश सेन ने पटरी से लगाकर गाड़ी रोक ली।

सुरेन के गाड़ी से उतरते ही प्रवेश सेन बोला, 'फिर किसी दिन जल्दी ही भेंट होगी ?'

सुरेन की समझ में प्रवेश सेन की बात न आयी। उसने जिज्ञासु दृष्टि से प्रवेश सेन की ओर देखा।

'तुम उसी घर में अभी भी हो न ?'

सुरेन बोला, 'हाँ, क्यों ?'

'मैं तुम्हें अपनी शादी का निमन्त्रण-पत्र देने आऊँगा। मेरी शादी में तुम्हें आना होगा।'

सुरेन और भी ताज्जुब में आ गया। 'आपकी शादी ? कब ?'

प्रवेश सेन हँसा। बोला, 'जल्दी ही।'

'कहाँ शादी हो रही है ? किससे ?'

प्रवेश सेन बोला, 'पमिली ...।'

बात सुनकर भी जैसे सुरेन को विश्वास न हुआ। दिमाग़ जैसे सहसा चकरा गया। घर की ओर ही उसने क़दम बढ़ाया था, लेकिन बात सुनते ही फिर घूमकर खड़ा हो गया।

पूछा, 'किसके साथ ?'

प्रवेश बोला, 'पमिली के साथ। क्यों ? तुम्हें पता नहीं था क्या ? पमिली के साथ मेरी शादी की बात तो बहुत दिनों पहले से ही चल रही है। तुमको सुनकर क्या ताज्जुब हुआ है ?'

सुरेन को जैसे चक्कर आ गया। बोला, 'नहीं, यों ही।'

कहकर फिर वहाँ न रुका। फिर माधव कुंडू लेन पकड़कर घर की ओर चलने लगा। कैसी सारी गड़बड़ हो गयी! लगा कि उसका इतने दिनों का सोच-विचार, सारा-कुछ जैसे उलट-पलट गया हो। लेकिन क्यों? अभी तो उसने एक अजीब सपना देखा था। अवश्य सपने के कोई भी माने नहीं होते। स्वप्न के अर्थ ही हैं मिथ्या। पद्मिनी की वह हत्या क्यों करेगा? वह उसकी कौन है? उसे तो कहीं वह उसका एक अद्भुत सपना ही कहा जा सकता है। लेकिन महज सपना ही क्यों कहें? उसके हाथों की रेखाओं में तो लिखा है कि वह किसी औरत की हत्या करेगा। वह पद्मिनी है या दूस...या...? लेकिन किसी की हत्या वह करने क्यों जायेगा? जिन्दगी में किसी के साथ भी उसने झगड़ा नहीं किया है, किसी के ऊपर गुस्सा होकर किसी से सख्त बात नहीं कही, तब?

और, और जो आज वह प्रवेश सेन पद्मिनी से शादी करने जा रहा है, उससे क्या उसे बुरा लगा? क्यों बुरा लगेगा! पद्मिनी उसकी कौन है, या प्रवेश सेन ही उसका कौन है? वे दोनों ही उसके कोई नहीं हैं! सिर्फ वे दोनों ही क्यों, दुनिया में कोई भी उसका नहीं है। जिस दिन से वह दुनिया में आया है, उस दिन से ही वह आश्रयहीन है। उसका अपना कहने को इस दुनिया में कोई भी नहीं है। वह अकेला है। वह दुनिया में अकेला ही रहना चाहता है।

वह झटपट घर आकर अपने कमरे में चला गया।

इस संसार-पथ पर चलते हुए तमाम मनुष्यों को बहुत-सी आश्चर्य-जनक जानकारियों से होकर जीवन पार करना पड़ा है। कोई बड़ा आदमी, कोई गरीब, कोई देश-सेवक, कोई नेता है। फिर किसी ने गृहस्थी और समाज छोड़कर वनवास में जाकर साधना और भजन के बीच मुक्ति की खोज की है। और फिर एक दिन मर भी गया है।

ऐसा क्यों होता है? किसी आदमी को तो पूरी कोशिश करने पर भी कुछ नहीं मिलता, और कोई कोशिश किये बिना ही सब-कुछ पा जाता है! इसका ही क्या रहस्य है?

बहुत दिनों के बाद एक दिन एक भले आदमी से सुरेन ने यह बात पूछी थी। भले आदमी की बड़ी अलौकिक सामर्थ्य देखकर सुरेन चौंक पड़ा था।

सुरेन ने पूछा था, 'अच्छा बताइये तो, ऐसा क्यों होता है? मुझे तो सब मिला था। फिर भी ऐसा क्यों हुआ?'

भले आदमी बड़े विद्वान थे। दुनिया में रहते भी दुनिया से [illegible] के

संसार में रहते थे। सुरेन की ओर देखकर मुस्कराये।

बोले, 'बेटा, तुमने ही पहले-पहल ऐसा प्रश्न किया है। यह प्रश्न तो मुझसे आज तक किसी ने नहीं किया।'

उसके बाद उसे ऊपर से नीचे अच्छी तरह देखकर बोले, 'तुमको जीवन में बहुत चोटें लगी हैं ?'

सुरेन बोला, 'बहुत।'

भले आदमी हँसकर बोले, 'तुम बहुत भाग्यवान हो, ईश्वर जिस पर विशेष कृपा करते हैं, चुन-चुनकर उन्हें ही वे अधिक आघात पहुँचाते हैं।'

उसके बाद ज़रा रुककर बोले, 'आघात पाये बिना क्या तुम ईश्वर की बात सोचते, या मुझसे ही तुम यह प्रश्न करते ? तुम फिर किसी दिन मेरे पास आना, बेटा।'

सचमुच उसके बाद सुरेन एक दिन फिर उनके पास गया था। उन्होंने बहुत-सी बातें बतलायीं। लेकिन वे बातें अभी छोड़ें...।

पहले टूलू की बात कहूँ। पमिली की बात कहूँ। सुखदा की बात भी कहूँ। तमाम लोगों की बात कहूँ ! तमाम घटनाओं की बातें कहूँगा।

उस दिन माधव कुंडू लेन के फाटक के आगे सुव्रत ने आकर गाड़ी रोकी।

बहादुरसिंह वहाँ हमेशा की तरह खड़ा था। सुव्रत ने पूछा, 'बाबू हैं ?'

'हाँ, हुजूर।'

कहकर सलाम किया। सुव्रत आँगन पार कर सुरेन के कमरे में पहुँचकर ताज्जुब में पड़ गया। वहाँ देवेश भी था। वे दोनों वहाँ बैठे-बैठे बातें कर रहे थे।

सुव्रत बोला, 'मैंने आकर बाधा तो नहीं पहुँचायी है ?'

तीनों कभी एक साथ एक दर्जे में पढ़ते थे। लेकिन तीनों की एक साथ बहुत दिनों बाद भेंट हुई थी।

सुरेन बोला, 'क्या हुआ, खड़ा क्यों है, बैठ।'

सुव्रत बोला, 'तुम लोगों की शायद कोई गुप्त बात हो रही थी, सहसा मैं बिना बताये चला आया—फिर देवेश ने तो उस दिन मुझे मेरे मुँह पर गालियाँ दी थीं।'

सुरेन ताज्जुब में पड़ गया। बोला, 'क्यों ? कब ?'

सुव्रत एक ओर बैठते-बैठते बोला, 'उस दिन तूने उस महिला को घर पहुँचा देने को कहा। तभी उसे पहुँचा देना मेरा क़सूर हो गया।'

देवेश बोला, 'पहुँचा देना अपराध नहीं, अपराध उसके घर के सामने

खड़े-खड़े इतनी देर बातें करना था।'

मुब्रत बोला, 'क्या बातें कहीं, वह तो ठीक से सुना नहीं। बातें की, यही अपराध हो गया?'

देवेश बोला, 'जिसकी बहन शराब पीकर हुल्लड करे, उसका भाई रात में एक अनजान लड़की से बातें करे—क्या गलत नहीं है?'

मुब्रत बोल पड़ा, 'देख रहा हूँ कि मेरा इस वक्त यहाँ आना गलत हो गया। तुम लोग बातें करो, मैं चल रहा हूँ।'

सुरेन बोला, 'नहीं, नहीं, बैठ न, हम लोगों की वैसी कोई बात नहीं है।'

देवेश बोला, 'तो मैं अब उठूँ।'

यह कहकर उठ खड़ा हुआ। सुरेन बोला, 'बैठ न, अभी क्यों जा रहा है?'

देवेश बोला, 'मुझे अब रुकने का वक्त नहीं है। आज फिर कमीशन की सुनवायी है। उसके सिवा वरानगर में भी मीटिंग बुलायी है। उसके लिए भी जोड़-तोड़ करना पड़ेगा।'

'तब तुमसे फिर कब मुलाकात होगी?'

देवेश बोला, 'मैं खबर दूँगा। अभी तो ऐसा काम पड़ा है कि कब कहाँ रहूँ, कोई ठीक नहीं। उधर प्रवेश सेन फिर हमारे आदमियों को तोड़ने की कोशिश कर रहा है। सावधान न रहने से सब गड़बड़ हो जायेगा।'

सुब्रत बोला, 'उससे अच्छा है तू बैठ जा देवेश, मैं ही जा रहा हूँ। मुझे भी काम है।'

देवेश ने उस बात का जवाब न देकर कहा, 'तू भी शायद सुरेन को भलामानुस पाकर उसे तोड़ने आया है?'

सुब्रत बोला, 'इसके मतलब? तोड़ने के क्या माने?'

देवेश बोला, 'प्रवेश सेन ने तो कांग्रेस की ओर से सुरेन को बीस रुपये रोज देना चाहा था।'

'क्यों?'

'सड़कों पर, मैदान में लेक्चर देने के लिए। लेकिन कांग्रेस को नहीं पता कि रुपयों से सभी को नहीं खरीदा जाता। सिर्फ सुरेन ही क्यों, हमारी पार्टी के बहुतों को प्रवेश सेन ने खरीदना चाहा था। उसके बदले पुण्यश्लोक बाबू चुनाव जीतें या न जीतें, प्रवेश सेन तो अपना काम बना लेगा।'

'क्या काम?'

'पुण्यश्लोक बाबू का दामाद बन सकेगा।'

यह कहकर फिर वह न रुका। झोले को कंधे पर लटकाकर कमरे से बाहर सड़क की ओर निकल गया।

देवेश के चले जाने के बाद कुछ देर तक किसी के मुँह से कोई बात

न निकली। दोनों ही मानो गूंगे हो गये हों।

कुछ देर बाद सुरेन ही बोला, 'देवेश की बात का तू कुछ बुरा न मानना सुव्रत, देवेश हमेशा से ऐसा ही है।'

सुव्रत उस बात की ओर न गया। बोला, 'प्रवेश-दा से तेरी भेंट हुई थी ?'

सुरेन बोला, 'हाँ।'

'तुझे बीस रुपये रोज़ देने को उसने कहा था ?'

सुरेन बोला, 'हाँ।'

सुव्रत ने पूछा, 'तूने क्या कहा ?'

सुरेन बोला, 'मैं क्या कहता ! रुपये ही अगर बड़ी बात होते तो मैं अपने मामा की ही चापलूसी करता। मैं अगर मामा की थोड़ी-सी भी चापलूसी करूँ तो मामा ही मेरे साथ दूसरी तरह का बर्ताव करेंगे।'

सुव्रत बोला, 'लेकिन देवेश ने मुझ पर गुस्सा क्यों किया ? मैं पुण्य-श्लोक बाबू का बेटा हूँ, इसलिए ? मैं क्या कांग्रेस में कुछ हूँ ?'

सुव्रत और भी बहुतेरी बातें कह गया। छुटपन से इतना बड़ा होने तक जो कुछ देखा, जाना, सुना—सभी बातें कहने लगा।

उसके बाद बोला, 'पता है, आज बाबा से मेरा झगड़ा हो गया ?'

सुरेन को ताज्जुब हुआ। बोला, 'यह क्या, क्यों ?'

सुव्रत बोला, 'प्रवेश सेन से पमिली की शादी हो रही है।'

सुरेन बोला, 'मैंने भी सुना है, मिस्टर सेन ने ही मुझसे एक दिन कहा था। पमिली इस शादी के लिए राज़ी है ?'

सुव्रत बोला, 'न राज़ी है, न कोई नाराज़ी है।'

'लेकिन इस बारे में प्रस्ताव किसने किया ?'

'मेरे बाबा ने।'

सुरेन को और भी ताज्जुब हुआ। बोला, 'लेकिन और कोई पात्र नहीं मिला ? पमिली क्या कहती है ?'

सुव्रत बोला, 'वह तो बहुत दिनों से ही किसी से खास बातें नहीं करती। बाबा के कुछ कहने जाने पर चुप रहती है, कोई जवाब नहीं देती। पता नहीं, उसे क्या हुआ है ? मेरे बात करने जाने पर भी कोई जवाब नहीं देती। बाबा तो चुनाव को लेकर व्यस्त हैं। दिन-रात पार्टी के आदमी आते हैं, उनकी बातें सुनते-सुनते ही सारा दिन बीत जाता है। अब मेरी बातें सुनने की भी उन्हें फ़ुरसत नहीं।'

उसके बाद थोड़ा सोचकर बोला, 'घर पर रहते अच्छा नहीं लग रहा था, इसी से तेरे पास आया। तेरे पास आकर भी वही एक मुसीबत।'

सुरेन बोला, 'तेरी नौकरी का क्या हुआ ?'

सुव्रत बोला, 'नौकरी तो कलकत्ता में मिली थी। दो हजार रुपये महीना। बाबा की एक बात पर नौकरी मिल गयी थी, लेकिन ली नहीं। बाबा बहुत गुस्सा हुए।'

'क्यों ? इतने रुपये महीने की नौकरी, अच्छी तो थी। ली क्यों नहीं ?'

सुव्रत बोला, 'यह नौकरी लेने पर कलकत्ता में रहना पड़ता। कलकत्ता में रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। तबीयत होती है कि जितनी जल्दी कलकत्ता छोड़ सकूँ उतना ही अच्छा है। अमेरिका से लौटते वक्त कितनी आशा थी; देश लौटने के लिए कितनी आकुलता थी ! अब सोचता हूँ कि यहाँ न लौटना तभी अच्छा होता। बाबा ने बार-बार चुनाव के बाद लौटने को कहा था।'

सुरेन बोला, 'मेरा भी मन अच्छा नहीं है, पता है ?'

'क्यों ?'

सुरेन बोला, 'कई दिन पहले एक बड़ा खराब सपना देखा था, भाई। बहुत बुरा सपना।'

'क्या सपना ?'

'वह तुझे सुनने की जरूरत नहीं है। ऐसा बुरा सपना कोई नहीं देखता। फिर, मैंने तो जिन्दगी में किसी के कोई नुकसान की बात कभी सोची ही नहीं।'

सुव्रत बोला, 'मैंने ही क्या किसी का कोई नुकसान करना चाहा है ? न मेरे बाबा ने कभी किसी का नुकसान करना चाहा। फिर भला किसका हो रहा है ?'

सुरेन बोला, 'लेकिन पमिली के लिए और कोई अच्छा पात्र नहीं मिला ? तेरे बाबा की इतनी जान-पहचान है। पमिली-सी अच्छी लड़की के लिए अच्छे पात्रों की क्या कमी है ?'

सुव्रत बोला, 'मुझसे तो पमिली बात ही नहीं करती। तू एक बार पमिली के पास जायेगा ?'

'मैं ?'

सुरेन चौंक गया। फिर बोला, 'मैं ? मेरी बात वह मानेगी ?'

सुव्रत बोला, 'लेकिन पमिली तो मुझसे भी बात नहीं करती। उसको लेकर हम लोग क्या करें, तू ही बता ?'

सुरेन बोला, 'लेकिन तेरे घर जाने से तेरे बाबा अगर फिर बिगड़ें ? मुझे देखकर अगर घर से निकाल दें ? अन्त में बेकार कुछ रंज की बात हो जायेगी।'

सुव्रत बोला, 'बाबा जब घर न रहें तब आना। एक काम कर न, तू शाम को आना न—आज ही—बाबा उस वक़्त घर पर नहीं रहते।'

सुरेन बोला, 'और तू ?'

सुव्रत बोला, 'तो मैं उस वक़्त घर न रहूँगा। मेरा उस वक़्त न रहना ही अच्छा है।'

सुरेन बोला, 'ठीक है—मैं आज ही जाऊँगा।'

सुव्रत फिर गाड़ी पर जा बैठा। सुरेन उसे पहुँचाकर फिर अपने कमरे में आ गया। लेकिन कमरे में आते ही मन में अजीब-सा लगा, क्यों वह जायेगा ? वह जाने के लिए मान क्यों गया ? बाहर आँगन में उस वक्त धूप छा गयी थी। घर का वातावरण शान्त था। उधर रसोई के नल-घर में बर्तनों का ढेर जमा हो गया था। जनानखाने के बर्तन-अर्तन आकर वहाँ जमा हो गये थे। दुखमोचन आदि ने नहाना शुरू कर दिया था।

ठाकुर ने तभी आकर कहा, 'खायेंगे नहीं, भांजे बाबू ?'

सुरेन बोला, 'देख रहा हूँ, आज तुम्हारा खाना बड़ी जल्दी तैयार हो गया है ? मामा ने भी क्या खा लिया है ?'

ठाकुर बोला, 'हाँ, वे तो कचहरी गये हैं।'

'कचहरी ? क्यों ?'

ठाकुर बोला, 'कहा कि वकील बाबू से काम है। और वक़्त भी क्या कम हो गया है ? कितने बजे हैं, पता है ? एक बजा है। आप तो भलेमानसों के साथ कमरे में बैठ बातें करते थे, इसीलिए नहीं पुकारा।'

सुरेन बोला, 'ठीक है, ज़रा तेल देना, लगाऊँगा।'

कहकर रसोई की सीढ़ी के आगे जाकर दाहिने हाथ की हथेली फैलायी।

शाम होने से पहले ही सुरेन सुखिया स्ट्रीट में पुण्यश्लोक बाबू के घर जा पहुँचा। घर की दीवार पोस्टरों से भरी हुई थी। ज़्यादातर हिस्से में पुण्यश्लोक बाबू के दल के ही पोस्टर थे। बीच-बीच में दो-एक पुण्य बाबू की पार्टी के थे। छिप-छिपाकर किसी वक़्त वे लोग लगा गये थे। कुछ पोस्टर फाड़ दिये गये थे।

दरवान सुरेन को पहचानता था। सुरेन को घुसते देखकर बोला, 'साहब कोठी में नहीं हैं, हुजूर।'

सुरेन बोला, 'मैं दीदीमणि से मिलूँगा।'

'ठहरिये, मैं दीदीमणि से पूछ आऊं।'

वह अन्दर चला गया। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। पहले जब-तब वह आता-जाता था, किसी ने किसी दिन उससे कुछ नहीं कहा। उसके विपरीत सम्मान सहित सलाम किया और भीतर जाने दिया।

एक बार सोचा कि घर लौट जायें। जान-बूझकर यह अपमान वह क्यों सहने चला? वह इस तरह क्यों आया? सुव्रत की बात के बावजूद आज न आना ही ठीक था। शायद पुण्यश्लोक बाबू ने नौकर-चाकर, दरवान सभी को हुक्म दे दिया है कि उसे कोई घर में न घुसने दे। सच-मुच वह क्यों आया? यहाँ आने में उसका क्या स्वार्थ था? पमिली की शादी किससे हुई, न हुई—उससे सुरेन को क्या!

मन में एक अपमान-बोध खटकने लगा। इस तरह अनुमति लिये बिना मिलने आना ही अपमान की बात है। लेकिन वह सुव्रत के अनुरोध पर यहाँ इस तरह मिलने क्यों आ गया? तो क्या वह पमिली के साथ सच में मिलना-जुलना चाहता है? तो क्या पमिली का सान्निध्य उसे अच्छा लगता है?

यह बात मन में उठते ही सारा मन जैसे विद्रोह कर उठा। पमिली उसकी कौन है? उसकी स्थिति से सुरेन की स्थिति का मेल कहाँ है? क्यों वह भिखारी की तरह उससे मिलने को इतना लालायित होता है? सुरेन को अपने ऊपर ही घृणा हुई।

दरवान फाटक छोड़कर अन्दर गया।

उसी मौके में सुरेन ने सड़क की ओर मुँह फेरा। उसके बाद फिर वह जिस रास्ते से आया था, उसी रास्ते से जल्दी-जल्दी ट्राम की सड़क की ओर चलने लगा।

अभी शाम शुरू ही हुई थी। किसी भी दफ़्तर में छुट्टी नहीं हुई थी। जरा बाद ही इस सड़क से ऑफिस से लौटने वाले लोग चींटियों की तरह ट्राम से उतरकर घरों की ओर लौटेंगे। उस समय इतनी जल्दी-जल्दी सुकिया स्ट्रीट से पैदल जाना न हो सकेगा।

सहसा लगा जैसे पीछे से कोई उसे बुला रहा है।

'बाबू, बाबूजी!'

सुरेन ने मुँह फेरकर देखा कि दरवान उसकी ओर ही दौड़ा आ रहा है और बहुत दूर पर उसके पीछे फाटक के पास एकदम सदर रास्ते के

सामने उसकी ओर देखती पमिली खड़ी है।

पमिली दूर से उसे हाथ के इशारे से बुला रही है।

दरवान तभी उसके पास आ पहुँचा था। बोला, 'बाबूजी, आपको दीदीमणि बुला रही हैं, आइये।'

सुरेन फिर उल्टी तरफ़ चल पड़ा। पमिली के नज़दीक पहुँचते ही वह बोली, 'क्या हुआ, तुम चले क्यों जा रहे थे?'

सुरेन क्या कहे, किसके खिलाफ़ कहे, समझ नहीं सका। पास ही दरवान खड़ा था। उसकी ओर देखकर सुरेन बोला, 'इसने तो मुझे घर के अन्दर घुसने नहीं दिया।'

पमिली बोली, 'मैंने इसे बहुत डाँट दिया है, यह अब कभी इस तरह नहीं करेगा।'

उसके बाद दरवान की ओर देखकर कहा, 'खबरदार किये दे रही हूँ, इसके बाद अगर फिर कभी सुना तो नौकरी नहीं रहेगी, कहे देती हूँ, जा।'

सुरेन की ओर देखकर पमिली बोली, 'आओ, अन्दर आओ।'

सुरेन को सुव्रत की बात याद आयी। पमिली की ओर अच्छी तरह से देखा। इन्हीं कुछ दिनों में उसका चेहरा कैसा बीमार-सा लगने लगा है! कई दिनों से न ठीक से खाना, न सारे शरीर में सोने या आराम का चिह्न था।

पूछा, 'यह तुम्हारी क्या शकल हो गयी है?'

पमिली बोली, 'मेरी शकल को कुछ नहीं हुआ है। तुम्हारा क्या हाल है, वही कहो?'

सुरेन बोला, 'मेरा क्या हाल होगा? पहले जैसा था वैसा ही अब है।'

'तो अचानक कैसे आये?'

'क्यों, आना नहीं चाहिए?'

पमिली बोली, 'नहीं, वह नहीं, आये तो अच्छा किया। लेकिन इतने दिनों तक क्यों नहीं आये?'

सुरेन को उस रात की बात याद आयी। वह डायमंड हार्बर के खेल की हरकत। लेकिन कहाँ, पमिली तो वह सब बातें कुछ भी नहीं कह रही है। इतनी आसानी से वह उन बातों को कैसे भूल गयी? उस दिन पमिली ने जो गड़बड़ की थी। उसके बाद क्या यहाँ जल्दी ही आया जा सकता है?

सहसा पमिली ने पूछा, 'कहीं चलोगे? मैं बहुत दिनों से घर में बन्द हूँ।'

सुरेन बोला, 'मैं बहुत डरते-डरते तुम्हारे पास आया हूँ।'

'क्यों ? डर किस बात का ?'

सुरेन की बात सुनकर पमिली जैसे ताज्जुब में आ गयी। बोली, 'आओ, आओ, अन्दर आओ।'

कहकर सुरेन का हाथ पकड़कर खींचा। सुरेन कम्पाउण्ड के अन्दर घुसकर आगे बढ़ने लगा।

चलते-चलते सुरेन ने पूछा, 'पुण्यश्लोक बाबू तो घर पर नहीं हैं ?'

पमिली बोली, 'नहीं, होते भी तो क्या हर्ज था ? मैं क्या किसी की परवाह करती हूँ ? बाबा अगर मुझे तुमसे मिलने-जुलने को मना करें तो क्या मैं उसे सुनूँगी ?'

सुरेन बोला, 'लेकिन तुम पर गुस्सा न करके भी वे मुझ पर तो गुस्सा कर सकते हैं।'

पमिली बोली, 'मेरी जो खुशी होगी वही करूँगी, कोई कहने आये तो नहीं सुनूँगी। तुम्हारे मामले में अगर बाबा और कुछ करें तो मैं यह घर छोड़कर चली जाऊँगी।'

सुरेन बोला, 'न, न, यह काम मत करना, ऐसा करने से मेरी ही व्यर्थ में बदनामी होगी।'

'तुम्हें कोई डर नहीं। अभी चलो न, निकलें, चलो।'

कहकर पमिली अपनी गाड़ी की ओर बढ़ गयी। गाड़ी पर बैठकर इंजिन को स्टार्ट किया। बोली, 'आओ बैठो।'

सुरेन जैसे सकोच करने लगा। चढ़े या न चढ़े !

बोला, 'अभी कहाँ चलोगी ?'

'जहाँ तबीयत हो।'

सुरेन बोला, 'न, तुम्हारे साथ गाड़ी पर बैठने मुझे डर लगता है। आखिर शायद उस दिन की तरह कहीं लेकर चली जाओ।'

'क्यों, तुम्हें इतना डर क्यों लगता है ? मेरे साथ तो कोई भी लड़का चले तो वह धन्य समझे अपने को, मालूम है ?'

सुरेन बोला, 'उन लोगों की बात अलग है।'

'क्यों, तुम कोई खास आदमी हो ? दुनिया में अलग ?'

सुरेन बोला, 'पता नहीं। शायद कुछ अलग तो हूँ ही। अलग न होता तो इतने अपमान के बाद भी तुम्हारे घर आता ?'

पमिली बोली, 'ये सब बातें बाद में होंगी। पहले तुम गाड़ी में बैठो।'

उसके बाद कुछ सोचकर गाड़ी से उतरी। बोली, 'तुम जरा ठहरो। मैं अभी आयी।'

कहकर जल्दी-जल्दी घर के अन्दर चली गयी। उसके बाद फटाफट दो-

मंज़िले पर ज़ीने से चढ़ने लगी। लेकिन ऊपर जाकर अपने कमरे में नहीं गयी। उसके बाद सुव्रत का कमरा था। उसमें भी नहीं गयी। उसके बाद पिता का कमरा था। उसी कमरे में अन्दर गयी। पिता की चारपायी के पीछे एक आयरन सेफ़ था। सेफ़ की चाभी कहाँ रहती थी, यह पमिली को मालूम था। कमरे के पच्छिम की ओर खिड़की के ऊपर एक छोटे-से छेद में थी। लेकिन अगर चाभी वहाँ न हो तो ?

वहाँ हाथ डालते ही दो कुंजियाँ मिलीं। कुंजी से लोहे का सेफ़ खोला। सामने ही एक दराज़ थी। दूसरी चाभी से उस दराज़ को भी खोल लिया। दराज खोलते ही एक वक्स निकला। उसके अन्दर था एक रिवॉल्वर। पीछे घूमकर चारों ओर एक वार पमिली ने अच्छी तरह देखा। न, आस-पास कोई नहीं था।

रिवॉल्वर लेकर पमिली ने उसे अपने ब्लाउज़ के अन्दर छाती में डालने के पहले देख लिया। ठीक से भरा हुआ है न ?

सचमुच गोलियाँ भरी नहीं थीं। पमिली ने उसमें गोलियाँ भर लीं। उसके बाद ब्लाउज़ के अन्दर छाती में छिपा लिया। जल्दी में लोहे के सेफ़ का ताला वन्द करना भूल गयी। लेकिन आखिर तक वह भी वन्द कर दिया। वन्द कर दोनों चाभियाँ फिर खिड़की के ऊपर छोटे-से छेद के अन्दर जैसी थीं वैसे ही रख दीं। उसके बाद कमरे से निकलकर वरामदा पार कर फिर ज़ीने से नीचे उतरकर गाड़ी में जा वैठी।

सुरेन उस समय भी खड़ा पमिली की हरकतें देख रहा था।

पमिली वोली, 'क्यों, गाड़ी में वैठो, चलोगे नहीं ?'

सुरेन ने पूछा, 'घर के अन्दर क्या करने गयी थीं ?'

पमिली वोली, 'वाह रे, पर्स न लेती ?'

'पर्स का क्या होगा ? कितनी दूर चलेंगे ?'

'वह अभी भी ठीक नहीं किया। वह सड़क पर निकलकर ठीक करेंगे।'

लाचार होकर सुरेन गाड़ी पर वैठ गया। उसके वाद पमिली ने गाड़ी चला दी।

सुरेन के जीवन के आरम्भ-काल में बिलकुल किसी उपन्यास की तरह ही घटनाएँ घटीं। उपन्यास की तरह ही वे घटनाएँ व्यवस्थित थीं। जैसे एक-एक कर घटनाओं को क्रम से लगाकर कोई उनसे उपन्यास लिख रहा हो! नहीं तो वह क्यों सुव्रत के कहने पर उस दिन पुण्यश्लोक बाबू के घर गया था? और सुव्रत ने ही क्यों इस तरह उसे अपने घर आने को कहा था?

और ठीक उसके बाद घटनाएँ इस तरह होने लगीं जैसे अदृश्य हाथ से कोई उन्हें करवा रहा हो।

रोज जाँच-कमीशन बैठता। दोनों पक्षों के वकील बहस-मुबाहिसे से पूरा कमरा और दूसरे दिन के अखबार पूरे शहर को सरगरम किये रखते। एक ओर चुनाव और दूसरी ओर जाँच-कमीशन की रिपोर्ट शहर के लोगों को मस्त किये रहती। लोगों को मानो बहुत दिनों बाद फिर एक स्वादिष्ट खाना मिला हो! जीवन नहीं, जीवन की जूठन और कोई [illegible] कुत्तों की तरह पूरे शहर के आदमियों की छीना-झपटी चलती रहती। वे कितनी गालियाँ दे सकते हैं, किसके गले में कितनी ताकत है, कौन कितनी अश्लीलता दिखला सकता है, अब जैसे उसी का मुकाबला चल रहा है।

टुलू पार्टी की लड़कियों का एक झुंड लेकर चुनाव का काम करने के लिए निकली थी। काम की लड़की है टुलू। बहुत दिनों से पार्टी का काम करती आ रही है। हर घर-घर जाकर औरतों को चुनाव की बात याद दिला दे आ रही थी।

साथ में लड़कियाँ जरूर रहतीं, लेकिन जो कुछ कहने की बात होती, वह सब टुलू को अकेले कहना पड़ती। टुलू ही सब की ओर से बातें करती।

कहती, 'देखिये, आप जानती हैं कि कांग्रेस के [illegible] से देश कितने नीचे गिर गये हैं—इस बार आने वाले चुनाव में [illegible] के आसरे पर ही हम सिद्ध कर देना चाहते हैं कि हमारा [illegible] का बिलकुल समर्थन नहीं करता।'

कोई एक महिला कहती, 'तो तुम लोग कौन हो, बच्चा?'

टुलू कहती, 'हम वामपंथी नेता पूर्ण बाबू की पार्टी के लोग हैं। [illegible]

ओर से वोट माँगने आये हैं।'

कोई-कोई मुँहफट महिला भी होती जो साफ़ बात खोलकर कहती। वह कहती, 'कौन हमारी बात कितनी सोचता है वह देख चुके, सभी तो मतलबी हैं। तुमने समझा है कि हमें यह नहीं मालूम ?'

टुलू बोली, 'तो वह भी पाँच बरस के लिए एक बार पूर्ण बाबू को अपना वोट देकर देख लीजिये न।'

वह कहती, 'चुनाव के वक़्त तो तुम आयी हो बेटी, चुनाव के बाद तुम्हारी शकल दिखायी न देगी ?'

टुलू बोली, 'यह बात क्यों कह रही हैं, माँ ? हमें कभी वोट देकर देखा है ?'

इसी तरह कितनी ही तरह से सबको समझाना पड़ता। कोई सुनती और कोई नहीं सुनती।। बेवकूफ़ कोई न थी। लेकिन टुलू की कोशिश का जैसे अन्त नहीं।

दल की लड़कियों से टुलू कहती, 'ये बातें सुनकर तुम ख़फ़ा न हो जाना, भाई। पार्टी का काम करने जाने में अब यह सब सहना ही पड़ेगा। यह सब बातें मैंने देवेश-दा से सीखी हैं। देवेश-दा कहते हैं कि इन सब कामों में धीरज की ज़रूरत है। निराश होकर पतवार छोड़ देने से नहीं चलेगा।'

सहसा राह के बीच एक गाड़ी आकर उनके पास रुक गयी।

टुलू ने गाड़ी की ओर नज़र घुमाकर देखा—सुव्रत था। सुव्रत राय। सुरेन-दा का दोस्त। पुण्यश्लोक बाबू का लड़का।

'यह क्या, आप लोग ?'

टुलू बोली, 'आप यहाँ ?'

सुव्रत गाड़ी किनारे लगाकर सड़क पर उतर आया।

बोला, 'मेरा तो घर वह है।'

कहकर पुण्यश्लोक बाबू का घर दिखा दिया।

टुलू बोली, 'वह।'

उसके बाद ज़रा रुककर बोली, 'हम अपनी पार्टी की ओर से वोट माँगते घूम रहे हैं।'

सुव्रत बोला, 'मैं तो आपके दोस्त के घर से लौट रहा हूँ।'

'हमारा दोस्त ?'

'हाँ, सुरेन। सुरेन सान्याल। वहाँ देवेश भी था।'

उसके बाद बोला, 'जब इतनी दूर आ गयी हैं, तो एक द घर पैरों की धूल दे जाइये न!'

'गरीब का घर ? आप यह क्या कह रहे हैं ? मजाक कर रहे हैं ?'

सुव्रत बोला, 'मेरे बाबा जरूर बड़े आदमी हैं, लेकिन मैं तो गरीब हूँ। मैं तो बेकार हूँ। अभी भी बाबा के होटल में खाता हूँ।'

उसके बाद सबकी ओर देखकर बोला, 'आप सभी चलिये न। सबेरे से घूम रही हैं, जरा चाय और मामूली जलपान करके निकलियेगा।'

'लेकिन आपके बाबा को अगर मालूम होगा तो ? मालूम होने से अगर नाराज करें ?'

सुव्रत बोला, 'यह जिम्मेदारी मेरी है। आप हमारे अतिथि हैं। अतिथि की खातिर किस तरह की जाती है, यह मुझे किसी से कम नहीं मालूम। आप लोग आइये, मैं उसका प्रमाण दे दूँगा।'

टुलू बोली, 'अच्छा, ठीक है, ये लोग ठहरें, मैं ही चलती हूँ।'

सुव्रत बोला, 'क्यों, ये लोग चलें तो मैं और भी खुश हूँगा।'

टुलू बोली, 'न, इतना वक्त हमारे पास नहीं है, अभी भी हमें बहुत काम है। उसके बाद शाम को फिर कमीशन के काम से वहाँ जाना होगा। आपके घर सिर्फ मैं जाऊँगी और आऊँगी।'

'तो यही सही। चलिये। फिर समझूँगा कि उस दिन आपने मुझ पर गुस्सा नहीं किया।'

सबको यहीं रुकने को कहकर टुलू सुव्रत के साथ घर के अन्दर बागीचे में गयी। सुव्रत ने गाड़ी को अन्दर लाकर खड़ा कर दिया।

टुलू अन्दर जाकर चारों ओर का ऐश्वर्य देखने लगी। कैसा सजा हुआ घर था !

बोली, 'आप लोग बड़े आदमी हैं, यह पहले ही देवेश-दा से सुना था। सुरेन-दा ने भी बताया था। लेकिन आप इतने बड़े आदमी हैं, यह अपनी आँखों से देखे बिना विश्वास न करती।'

बागीचे के रास्ते से चलते-चलते टुलू बातें कर रही थी।

'घर पर इस वक्त कौन-कौन हैं ?'

सुव्रत बोला, 'पमिली के सिवा कोई नहीं। उसे आपने निश्चय ही देखा है। और बाबा को तो इस वक्त बहुत ज्यादा काम है। बाबा तो सबेरे ही कांग्रेस-ऑफिस चले गये हैं, चुनाव के काम से। उसके बाद वहाँ से सीधे राइटर्स बिल्डिंग।'

'और आपकी माँ ?'

सुव्रत बोला, 'मेरी माँ नहीं हैं। माँ मेरे पैदा होने के बाद ही मर गयी।'

बागीचे के बाद बरामदा था। बरामदे के पश्चिम ही जीना है।

ज़ीने से दोनों ऊपर चढ़े। ऊपर चढ़कर पहले ही बायीं ओर दरवाजा था, उसे दिखाकर सुव्रत बोला, 'यही पमिली का कमरा है।'

'पमिली देवी कहाँ हैं ?'

सुव्रत बोला, 'कमरे में ही हैं। और देखिये, यह मेरा कमरा है। और इधर आइये, यह कमरा मेरे बाबा के सोने का कमरा है।'

टुलू बोली, 'आपके बाबा के कमरे का दरवाजा खुला है।'

सुव्रत बोला, 'बाबा का कमरा इसी तरह खुला पड़ा रहता है। फिर उसके सिवा घर के फाटक पर दरवान है, नोकर-चाकर, नोकरानी वगैरह सभी पुराने हैं। और एक बात—बाबा के कमरे में वैसा कभी कुछ भी नहीं रहता।'

'कुछ भी नहीं रहता ?'

सुव्रत बोला, 'न, रुपया-पैसा तो कुछ बाबा घर पर रखते नहीं। रखने के लिए है एक रिवॉल्वर, सो वह भी लोहे की सेफ़ में है, उसी में रहता है। उसकी चाभी कहाँ रहती है, वह भी किसी को नहीं मालूम।'

'रिवॉल्वर ? रिवॉल्वर क्यों ?'

सुव्रत बोला, 'वह बहुत दिन पहले दंगे के वक़्त बाबा ने एक रिवॉल्वर का लाइसेंस बनवा लिया था। तब से ही वह रह गया। बाबा जब बाहर कहीं जाते हैं तो बीच-बीच में साथ ले जाते हैं।'

उसके बाद बोला, 'ठहरिये, आपको ज़रा चाय-वाय के लिए रघु से कह दूं।'

टुलू असमंजस में पड़ गयी, 'न, न, चाय-वाय पीने का वक़्त मुझे नहीं है। फिर उसके सिवा वे सब बाहर खड़ी हैं; अभी भी बहुत-से घरों में जाना है। उसके बाद फिर कमीशन का काम है।'

'लेकिन आप आज पहली बार हमारे घर आयी हैं। आपको कुछ खिलाये बिना न छोड़ूंगा।'

टुलू बोली, 'असम्भव। इससे अच्छा है, फिर किसी दिन आकर खा जाऊँगी, आज किसी तरह नहीं—वे बाहर खड़ी हैं, मैं चलूं।'

कहकर टुलू और न रुकी। सोचा कि रुकना पड़ा तो पमिली से भेंट हो जायेगी। बेकार में कुछ बात बढ़ेगी। उससे अकारण तेज़ी होगी।

जाते वक़्त सुव्रत ने टुलू को फाटक तक पहुँचा दिया।

बोला, 'इधर आयें तो हमारे घर आना न भूलियेगा।'

टुलू बोली, 'जिसके फाटक पर दरवान बैठा रहता हो उसके घर जब-तब जल्दी-जल्दी आते में मुझे डर लगता है।'

सुव्रत बोला, 'लेकिन सुरेन के घर ? उनके फाटक पर भी तो दरवान

बैठा रहता है।'

टुलू बोली, 'लेकिन आप तो सुरेन-दा नहीं हैं।'

सुप्रन हँसा। बोला, 'वह तो है। मेरे बाबा मिनिस्टर हैं, यह बात तो मैं भूल ही गया था।'

'तो वे जो कुछ भी हों, मैं वादा कर रही हूँ, मौक़ा और वक़्त मिलते ही आऊँगी।' कहकर फिर वहाँ न रुकी। बाहर आते ही सबने टुलू को घेर लिया।

'क्या कह रहा था, टुलू दीदी ? शायद पुण्यश्लोक बाबू का लड़का है। तुमसे इतनी दोस्ती क्यों करना चाहता है ? शायद कुछ मतलब है ?'

सभी के तरह-तरह के सवाल थे। लेकिन टुलू ने किसी के भी किसी सवाल का जवाब नहीं दिया। सिर्फ़ यन्त्र की तरह एक के बाद एक घर में जाकर नियम के अनुसार काम कर निकल आयी। उसमें विचित्र भाव-परिवर्तन हो गया, उसका कारण वह स्वयं प्रयत्न करके भी न जान सकी, या समझने का प्रयत्न ही नहीं किया। जिस घर के अन्दर गयी, वही घर मानो उसे उस समय भी घेरे हुए था। उसके बाद जब सब काम समाप्त कर फिर पार्टी-ऑफ़िस आयी तब भी मानो उसकी गर्दन से सोच और स्मृति का भूत नहीं उतरा था।

सन्दीप-दा भी थोड़े आश्चर्य में थे। बोले, 'क्या हुआ टुलू, बहुत थक गयी हो क्या ? तुम्हारी तबीयत तो ठीक है ?'

लेकिन पार्टी-ऑफ़िस में किसी को ज़्यादा बात करने या वक़्त भी नहीं था। दिन जितने आगे बढ़ रहे थे, उतना ही काम का पहाड़ चारों ओर जमा होता जा रहा था। एक चुनाव के माने हज़ारों आदमियों की दस बरस की आयु की हानि ! हज़ारों आदमी पार्टी के लिए जान लगाकर एक आदमी का चुनाव लड़ेंगे। उस आदमी के जीतने से जैसे हम लोगों को अक्षय स्वर्ग मिल जायेगा ! उस आदमी के मन्त्री बनने से मानो हम सबको नौकरियाँ मिल जायेंगी, हम सबको घर मिल जायेंगे, गाड़ियाँ मिल जायेंगी, हम सुख-शान्ति से गृहस्थी चला सकेंगे !

तो यह भी शायद अनिवार्य है। बीसवीं सदी के पाँचवें दशक में आकर भारतवर्ष का आदमी शायद यहीं आकर अटक गया है। नहीं तो सुरेन, देवेश, पमिली, सुखदा को लेकर यह उपन्यास लिखने का उद्देश्य ही क्या होगा ?

शाम के क़रीब टुलू फिर कमिश्नर के चेम्बर में जाकर बैठ गयी। उस दिन भी एक-एक कर गवाहों की सुनवाई चल रही थी और वादी-प्रतिवादी पक्ष के वकील-बैरिस्टर जिरह कर रहे थे। वह भी एक तमाशा

था। सिर्फ़ तमाशा ही नहीं, मज़ाक भी था। आदमी को झूठी बातें सुनाने का, आदमी को शान्त करने का यह एक राजनीतिक प्रहसन था। प्रहसन का अभिनय था। और खर्च? खर्च का हिसाब तो कोई माँगेगा नहीं। खर्च देंगे हम, तुम और शहर के, गाँव के करोड़ों निरीह मेहनत करने वाले लोग।

सहसा नज़र पड़ते ही टुलू ने देखा कि कुछ दूर पर ही सुरेन-दा और पमिली पास-पास बैठे हैं। दिल जैसे धक् हो गया। इस बीच वे लोग कब एक-साथ मिले और यहाँ आ पहुँचे!

उस वक़्त सामने बहुत ज़ोरों की जिरह चल रही थी। और भी गवाहों के बयान हो रहे थे। सारे कमरे में लोगों की दबी आवाज़ों में गुन-गुन कर बातचीत चल रही थी। अखबारों के रिपोर्टर घिस-घिस कर काग़ज़ों पर लिखते जा रहे थे। पार्टी के 'स्वाधीनता' अखबार के रिपोर्टर भी वहाँ थे। लेकिन टुलू की नज़र किसी और तरफ़ नहीं गयी। वह उन्हीं दोनों की ओर एकटक देखने लगी।

सहसा लगा कि सुरेन-दा ने उसे देख लिया है। टुलू आँखें फेरकर फिर सामने की ओर देखने लगी। उसके सारे बदन में ऐंठन-सी होने लगी। लगा कि वह शायद वहीं बेंच से गिर पड़ेगी। अगर सचमुच गिर पड़े तो क्या होगा? लेकिन वह सिर सीधा क्यों रख नहीं पा रही है? उसे हो क्या गया है? ऐसा क्यों हुआ?

सहसा उसे सुनायी दिया, 'थोड़ा पानी, सिर पर थोड़ा पानी छोड़ो।'

पास से कोई एक आदमी बोला, 'अरे, इनकी पार्टी के सब लोग कहाँ गये?'

फिर किसी के गले की आवाज़, 'आप लोग यहाँ से हट जायें, थोड़ी हवा आने दें, लड़की बेहोश हो गयी है। हटिये।'

चारों ओर जैसे गड़बड़ी मच गयी। आवाज़ें धीरे-धीरे हलकी होती जा रही थीं। फिर उसके बाद सब चुप। फिर किसी ओर कोई गड़बड़, कोई आवाज़ नहीं थी।

दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट की गली में दोपहर समाप्त होकर शाम होने वाली

थी। मानदा दासी का उसी समय असली काम-काज होता। उस समय कमरे-कमरे में जाकर तकाज़ा करना पड़ता। लड़कियाँ सारी रात जागकर दिन में सोती। एक बार सो जाने पर फिर कोई पता न रहता। सोया सो मरा। उस वक्त किसी के बदन पर साड़ी-ब्लाउज़ का ठीक से रहना भी मुश्किल होता।

तब मानदा जाकर सबको ठेल-ठालकर उठा देती।

कहती, 'ओ री, ओ लड़की, उठ, उठ, वक्त हो गया।'

दरवाज़ा-खिड़की-बन्द कमरों में वक्त हो जाने का पता किसी को नहीं रहता। एक बार आँखें खोलकर देखती, फिर बदन ऐंठती।

'ओ रे, उठ, उठ ! देख क्या रही है ? चार बज गये। नल के नीचे जा, जाकर हाथ-मुंह धोकर चाय पी ले।'

नींद से उठकर चाय पीने का लालच कोई छोटा लालच नहीं होता। नींद के बाद गरम चाय मुंह में जाने पर सारी रात की आनन्द की थकान मिट जाती।

मानदा का हर दिन का यही रोज़मर्रा का काम था।

कहती, 'क्यों लड़कियो, रात को मैं भी तो कभी जागती थी, लेकिन ऐसी मुर्दा होकर तो कभी नहीं सोयी। यह तुम्हारी नींद तो बिल्कुल मौत-सी नींद है।'

उस वक्त एक-एक कर सभी उठती। एक-एक कर सब नल के नीचे जाती। तब मानदा मौसी की रसोई में कटोरा-कटोरा चाय तैयार होती। सभी एक-एक कर आकर अपना-अपना कटोरा लेकर अपने-अपने कमरे में चली जाती। चाय पीकर जूड़ा बाँधती। उसके बाद कपड़े-लत्ते धोकर बदन साफ करती। बदन साफ कर कमरे में आकर सजना-संवरना रहता। फिर सभी तैयार हो जाती।

लेकिन सुखदा के कमरे में जाकर मानदा दासी ताज्जुब में पड़ गयी। सुखदा कहाँ गयी ?

झटपट भूतों की माँ को चिल्ला-चिल्लाकर पुकारा, 'बुढ़िया, ओ बुढ़िया !'

तो बुढ़िया तो बुढ़िया ठहरी। सचमुच धिनाक बुढ़िया। हिलते-काँपते उसे एक अरसा हो गया था।

बुढ़िया के पास आते ही पूछा, 'क्यों, इस कमरे की मेरी लड़की कहाँ गयी ? सुखदा ? क्या नल के यहाँ गयी है ?'

बुढ़िया के बुढ़िया होने से क्या ! कौन कब कहाँ क्या कर रहा है, इसका हिसाब उसे याद रहता।

बोली, 'नल के नीचे तो नहीं है, वहाँ और लड़कियाँ गयी हैं।'

'तब ? कमरे में भी नहीं है, नल के नीचे भी नहीं है, तो गयी कहाँ ?'

मानदा मौसी आगे बोली, 'तो देख तो, छत पर हवा खाने तो नहीं गयी है।'

सो छत पर भी जाकर बुढ़िया देख आयी। वहाँ भी नहीं थी। सुखदा छत पर जाने वाली लड़की तो नहीं है। किसी के कमरे में भी नहीं जाती। कल रात जो लोग मौज उड़ाने इस घर में आये थे, जिस-जिस के कमरे में घुसे थे, उनके सवेरे तड़के चले जाने के बाद घर फिर खाली हो गया था। इस बस्ती के मकानों में इसीलिए दोपहर को सन्नाटा छाया रहता है। घर के दरवान से कुत्ते तक इसीलिए बेफ़िक्र हो खर्राटे लेकर सोते हैं। उस समय किसी की कोई ज़िम्मेदारी नहीं रहती।

लेकिन अब ? इस तीसरे पहर ?

इस तीसरे पहर ही तो सब शुरू होता है। अब से शुरू होकर समाप्त होगा वही कल तड़के। इस वक़्त सुखदा नहीं मिल रही है। तो वह गयी कहाँ ?

लेकिन किसी को भी पता नहीं कि कल रात सुखदा के कमरे में कौन आया था ? शकल ज़रूर जानी-पहचानी थी। लेकिन उसका नाम-धाम क्या है, वंश परम्परा क्या है, वह किसने पूछा या जानना चाहा था ? एक दुबला बीमार-सा आदमी आकर बहुत सोच-विचारकर मौसी के हाथों पर रुपये रखकर सुखदा के कमरे में गया था। वैसा तो रोज़ ही होता था। कौन उसका हिसाब रखता है ? इतना हिसाब रखने से औरतों का क्या यह कारबार चल सकता है ?

उसके बाद ? उसके बाद वह आदमी यहाँ से कब गया ?

'बुलाओ, दरवान को बुलाओ।'

दरवान ने आकर सलाम ठोंका।

'दरवान, तुम्हें पता है, सुखदा के कमरे में जो आदमी गया था वह कब यहाँ से निकल गया ?'

दरवान ने क्या सबको पहचान रखा है कि पूछते ही जवाब दे सके ?

दरवान बोला, 'मौसी, वह तो मुझे नहीं मालूम।'

मानदा बिगड़ गयी। बोली, 'तो सोनागाछी में तुम कैसी दरवानी करते हो ? मैंने तुम्हें शकल देखने के लिए रखा है ? जाओ, नौकरी छोड़ दो। जाकर अपने छपरा जिले में खेती-बारी करो। मुझे और तंग मत करो, हाँ।'

लेकिन इन्हें पता न हो, सुखदा को पता है कल रात कौन आया था। पहले नहीं समझ सकी। उसके बाद नजदीक आते ही चौंक पड़ी। एक क़दम पीछे हटकर बोली थी, 'तुम ?'

कालीकान्त विश्वास ने चुप रहने का इशारा किया, 'चिल्लाना मत, चिल्लाने से तुम्हारा भी नुक़सान है, मेरा भी नुक़सान है। बड़ी मुश्किल से, मौसी के हाथ पर दस रुपये रखकर आया हूँ। चिल्लाना मत।'

सुखदा बोली, 'लेकिन तुम यहाँ क्यों आये ? तुम फिर क्यों आये ?'

कालीकान्त विश्वास दाँत निकालकर हँसने लगा।

बोला, 'क्यों, तुम नहीं चाहती कि मैं आऊँ ? छोटे-दा तो मर गये, पता है ?'

सुखदा बोली, 'मर गये, आफ़त टली, और तुम नहीं मरे ? तुम मर जाते तो सारी मुसीबत ख़त्म हो जाती।'

कालीकान्त विश्वास बोला, 'मेरे मरने से तुम विधवा हो जाती, इसीलिए नहीं मरा।'

'ओ रे, मेरे ऊपर तुम्हारी बड़ी दया है !'

कालीकान्त विश्वास बोला, 'मुझे तुमने अक्सर गँजेड़ी, घुड़दौड़ का जुआरी कहा। और तुम ? तुम शायद सती हो ?'

'तो क्या तुम सच सुनना चाहते हो ?'

'हाँ, सुनना चाहता हूँ।'

'मैं सोनागाछी की वेश्या हूँ।'

कहकर सहसा साड़ी का आँचल दाबकर ज़ोरों से रोने लगी। उसके बाद उसका यह रोना रुका ही नहीं।

कालीकान्त बोला, 'यह ढंग, यह क्या तमाशा है, लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे ? अरे, चुप हो जाओ, चुप हो जाओ,' कहकर सुखदा की पीठ पर हाथ फेरकर दिलासा देने लगा।

बोला, 'छि:, छि:, तुम्हें क्या बिलकुल समझ नहीं ? मैं तुम्हारा पति हूँ, यह भूल गयी ? रोने की क्या बात है ? मैं तुम्हें लिवा जाने को आया हूँ।'

सुखदा ने सहसा मुँह पर से आँचल हटा दिया। बोली, 'लेने आये हो तुम ? तुम मुझे लेने आये हो ? लेकिन मुझे ले जाकर तुम मुसीबत में पड़ जाओगे, यह बताये देती हूँ।'

'क्यों ?'

'मैं चोर हूँ न ! अदालत में मेरे नाम मुक़दमा चल रहा है।'

कालीकान्त बोला, 'तो चले, मैं थाने से, पुलिस से नहीं डरता। वह

सब तो मैनेजर साले का काम है। वह सोचता है कि मैं कुछ नहीं जानता ? मेरे नाम पर भी तो साले ने वारण्ट कटवाये हैं। इसीलिए तो मैं छिपा-छिपा फिर रहा हूँ। नहीं तो क्या मैं तुमको यहाँ इस तरह रहने देता ? कब का तुम्हें छुड़ाकर ले जाता।'

उसके बाद थोड़ा रुककर बोला, 'लेकिन ये सब बातें करने मैं यहाँ तुम्हारे पास नहीं आया हूँ। मैं तुमको एक खबर देने आया हूँ।'

'क्या खबर ?'

कालीकान्त बोला, 'तुम्हारी माँ जी तो अच्छी हो गयी हैं। बीमारी दूर हो गयी है।'

'उसका मतलब ?'

'हाँ, उस मैनेजर ने तुम्हारी माँ जी का इलाज कराके अच्छा कर दिया है।'

'तो सहसा मैनेजर बाबू ने माँ जी को अच्छा कर दिया ?'

'मैनेजर ने अपने ही स्वार्थ के लिए यह किया है। अब माँ जी से अपने भांजे के नाम सारी जायदाद लिखा लेगा।'

'वह इतने दिनों में लिखा नहीं ली होगी ?'

'लिखाता कैसे ? इतने दिनों तक माँ जी में दस्तखत तक करने की ताक़त नहीं थी। उठ-बैठ ही नहीं सकती थीं, इस वक़्त एक बार माँ जी के पास तुम्हारा जाना ठीक है। एक बार अगर तुम्हारी बात पर मन भीग जाये तो बुढ़िया तुमको भी कुछ जायदाद दे जा सकती है।'

सुखदा बात सुनकर चुप रही।

उसके बाद बोली, 'लेकिन मैंने तो माँ जी का सन्दूक खोलकर गहने चोरी किये थे ?'

'अरे, धत्, तुम भी अजीब बुद्धू हो ! ये सब बातें क्या अब बुढ़िया को याद होंगी ? वे सब बीमारी की हालत में भूल-भाल गयी; इसी वक़्त ही जाना अच्छा होगा।'

बात सुखदा को अखरी नहीं। अगर कुछ रुपये मिल जायें तो फिर मौसी के इस प्यार का बोझ नहीं लादे फिरना पड़ेगा। मौसी के दुलार पर उसे घृणा हो गयी थी। यह और कितने दिनों तक यहाँ चला सकेगी ?

सुखदा ने पूछा, 'मैं जाऊँ ? जाने पर मुझे भगा तो नहीं देंगी ?'

कालीकान्त बोला, 'न, न, भगा क्यों देंगी ? तुम ज़रूर जाना। जाकर देखोगी कि तुम्हें कितना प्यार करती हैं। और वह मैनेजर का भांजा ! वह साला तो लौंडिया लेकर आज मजे उड़ाता फिर रहा है। उसका इधर कोई ख़याल ही नहीं है। उस मैनेजर को ही सारा डर है।

लेन।

माधव कुंडू लेन में भी उस समय भरी दुपहरी की निस्तब्धता थी।

बहादुरसिंह ने सहसा खड़े हो एक सलाम किया। ताज्जुब से पूछा, 'दीदीमणि!'

सुखदा ने पूछा, 'तुम अच्छे हो, बहादुर?'

बहादुर बोला, 'हाँ दीदीमणि, अच्छा हूँ।'

'माँ जी कहाँ हैं? ऊपर हैं? माँ जी से ज़रा मिलने के लिए आयी हूँ।'

बहादुर बोला, 'मैं धनंजय को खबर देता हूँ।'

सुखदा बोली, 'न, तुम आराम करो, किसी को खबर न देना होगी। मैं अकेली ही ऊपर जा सकती हूँ।'

कहकर सुखदा जनाने की ओर चली गयी।

अन्दर घुसते ही जीने के किनारे ही तरला से भेंट हो गयी।

'अरे, दीदी!'

तरला के मुँह में बात जैसे अटककर रह गयी। उसकी आँखों से सहसा झर-झर आँसू बहने लगे। बोली, 'इस तरह से हम लोगों को भूल जाना होता है क्या, दीदी?'

सुखदा बोली, 'सुना है, अब माँ जी अच्छी हो गयी हैं?'

'ओ माँ! अच्छी कहाँ! माँ जी तो बात भी नहीं कर सकती हैं, आदमियों को भी पहचान नहीं पातीं। इस कमरे में जाकर देखो न, लेटे-लेटे ही सब करती हैं। तभी सोचती हूँ कि ऐसी भली औरत को यह सब क्योंकर हुआ? माँ जी ने तो किसी का कभी कोई अहित नहीं चाहा, फिर उनको ऐसा कैसे हुआ?'

सुखदा ने और देर न की। सीधे माँ जी के कमरे में घुस गयी। वही सोने का कमरा, वही खाट, वही माँ जी! पहले जैसा देखा था ठीक वैसी ही पड़ी हैं। दोनों आँखें बन्द हैं।

सुखदा धीरे-धीरे चारपायी की ओर बढ़ गयी।

माँ जी को एकटक देखने लगी। और भी दुबली, और भी बुड्ढी हो गयी थीं। शरीर बिस्तर से मिल गया था। और कभी इनका क्या रूप था! उम्र बहुत हो गयी थी, फिर भी रूप ज़रा भी कम नहीं हुआ था। सिर की ओर फ़र्श पर बादामी लेटी थी।

सुखदा को देखकर उसने भी उठकर बैठने की कोशिश की।

बोली, 'ओ माँ, कौन? सुखदा?'

सुखदा बोली, 'उठो मत, तुम तकलीफ़ कर उठो मत। तुम लोगों से

जरा मिलने चली आयी।'

बादामी आँखों से ठीक से देख नहीं पाती थी। कानों से भी कम सुनती थी। बोली, 'अब क्या करने आयी है, सुखदा! मैं बची हूँ और वह तुम्हारी माँ जी जाने को बैठी हैं। भगवान अंधा है, भगवान अंधा है। उसके बदले मुझे नहीं उठा रहा है। मैं अब कब तक अपना फूटा भाग्य लेकर जीऊँ?'

कहकर बुढ़िया आँचल से आँखें पोंछने लगी।

उसके बाद कुछ ठीक होकर बोली, 'इन माँ जी को मैं ही ब्याह के दूसरे दिन साथ ससुराल ले गयी थी। भगवान से यही तो कहती हूँ कि ठाकुर, अब मुझे उठा लो। सो भगवान क्या मेरी तरह अभागिन की बात सुनेंगे?'

सुखदा तब भी माँ जी के मुँह की ओर एकटक देख रही थी। माँ जी शायद अधिक दिनों नहीं जियेंगी। वहीं सिर के पास ही लोहे का सन्दूक था। उसके अन्दर क्या अब भी रुपये-पैसे हैं? गहने-पत्तर हैं? अगर हैं तो चाभी किसके पास है? कौन ताला खोलता और बन्द करता है?

बादामी सहसा बोली, 'आज मत जाना। आज रात तुम यहीं रह जाओ।'

तरला पीछे खड़ी थी। वह भी बोली, 'हाँ दीदी, बादामी ने ठीक ही कहा, दो दिन यहाँ रह जाओ। हम कितनी तकलीफ में हैं, तुमसे क्या कहें, दीदी!'

सुखदा ने पूछा, 'माँ जी क्या बात नहीं कर सकती हैं?'

बादामी बोली, 'बात क्या करेंगी बेटी, माँ जी हाथ-पैर तक तो हिला नहीं सकतीं। जिस तकलीफ में हम दिन काट रहे हैं, वह हम ही जानते हैं।'

सुखदा सहसा बोली, 'मैं अगर यहाँ कुछ दिन रहूँ बादामी दीदी, तो तुम लोगों को कुछ आपत्ति है?'

तरला बोली, 'ओ माँ, यह बात क्यों कह रही हो दीदी, तुम क्या इस घर की कोई परायी हो! यह तो तुम्हारा अपना घर है। हम ही तो पराये हैं। हम बाहर से इस घर में पेट की खातिर ही मेहनत करने जमे हुए हैं।'

बातें सुनते-सुनते सुखदा की आँखें भर आयीं।

बोली, 'यह बात मत कहो तरला, मैं भी परायी हूँ, तुम्हें कुछ मालूम नहीं, इसी से ऐसा कह रही हो।'

तरला बोली, 'छि:, यह बात कहने की है। तुम गंगा बुआ की कितनी प्यारी नातिन हो। तुम कितनी छोटी थीं, मैंने तुम्हें बहुत बचपन से देखा है। तुम्हारा कमरा अब भी साँय-साँय कर रहा है। उस कमरे में जाती हूँ तो मेरा मन बस रोने को होता है।'

'अच्छा तरला, मेरे चले जाने के बाद किसी ने मेरे बारे में कुछ कहा नहीं ?'

तरला बोली, 'क्यों, कौन क्या कहेगा ?'

सुखदा बोली, 'मुझे पुलिस पकड़ ले गयी थी तो माँ जी ने कुछ नहीं कहा ?'

'माँ जी को उस वक़्त क्या कुछ होश था ?'

'लेकिन बाद में जब होश हुआ ?'

'बाद में भी फिर होश नहीं आया। तभी से तो ये बेहोश हैं।'

सुखदा ने सहसा मानो मन-ही-मन तय कर लिया था। बोली, 'देखो तरला, तो मैं आज यहाँ रहूँगी। आज रात ही।'

तरला बोली, 'जमाई बाबू अगर कुछ न कहें तो तुम रहो न ! और फिर आज ही क्यों, कुछ दिन रुको न !'

'होश आने पर माँ जी ग़ुस्सा तो न होंगी ?'

तरला बोली, 'सुखदा दीदी, तुम क्या कहती हो, उसका ठिकाना नहीं। तुम अपनी उन्हीं माँ जी को भूल गयी हो ?'

सुखदा बोली, 'लेकिन जब सुनेंगी कि मैं चोर हूँ, मैंने चोरी की है तो ?'

तरला बोली, 'हाय राम, किसने कहा कि तुम चोर हो ?'

सुखदा बोली, 'इस घर के सभी तो यही जानते हैं। धनंजय, दुखमोचन, अर्जुन सभी तो जानते हैं। और मैनेजर बाबू भी तो जानते हैं।'

तरला बोली, 'तो जो जानें सो जानें। वे तो बाहर के हैं। वे तो पराये हैं। तुम्हारे मुक़ाबले बताओ तो और कौन अपना है ? कोई कुछ कहे तो तुम्हारा क्या ? तुम दूसरों की बात क्यों सुनोगी ?'

कहकर सुखदा का हाथ पकड़कर खींचा। बोली, 'चलो, चलो, अपने कमरे में चलो। वे सब बातें मत सोचो।'

सुखदा को उसके कमरे में ले जाकर तरला बोली, 'यह तुम्हारा घर है, तुम्हारा कमरा है। तुम इस घर में रहोगी, उसके लिए किसी से कहना-सुनना क्या ? लो, अभी ज़रा लेट जाओ, दोपहर को जलती धूप में आयी हो, ज़रा आराम कर लो।'

तरला अपने काम से चली जा रही थी।

सुखदा ने पुकारा। बोली, 'एक बात और है, तरला।'

तरला घूमकर खड़ी हो गयी।

'अच्छा, वह है ?'

'कौन ?'

'वही मैनेजर बाबू का भांजा, सुरेन ?'

तरला बोली, 'हाय राम, वह नहीं रहेगा तो जायेगा कहाँ ? सभी हैं। तुम्हारे सिवा इस घर में और सभी है। मैं जा रही हूँ दीदी, माँ जी को जाकर फिर अभी दवा खिलाना होगी।'

सहसा जीने से मैनेजर बाबू की आवाज सुनायी पड़ी।

'ओ तरला, तरला !'

सुखदा का सारा शरीर जैसे सुन्न हो गया। तो लगता है, मैनेजर बाबू को पता लग गया कि वह आ गयी है। सुखदा बिस्तर पर बैठी थी। मैनेजर बाबू आ रहे हैं, सुनकर वह उठ खड़ी हुई।

'हाँ रे तरला, सुखदा दीदी आयी है शायद ? किधर, कहाँ है, कहाँ है ?'

कहते-कहते बरामदा पार कर सीधे सुखदा के कमरे के सामने आ पहुँचे।

बोले, 'कहाँ, मेरी सुखदा बेटी कहाँ है ?'

तरला भी मौन थी, वैसी ही सुखदा भी थी।

भूपति भादुड़ी लेकिन रुकने वाले आदमी नहीं थे। सुखदा को देखकर बोले, 'अभी-अभी मैंने बहादुर से सुना बेटी, कि तुम इतने दिनों के बाद आ गयी हो। सो आकर अच्छा ही किया। और क्या देखने आयी हो, बेटी ? इस घर का हाल उसी तरह है ! तुम आ गयी हो, अपनी आँखों से सब देख जाओ। तुम्हारे पास जाने-जाने को कर रहा था, बेटी ! अब अच्छा ही हुआ कि तुम खुद ही आ गयी।'

उसके बाद तरला की ओर देखकर बोले, 'हाँ जी तरला, माँ जी को तुमने दवा खिला दी ?'

तरला बोली, 'अभी खिलाने जा रही हूँ।'

भूपति भादुड़ी तड़प उठे, 'अब खिलाने जा रही हो ? यह देखो ! देखता हूँ कि इसी तरह तुम माँ जी को मार डालोगी। मैं जिधर न देखूँ उधर ही तबाही ! जाओ, जाओ, जल्दी दवा खिला आओ।'

कहते-कहते फिर सुखदा की ओर देखा।

बोले, 'देखा न बेटी, तरला की अकल को देखा ? मैं अकेला आदमी, मुझे हजारों झमेले, किधर-किधर देखूँ ?'

तरला तभी माँ जी को दवा खिलाने कमरे से चली गयी थी।

सुखदा ने उस वक्त भी मैनेजर बाबू की बात का कोई जवाब नहीं दिया। भूपति भादुड़ी नीचे उतरने जाते हुए भी लौटकर खड़े हो गये।

बोले, 'तुमसे एक बात पूछना भूल गया। तुम जो यहाँ चली आयी, वह मौसी को मालूम है ? माने कि मौसी से कहकर आयी हो ?'

सुखदा बोली, 'नहीं।'

'नहीं के माने ?'

सुखदा बोली, 'उस वक़्त घर में सब सो रहे थे।'

'सो अगर सो रहे थे तो किसी को जगाकर-कहकर क्यों नहीं आयी ?'

सुखदा ने अपने को और संभाल लिया। बोली, 'तब तो मौसी मुझे किसी तरह न आने देती।'

भूपति भादुड़ी इस तरह के स्पष्ट जवाब से जैसे कुछ चुप हो गये। ऐसी हिम्मत लड़की में आयी कहाँ से ? पहले तो लड़की इतनी तेज़ नहीं थी।

उन्होंने कहा, 'लेकिन बिटिया, तुम्हारे नाम पर जो मुक़दमा चल रहा है, वह तुम्हें मालूम नहीं था क्या ? इसके बाद अगर कचहरी से तुम्हारे नाम वारंट कटे तो क्या करोगी ? तब पुलिस आकर तुम्हारे हाथों में हथकड़ी पहना देगी। तब तो मैं तुम्हें न बचा सकूंगा। तुम किसकी ग़लत सलाह से यहाँ आयी हो ? किसने तुम्हें यहाँ आने की सलाह दी थी, बताओ तो ? क्या कालीकान्त ने ? कालीकान्त विश्वास ने...?'

सुखदा चुप रही। उसने कुछ भी जवाब नहीं दिया।

भूपति भादुड़ी बोले, 'क्यों, कुछ जवाब नहीं दे रही हो, बेटी ? जवाब दो, कम-से-कम मुझे मालूम हो जाये कि तुम्हें ग़लत सलाह देने वाला कौन है।'

'आप जो चाहें करें, मेरी तबीयत थी, मैं यहाँ आ गयी।'

'तुम्हारी तबीयत ?'

सुखदा बोली, 'मुझे और परेशान मत कीजिये। इस वक़्त आप मेरे सामने से चले जाइये।'

भूपति भादुड़ी अपमान से भड़क उठे। लेकिन मुंह और मन में जो [illegible] रहा था उसे कहा नहीं।

बोले, 'ठीक है, देखूं, मैं इसका क्या इन्तज़ाम कर सकता हूँ ! मे[illegible] बहुत-सा रुपया नरेश दत्त के पेट में चला गया, बहुत-सा रुपया पुलिस [illegible] पेट में गया, और बहुत-सा रुपया गया मानदा दासी के पेट में। अब देख[illegible] हूँ कि अपनी बूढ़ी हड्डियों से और क्या जादू दिखा सकता हूँ।'

कहकर ज़ीने से जल्दी-जल्दी उतर गये।

सामान्यत: ऐसे मामलों में वकील, एटॉर्नी, पुलिस को अच्छी-खासी रक़म मिल जाती है। दुनिया में जायदाद के लिए जितना झंझट बढ़े लोगों को उतना ही फ़ायदा है।

भूपति भादुड़ी ने और देर न की। घरों के किराये के रुपये उस वक़्त भी उनके कैश-बॉक्स में थे। उसमें से दो सौ रुपये जेब में डाले। उसके बाद छाता उठाया। पैरों में चप्पलें डालीं। उसके बाद 'दुर्गा, दुर्गा' कर सड़क पर निकल पड़े।

हरनाथ बाबू इस वक़्त कचहरी में थे। कचहरी में अचानक भूपति भादुड़ी को देखकर वकील बाबू ताज्जुब में पड़ गये।

बोले, 'यह क्या मैनेजर, तुम ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'जी, आपके ही पास आया हूँ।'

हरनाथ बोले, 'अब क्या हुआ ? माँ जी को होश आ गया ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'जी वह नहीं, एक और मुसीबत आ गयी। एक और भागीदार घर में आ धमका है।'

'कौन भागीदार ?'

'वही जो एक औरत थी न घर में, जिसे उस चोरी का आसामी बनाकर घर से हटा दिया था, वह अचानक फिर आज आ पहुँची है।'

'वही सुखदा दासी ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाँ, उस बार आपकी सलाह से उसे मानदा दासी के पास रख आया था। वहाँ से भाग आयी है। अब क्या होगा ? यह तो देखता हूँ कि मेरा सारा रुपया ही डूबने जा रहा है।'

हरनाथ बाबू बोले, 'ठीक है, अभी मैं ज़रा व्यस्त हूँ। रात को तुम मेरे घर आना। कुछ तरकीब निकालेंगे।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'न, और देर मत कीजिये वकील बाबू, अभी कुछ तरकीब बताइए। एक दिन भी और अपने घर में न रहने दूंगा उसे। कौन जाने किस मतलब से आयी है ! मुझे लगता है कि उसके पीछे वही बदमाश जमाई है। वही कालीकान्त विश्वास। साला नरेश दत्त मेरे पीछे कैसा बाँस लगा गया है ! खुद मर गया लेकिन साले को मेरे पीछे डाल गया।'

'ठीक है, एक काम करो।'

'क्या काम ?'

'मानदा दासी से मेकदान चार सौ बीस का एक मुक़दमा कचहरी में ठोक देने को कहो कि चोरी-चकारी कर सुखदा दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट के घर से भाग गयी।'

तरकीब बुरी नहीं थी। भूपति भादुड़ी का दिमाग कुछ ठंडा हुआ। बोले, 'ठीक है, मैं रात को आपके घर आऊँगा।'

लेकिन बात समाप्त होने के पहले ही हरनाथ बाबू जल्दी से बाहर निकल आये। एक मुवक्किल लिये रहने से उनका तो काम नहीं चलेगा।

भूपति भादुड़ी ने कचहरी से फिर माधव कुंडू लेन के घर की ओर पैर बढ़ाये। मन को जैसे बड़ी शान्ति मिली हो। मानदा दासी से एक केस करवा देना होगा तभी यह औरत क़ाबू में आयेगी।

लेकिन घर आकर भी बात दिमाग़ में उमड़ने-घुमड़ने लगी। जैसे आज किसी तरह शाम ही नहीं होगी। शाम होते ही वकील बाबू के घर जाकर सारा बंदोबस्त पक्का करना पड़ेगा।

शाम जब होने-होने को हो रही थी, भूपति भादुड़ी निकलने ही वाले थे तभी सहसा बाहर से जैसे किसी ने पुकारा, 'मैनेजर बाबू, मैनेजर बाबू!'

भूपति भादुड़ी ने चिल्लाकर जवाब दिया, 'कौन?'

'जी, मैं धनंजय हूँ।'

'धनंजय, क्या बात है?'

दरवाजा खोलते ही भूपति भादुड़ी धनंजय का चेहरा देखकर चौंक पड़े।

'क्यों रे, माँ जी को कुछ हो गया है क्या?'

धनंजय बोला, 'जी, भांजे बाबू...!'

'भांजे बाबू? मेरा भांजा सुरेन? उसको क्या हुआ?'

'जी, सुरेन बाबू ने खून कर दिया।'

भूपति भादुड़ी के सिर पर मानो आसमान फट पड़ा।

बोले, 'तू कह क्या रहा है? सुरेन ने किसका ख़ून किया है? तुझे कहाँ से पता चला? किसने तुझे खबर दी?'
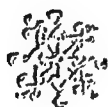
इंसान क्या आसानी से इंसान बन जाता है? लेकिन पेड़-पौधे आसानी से पेड़-पौधे हो जाते हैं। पशु-पक्षी भी आसानी से पशु-पक्षी बन जाते हैं। बहुत सुख, बहुत पीड़ा सहकर, तमाम रुकावटों को जीतकर ही इंसान इंसान बनता है। इसी इंसान बनने की कोशिश में ही सुरेन एक दिन बेसहारा होकर गाँव से इस शहर में आ पहुँचा था। उसके बाद कितने विराग, कितने अनुराग के समुद्रों का अवगाहन कर जहाँ आकर खड़ा था, वहाँ से फिर लौट न सका। जितनी भी बाधाएँ आयें, उसे तब उन्हें पार करना ही होगा।

सिर्फ भूपति भादुड़ी ही नहीं, बात सबके ही कानों में पड़ी। निरीह लड़के सुरेन ने किस तरह ऐसा काम कर दिया? उसका उद्देश्य क्या था?

देवेश पार्टी के काम से वीरभूम गया था।

सियालदह स्टेशन के प्लेटफार्म पर उतरते ही उसे खबर मिली।

पार्टी के लड़के-लड़कियों में कोई-कोई स्टेशन पर गये थे। देवेश-दा को देखते ही एक आगे बढ़ गया। देवेश ने पूछा, 'क्या खबर है?'

'सुना है देवेश-दा, सुरेन-दा ने खून किया है।'

'खून?'

'हाँ, सुरेन-दा ने प्रवेश सेन का खून कर दिया है।'

देवेश अवाक् हो गया। बोला, 'प्रवेश सेन का? प्रवेश सेन ने क्या किया था? क्या किया था प्रवेश सेन ने?'

'यह नहीं मालूम।'

'कब खून किया?'

'आज ही तीसरे पहर। मैंने बस में आते-आते सुना।'

'किस तरह खून किया?'

'सुना है, रिवॉल्वर से। कहाँ से रिवॉल्वर मिला, यह भी समझ में नहीं आया।'

देवेश बोला, 'तू जा, मैं देखता हूँ, मैं ज़रा जा रहा हूँ माधव कुंडू लेन। क्या खबर है, यह मालूम करके आना होगा।'

उसके बाद देवेश वहाँ नहीं रुका। सामने चुनाव का झंझट है। सारे देश के लोगों को सावधान करना होगा। वह अकेला आदमी किधर-किधर देखे! मोड़ पर से एक बस लेकर सीधे माधव कुंडू लेन आकर उतरा। दूर से दिखायी पड़ा कि घर के फाटक के सामने जैसे बहुत लोगों की भीड़ जमा थी।

देवेश सामने आ गया।

फाटक के सामने बहादुर खड़ा है। किसी को घुसने नहीं दे रहा था। देवेश ने जाकर लड़कों से पूछा, 'यहाँ क्या हुआ है, भाई?'

एक आदमी बोला, 'इस घर में पुलिस तलाशी लेने आयी है।'

'क्यों?'

सज्जन बोले, 'आपने कुछ नहीं सुना? ग्रे स्ट्रीट में इस घर के लड़के ने एक सज्जन का खून किया है।'

देवेश ने पूछा, 'लेकिन वह लड़का कहाँ है?'

सज्जन बोले, 'उसे भी पुलिस पकड़कर ले आयी है। घर के अन्दर गया है।'

घर के अन्दर किसी को घुसने नहीं दिया जा रहा था। लेकिन सबका आग्रह था कि जिसने ख़ून किया है उसे देखेंगे। इस घर के लड़के सुरेन को उन्होंने पहले कभी न देखा हो, ऐसा नहीं था। उन्हें पता है कि वह इस घर के बूढ़े मैनेजर बाबू का भांजा है। छुटपन से ही वे उसे देखते आये हैं। लेकिन आज आसामी सुरेन सान्याल को देखने का जैसे बड़ा लोभ हो रहा है। वह देखेंगे कि ख़ूनी आदमी कैसा दिखायी देता है। जो आदमी ख़ून करे उसमें ज़रूर ही कुछ विशिष्टता होगी।

तरह-तरह की बातें मुंह-से-मुंह तक फैल रही थीं। कोई कहता था कि रिवॉल्वर से ख़ून किया। फिर कोई कहता कि छुरे से किया। कोई कहता कि बम मारकर किया।

लेकिन ख़ून किया ही क्यों?

एक आदमी बोला, 'मशाई, यह पोलिटिकल झगड़ा है। सुरेन कम्युनिस्ट पार्टी का मेम्बर था न।'

देवेश पास खड़ा सब सुन रहा था। उसे किसी बात पर विश्वास नहीं हो रहा था। प्रवेश सेन का ख़ून करेगा ही क्यों? और उसके सिवा सुरेन तो उस तरह का लड़का ही नहीं है। वह जितना अनुभव करता था, उससे कम व्यक्त करता था। और रिवॉल्वर से ही अगर हत्या की तो उसे रिवॉल्वर मिला कहां से? किसने उसे रिवॉल्वर दिया? उसने रिवॉल्वर चलाना सीखा कहां?

रात और भी घनी हो रही थी। दो दिन से बीरभूम में बहुत मेहनत हुई थी। इलेक्शन के काम में खेत-खेत, गाँव-गाँव घूमना पड़ा था। कई दिन से सांस लेने का मौक़ा नहीं मिला था। दिन-रात खाना नहीं, सोना नहीं, बस दरवाजे-दरवाज़े पर घूमना। चुनाव के काम में उधर बिलकुल भी फ़ुरसत नहीं रहती। उसमें यह बड़ी मुसीबत आ पड़ी।

घर के अन्दर से भी किसी को निकलने नहीं दिया जाता था, बाहर से भी किसी को अन्दर नहीं घुसने दिया जाता था।

सहसा लगा कि जैसे पुलिस का दल तब आँगन पार कर बाहर की ओर आ रहा है।

भीड़ में जमा सब लोग चुप हो गये। अभी सारे रहस्य का उद्‌घाटन होगा। फिर भीड़ में सुगबुग शुरू हुई।

देखा कि पुलिस के एक दल के आँगन पार कर सामने आते ही बहादुर ने फाटक खोल दिया। उनमें सुरेन और टुलू थे।

टुलू को देखकर देवेश चौंक गया। इनके बीच टुलू क्यों है?

फाटक के बाहर आते ही देवेश आगे बढ़ गया। शायद उनसे कुछ

पूछना चाहता था। लेकिन पुलिस ने देवेश को अलग हटा दिया।

सुरेन और टुलू ने उसे देखा। दोनों की ही शकल गम्भीर हो रही थी। चारों ओर की भीड़ से अपने को छिपाने में बेचैन थे। देवेश की ओर देखकर भी जैसे किसी ने अच्छी तरह नहीं देखा।

सामने ही एक लोहे की जाली से घिरा वैन खड़ा था। उसके अन्दर पुलिस ने दोनों को कर दिया। उसके बाद इंजन स्टार्ट कर गाड़ी चौड़ी सड़क की ओर बढ़ चली।

जो लोग आस-पास खड़े थे, उन्होंने भी तब धीरे-धीरे खिसकना शुरू किया। उनकी जुबान पर तरह-तरह की आलोचनाएँ थी। सुरेन ही अगर खूनी है तो वह लड़की कौन है?

एक आदमी बोला, 'लड़की कम्युनिस्ट पार्टी की मेम्बर है, शकल देखकर भी समझ नहीं पाते?'

एक दूसरा बोला, 'अरे वह नहीं, असल मे इस लड़की ने ही खून किया है।'

आगे का आदमी बोला, 'लड़की ने अगर खून किया है तो उस लड़के को पुलिस ने क्यों पकड़ा है?'

कोई एक आदमी पास से बोला, 'एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं।'

आस-पास के लोग बात सुनकर हँसने लगे।

देवेश और न रह सका। बोला, 'आप लोग बिना जाने-बूझे कैसी बातें कर रहे हैं? मैं इन दोनों को जानता हूँ। दोनों में से किसी ने खून नहीं किया है। इन में से कोई खून नहीं कर सकता।'

'महाशय, आप कौन हैं?'

देवेश बोला, 'मैं जो भी हूँ, आप लोग भले आदमियों के लड़के-लड़कियों के नाम पर जो मन में आता है कैसे कहे जाते हैं?'

सहसा सुरेन के मामा दिखायी दिये। भूपति भादुड़ी पुलिस के पीछे-पीछे सड़क तक उन्हें पहुँचाने आया था। उस समय भी उसकी आँखें छलछला रही थी।

बोले, 'हाँ बाबा, तुम तो सुरेन के दोस्त हो, तुम्हे तो सुरेन के साथ मैंने बहुत बार देखा है। तुम तो इस घर मे बहुत बार आये हो।'

देवेश बोला, 'हाँ, सुरेन मेरा दोस्त है। मैं आपको पहचानता हूँ।'

भूपति भादुड़ी को मुसीबत मे कुछ सहारा मिला। बोले, 'अब क्या होगा, भाई? डर के मारे मेरे तो हाथ-पैर-कलेजा छिदे जा रहे है। घर के अन्दर पुलिस को देखकर ही मेरी छाती का आधा खून सूख गया। दारोगा और पुलिस से मैं बहुत डरता हूँ, भाई! वही पुलिस मेरे घर में

घुसी।'

'क्या तलाशी ली ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'बारीकी से तलाशी ली। जिस कमरे में सुरेन सोता था, उस कमरे का सब-कुछ उलट-पुलटकर इधर-उधर कर दिया।'

'कुछ पकड़े जाने लायक़ चीज मिली ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'न, कुछ ले तो नहीं गये। लेकिन उस लड़की को क्यों पकड़ लिया ? उसने क्या किया ?'

देवेश बोला, 'मैं तो कई दिन से कलकत्ता में नहीं था। मुझे कैसे पता चलेगा ? मैंने तो आज ही सियालदह स्टेशन पर आकर ख़बर सुनी। सुनते ही वहाँ से सीधे यहाँ चला आया।'

'मुझे तो लगता है कि उस लड़की ने ख़ून किया है। लड़के-लड़कियों का विश्वास नहीं। तुम क्या कहते हो ? अपने सुरेन को मैं जानता हूँ, वह तो ऐसा काम करने वाला लड़का नहीं है। अब क्या करूँ, बताओ बाबा ? वकील के पास जाऊँ ? ज़मानत की कोशिश करूँ ?'

देवेश बोला, 'ज़मानत की कोशिश कर सकते हैं, लेकिन ख़ून के आसामी को ज़मानत पर छोड़ देंगे, ऐसा नहीं लगता। वकील के पास जाकर देखिये, वह क्या कहते हैं।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'लेकिन यह लड़की ही तो कह रही है कि उसने ख़ून किया है, सुरेन ने नहीं किया।'

देवेश बोला. 'आप से किसने कहा ? टुलू ने कहा ?'

'टुलू कौन है ?'

देवेश बोला, 'उस लड़की का नाम ही तो टुलू है। मैं तो उसे जानता हूँ। क्या उसने कहा कि उसने ख़ून किया है ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'मुझसे क्यों कहेगी ? उस पुलिस से ही कहा—मैंने प्रवेश सेन का ख़ून किया है, सुरेन को छोड़ दें।'

'लेकिन टुलू क्यों प्रवेश सेन का ख़ून करने जायेगी ? इसमें उसका क्या स्वार्थ है ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'वह तो समझ में नहीं आता, बाबा। दोनों तो दो तरह की बातें कर रहे हैं। सुरेन कहता है, मैंने मारा; लड़की कहती है, मैंने मारा। मैं किसकी बात का विश्वास करूँ ? प्रवेश सेन को तुम पहचानते हो, बाबा ? प्रवेश सेन कौन है ? इनके साथ उसका क्या सम्बन्ध है ?'

देवेश बोला, 'वह आप नहीं पहचानेंगे। वह कांग्रेस पार्टी का आदमी है। आज सुरेन घर से कब निकला था ?'

'दोपहर को। मैंने सवेरे भी देखा था, अपने एक दोस्त से बात कर रहा था।'

'कौन दोस्त ? किस तरह का दोस्त ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'वही जो गाड़ी चलाकर बीच-बीच में सुरेन के पास आता है। उसके चले जाने के बाद देखा कि खा-पीकर सुरेन भी कपड़े पहनकर निकल रहा है। उस तरह तो रोज ही निकलता है। लेकिन आज जरा जल्दी सवेरे जाते देखा।'

'उसके बाद।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'उसके बाद मुझे भी तो कामों का बहुत झंझट, मैं भी अपने काम से निकल गया था। तीसरे पहर घर आकर एक और झंझट देखा। उन सब झंझटों की बात बताने से तुम नहीं समझोगे, बाबा। उसी से मुझे वकील से मिलने के लिए जरा कचहरी जाना पड़ा था। घूमते-फिरते जरा शाम हो गयी। उसके बाद शाम को निकलूं-निकलूं कर रहा था कि तभी धनंजय ने आकर बताया। बोला—मेरे भांजे ने किसी का खून किया है। उसके बाद यही तो अभी पुलिस आ पहुँची।'

उसके बाद कपड़े के किनारे से चेहरे का पसीना पोंछकर बोले, 'अब मैं क्या करूँ, बताओ ? किसके पास जाकर सलाह लूं, कौन अच्छी सलाह देगा, बताओ ?'

देवेश तब जाने के लिए उतावला हो गया था। बोला, 'मैं क्या बताऊँ ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अपना कहने को मेरा भी और कोई नहीं है। उसी भांजे के मुँह की ओर देखकर मैं जिन्दा हूँ। मेरा ऐसा सर्वनाश क्यों हुआ, बाबा ? मैंने तो जान-बूझकर किसी का कोई नुकसान नहीं किया। किसी के बारे में बुरी बात नहीं सोची।'

'देखिये, वकील से सलाह लेकर देखिये। वे जो कहें, वही कीजिये।'

कहकर देवेश फिर न रुका। धीरे-धीरे चौड़ी सड़क की ओर उसने क़दम बढ़ाये।

'पुण्यश्लोक बाबू दोपहर को जब तक राइटर्स बिल्डिंग में थे तब तक उन्हें

कुछ खबर न मिली। टेलीफ़ोन पर शायद खबर गयी थी, लेकिन तब वे वहां नहीं थे। वहां से कांग्रेस-ऑफ़िस जाकर खबर मिली कि प्रवेश को किसी ने उसके घर पर हत्या कर दी है। सुनते ही चौंक पड़े। लेकिन प्रवेश की हत्या कौन करेगा ?'

साथ-ही-साथ लाल-बाजार फ़ोन किया।

पूछा, 'खबर क्या सही है ?'

पुलिस-कमिश्नर बोला, 'हां सर, सही है। लेकिन अभी तक जाँच चल रही है। बाद में आपको खबर दूंगा।'

'मैं क्या मौक़े पर जाऊँ ?'

पुलिस-कमिश्नर बोले, 'नहीं सर, अभी नहीं जाइयेगा। मैं खुद सब खबर रख रहा हूं। लगता है, इसके पीछे कोई दूसरी पोलिटिकल पार्टी है।'

'तो क्या यह पोलिटिकल मर्डर है ?'

'हां, वही तो लग रहा है। मैं आपको रात को खबर दूंगा।'

उसके बाद पुण्यश्लोक बाबू को घर लौटने में रात हो गयी। बहुत रात। सब काम-काज निबटाकर जब घर आये, तब फ़ोन आया।

'सर, आपका रिवॉल्वर क्या आपके घर में है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'बेशक। मेरा रिवॉल्वर कहां जायेगा ? क्यों ?'

पुलिस-कमिश्नर बोला, 'लेकिन अपराधी के पास जो रिवॉल्वर मिला है उसका नम्बर और आपके रिवॉल्वर का नम्बर एक ही है।'

पुण्यश्लोक बाबू दबने वाले नहीं थे। बोले, 'न, न, वह कभी नहीं हो सकता है। मेरा रिवॉल्वर मेरे आयरन सेफ़ में रहता है। उसकी चाभी कहां रहती है, वह भी किसी को नहीं मालूम। आप कह क्या रहे हैं !'

'लेकिन आप एक बार अच्छी तरह देख तो लीजिये।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'रिसीवर पकड़े रहिये, मैं अभी देखता हूं।'

कहकर चाभी को अपनी जगह से लेकर लोहे की सेफ़ खोली। खोलते ही एकदम स्तम्भित हो गये। कहां, वह कहां गया ? मेरा रिवॉल्वर ! वह तो हमेशा यहीं रहता था। यहां से किसने लिया ?

पुण्यलोक बाबू का दिमाग़ चकरा उठा। ऐसा तो कभी हुआ नहीं। आज कितने बरस पहले से वह यहां था, लेकिन किसी दिन तो चाभी की गड़बड़ नहीं हुई।

फिर आकर रिसीवर उठाया। बोले, 'न, वह तो यहां नहीं है, आपने ठीक ही कहा था।'

उसके बाद क्या कहें, सोचकर भी निश्चय न कर सके।

मिर्फ़ बोले, 'लेकिन मेरा रिवॉल्वर किसने निकाल लिया, मेरी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा है। मेरे रिवॉल्वर को तो कोई कभी हाथ नहीं लगाता।'

'आपके घर के नौकर या मेड सर्वेंट किसी को मालूम है कि रिवॉल्वर कहाँ रहता है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'कैसे मालूम होगा ? चाभी तो मैं छिपाकर रखता हूँ। उनके सामने तो मैं कभी निकालता ही नहीं। उसके सिवा पाँच बरस मेरे पास रहा, मैंने तो कभी हाथ भी नहीं लगाया। सिर्फ़ दो बार दिल्ली जाने के वक़्त उसे साथ ले गया था।'

'आपका लड़का या लड़की ?'

'लड़का तो अभी अमेरिका से आया है, उसे पता ही नहीं कि मेरे पास रिवॉल्वर का लाइसेंस है। और लड़की ? लड़की से मेरी भेंट ही कब होती है ? वह तो दिन-भर अपने कमरे में रहती है। आजकल वह किसी से मिलती-जुलती भी नहीं।'

पुलिस-कमिश्नर बोले, 'ठीक है, सर, ■ बाद में बताऊँगा कि क्या हुआ।'

दोनों ने ही रिसीवर रख दिये। लेकिन पुण्यश्लोक बाबू फिर वहाँ एक क्षण भी नहीं रुके। कमरे से निकलकर बेटे के कमरे में गये।

पुकारा, 'सुव्रत, सुव्रत !'

पुण्यश्लोक बाबू की आवाज़ उस वक़्त काँप रही थी। सुव्रत के बाहर निकलते ही बोले, 'सुव्रत, तुमने मेरे रिवॉल्वर को हाथ लगाया था ?'

सुव्रत ताज्जुब में पड़ गया।

'आपका रिवॉल्वर ?'

'हाँ, आयरन सेफ़ के अन्दर मेरा रिवॉल्वर रहता था। वह कहाँ गया ?'

सुव्रत बोला, 'लेकिन मुझे तो इसकी खबर भी नहीं।'

'तो रघु को बुलाओ। रघु, रघु !'

कहकर खुद ही पुकारने लगे। बाग़ के कोने की ओर रघु रहता था। रात को सारे काम के बाद वह उस समय अपने कमरे में था। बाबू की आवाज़ सुनते ही वह भागा-भागा आया।

'तू मेरे कमरे में आया था ?'

रघु जवाब देने के पहले कुछ असमंजस में पड़ गया। उसके बाद बोला 'मैं तो कमरा साफ़ करने के लिए एक बार आया था।'

'कब आया था ?'

रघु बोला, 'तीसरे पहर। जिस वक़्त मैं रोज़ कमरा साफ़ करता हूँ।'

'मेरे लोहे के संदूक को तूने हाथ लगाया था ?'

रघु बोला, 'ना बाबू, मैं सिर्फ़ झाड़ू लगाकर, धूल साफ़ कर बाहर चला आया था।'

'इस कमरे में और किसी को घुसते देखा था ? जगन्नाथ या दरबान को ? या मुंशीजी को ?'

रघु बोला, 'न, मैंने किसी को भी नहीं देखा।'

'अच्छा, दरबान को तो बुलाओ।'

रघु की जैसे जान में जान आयी। झटपट नीचे जाकर दरबान को भेज दिया।

'दरबान, दोपहर में कोई घर में आया था ?'

'ना हुज़ूर, मैंने किसी को घुसने नहीं दिया।'

सुव्रत की ओर देखकर पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम कितनी देर से घर में थे ?

सुव्रत बोला, 'मैं सवेरे निकला था, उसके बाद ग्यारह बजे के बीच घर लौट आया।'

'उसके बाद ? उसके बाद फिर निकले थे ?'

'हाँ, दोपहर को एक के बाद।'

'कब घर लौटे थे ?'

'छः बजे। तब छः ही होंगे।'

'इस बीच किसी को घर में घुसते देखा था ?'

'न।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'पमिली कहाँ है ? पमिली क्या दिन-भर घर पर थी ?'

दरबान बोला, 'दीदी एक बार गाड़ी लेकर निकली थीं !'

'कहाँ गयी थी ? अच्छा, बुलाओ तो। पमिली को ज़रा बुलाओ तो।'

सुव्रत पमिली के कमरे की ओर गया। अन्दर जाकर देखा कि पमिली के कमरे में अँधेरा है। पुकारा, 'पमिली, पमिली !'

पुण्यश्लोक बाबू बरामदे से बोले, 'सो गयी है क्या ?'

सुव्रत बोला, 'हाँ।'

'लेकिन पमिली घर से कहाँ गयी थी, तुम्हें पता है ?'

सुव्रत बोला, 'वह मुझे नहीं मालूम। लेकिन हुआ क्या है ? आपका रिवॉल्वर कहाँ रहता था ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'और कहाँ रहेगा ? मेरे आयरन सेफ के अन्दर। अब देखता हूँ, चाभी जहाँ थी वहीं है, लेकिन रिवॉल्वर गायब है। इधर लाल-बाज़ार से खबर मिली है कि प्रवेश का खून उसके घर पर हो गया है।'

'हमारे प्रवेश-दा का ?'

'हाँ, अपराधी पकड़ा गया है। और जिस रिवॉल्वर से खून हुआ, वह मेरा रिवॉल्वर है। लेकिन मेरे सेफ से रिवॉल्वर किस तरह बाहर गया ? कौन ले गया ? सामने इलेक्शन आ रहा है, उधर पुलिस-फायरिंग के बारे में जाँच-कमीशन बैठा हुआ है। इसी वक्त यह मुसीबत ? तुम सब अगर मुझे मिलकर इसी तरह तंग करो, तो मैं कहाँ जाऊँगा ?'

कहकर पमिली के कमरे की ओर बढ़ गये। बोले, 'चलो, पमिली को जगायें। इतनी जल्दी वह क्यों सो गयी है ?'

दरवाज़े के पास जाकर पुकारा, 'पमिली, ओ पमिली !'

पमिली शायद जागी ही हुई थी। बहुत चीख-पुकार से और रुक न सकी। बोली, 'क्या है ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुमको इतना बुला रहा हूँ, तुम जवाब क्यों नहीं दे रही हो ? आओ, तुमसे ज़रूरी बात है। जल्दी उठकर आओ।'

पमिली बहुत कष्ट से जैसे तबीयत न होते हुए भी उठकर आयी। दिन-भर शायद बहुत मेहनत में बीता था।

'तुम आज कहाँ गयी थी ?'

पमिली बोली, 'यह बात पूछने के लिए मुझे इतनी रात को क्यों बुलाया ? सवेरे पूछने से काम न चलता ?'

'न, नहीं चलता। तुमने शायद सुना नहीं कि प्रवेश का खून हो गया है ?'

पमिली ने अब अच्छी तरह पुण्यश्लोक बाबू की ओर मुँह उठाकर देखा।

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'हाँ, प्रवेश का खून उसके घर पर हो गया है। और वहीं मेरा रिवॉल्वर मिला है, लेकिन मेरा रिवॉल्वर वहाँ पहुँचा कैसे, तुम्हें कुछ पता है ?'

पमिली कुछ देर चुप रही।

'बताओ, घर से निकलने के वक्त तुमने मेरा रिवॉल्वर लिया था या नहीं ? बताओ।'

पमिली बोली, 'हाँ, लिया था।'

'तुमने लिया था ?'

'हाँ।'

'क्यों ?'

पमिली ने वैसी ही स्पष्ट आवाज़ में जवाब दिया, 'मैंने सबका खून करना चाहा था।'

'तुम कह क्या रही हो ? सबका खून करना चाहा था के मतलब ? तुम क्या पागल हो गयी हो ? वह रिवॉल्वर तुमने किसे दिया था ?'

'किसी को नहीं दिया, सुरेन ने मुझसे छीन लिया था।'

'सुरेन ? उसने कैसे छीन लिया ? उससे तुम्हारी मुलाक़ात कहाँ हुई ?'

पमिली बोली, 'वह हमारे घर आया था।'

'वह फिर आया था ? मैंने सबसे मना कर दिया था न, कि उसे कोई घर में घुसने न दे ? दरवान कहाँ है ? दरवान को यहाँ बुलाओ तो। रघु, दरवान को बुलाओ।'

पुण्यश्लोक बाबू के चिल्लाने से सारा घर मानो थर-थर काँपने लगा। बग़ीचे का माली, गैरेज का ड्राइवर, आउट-हाउस के नौकर-चाकर— सभी को साहब का चिल्लाना सुनायी पड़ा। साहब को फिर क्या हो गया ? कितने महीनों से साहब का मिज़ाज बिगड़ रहा था। चुनाव के पहले हमेशा साहब का मिज़ाज यों ही बिगड़ जाता है। लेकिन इस बार जैसे कुछ ज़्यादा ही बिगड़ गया क्या !

जगन्नाथ ने रघु को देखा। बोला, 'क्या हुआ है, रे ? साहब का मिज़ाज अचानक ऐसा क्यों बिगड़ गया ?'

'दरवान कहाँ है ? साहब दरवान को बुला रहे हैं।'

उस वक़्त उसे और ज़्यादा बात करने का वक़्त नहीं था। दरवान को लेकर फिर वह ज़ीने से दो-मंज़िले की ओर चढ़ने लगा।

कलकत्ता के आदमी को तब उत्तेजना की एक नयी ख़ूराक मिल गयी। शहर के आदमी को क्या उत्तेजना की कमी रहती है ? रोज़ सवेरे नींद से उठते ही अख़बार पढ़ने के लिए सब उत्सुक रहते हैं। रोज़-रोज़ नयी-नयी ख़बरें पढ़ते हैं और उनकी ही जुगाली करने में पूरा दिन ख़ूब गरमी रहती है।

किसी दिन दो गाड़ियों में टक्कर होती है, और कुछ आदमी मर जाते हैं। या अचानक कोई जुलूस निकलकर बसों-ट्रामों को गड़बड़ कर देता है। या मीटिंगें होती हैं। लाल झंडा फहराकर इस तरह लोग जमा होते कि उनकी मुसीबत से शहर के लोगों को हरजाना देते-देते जान निकल जाती।

लेकिन किसी-किसी दिन ऐसी घटना होती कि जिसका असर बहुत दिन बीतने पर भी नहीं जाता। वैसी ही यह घटना भी। ग्रे स्ट्रीट की गली में उस दिन तीसरे पहर जो घटना हुई थी वह भी ऐसी ही एक घटना थी। बसों-ट्रामों, कोर्ट-कचहरियों में इसके सिवा जैसे आलोचना के लिए और चीज़ ही न थी।

'दिन दहाड़े क्या हुआ, मशाई ?'

तभी पास से एक सज्जन बोले, 'हुआ क्या है मशाई, इसके बाद देखेंगे कि मुहल्ले-मुहल्ले गोली-गोले चलेंगे। अँग्रेज़ों के जाने के बाद देश का क्या हाल हुआ, रे बाबा।'

एक दूसरे सज्जन बोले, 'अरे मशाई, इसके पीछे रूस का हाथ है, यह पता है ? नहीं तो इतने पिस्तौल और रिवॉल्वर आते कहाँ से हैं ?'

लेकिन इस बार की सबसे मज़ेदार घटना वह नहीं थी। असल में ऐसे बड़े-बड़े शहरों में खून होते ही रहते हैं। इस बार मज़ा दूसरी तरह का था। किस तरह लोगों को पता चला कि इसके पीछे गहरा रहस्य है। इस रहस्य में एक लड़की भी जुड़ी है।

पुलिस की हवालात के अन्दर टुलू को पुलिस ने अलग रख दिया था। एक जगह रखा टुलू को, एक दूसरी जगह रखा सुरेन को।

टुलू के कमरे में आता पुलिस-इन्स्पेक्टर।

पूछता, 'कैसी हैं, टुलू देवी ? कोई असुविधा तो आपको नहीं है ? असुविधा हो तो हमें ज़रूर बताइयेगी।'

टुलू सिर नीचा किये रहती। कहती, 'नहीं, कोई असुविधा नहीं है।'

'अच्छा, टुलू देवी, सही बताइये, आप कहती हैं कि आपने प्रवेश सेन का खून किया, तो उसका खून क्यों किया ? आप क्या उसे पहले से जानती थीं ? उसने क्या आपका कोई अहित किया था ?'

टुलू कभी तो चुप रहती, कभी दो-एक बातों का जवाब दे देती। अन्त में जब टुलू बहुत गुस्सा हो जाती, तो बिना सोचे-समझे कुछ कह बैठती।

कहती, 'आप लोग मुझे बार-बार परेशान करने क्यों आते हैं ? मैं आपकी किसी बात का जवाब न दूँगी। आप लोग जो कर सकें, करें।'

कहकर साड़ी का पल्ला मुँह पर डालकर रोने लगती।

लेकिन उसी दिन से भूपति भादुड़ी का आराम खत्म हो गया। कभी घर के अन्दर माँ जी के कमरे में और फिर भागकर पुलिस-थाने जाते। कहीं भी कोई खबर न मिलती। तब फिर जाते वकील साहब के यहाँ। वकील भी वैसे ही थे। वकीलों के पीछे बड़ा रुपया निकल जाता।

भूपति भादुड़ी कहते, 'तो क्या होगा, वकील बाबू ?'

वकील साहब कहते, 'होगा क्या ! अब डर क्यों रहे हैं ? मैं जो हूँ।'

जैसे वकील साहब ही भूपति भादुड़ी की सब मुश्किलें आसान कर देंगे !

उस दिन बहुत कुछ करने-धरने के बाद भूपति भादुड़ी को सुरेन से मुलाक़ात करने की अनुमति मिली। तब दोपहर बीतकर तीसरा पहर हो रहा था।

फाटक के पास जाते ही देखा कि वही छोकरा आ रहा है—सुरेन का दोस्त। देवेश ने भी भूपति भादुड़ी को देखा।

भूपति भादुड़ी जोरों से रोने लगे। बोले, 'बाबा, तुम सुरेन से मिले क्या ?'

देवेश बोला, 'हाँ।'

'वह कैसा है, बाबा ?'

देवेश बोला, 'सुरेन छूट जायेगा।'

कहकर देवेश चला जा रहा था, लेकिन भूपति भादुड़ी ने नहीं छोड़ा। एकदम घूमकर उसके आगे खड़े हो गये।

बोले, 'तुमने क्या कहा ? छूट जायेगा ? बेक़सूर साबित होगा ? मुझे तभी मालूम था बाबा, कि मेरा भांजा वैसा लड़का नहीं है। खून-खराबी वह नहीं कर सकता। यह खबर क्या तुम्हें सुरेन ने ही दी ?'

देवेश बोला, 'नहीं।'

'तब किसने बताया ?'

देवेश बोला, 'पुलिस वालों ने।'

भूपति भादुड़ी का चेहरा खुशी से चमक उठा। बोले, 'पुलिस ही जब कह रही है तब जरूर मेरे सुरेन को छोड़ देगी। क्या कहते हो ? मैंने ठन-ठन की कालीबाड़ी में जाकर उसके लिए मनौती कर रखी है, बाबा। मैंने बकरे के जोड़े की मनौती की है। तुम्हें नहीं मालूम बाबा, इस बे-माँ-बाप के लड़के को मैंने छुटपन से बड़ी तकलीफ़ें उठाकर आदमी बनाया है। अब बड़ा होकर मेरी जरा भी मानना नहीं चाहता। अब कम्युनिस्टों से मिल-जुलकर बिलकुल बिगड़ गया है।'

कहकर भूपति भादुड़ी ने फिर किनारे से अपनी आँखें पोंछ लीं।

उसके बाद बोले, 'तो मैं चलूँ बाबा, ज़रा भीतर जाकर भेंट कर आऊँ। तुम्हारी बात सुनकर कितना खुश हुआ, क्या बताऊँ, तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर! तुम्हारी बड़ी उमर हो।'

तभी देवेश ने चलने के लिए कदम बढ़ाये। भूपति भादुड़ी फिर न रुके। सीधे हवालात की ओर बढ़ गये। 'हे माँ काली, हे माँ भगवती, मेरी मनोकामना पूरी करो, माँ। मैं तुम्हें बकरे का जोड़ा दूँगा। तुम मेरे सुरेन को फाँसी के तख्ते से बचा दो।'

कहकर थाने के बरामदे में घुस गये।

हवालात से जब भूपति भादुड़ी निकले तब भी दिमाग़ में वही बात घूम रही थी। यह क्या हुआ? ऐसा क्यों हुआ?

कहीं मानो एक बड़ी गड़बड़ हो गयी है। आदमी का मन इतने दिनों से जो एक रास्ता पकड़कर चल रहा था, सहसा जैसे वह दूसरी ओर मुड़ गया हो। बूढ़ा आदमी देखकर अब पहले की तरह कोई खयाल नहीं करता। बूढ़े आदमी को धक्का देकर ठकेलकर ट्राम में, बसों में चढ़ने में भी कोई पीछे नहीं रहता। यह सब हो क्या गया? यह उथल-पुथल कैसे हुई?

थाने के बड़े बाबू की बातें भी दिमाग़ में चक्कर काटने लगीं। इसी बड़े बाबू को भूपति भादुड़ी ने कितने रुपये दिये थे, कितनी खुशामद की थी। वजह-बेवजह गड्डी-के-गड्डी नोट दे गया था। और उसी बड़े बाबू ने आज वक़्त के बदलने के साथ मुँह फेर लिया है।

भूपति भादुड़ी ने कहा, 'मेरा ख़याल कीजिये बड़े बाबू, मेरा बे-माँ-बाप का भांजा है। वह कभी खून कर सकता है? वह बी० ए० पास है। किसी और ने खून कर उसके नाम मढ़ दिया है। आप ठीक से पता लगाइये तो देखेंगे कि वह कभी खून नहीं कर सकता।'

थाने के बड़े बाबू आदि को भूपति भादुड़ी बड़ी अच्छी तरह जान गये थे। रुपये लेते वक़्त जिस तरह उनके बहुत-से हाथ हो जाते हैं, काम करते वक़्त उसी तरह लूले जगन्नाथ बन जाते हैं।

भूपति भादुड़ी ने अनुनय-विनय कर बहुत-कुछ कहा, फिर भी बड़े बाबू मानो गूँगे बने रहे। बोले, 'मैं कुछ न कर सकूँगा भूपति बाबू, मैं लाचार हूँ। मिनिस्टर का अपना आदमी मारा गया है। इसमें अब हम लोगों का कोई हाथ नहीं। इस मामले में हाथ डालने से मेरी नौकरी चली जायेगी।'

भूपति ने अन्त में आखिरी अस्त्र छोड़ा। एक बार चारों ओर अच्छी तरह देख लिया। उसके बाद किसी को कहीं न देखकर कहा, 'कुछ न हो,

आपका ही सहारा लूंगा, बड़े बाबू। आपको खुश कर दूंगा।'

बात कहने के साथ बड़े बाबू मानो बिगड़ गये। साथ-ही-साथ खड़े होकर बोले, 'यहाँ से निकल जाइये, नहीं तो मैं आपको अभी गिरफ़्तार कर लूंगा, निकल जाइये। सोचा है कि रुपये लेकर जो चाहे सो हो सकता है ?'

भूपति भादुड़ी की फिर वहाँ रुकने की हिम्मत न हुई। झटपट कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुए। उसके बाद पीछे हटते-हटते बिलकुल कमरे के दरवाज़े के बाहर चले आये।

उस समय भी अन्दर से गुस्से में गुर्राते हुए बड़े बाबू चिल्ला रहे थे, 'निकल जाइये कमरे से, निकल जाइये।'

बड़े बाबू की आवाज़ थाने में सबके कानों में पड़ी। छोटे बाबू, मँझले बाबू—सभी भूपति भादुड़ी की ओर देखकर बोले, 'क्या हुआ भादुड़ी मशाई, किया क्या था ?'

सुखदा को पकड़वाने के वक़्त सभी ने कभी मोटी-मोटी रक़में खायी थीं! यही वे सारे आदमी थे। उन दिनों यही कैसे हँस-हँसकर बातें करते थे! आज इन्होंने ही मुँह फेर लिया है। पुलिस पर भूपति भादुड़ी को नफ़रत हो गयी। दूर हों ये, इससे तो अँग्रेज़ी ज़माने की पुलिस बहुत अच्छी थी। वह तब घूस भी लेती थी, काम भी कर देती थी। दूर हों, नाश हो इनका। अब पुलिस के पास आने की ज़रूरत नहीं। वे सब एक-से हैं। सब-के-सब ख़राब हैं। आवा-का-आवा ही ख़राब है। किसे छोड़ें, किसे मारें ? यह कहता है मुझे देखो, वह कहता है मुझे।

और किसके लिए वह इतनी सब फ़िक्र कर रहा है ? सुरेन उसका कौन है ? किसलिए उस पर उसका इतना खिंचाव है ? वह मरे-मिटे—उससे भूपति भादुड़ी का क्या आता-जाता है ? क्यों उसके भले की बात सोचकर वह यहाँ अपमान कराने आया ?

पीछे से किसी ने पुकारा, 'ओ मशाई!'

तब भूपति भादुड़ी बिलकुल सड़क पर आ गये थे। पीछे घूमकर देखा कि एक पुलिस-कांस्टेबिल उनकी ओर आ रहा है।

पास आकर बोला, 'आप ख़ूनी आसामी के लिए आये थे न ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाँ, भाई।'

'आपको बड़े बाबू डाँट क्यों रहे थे ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'भाई, मेरे भांजे को थाने की हवालात में पकड़ लाये हैं, इसीलिए बड़े बाबू के पास गया था। वही सुनकर मुझ पर यह डाँट। सो मैंने क्या ग़लती की, बताइये ? मेरा बे-माँ-बाप का भांजा है,

उसके लिए मैं नहीं करूँगा ? मेरे तो और कोई है नहीं भाई, मेरी पत्नी नहीं, बाल-बच्चे भी नहीं। मैं उस भांजे के सिवा किसकी चिन्ता करूँगा ?'

कांस्टेबिल बोला, 'तो एक काम कर सकते हैं।'

'क्या काम ?'

'हाथ में कुछ थमा देते। झगड़ा खत्म होता।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'अरे, मैंने वही बात तो कही थी। मेरे यह बात कहते ही तो इतना झमेला हो गया।'

कांस्टेबिल बोला, 'तो क्या ऐसे ही सीधे-सीधे कहा जाता है ? फिर हम लोग किसलिए हैं ?'

भूपति भादुड़ी को जैसे डूबते को सहारा मिला। एक चैन की साँस छोड़ी। बोले, 'तुम काम कर दोगे, बाबा ? मेरे भांजे को छोड़ देंगे ?'

कांस्टेबिल बोला, 'छोड़ देने की तो हमारी ताकत नहीं है। बड़े बाबू से मँझले बाबू की माफ़त कहलाऊँगा। तभी जमानत पर छोड़ देंगे।'

'तो उसे जमानत पर ही छोड़ दो न ! मुझे क्या देना होगा, वह बताओ।'

'अभी दो सौ रुपये दीजिये। उसके बाद देखा जायेगा।'

भूपति भादुड़ी रुपये साथ में लाये थे। टेंट से रुपये निकालकर थोड़े ओट में जाकर खड़े हो गये। उसके बाद नोट गिन-गिनकर कांस्टेबिल के हाथ में थमा दिये।

बोले, 'तुम जरा देखना, बाबा। उस भांजे के सिवा मेरे कोई नहीं है। असल में उस औरत ने ही खून किया है। मेरा भांजा वैसा लड़का नहीं है, समझे। अपने ही भांजे को क्या मैं नहीं पहचानता ?'

कांस्टेबिल बोला, 'वह तो बड़े बाबू के हाथों में है। बड़े बाबू जैसा केस लिखेंगे वैसा ही चालान होगा।'

भूपति भादुड़ी ने कांस्टेबिल का हाथ पकड़ लिया। बोले, 'जियो बाबा, जीते रहो। तुम्हारी और तरक्की हो, मैं तुमसे उमर में बड़ा हूँ। मैं आशीर्वाद देता हूँ बाबा, तुम बड़े होकर दारोग़ा बन जाओ।'

कांस्टेबिल ने तब रुपये अपनी जेब में छिपाकर रख लिये। बोला, 'आप घर जाइये, मैं जो उचित होगा करूँगा।'

कहकर फिर थाने में चला गया। छोटे बाबू, मँझले बाबू—सभी उस समय उत्सुक थे।

छोटे बाबू बोले, 'क्यों रे, कितने वसूल किये ?'

कांस्टेबिल हँसते-हँसते बोला, 'दो सौ।'

कहकर कई नोट छोटे बाबू की ओर बढ़ा दिये।

लेकिन इतनी आसानी से मामला खत्म होने वाला नहीं था। पूरे कलकत्ता के लोगों की जबान पर वही एक बात थी। सवेरे ऑफ़िस जाने की राह में ट्राम-बस में खूब रंग चढ़ाकर लोग बातें करते। तरह-तरह के लोग तरह-तरह की मजे की टिप्पणियाँ करते। कलकत्ता के लोगों को हर रोज ही ज़ायकेदार खूराक की ज़रूरत रहती है। अखबारों में इसी तरह की कोई खबर न रहती तो उनका खाना ही हज़म न होता! फिर न तो कोई कांग्रेस का मेम्बर रहता, न कोई कम्युनिस्ट ही।

एक आदमी ने कहा, 'अरे मशाई, यह दो पार्टियों का झगड़ा है। हम तो कौए हैं। बेल पकने से कौए का क्या? जिस पार्टी की भी सरकार हो, हम तो अँधेरे-के-अँधेरे में रहेंगे।'

एक दूसरे बोले, 'अरे, यह सब पार्टी-आर्टी का मामला नहीं है, इसमें लड़की है।'

लड़की है, यह तो सभी को मालूम था। लड़के के साथ जब लड़की भी पकड़ी गयी है, तो यह तो मानी हुई बात है कि इसमें लड़की है। लेकिन किसने किसलिए खून किया है, यही जानने के लिए सब उत्कंठित हैं। वह किसी को नहीं मालूम।

एकमात्र जान सकता है तो सुरेन, या नहीं तो टुलू। और वे दोनों हवालात में हैं। इसलिए बाहरी लोग कुछ जान नहीं सकते थे। फिर भी सब जानने की कोशिश करते थे। काश, कोई कुछ गुप्त भेद का आभास दे सकता! पुण्यश्लोक बाबू का रिवॉल्वर कौन उठा ले गया था, वह भी कोई नहीं जान सका।

लेकिन पुलिस का टेलीफ़ोन पाकर पुण्यश्लोक बाबू आश्चर्य में पड़ गये।

बोले, 'क्यों, मेरी लड़की को क्यों? मेरी लड़की ने क्या किया है?'

पुलिस थाने से बड़े बाबू बोले, 'हम आपकी लड़की से जिरह करेंगे। उसका स्टेटमेण्ट लेंगे, क्योंकि आपका रिवॉल्वर उसके हाथों से कैसे दूसरे लोगों के हाथों में गया, हम यही जानना चाहते हैं। तो क्या अभी आपके घर आयें?'

'आइये।'

पुलिस आयेगी, लिहाजा पुण्यश्लोक बाबू ने पमिली को बुलाया। बोले, 'तुम तैयार हो जाओ।'

पमिली बोली, 'मैं तैयार ही हूँ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम इसी तरह पुलिस के सामने हाजिर होगी?'

पमिली बोली, 'मैं तो अच्छी पोशाक पहने ही हूँ।'

'तो जो तबीयत आये वही करो। मैं तो अब तुम लोगों के साथ कुछ बहस नहीं करना चाहता। तुम्हारे कारण देख रहा हूँ कि इस बार मैं चुनाव में हार जाऊँगा। मेरी इतने दिनों की सेवा, इतने बरसों का जेल काटना, सब-कुछ आज नष्ट हो जायेगा। मैंने तुम्हारे लिए इतना किया और तुम लोग अब उसका अच्छा बदला दे रहे हो!'

अभी तक सुव्रत कुछ नहीं बोला था। वह अपनी पारिवारिक निन्दा के डर से कई दिनों से बहुत दुखी था। सभी देखते ही उससे पूछते, 'क्या हुआ, मिस्टर राय? तरह-तरह की बातें सुन रहे हैं।'

'क्या सुन रहे हैं?'

'सुन रहे हैं कि ग्रे स्ट्रीट में जो मर्डर हुआ, वहाँ आपका रिवॉल्वर मिला?'

सुव्रत बोला, 'मैंने भी वही सुना है।'

'लेकिन, आपके पिता का रिवॉल्वर दूसरे आदमी के हाथ में गया कैसे?'

सुव्रत बोला, 'क्या पता! पुलिस इन्वेस्टिगेशन चल रहा है। इन्वेस्टिगेशन में जो निकलेगा वह आप लोग भी जान जायेंगे।'

इससे अधिक कोई बात न होती। इस जवाब के बाद और कोई बात आगे न बढ़ती। लेकिन जल्दी ही कौतूहल रुक जाता है कहीं! कौतूहल बढ़ते-बढ़ते लोग उस पर रंग चढ़ाते। बहुत दिनों तक जिससे मुलाकात नहीं हुई, वह भी एक दिन सुव्रत के घर आ पहुँचता।

'क्यों जी, तुम? तुम इतने दिन बाद कैसे?'

लड़का बोला, 'अखबार में देखा। तुम्हारे घर के रिवॉल्वर से कुछ हो गया। बात क्या है?'

सुव्रत को इस पर ज्यादा बात करना अब अच्छा न लगता। बोला, 'भाई, इस पर पुलिस इन्वेस्टिगेशन हो रहा है। इससे ज्यादा कुछ न बता सकूँगा।'

'लेकिन वह सुरेन क्या हम लोगों के क्लास का सुरेन सान्याल है? वह कब कम्युनिस्ट बन गया? वह तो निरीह गौ किस्म का लड़का था। शर्मीला

स्वभाव, उसमें क्या ऐसी अक़्ल छिपी थी ?'

इसी तरह कितने ही लोग क्या-क्या कहते, उसका अन्त नहीं। सुव्रत ने आखिर में उनसे मिलना-जुलना ही वन्द कर दिया। कोई मिलने आता तो रघु उनसे कह देता, 'छोटे वावू इस वक़्त नहीं मिलेंगे।'

लेकिन उस दिन पुलिस की गाड़ी ज्यों ही घर में आकर घुसी, सुव्रत ने ख़ुद नीचे आकर उनकी अभ्यर्थना की, 'आप वड़तला थाने से आ रहे हैं ?'

वड़े दारोग़ा वावू ख़ुद ही आये थे। पूछा, 'मिस्टर राय कहाँ हैं ?'

सुव्रत वोला, 'वे ऊपर हैं, आइये।'

ऊपर हॉल-कमरे में पुण्यश्लोक वावू, पमिली दोनों ही मौजूद थे। वड़े दारोग़ा वावू हॉल-कमरे में घुसते ही वोले, 'मैं थाने का ओ० सी० हूँ, सर।'

पुण्यश्लोक वावू वोले, 'आइये, आइये।'

वड़े वावू ने रजिस्टर निकाले। साथ का कांस्टेविल खड़ा रहा। वड़े वावू ने जेव से क़लम निकालकर कहा, 'मैं मिस राय से कुछ सवाल करूँगा सर, आपको ज़रा वाहर जाना होगा।'

पुण्यश्लोक वावू वोले, 'ठीक है, अपनी ड्यूटी आप कीजिये। हम वाहर जा रहे हैं।'

कहकर कमरे से निकलते-निकलते एक वार रुके। पूछा, 'आपको कितनी देर लगेगी ?'

'यही समझिये, कोई आधा घंटा।'

'ठीक है, मैं नीचे अपने ऑफ़िस के कमरे में हूँ। ख़त्म होने पर मुझसे मिलकर जाइयेगा।'

कहकर वे उठ गये। सुव्रत भी साथ-साथ वाहर निकल गया।
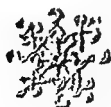
बूढ़े वावू की हालत उस समय वहुत खराव थी। सुधन्य वहुत दूर से आया करता। डलहौज़ी स्क्वायर में नौकरी करता था और वापसी के वक़्त बूढ़े वावू को देख जाता। जिस दिन बूढ़े वावू की वीमारी वढ़ जाती, उस दिन ज़रा ज़्यादा देर रह जाता, उनकी छाती पर ज़रा हाथ फेर देता। किसी दिन डॉक्टर वावू को वुला लाता। डॉक्टर वावू जो-जो दवाएँ लिख देते,

वे दवाएँ खरीद लाकर खिला देता। उसके बाद जब जरा ठीक होते, तब उठता।

उस दिन शाम को पैरों की आवाज मिलते ही बूढ़े बाबू ने पूछा, 'कौन? सुधन्य आया है?'

सुधन्य कमरे में घुसते ही बोला, 'एक बड़ी बुरी बात हो गयी, काका बाबू।'

'क्या मुसीबत, बाबा? घर पर बहू ठीक है? बाल-बच्चे सब अच्छे हैं?'

सुधन्य बोला, 'न, वे सब ठीक ही हैं, इधर घर के मझले बाबू को पुलिस ने पकड़ लिया है, वह सुना है?'

बूढ़े बाबू धुँधली आँखें उठाकर बोले, 'कहाँ, कुछ तो नहीं सुना। क्यों, पुलिस ने क्यों पकड़ लिया?'

सुधन्य बोला, 'उन्होंने एक बहुत खराब काम किया। कांग्रेस के एक आदमी का खून कर दिया, मझले बाबू ने।'

उसके बाद सब सुनकर बूढ़े बाबू बोले, 'तू वह सब मुझे मत सुना, सुधन्य! मैं और कितने दिन हूँ? मेरा तो जाने का वक्त हो गया। मैं अब वह सब सोचकर क्या करूँगा?'

लेकिन बात को मुँह से कहने पर भी कहीं से भावना की एक गाँठ बूढ़े बाबू के मन में ऐंठती रही। जाने के पहले जैसे सब-कुछ ठीक देखकर जाता तो अच्छा होता। लेकिन अच्छा कैसे होगा? जीवन में बूढ़े बाबू ने क्या कुछ चाहा था? उन्होंने कुछ भी तो नहीं चाहा था। सिर्फ थोड़ा-सा भर-पेट खाना मिलना और एक के बदले दो धोती या गमछे। कलकत्ता-भर में जब लोग तरह-तरह की चीजें चाहते हैं, तब बूढ़े बाबू की चीजें तो बहुत साधारण थीं।

शाम को जब सड़क पर जुलूस निकलता तब छोटे कमरे में लेटे-लेटे बूढ़े बाबू वह शोर सुनते। किस बात का शोर है, वह नहीं समझ सकते। बूढ़े बाबू की जब जवानी थी तब भी सड़क पर शोर रहता था। लेकिन वह दूसरी तरह का था।

बीच-बीच में पूछते, 'ओ दुखमोचन, दुखमोचन! जरा इधर तो सुन जा, बाबा।'

काम करते-करते दुखमोचन विरक्त होकर कमरे में आता।

कहता, 'क्या?'

बूढ़े बाबू दुखमोचन की शकल देखते ही समझ जाते। कहते, 'खफा हो गया? गुस्सा मत हो बाबा, बुड्ढे आदमी पर गुस्सा नहीं होते। देख'

है मैं बूढ़ा हो गया, मुझ पर क्या गुस्सा करना चाहिए ? वह किस बात का गोलमाल है ?'

इन सब बातों से दुखमोचन फिर गुस्सा जाता। कहता, 'मुझे नहीं मालूम, मुझे काम है।'

कहकर फिर कमरे से निकलकर अपने काम में मन लगाता।

उसके बाद जिस दिन पुलिस आयी थी उस दिन भी बूढ़े बाबू के कान में खबर गयी थी। सिर्फ़ यह जानने की तबीयत हुई थी कि अन्दर क्या हो रहा है। कमरे से चलते-चलते बाहर निकलकर देखा कि ढेर-से लोगों ने आँगन में भीड़ लगा रखी है।

बूढ़े बाबू बहुत देर तक खड़े रहने पर भी कुछ समझ न सके। अन्त में एक आदमी से पूछा, 'हाँ जी, यहाँ क्या हो रहा है, जी ? पुलिस किसलिए आयी है ?'

उस समय सब पुलिस का मामला जानने में व्यस्त थे, बुड्ढे आदमी की बात का जवाब कौन दे ? बूढ़े बाबू एक-एक से जाकर पूछते। लेकिन बूढ़े बाबू की आँखों के आगे मानो सारी धरती ही कैसी दुश्मनों से भरी लगती। 'पुलिस क्यों आयी, यह जवाब देने में तुम लोगों की जाने कौन महाभारत अशुद्ध हो जायेगी ? मैं क्या आदमी नहीं हूँ ? मुझे क्या तुम लोग आदमी नहीं समझते हो ?'

'चलो हटो, निकम्मे लोगो,' और कुछ न कहकर बूढ़े बाबू फिर आँगन पार कर अपने कमरे में चित होकर लेट गये। जिसकी जो खुशी हो, सब खाक हो जाये, उसे लेकर सोचने से मेरा क्या फ़ायदा ? मैं अपनी तकलीफ़ में मर रहा हूँ, मुझे कौन देखे, उसका ठिकाना नहीं, और मैं दूसरों की फ़िक्र में पड़ा हूँ !

और ठीक उसके बाद ही सुखदा आयी।

बूढ़े बाबू सुधन्य से बोले, 'मुझे वह सब सोचना अच्छा नहीं लगता, सुधन्य। मैं अपनी ही फ़िक्र में मर रहा हूँ, मुझ से वह सब बात कहने मत आया करो।'

सुधन्य बोला, 'क्या कह रहे हो काका बाबू, हमें यह सब फ़िक्र नहीं करना है ! इतने रुपयों की जायदाद लेकर सब बरबाद करेंगे और तुम आँखें खोले वह देखते रहोगे ?'

बूढ़े बाबू गुस्सा हो जाते। कहते, 'तू इस वक़्त जा तो। तू जा। मुझे कुछ अच्छा नहीं लगता। मैं अपनी तकलीफ़ में मर रहा हूँ, और पुलिस किसे कहाँ पकड़ ले गयी, यह जानकर मुझे क्या फ़ायदा ? तू इस वक़्त जा, चला जा।'

कहकर बूढ़े बाबू फिर करवट लेकर लेट गये।

लेकिन जीवन का इतिहास तो संसार के इतिहास के समक्ष कुछ भिन्न नहीं है। दुनिया जैसे अपने नियम से अपनी राह बना लेती है, जीवन भी वैसे ही है। जीवन का इतिहास खोजने से यही दिखायी देता है। वहाँ भी कभी बाहरी कायदे-कानून नहीं चलते। जीवन के क्षेत्र में जब भी कोई बाहरी नियम-कानून थोपने चले हैं, तभी-तभी जीवन टेढ़ा हो गया है!

बहुत दिनों बाद यह कलकत्ता ने फिर एक बार दूसरी ओर मोड़ लिया था। लेकिन उन्नीस सौ छप्पन वर्ष के उस दिन को कौन सोच सका था कि वह साल इस तरह समाप्त होगा!

सन्दीप-दा प्रतिदिन की तरह उस दिन भी पार्टी के ऑफ़िस में बैठकर काम कर रहे थे कि देवेश आया।

सन्दीप-दा ने मुँह उठाकर देखा। बोले, 'क्या हुआ, देवेश? वीरभूम की क्या खबर है?'

देवेश बोला, 'वीरभूम की खबर बाद में बताऊँगा, लेकिन पहले टुलू की खबर बताता हूँ।'

'टुलू? टुलू की क्या बात है?'

देवेश बोला, 'कल रात को सियालदह स्टेशन पर उतरते ही खबर मिली। आपने नहीं सुना?'

'खबर क्या है, यह तो बताओ न?'

'प्रवेश सेन का खून हो गया है, सुना है?'

सन्दीप-दा बोले, 'वह तो सुना है। लेकिन उससे हमें क्या? उसके लिए सुना है, आज कांग्रेस के ऑफ़िस में मीटिंग हो रही है।'

देवेश बोला, 'लेकिन उसके साथ हम भी जुड़ गये हैं।'

'किस तरह?'

'टुलू को भी तो पुलिस पकड़ ले गयी है।'

'यह क्या? पुलिस ने तो उस सुरेन सान्याल को पकड़ा है। उसके साथ सुरेन का क्या सम्बन्ध है?'

देवेश बोला, 'पुलिस तो इसीलिए सुरेन के घर की तलाशी लेने गयी थी।'

सन्दीप-दा फिर भी बात समझ न सके। बोले, 'सुरेन ने क्या टुलू का नाम बता दिया था?'

देवेश बोला, 'सुरेन टुलू का नाम क्यों लेगा? वह भी तो एक सदस्य है। सुरेन ने कहा कि उसने प्रवेश सेन की हत्या की। लेकिन टुलू कहती है

कि उसी ने स्वयं हत्या की है।'

'उसके माने ?'

'उसके माने तो पुलिस भी नहीं समझ पाती, मेरी भी समझ में नहीं आते। अगर टुलू इसमें फँस जाती है तब तो चुनाव हमारे ख़िलाफ़ जायेगा। वोटर कहेंगे कि हम विरोधी पार्टी के लोगों की हत्या करके जीतना चाहते हैं।'

सन्दीप-दा बोले, 'बेकार बात है। चुनाव होता है आवेश का काम। वोटरों को एक बार सिर्फ़ अच्छी तरह समझा सकने से ही होगा कि कांग्रेस राज ख़राब है। वे लोग तो कांग्रेस शासन के ऊपर पहले ही से बिगड़े हुए हैं। तुमको सिर्फ़ आवेश की भावना को गुदगुदा-भर देना है।'

'लेकिन वे तो प्रचार करेंगे कि हम कम्युनिस्ट लोग हत्यारे हैं।'

सन्दीप-दा बोले, 'हत्यारे हैं या नहीं, वह तो कचहरी में साबित होगा। तुम प्रचार करोगे कि कांग्रेस ने हमारी पार्टी के मेम्बरों को झूठ-मूठ ख़ून के केस में फँसा दिया है।'

'लेकिन वह कहने से क्या लोग सुनेंगे ?'

'लोगों को तुम जो समझाओगे, वही समझेंगे। लोगों की कोई जात नहीं होती। इस बात पर निर्भर करता है कि तुम किस तरह मामले को सुलझाते, समझाते हो।'

सन्दीप-दा के बात बताने पर भी कलकत्ता के लोगों के मन में जैसे खटका लग गया। कांग्रेस ख़राब है, यह तो मानते हैं। लेकिन कांग्रेस के बदले जिसे लाना चाहा, वही क्या अच्छे हैं! सड़कों पर, बसों-ट्रामों में ऑफ़िस-कचहरी में भी वही लेकर ज़ोरों की बहसें चलने लगीं।

ठकुरिया जाकर सहदेव बाबू को देवेश ही ख़बर दे आया।

सहदेव बाबू आसमान से गिर पड़े। रोते-रोते दोनों अंधी आँखें भा हो गयीं। बोले, 'फिर क्या होगा, बाबा ? तो फिर हमारी टुलू का क होगा ?'

देवेश बोला, 'आप कुछ फ़िक्र न करें। आप बुड्ढे आदमी हैं। अ तो चाहने पर भी कुछ न कर सकेंगे। हम ही जो होगा उसके ि करेंगे।'

सहदेव बाबू बोले, 'टुलू को अगर कुछ हो जाता है तो हम कैसे ज़ि रहेंगे, बाबा ? हमें उसी लड़की का आसरा है। मैंने तभी लड़की से द बार मना किया था कि इन सब झंझटों में न जा बेटी, लेकिन अब होना था सो हो गया, मैं अब क्या करूँ ? किसके पास जाऊँ ? हमें देखेगा ?'

फूलू भी पास खड़ी बातें सुन रही थी। उसके मुँह से कोई बात नही निकली।

देवेश ने उसके सिर को थपथपाकर कहा, 'कुछ फिक्र न करना रे फूलू, हम तो है। और बीस रुपये रख। दीदी जब तक नही आती, इतने दिन बीच-बीच मे मैं आकर तुझे खर्च दे जाऊँगा। और अगर कुछ जरूरत हो तो हमारे ऑफिस मे खबर कर देना। तू तो हमारा ऑफिस जानती है!'

फूलू ने सिर हिलाया।

देवेश फिर न रुका। उसे बहुत-से काम थे। अकेले टुलू देवेश के बहुत-से काम निबटा देती थी। टुलू के लिए उसका मन गहरे रो उठा। उसे

है। ठीक ऐसे वक़्त टुलू यह क्या किस्सा कर बैठी?

सड़क पर बहुत देर खड़े रहने के बाद एक बस आयी। बस पर चढ़ने के साथ-ही-साथ बस छूट गयी। बस की भीड़ मे भी बस वही एक बहस चल रही थी—चुनाव की। वोट किसे देंगे, किसे देना उचित है, इसी की जोरो से बहस थी। दो ओर दो दल थे। एक दल कांग्रेस के पक्ष में, एक दल विरोध मे। प्रवेश सेन के खून होने की बहस चल रही थी। एक दल कह रहा था कि कम्युनिस्टो ने गुंडे पाल रखे हैं और दूसरा दल कहता—न मशाई, कांग्रेस भी कोई भली नही है, उनके पास भी बहुत गुंडे पले हुए हैं।

बंगाली और कुछ काम करें या न करें, बहस मे बहुत निपुण होते है। उन्हें बहस का मौक़ा मिले तो उन्हे और कोई रोक नही सकता।

बहुत देर तक देवेश बहस सुनता रहा। बस भी चल रही थी और बहस भी जम गयी थी।

देवेश के मन में आया कि जितनी दूर बस जायेगी, उतनी दूर तक इनकी बहस भी चलेगी। इस जात को समझाना तो लेनिन के लिए भी असाध्य होता। लेनिन को अगर इस बंगाल की चुनाव की लड़ाई मे पड़ना पड़ता तो वे भी शायद थक जाते!

लेकिन हार जाने पर और जिसका भी चले, देवेश का काम नही चलता। देवेश को खुद घर नही मिला, गृहस्थी नही मिली, स्नेह, प्यार, ममता नही मिली, इसीलिए उसने किसी का कभी विश्वास नही किया। एकमात्र काम का विश्वास किया। जिस तरह भी हो, काम से पार्टी को

बनाना होगा। अधिकार हथियाना होगा। उसमें अगर बन्दूक की गोली खाना पड़े तो वह भी खाऊँगा। लेकिन काम न कर जिन्दा रहने से फ़ायदा क्या ! वे सब मूर्ख हैं। बेवकूफ़ ! सिर्फ़ स्कूल-कॉलेज में लिखना-पढ़ना सीखा है। सीखकर बूर्जुआ हो गये हैं। मॉर्क्स नहीं पढ़ा, लेनिन नहीं पढ़ा, स्टालिन नहीं पढ़ा—किस तरह जानेंगे कि उनके दुःख और कष्ट के लिए कौन ज़िम्मेदार है ? उस ब्रिटिश सरकार के वक़्त से इस कांग्रेस के शासन तक चली आ रही परम्परा में स्कूल-कॉलेजों में जो कुछ पढ़ा वही पढ़ा। लेकिन रूस में क्या हुआ, चीन में क्या हो रहा है, वह तो नहीं जान सके। किसी ने उन्हें वह बताया भी नहीं। वे मूर्ख हैं !

एक स्टॉप पर बस के रुकते ही देवेश उतर पड़ा।

अगर ज़रूरत हो तो टुलू के लिए एक वकील करने की बात सन्दीप-दा ने कही थी। बस से उतरकर एक गली में गया। क्रिमिनल कोर्ट के वकील पशुपति दास थे। उस समय भी पशुपति दास का सदर फाटक खुला था। ढेर सारे काग़ज़-पत्रों के बीच पशुपति बाबू उस वक़्त डूबे हुए थे।

बोले, 'कौन ?'

देवेश को पहचाना। कई बार उन्हें देवेश की पार्टी के मेम्बरों की ओर से ज़मानत देना पड़ी थी।

'अब क्या है ?'

देवेश बोला, 'अखबार में देखा तो होगा। हमारी ही पार्टी की लड़की टुलू है। टुलू सरकार।'

'कौन-सा थाना है ?'

देवेश ने बताया, 'बड़तला।'

पशुपति बाबू बोले, 'लेकिन वह तो नॉन-बेलेबल केस है। उस केस में तो आसामी को ज़मानत नहीं मिलेगी।'

देवेश बोला, 'वह जो करना है आप करें—आप पर ही सब भार डाले जा रहा हूँ।'

पशुपतिनाथ बोले, 'तो इस काग़ज़ पर आसामी का नाम-धाम-ठिकाना—सब लिखकर दे जाओ।'

कहकर एक काग़ज़ आगे कर दिया। देवेश उस पर टुलू का नाम, पिता का नाम, पता सब-कुछ लिखकर उठ खड़ा हुआ।

उसके बाद काम निबटाकर फिर सड़क पर निकल आया।

म दिन सारा कलकत्ता शहर फिर उलट-पलट गया। बस में, ट्राम में, ऑफिस में, कचहरी में फिर वही खबर। इस बार बहुत जबर्दस्त खबर ी। जांच-कमीशन के सामने सहसा सभी पमिली को देखकर ताज्जुब में ड़ गये थे। पहले भी एक दिन आयी थी। उस दिन साथ में था हत्या का भियुक्त सुरेन सान्याल। आज बिलकुल अकेली थी।

जो अखबार पढ़कर खबर जान सके, उन्हें पहले से मालूम होता तो भी जरा देखने जाते।

'बहुत सुन्दरी है शायद, मशाई?'

'अरे, पुण्यश्लोक बाबू की लड़की है, सुन्दरी न होगी?'

जो लोग उस दिन घटना-क्रम से मौजूद थे, वे पमिली का रूप देख-र अचम्भे में थे। जैसा उसका बात करने का ढंग और उच्चारण था, मा ही तेज था। तेज कहने लायक तेज! तेज से लड़की मानो फूट पड़ ही हो।

जो लोग वहाँ जाकर रोज बैठे-बैठे तमाशा देखते थे उन्हें याद है। उस दिन भी हाल में शोर हुआ था। कम्युनिस्ट पार्टी की एक वर्कर लड़की उस दिन वहाँ बेहोश हो गयी थी। जिरह होते-होते सब काम बीच में न्द हो गया था। लेकिन उसके बाद पता लगा कि वही लड़की हत्या के र्म में गिरफ्तार हो गयी है।

'जब जुलूस पर गोली चली थी तब आप कहाँ थीं?'

'मैं तब गाड़ी ड्राइव कर ले जा रही थी।'

'आपने जब देखा कि सामने जुलूस चल रहा है तब उधर गाड़ी क्यों चलायी?'

पमिली बोली, 'जुलूस को आते देखकर गाड़ी रोक दी। सोचा कि जुलूस चला जायेगा तब मैं गाड़ी घर की ओर घुमा लूँगी।'

'आप जब गाड़ी में बैठी थीं, तो आस-पास कहीं पुलिस को देखा था?'

पमिली बोली, 'सड़क के हर मोड़ पर पुलिस राइफलें लिये खड़ी थी।'

'आपको कुछ गड़बड़ दिखायी दी थी?'

पमिली बोली, 'पहले कुछ नजर नहीं पड़ा, लेकिन सहसा देखा कि जुलूस में से कुछ गुंडे पुलिस को निशाना बनाकर सोडे की बोतलें, ईंटों

टुकड़े फेंक रहे हैं।'

'कैसे समझीं कि वे गुंडे थे ?'

पमिली ने सीधे जज की ओर देखा। बोली, 'मैं पहचान सकती हूँ। उन सबको रुपये देकर प्रवेश सेन ने जुलूस में हिस्सा लेने को भेजा था।'

'कौन प्रवेश सेन ? जिस प्रवेश सेन का खून हुआ है ? उसे आपने कैसे पहचाना ?'

पमिली बोली, 'वह मेरे पिता पुण्यश्लोक राय का पर्सनल सेक्रेटरी था।'

'किस तरह पता चला कि उसने गुंडों को रुपया दिया था ?'

पमिली बोली, 'मेरे सामने ही मेरे पिता ने उसे पाँच हज़ार रुपये गुंडों को देने के लिए दिये थे, जिससे कि वे जुलूस को तोड़ दें।'

'आप जो ये सारी बातें कह रही हैं, तो आपको मालूम है कि इसका परिणाम क्या हो सकता है ?'

पमिली बोली, 'मैं सब तरह के नतीजों के लिए तैयार होकर ही ये बातें कह रही हूँ।'

'इस प्रवेश सेन के साथ ही क्या आपकी शादी का सारा इन्तजाम पक्का हुआ था ?'

'हाँ।'

'लेकिन आपने पहले कहा था कि आपकी गाड़ी उन लोगों ने जला दी थी, बता सकती हैं किसने जला दी थी ? गुंडों ने ?'

'वह मैंने नहीं देखा। उसके पहले ही मैं गाड़ी से उतर गयी थी। पुलिस अपनी वैन में मुझे सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देने को आ गयी थी।'

'आप जो यह गवाही दे रही हैं इसके बारे में पहले किसी से बातची[illegible] की थी ?'

वकील के इस बात पर आपत्ति करते ही इस बात का जवाब पमिल[illegible] को न देना पड़ा। सारा हॉल निस्तब्ध होकर गवाह की बातों को [illegible] निगल रहा था। अखबारों के रिपोर्टर खस-खसकर कागज़ के ऊपर अप[illegible] रिपोर्ट लिख रहे थे जिससे कि कोई भी शब्द रह न जाये। कठघरे से उत[illegible] कर आते ही पुण्यश्लोक बाबू की लड़की जूतों की खट-खट आवाज़ क[illegible] करते सीधे सदर दरवाज़े की ओर बढ़ गयी। उसके बाद फाटक पार [illegible] बाहरी सड़क पर जा उतरी। वहाँ उसकी गाड़ी खड़ी थी। गाड़ी [illegible] बैठकर अपने-आप ही इंजन स्टार्ट किया। उसके बाद उस इंज[illegible] आवाज़ सड़क की असंख्य गाड़ियों में गुम गयी।

कब पद्मिनी यहाँ आयी थी, उसका पहले किसी को पता नहीं चला। सारे कलकत्ता के लोगों में कोई शायद सोच न सका कि किसी दिन राजशक्ति के अन्दर से ही उसके नाश का बीज सिर उठा वृक्ष बनकर अपना स्वरूप प्रगट करेगा। मौत किसी-न-किसी दिन आयेगी ही। लेकिन इसलिए इस तरह आयेगी, यह किसने सोचा था ? किसने सोचा था कि पुण्यश्लोक राय की अपनी बेटी इस तरह अपनी गवाही दे जायेगी ?

समाचार के अखबारों में निकलने के साथ-ही-साथ बहस-मुबाहसा शुरू हो गया। यह कैसा बाप है, और यह कैसी बेटी है !

बस और ट्रामों की आलोचना मानो और भी तेज़ हो गयी। लोग कहीं कुछ न करते। ऑफिस में, बैंक में, कोर्ट में, राइटर्स बिल्डिंग में बाबू लोग सिर्फ गप्पें हाँकते रहते। उनके हाथों की कलमें हाथों में ही रह जातीं, सवेरे से इसी बात का एक सिलसिला चलता।

कोई कहता, 'बहुत तेज़ लड़की है, मशाई।'

कोई दूसरा कहता, 'अरे, यह पैदा हुई उस राक्षस-वंश की लड़की प्रह्लाद !'

पास से कोई कहता, 'होने से क्या होगा मशाई, यह लड़की तो शराब पीती है, यह शायद नहीं जानते ?'

पद्मिनी शराब पीती है, शराब पीकर हुल्लड़ करती है, यही किसी को जानने को नहीं रह गया। कहाँ पर किस तरह जीवन की गणना में सबकी एक गलती रह गयी थी। कोई जैसे गलती ठीक नहीं कर पा रहा हो। जिस नियम से संसार इतने दिनों से चला आ रहा था, उसी नियम में गलती घुस गयी थी। नहीं तो अपनी लड़की होकर कोई बाप के मुँह पर इस तरह कालिख पोतती है ? इसमें तो बाप की ही बदनामी होगी। इसमें तो बाप ही चुनाव हार जायेगा। पुण्यश्लोक बाबू को अगले चुनाव में कौन वोट देगा ?

मुहल्ले-मुहल्ले में उनका ही ज़िक्र चलने लगा। स्वयं-सेवक लोग जाकर मुहल्ले के लोगों को समझाते।

कहते, 'आप लोग आदमी पहचान रखिये। बन्दूक की गोली से जिसने निर्दोष लोगों को मारा है उसे ही वोट देंगे, या जो साधारण मनुष्य को खिला-पिलाकर शान्ति से जीवित रखना चाहता है, उसे वोट देंगे।'

कलकत्ता का आदमी जैसे भटक जाता। सच ही तो है, किसे वोट देंगे ? कौन उनका हित-चिंतक है ? कांग्रेस या कम्युनिस्ट पार्टी ?

लेकिन कोई कुछ भी सोचकर ठीक नहीं कर पाता। उससे तो हम उस अँग्रेज़ के राज में जैसे थे, वैसे ही कर दो बाबा, यह सब चुनाव-उनाव

नहीं चाहते। हमने स्वतन्त्रता माँगकर ग़लती की। राशन का खाना खाकर अब नहीं चलता। वह पाँच रुपये मन के चावल के ज़माने में हमें लौटा ले चलो, हम चैन की साँस लें। हमारा मंत्री हो, कोई लाभ नहीं; हमें देश स्वतन्त्र करवाने की भी ज़रूरत नहीं। तब लड़के-लड़की फिर भी बाप-माँ को मानते थे। हम यह किस युग में रह रहे हैं, बाबा!
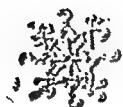
बहुत रात को बड़तला थाने का दारोग़ा हवालात का दरवाज़ा खोलकर अन्दर घुसा।

सुरेन कई दिन सोया नहीं था। लेकिन उसे मानो लगता कि उसने इस जेलखाने में बहुत युग बिना नींद के काट दिये हैं। जेल तो जेल; जन्म से ही उसने जीवन जेलखाने में बिताया है। अन्तर केवल इतना है कि वह बड़ा जेलखाना था, यह छोटा जेलखाना है। उसी जेलखाने में वह बड़ा हुआ, उसी जेलखाने में ही उसने सब-कुछ समझना सीखा, सोचना सीखा। आज इस छोटे जेलखाने में बैठे-बैठे वही बातें सोचता।

नियम के अनुसार खाना आया। गंधाता हुआ कुछ भात और तरकारी। वह सब पड़ा रहता। उसके बाद वक़्त होने पर एक आदमी आकर वह उठा ले जाता।

याद आतीं बाहर की दुनिया की बातें। उसके पकड़े जाने की खबर अब तक सबको मालूम हो गयी होगी। सुव्रत भी ज़रूर जानता होगा। शायद उसे सब बेवकूफ़ समझते हैं। किसलिए प्रवेश सेन की वह हत्या करने गया? उसने उसका क्या अहित किया था?

थाने के बड़े बाबू ने भी आकर वही बात पूछी, 'कैसे हैं, सुरेन बाबू? खाने-वाने की तो कोई असुविधा नहीं हो रही है न?'

सुरेन कुछ जवाब नहीं देता।

बड़े दारोग़ा पूछते, 'बात कीजिये। मेरी बात का जवाब दीजिये। चुप बने रहने से आपका कोई फ़ायदा नहीं। आपका भी फ़ायदा नहीं, हमारा भी फ़ायदा नहीं।'

उसके बाद कुछ रुककर फिर शुरू किया, 'देखिये, आप इज़्ज़तदार घराने के लड़के हैं। हम नहीं चाहते कि आपका कोई भी नुक़सान हो। मैं

जी-जान से आपको बचाने की कोशिश करूँगा। किसी का कोई नुकसान हो, यह मैं नहीं चाहता। आप सिर्फ यह बताइये कि किसने प्रवेश सेन का खून किया है ?'

सुरेन ने इतने दिनों बाद मुँह उठाया, बोला, 'कहा तो कि मैंने खून किया है।'

'लेकिन क्यों ? आप क्यों प्रवेश सेन का खून करने गये ? प्रवेश सेन ने आपका क्या नुकसान किया था ? प्रवेश सेन तो बहुत अच्छे आदमी थे, उन्होंने तो किसी का कोई नुकसान नहीं किया। उनका खून आपने क्यों किया ? या कोई और कारण था ?'

सुरेन बोला, 'न, और कोई कारण नहीं था।'

'तो आपकी दोस्त टुलू देवी जो कहती हैं कि खून उन्होंने किया है ?'

सुरेन बोला, 'न, टुलू ने खून नहीं किया है। खून मैंने किया है।'

बड़े बाबू बोले, 'आप दोनों तो खून नहीं कर सकते। आप लोगों में से ही किसी-न-किसी ने खून किया है। साफ-साफ बताइये न, आप लोगों में सच-सच किसने खून किया है ?'

किसी तरह जब जवाब न पा सके, तो फिर बड़े बाबू टुलू के कमरे में गये। टुलू के कमरे के दरवाजे पर पहुँचकर ताला खोला।

टुलू के सामान्य जीवन में जैसे दूसरे जन्म का मुहूर्त आ गया था। कहाँ बंगाल के किसी छोटे, अनजाने प्रदेश में वह पैदा हुई थी, उसके बाद कितने आँधी-तूफान पार कर मृत्यु से लड़ते-लड़ते कलकत्ता के एक गुमनाम गाँव में आकर वह मर ही गयी थी। लेकिन इस हवालात की अँधेरी कोठरी में उसने जैसे दूसरा जन्म पाया।

बड़े बाबू आकर बोले, 'कैसी हैं, टुलू देवी ? खाने-पीने की कोई तकलीफ तो नहीं है ? हो तो आप मुझे बताइये। ये लोग आजकल बहुत बुरे हो गये हैं। सब चीजें चोरी करना शुरू कर दिया है।'

ये सब रोज की बातें थीं। यह बातें सुनते-सुनते टुलू के कान पक गये थे। फिर भी वह एक ही बात बड़े बाबू पूछते।

टुलू उस बात का कोई भी जवाब न देती।

'अच्छा टुलू देवी, मैंने आपसे पहले भी पूछा था, अब भी पूछ रहा हूँ। प्रवेश सेन का किसने खून किया, सच बताइये न ?

टुलू कहती, 'मैंने तो आपसे बताया, फिर भी बार-बार एक ही बात क्यों पूछते हैं ?'

बड़े बाबू जवाब सुनकर खफा न होते।

कहते, 'आप तो समझती है कि हमें नौकरी करके पेट चलाना पड़ता

है। यह हमारी ड्यूटी भी है। उधर सुरेन वाबू कहते हैं कि प्रवेश सेन का ख़ून उन्होंने किया है। और इधर आप कहती हैं कि आपने किया है। मैं किसकी वात का विश्वास करूँ ?'

टुलू वोली, 'मुझे आप और परेशान न करें। अब आप जायें।'

'आप ख़फ़ा क्यों हो रही हैं, टुलू देवी ? मुझे अपनी ड्यूटी पूरा करने दीजिये।'

इसके वाद टुलू ने वात वन्द कर दी। फिर किसी भी वात का जवाव न देती। अन्त में हताश होकर वड़े वावू कोठरी से निकल जाते। लेकिन किसी तरह कोई राह न निकलती। पूरे कलकत्ता के लोग उत्सुक थे कि क्या होगा, आगे क्या पता चलेगा। वे जानना चाहते थे कि असल ख़ूनी कौन है। वे हर रोज़ अखवार के पन्ने पलटते। लेकिन असली रहस्य कोई खोल न पाता।

भूपति भादुड़ी उस दिन भी थाने की ओर क़दम वढ़ा रहे थे। जिस दिन से भांजा पकड़ा गया उस दिन से भूपति भादुड़ी के सिर यही एक मुसीवत आ पड़ी थी। कहीं कोई किनारा नहीं और पानी की तरह रुपये वह रहे हैं। पागलों की तरह कभी वक़ील के घर जाते हैं, फिर थाने जाते हैं। अगर कोई मुंह खोलकर रुपये मांगे तो वह एक तरह से अच्छा है। उसके फिर भी कुछ अर्थ हैं। लेकिन यह दूसरी तरह है। पूछने पर कोई कुछ नहीं वताता। लेकिन रुपये वढ़ाने पर हाथ फैला देंगे। रुपया तो लेंगे, लेकिन कोई सिर नीचा नहीं करेगा !

उस दिन भी उसी तरह छाता लेकर भूपति भादुड़ी निकले।

सहसा सुधन्य ने आकर पीछे से पुकारा, 'मैनेजर वावू !'

भूपति भादुड़ी ने पीछे घूमकर देखते ही मुंह टेढ़ा किया। वोले, 'फिर पीछे से पुकारा ? क्या हुआ, कहो ? क्या चाहते हो ? कुछ काम से जा रहा था, ठीक उसी वक़्त पुकारे विना तुम्हारा काम न चलता ?'

सुधन्य वोला, 'कह रहा था कि काका वावू की तवीयत ठीक नहीं है। अव लगता है कि ज्यादा दिन नहीं रहेंगे।'

भूपति भादुड़ी विगड़ गये। वोले, 'यही वात कहने के लिए पीछे से पुकारा था ? तो तुम्हारे काका वावू मरें या जियें, उससे मेरा क्या ? वुड्ढे हो गये, और कितने दिन जिन्दा रहेंगे ? अव तो जाना ही ठीक है।'

सुधन्य वोला, 'हजार हो, वे मेरे काका वावू हैं, उनके भले-वुरे की वात तो मुझे सोचना होती है।'

भूपति भादुड़ी मुंह फेरकर फिर जैसे जा रहे थे, उसी तरह चलने

तड़तड़ सीढ़ियाँ पार करते भूपति भादुड़ी ऊपर चढ़ने लगे। जितना ही ऊपर चढ़ते रोने की आवाज़ उतनी ही साफ़ होने लगी। तो क्या माँ जी सचमुच मर गयीं ?

ओफ़्फ़ोह ! भूपति भादुड़ी-से आदमी के मुँह से भी अचानक एक ओफ़्फ़ोह शब्द के साथ एक गहरी साँस निकल गयी। एकदम तिमंज़िला चढ़कर वायीं ओर का कमरा था। वहुत दिनों से वहुत वार इस कमरे में आना हुआ। लेकिन वह चिरकाल का परिचित कमरा भी भूपति भादुड़ी को मानो चिरकाल का अपरिचित लगा।

सामने ही मुंह पर आँचल दावे सुखदा रो रही थी। भूपति भादुड़ी के निकट जाते ही वह एक ओर हटकर खड़ी हो गयी। लेकिन रोना किसी का न रुका। वादामी बूढ़ी हो गयी थी। आज उसमें रोने की भी ताक़त नहीं रही थी। लेकिन फिर भी वह रो रही थी। और तरला ? तरला नहीं रोयेगी तो कौन रोयेगा ? उसकी सेवा से ही माँ जी इतने दिनों तक ज़िन्दा रहीं। अव उसका भी काम समाप्त हो गया। अव वह किसकी सेवा करेगी ? किसे नहलायेगी ? किसे दवा खिलायेगी ? किसके सहारे यहाँ नौकरी करेगी ? माँ जी क्या सवकी ही मालिक थीं ? माँ जी इस घर की ऐतिहासिक आख्यान थीं। माधव कुंडू लेन के इस घर की तरह ही था माँ जी के जीवन का इतिहास। माँ जी के साथ-साथ वह इतिहास भी समाप्त हो गया।

भूपति भादुड़ी आहिस्ता-आहिस्ता कमरे में जाकर खड़े हुए। उसके वाद माँ जी के सिरहाने। मानो मृत्यु का अनुभव करना चाहा हो। मृत्यु का सामना भी करना चाहा। जो मृत्यु माँ जी को इतने दिनों से काम्य थी, वही मृत्यु क्या इतने दिनों में सचमुच आ पहुँची ? या दूसरे अवसरों की तरह यह भी एक छलना थी ?

समस्त रुदन का अतिक्रम कर उस समय कमरे में जैसे एक वड़ी निस्तब्धता साँय-साँय कर रही थी। मानो अव्यक्त भाषा में कहना चाहती हो—मैं चली—मैं चली—। खुद मैंने वहुत यन्त्रणा पायी। किन्तु तुम सुखी रहो। तुम लोगों को मैं सारी यन्त्रणाओं से मुक्ति दे गयी।

आश्चर्यजनक है मानव का मन, और आश्चर्यजनक हैं मन की वे कामनाएँ-वासनाएँ-आकांक्षाएँ। शिवशम्भु चौधरी की वड़ी साध थी कि लड़की जीवन में सुखी हो, वेटी माँग के सिन्दूर से पति की गृहस्थी को प्रकाशित किये रहेगी। लेकिन मनुष्य अपनी तवीयत के अनुसार सपना देखता है और मानव का ईश्वर वही स्वप्न तोड़कर, चूर-चूर कर, अपनी इच्छा को सार्थक करता है। आज शिवशम्भु चौधरी नहीं हैं। लेकिन न रहे,

यह अच्छा ही हुआ। अपनी आँखों से उन्हें अपना सर्वनाश न देखना पड़ा। और जितना वे देख गये उतना ही क्या कम था! वे भी तो उस दिन इसी तरह अपनी इस लावण्यमयी को छोड़कर चले गये थे। उस दिन क्या वे सोच सके थे कि उनकी लावण्य भी उनकी ही तरह इस तरह लाचार हो जायेगी?

भूपति भादुड़ी कुछ देर के लिए शायद कुछ भावाविष्ट हो गये थे। पीछे घूमकर सहसा धनंजय को देखते ही जैसे उन्हें होश आ गया।

साथ-ही-साथ डाँटने लगे, 'मुंह बाये मेरा मुंह क्या देख रहे हो? मेरे मुंह की ओर देखने से क्या सब फैसला हो जायेगा? डॉक्टर को नही बुलाना है?'

बात सुनते ही धनजय बाहर निकल गया।

तब भूपति भादुड़ी को जैसे अचानक याद आया कि उन्हें भी थोड़ा रोना चाहिए। थोड़ा भी न रोने से खराब लगेगा। सहसा घड-घड आवाज़ निकाली। गों-गों-सी अस्वाभाविक आवाज़! उसके बाद बिलकुल दबा न पाने पर वह शब्द मानो छाती फाडकर गले से जोरों से बाहर निकल पड़ा।

जिस घर की कहानी लेकर यह उपन्यास आरम्भ हुआ था, माँ जी की मृत्यु के साथ उसकी कहानी समाप्त नही हुई। किसी दिन शिवशम्भु चौधरी ने इस विशाल जायदाद की सोलहों आना समृद्धि बढ़ायी थी। उनकी बेटी की मृत्यु के साथ क्या उसका अन्त हो सकता है? मनुष्य के चले जाने से क्या मनुष्य का इतिहास समाप्त हो जाता है? इतिहास की तो मृत्यु नहीं होती है। और इतिहास की मृत्यु नहीं होती, इसलिए उपन्यास भी आगे बढ़ता है। जहाँ जीवन का सामयिक विराम होगा वहीं उपन्यास समाप्त हो जायेगा, लेकिन इतिहास उसके बाद भी बढ़ता चलता है।

मात्र एक सामान्य मृत्यु! लेकिन यह एक मृत्यु ही उस दिन एक बहुत बड़ी घटना बनकर भूतनाथ के सारे जीवन को दूसरी ओर ले गयी। और केवल उसे ही नहीं, वे बूढ़े बाबू, मुधन्य, मुसदा सभी मानो तूफ़ान के भँवर में एक विचित्र परिस्थिति में पड़कर विभिन्न स्थानों पर आश्रय ढूँढकर,

दूसरे रूप में रूपान्तरित हो गये थे।

किन्तु वे बातें यथासमय।

उधर उस वक़्त पुण्यश्लोक बाबू की घबराहट की सीमा नहीं थी। घबराहट और किसी बात के लिए नहीं, अपने लिए थी। एकमात्र विश्वस्त आदमी था प्रवेश सेन। ठीक इस वक़्त वह चला गया। पहले प्रवेश सेन ने ही चुनाव का सब झंझट संभाला था। उसके पास रुपये छोड़कर ही पुण्यश्लोक बाबू निश्चिन्त थे। और उसके सिवा पहले चुनावों के अवसरों पर कांग्रेस का नाम लेने के बाद और कुछ न कहना पड़ता था। लोग कांग्रेस का नाम सुनते ही आँख बन्द करके वोट देते थे। लेकिन अब वे दिन नहीं रहे। विशेष रूप से कुछ दिन पहले कम्युनिस्टों के जुलूस पर गोली चलाने के बाद जैसे हवा अजीब-सी बदल गयी थी। इस बार इसीलिए कुछ फ़िक्र हुई थी। इस बार इसीलिए वे स्वयं-सेवकों को साथ लेकर खुद ही घर-घर जाते।

केवल पुण्यश्लोक बाबू अकेले नहीं, पार्टी के लोग सभी इतने दिनों बाद सड़क पर उतरे हैं।

पुण्यश्लोक बाबू हाथ जोड़कर सबके दरवाज़े-दरवाज़े जाकर खड़े होते। कहते, 'आपकी सेवा में फिर आया हूँ, इस बार वोट देने के समय दया करके मुझे याद रखेंगे।'

भले लोग कहते, 'ज़रूर, आप कष्ट करके खुद क्यों आये—हम आपको ही वोट देंगे।'

बहुत दिनों से पैदल चलने की पुण्यश्लोक बाबू की आदत नहीं रही थी। धूप में पैदल चलने में पसीने से नहा उठते। उस हालत में पुण्यश्लोक बाबू को देखकर सबको दया आती। लेकिन उनके चले जाते ही सब अपनी असलियत में आ जाते। कहते—'पाँच बरस में एक दिन नहीं दिखायी दिये, आज चुनाव आया है इसलिए घर पर आकर धरना दे रहे हैं।'

समाज-सेवा करने जाकर इन सब बातों को सुन डर जाने से नहीं चलता। पुण्यश्लोक बाबू के कान में भी ये बातें पड़तीं। लेकिन वह उन पर ध्यान नहीं देते। कहते, 'वह सब सोचने से हम लोगों का काम नहीं चलता, भाई। जीवन-भर यही करते आये, जितने दिन जियेंगे, गालियाँ सुनना पड़ेंगी।'

लेकिन सब मुहल्ले घूम-घूमकर जब घर आते, तो नौकर-चाकर सभी भागे आते। कोई आकर जूते खोल देता, कोई कुरता। सभी डरे रहते। और उन्हें एक तकलीफ़ तो थी नहीं। बहुत-सी थीं। पत्नी नहीं थी। उस पर घर

में एक लड़की और एक लड़का थे। लड़की का भरोसा नहीं। और लड़का? *वह अमेरिका से इतना कुछ पढ-लिख आया, लेकिन उससे बाप को क्या* मदद मिली?

कभी-कभी जब बहुत अधिक झंझट मे पड़ते, तो मदद के लिए प्रवेश था, हरिलोचन था। हरिलोचन तो अब भी है। लेकिन उससे तो ज्यादा काम होने को नहीं। दो-एक चिट्ठियाँ टाइप करना और हिसाब-किताब रखना। असल में पुण्यश्लोक बाबू का सारा काम प्रवेश करता आया था। उस प्रवेश के आज न रहने से तमाम झंझट उठ खड़े हुए थे। अब उस तरह किसी पर विश्वास भी नहीं किया जा सकता। उनके पास मन की बात सुनाने को एक आदमी भी नहीं रहा था। ऐसे बेटे-बेटी के होने से उन्हें क्या फायदा था?

एक-एक दिन बीतता और धीरे-धीरे घबराहट बढ़ने लगती। वालंटियर लोग आते और हरिलोचन मुंशी से रुपये माँगते। कहते, 'और रुपये दीजिये, हरिलोचन बाबू।'

हरिलोचन बाबू के पास हमेशा बहुत-से रुपये जमा रहते। हरिलोचन रुपये देते और साथ-ही-साथ एक रसीद भी लिखा लेते। पुण्यश्लोक बाबू बीच-बीच में आकर देखते कि कितना रुपया है। देखते और चौंक पड़ते। रुपया पानी की तरह खर्च हो रहा था। इस तरह अगर रुपया खर्च होगा तो आखिर में जाकर असल में हाथ पड़ेगा।

पुण्यश्लोक बाबू कहते, 'ज़रा खींच-खींचकर खर्च करें, हरिलोचन बाबू।'

हरिलोचन विनयपूर्वक कहते, 'जी, मैं खींच-खींचकर ही तो खर्च करता हूँ।'

उस दिन सारे दिन बड़ी मेहनत हुई। इतने दिनों की देश-सेवा के शरीर में सहसा कलंक लगना शुरू हुआ। प्रवेश नहीं है, कहाँ क्या हो हो रहा है, यह अपनी आँखों देखे बिना विश्वास न होता। सारा क्षेत्र सिर्फ घूमने से नहीं चलता, पार्क में जाकर मीटिंगें करना पड़तीं। एक बार देश-बन्धु पार्क में, उसके बाद गिरीश पार्क में। पहले पुण्यश्लोक बाबू के मीटिंग करने पर बहुत-से लोग जमा होते। वे उनका लेक्चर मन लगाकर सुनते। अब उतने आदमी नहीं आते। और उन्होंने पता लगाया कि उन लोगों की मीटिंग में भीड़ होती, उन पूर्ण बाबू की मीटिंग में। पूर्ण बाबू का लेक्चर सुनते-सुनते लोगों के शरीर में रोयें खड़े हो जाते।

मीटिंग समाप्त कर पुण्यश्लोक बाबू घर आये। देखा कि दो-एक चुनाव के लिए रखे गये आदमी पास के कमरे में बैठे काम कर रहे हैं।

वहाँ जाकर पूछा, 'आज कितने कार्ड हुए ?'

एक लड़का बोला, 'जी, दो हज़ार से ऊपर।'

'पोस्टर छपकर आ गये ?'

'जी नहीं। अभी नहीं आये।'

पुण्यश्लोक बाबू ख़फ़ा हो गये। बोले, 'अभी तक नहीं छपे ? तो कब दीवारों पर लगाये जायेंगे, और कब वे लोगों की नज़र में पड़ेंगे ? तुम लोग क़िसी काम के नहीं। प्रवेश होता तो उस सब के लिए मुझे फ़िक्र न करना पड़ती।'

कहकर फिर वहाँ न रुके। सीधे अपनी बैठक में गये। हरिलोचन शायद उन्हीं की राह देख रहा था। पुण्यश्लोक बाबू को देखते ही बोला, 'सर, आपके लिए टेलीफ़ोन आया था।'

'कहाँ से ?'

'आये तो बहुत थे, लेकिन डॉक्टर राय ने एक बार टेलीफ़ोन किया था। कहा था कि आप ही उन्हें टेलीफ़ोन करें।'

फिर बात नहीं। पुण्यश्लोक बाबू ने फ़ोन मिलाया। उधर से डॉक्टर राय बोले, 'पुण्य, तुमने सुना, कैसी बुरी बात हो गयी ?'

'क्या बुरी बात, सर ?'

डॉक्टर राय बोले, 'तुम्हारी बेटी ने आज जाँच-कमीशन के आगे क्या गवाही दी ? कुछ सुना ?'

'नहीं तो सर, मेरी बेटी ने ? क्या कहा ?'

डॉक्टर राय बोले, 'अपनी लड़की से ही पूछो न। तुम्हारी लड़की कांग्रेस के ख़िलाफ़ जी भर के कह आयी है। तुमने पाँच हज़ार रुपये देकर गुंडे किराये पर कर कम्युनिस्टों को पिटवाया ? यह सब क्या बात है ? मैं नेहरू को क्या जवाब दूँगा, बताओ तो ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'मैंने तो ये सब बातें कुछ भी नहीं सुनी, सर। मैं तो अभी गिरीश पार्क से एक मीटिंग समाप्त कर आ रहा हूँ।'

डॉक्टर राय बोले, 'आज तुम बेटी से बात करो, उससे पूछना कि उसने क्या कहा है।'

कहकर टेलीफ़ोन बन्द कर दिया।

पुण्यश्लोक बाबू कमरे से निकलकर सीधे दो-मंज़िले पर चढ़ गये। लेकिन कहाँ है पमिली ? पमिली का कमरा खाली पड़ा है। और थोड़ा आगे गये। सुव्रत का कमरा पमिली के पास ही था। सुव्रत भी अपने कमरे में नहीं।

उसके बाद समझ में नहीं आया कि क्या करें ! वहीं से पुकारा, 'रघु,

रघु...!'

रघु कहीं से भागा-भागा आया। पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'कहाँ रहता है तू, पता नहीं लगता। दीदीमणि कहाँ हैं?'

रघु बोला, 'मुझे तो नहीं मालूम, हुजूर।'

'घर से कब गयी थी?'

'दोपहर को।'

'दोपहर को कहाँ गयी थी? उसके साथ और कोई था?'

रघु बोला, 'नहीं, अकेली ही तो निकली थी। कुछ कह नहीं गयीं।'

'अच्छा, तू जा। किसी से कोई काम निकलने की राह नहीं।'

रघु चला गया। पुण्यश्लोक बाबू भी नीचे उतरने लगे। उनका मन बहुत भारी हो गया था। अभी कुछ देर पहले वे गिरीश पार्क जाकर गरम-गरम भाषण देकर आये हैं। लोगों ने बहुत तालियाँ बजायीं। इसी से उनका मन बहुत खुश था। लेकिन टेलीफोन पाने के बाद से मन बेसुरा हो गया। अगर सचमुच पमिली ने कमीशन के सामने सब-कुछ खोल दिया तो मुसीबत है। तब तो कल ही सब अखबारों में छपकर निकलेगा। सब-कुछ पता चल जायेगा।

नीचे उतरकर भी क्या करें, समझ में नहीं आया। तबीयत छटपटाने लगी। मन में आया कि अभी अगर पमिली को सामने पावें तो एक हाथ उस पर लगावें।

सहसा सामने के फाटक से पमिली की गाड़ी घुसी। पुण्यश्लोक बाबू चलते-चलते ठिठककर खड़े हो गये।

पमिली गाड़ी से उतरकर ऊपर जा रही थी।

पुण्यश्लोक बाबू ने वहीं से खड़े-खड़े आवाज़ लगायी, 'ठहरो...!'

पमिली जरा रुकी। उसके बाद जिस तरह ऊपर जा रही थी, उसी तरह चलने लगी।

पुण्यश्लोक बाबू को लगा कि उनकी अपनी बेटी ही ने जैसे उनकी उपेक्षा की। उनकी पीठ पर मानो चाबुक पड़ा।

फिर पुकारा, 'पमिली!'

लेकिन पमिली ने शायद उस समय अपना कर्तव्य स्थिर कर लिया था। वह जिस तरह जा रही थी, वैसे ही चलती रही। किसी ओर नजर नहीं डाली। उसके बाद जीने के मोड़ पर अदृश्य हो गयी।

पुण्यश्लोक बाबू गुस्से से फटे जा रहे थे। उसके बाद और कुछ न कर सकने पर पीछे-पीछे दो-मंजिले पर चढ़ने लगे।

बोले, 'सुन रही हो, सुनो...।'

बिलकुल कमरे के दरवाज़े के आगे जाकर तब पमिली ठमककर खड़ी हो गयी।

पीछे से पुण्यश्लोक बाबू नज़दीक आकर खड़े हो गये। बोले, 'तुम्हें तब से बुला रहा हूँ, सुना क्यों नहीं ? आज तुम कमीशन के ऑफ़िस में जाकर मेरे खिलाफ़ गवाही दे आयी हो ? बोलो, जवाब दो।'

'हाँ।'

पुण्यश्लोक बाबू ने फिर पूछा, 'क्या गवाही दी ?'

पमिली बोली, 'जो सच था, वही कहा।'

'उसके मतलब ? तुम्हें कितना सच पता है ?'

पमिली ने गर्दन टेढ़ी कर कहा, 'मुझे सब पता है। मेरे सामने ही तो तुमने पाँच हज़ार रुपये दिये थे।'

'पाँच हज़ार रुपये ?'

'हाँ, गुंडे लगाने का खर्च। तुम नहीं चाहते थे कि उनका जुलूस शान्तिपूर्ण रहे। गुंडों के द्वारा पुलिस को उत्तेजित करना चाहा था। और अंत में वही हुआ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम इस घर की लड़की हो, घर की लड़की की तरह ही रहोगी। तुम राजनीति को लेकर अपना दिमाग़ क्यों परेशान करती हो ?'

पमिली बोली, 'मैं इस घर की लड़की हूँ, इसीलिए क्या तुमने मेरी जिस किसी से शादी कर देना चाहा था ?'

'जिस किसी के माने ? प्रवेश क्या अपात्र था ?'

पमिली बोली, 'प्रवेश के साथ मेरी शादी कर तुम प्रवेश की दलाली पक्की करना चाहते थे, यही न ? सोचा था कि वह हमेशा तुम्हारा गुलाम बनकर रहेगा, उससे मेरा जो कुछ भी हो !'

बेटी की बात सुनकर पुण्यश्लोक बाबू स्तब्ध हो गये। उसके बाद बोले, 'इसीलिए क्या मुझ पर तुम्हारा गुस्सा है ? यह बात तुमने मुझ से पहले क्यों न कही ?'

पमिली बोली, 'तुमसे कहती ? तुमने अपने सिवा कभी और किसी को आदमी समझा है ?'

'यह सचमुच तुम्हारे गुस्से की बात है, पमिली ! पहले भी तुमने कुछ ऐसा ही कहकर मुझ पर दोषारोपण किया था। मैंने क्या तुम भाई-बहनों के लिए कुछ नहीं किया ?'

पमिली बोली, 'कुछ किया या नहीं किया यह मुझसे न पूछकर अपने से ही पूछो, तभी जवाब मिलेगा—इस वक़्त मुझे और बात करना अच्छा

नहीं लग रहा।'

कहकर पमिली कमरे के अन्दर घुसकर दरवाज़ा बन्द करने जा रही थी। पुण्यश्लोक बाबू के बीच में खड़े होने से रुकावट पड़ी। बोले, 'लेकिन मेरी बात का जवाब दिये बिना तुम दरवाज़ा बन्द नहीं कर सकोगी।'

'तुम्हारी क्या बात?'

'तो डॉक्टर राय ने जो कुछ सुना सब सच है?'

'हाँ, सच है।'

'मेरी बेटी होकर तुमने मेरे ही विरुद्ध गवाही दी? मैं यह सोच भी नहीं सकता।'

पमिली बोली, 'तुम पिता होकर अगर लड़की से शत्रुता कर सकते हो तो मैं ही तुमसे शत्रुता क्यों न करूँगी?'

कहकर ज़रा मौका पाते ही पमिली ने दरवाज़े के दोनों पल्ले धड़ाम से पुण्यश्लोक बाबू के मुँह पर बन्द कर दिये।

पुण्यश्लोक बाबू कुछ देर उस बन्द दरवाज़े के आगे हतवाक्-से खड़े रहे। उन्हें लगा, पमिली ने उनके गालों पर थप्पड़ मारकर उनका अपमान किया है।

वकील हरनाथ बाबू खबर पाकर दूसरे दिन ही माधव कुंडू लेन के मकान में आये। आना पड़ा। खबर बाद में मिली। इसी से पिछले दिन न आ सके। हरनाथ बाबू शिवशम्भु चौधरी के हमेशा से वकील थे। तमाम बार तमाम कामों में इन्हीं हरनाथ बाबू से उन्होंने सलाह ली थी। वे सब बातें उन्हें याद आने लगीं।

श्मशान से लौटने में रात हो गयी थी। इतनी रात को भूपति भादुड़ी को नीमतला जाना पड़ा था। उस समय सुधन्य भी था। कहते हैं, उसी ने सब-कुछ किया। लड़का ठहरा। शरीर में शक्ति है।

सुधन्य बोला, 'अब रोकर क्या कीजियेगा, मैनेजर बाबू! यह जाना अच्छा ही हुआ।'

पड़े-पड़े भोगने से तो यह अच्छा ही हुआ—यह भूपति भादुड़ी भी जानते थे। लेकिन फिर भी एक व्यक्ति की आँखों के आगे से चले जाने

बिलकुल कमरे के दरवाज़े के आगे जाकर तब पमिली तमककर खड़ी हो गयी।

पीछे से पुण्यश्लोक बाबू नज़दीक आकर खड़े हो गये। बोले, 'तुम्हें तब से बुला रहा हूँ, सुना क्यों नहीं? आज तुम कमीशन के ऑफ़िस में जाकर मेरे खिलाफ़ गवाही दे आयी हो? बोलो, जवाब दो।'

'हाँ।'

पुण्यश्लोक बाबू ने फिर पूछा, 'क्या गवाही दी?'

पमिली बोली, 'जो सच था, वही कहा।'

'उसके मतलब? तुम्हें कितना सच पता है?'

पमिली ने गर्दन टेढ़ी कर कहा, 'मुझे सब पता है। मेरे सामने ही तो तुमने पाँच हज़ार रुपये दिये थे।'

'पाँच हज़ार रुपये?'

'हाँ, गुंडे लगाने का खर्च। तुम नहीं चाहते थे कि उनका जुलूस शान्तिपूर्ण रहे। गुंडों के द्वारा पुलिस को उत्तेजित करना चाहा था। और अंत में वही हुआ।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'तुम इस घर की लड़की हो, घर की लड़की की तरह ही रहोगी। तुम राजनीति को लेकर अपना दिमाग़ क्यों परेशान करती हो?'

पमिली बोली, 'मैं इस घर की लड़की हूँ, इसीलिए क्या तुमने मेरी जिस किसी से शादी कर देना चाहा था?'

'जिस किसी के माने? प्रवेश क्या अपात्र था?'

पमिली बोली, 'प्रवेश के साथ मेरी शादी कर तुम प्रवेश की दलाली पक्की करना चाहते थे, यही न? सोचा था कि वह हमेशा तुम्हारा गुलाम बनकर रहेगा, उससे मेरा जो कुछ भी हो!'

बेटी की बात सुनकर पुण्यश्लोक बाबू स्तब्ध हो गये। उसके बाद बोले, 'इसीलिए क्या मुझ पर तुम्हारा गुस्सा है? यह बात तुमने मुझ से पहले क्यों न कही?'

पमिली बोली, 'तुमसे कहती? तुमने अपने सिवा कभी और किसी को आदमी समझा है?'

'यह सचमुच तुम्हारे गुस्से की बात है, पमिली! पहले भी तुमने कुछ ऐसा ही कहकर मुझ पर दोषारोपण किया था। मैंने क्या तुम भाई-बहनों के लिए कुछ नहीं किया?'

पमिली बोली, 'कुछ किया या नहीं किया वह मुझसे न पूछकर अपने से ही पूछो, तभी जवाब मिलेगा—इस वक़्त मुझे और बात करना अच्छा

नहीं लग रहा।'

कहकर पमिली कमरे के अन्दर घुसकर दरवाजा बन्द करने जा रही थी। पुण्यश्लोक बाबू के बीच में खड़े होने से रुकावट पड़ी। बोले, 'लेकिन मेरी बात का जवाब दिये बिना तुम दरवाजा बन्द नहीं कर सकोगी।'

'तुम्हारी क्या बात?'

'तो डॉक्टर राय ने जो कुछ सुना सब सच है?'

'हाँ, सच है।'

'मेरी बेटी होकर तुमने मेरे ही विरुद्ध गवाही दी? मैं यह सोच भी नहीं सकता।'

पमिली बोली, 'तुम पिता होकर अगर लड़की से शत्रुता कर सकते हो तो मैं ही तुमसे शत्रुता क्यों न करूँगी?'

कहकर जरा मौका पाते ही पमिली ने दरवाजे के दोनों पल्ले धड़ाम से पुण्यश्लोक बाबू के मुँह पर बन्द कर दिये।

पुण्यश्लोक बाबू कुछ देर उस बन्द दरवाजे के आगे हतवाक्-से खड़े रहे। उन्हें लगा, पमिली ने उनके गालों पर थप्पड़ मारकर उनका अपमान किया है।

वकील हरनाथ बाबू खबर पाकर दूसरे दिन ही माधव कुंडू लेन के मकान में आये। आना पड़ा। खबर बाद में मिली। इसी से पिछले दिन न आ सके। हरनाथ बाबू शिवशम्भु चौधरी के हमेशा से वकील थे। तमाम बार तमाम कामों में इन्हीं हरनाथ बाबू से उन्होंने सलाह ली थी। वे सब बातें उन्हें याद आने लगीं।

श्मशान से लौटने में रात हो गयी थी। इतनी रात को भूपति भादुड़ी को नीमतला जाना पड़ा था। उस समय सुधन्य भी था। कहते हैं, उसी ने सब-कुछ किया। लड़का ठहरा। शरीर में शक्ति है।

सुधन्य बोला, 'अब रोकर क्या कीजियेगा, मैनेजर बाबू! यह जाना अच्छा ही हुआ।'

पड़े-पड़े भोगने से तो यह अच्छा ही हुआ—यह भूपति भादुड़ी भी जानते थे। लेकिन फिर भी एक व्यक्ति की आँखों के आगे से चले जाने से

दुख नहीं होगा ?

जो हो, शोक जितना भी गहरा हो, आदमी को कर्तव्य करना ही पड़ेगा। श्मशान से लौटकर सारा घर भूपति भादुड़ी को बहुत ही खाली-खाली लगा। वकील बाबू से बड़ी देर तक बातें हुईं। जाते वक़्त वकील बाबू बोले, 'तो शाम को ज़रा मेरे घर आना, तब बातें होंगी।'

वकील साहब चले गये। उसके बाद ऐश्वर्य-सम्पत्ति की भावना हर-हराकर दिमाग़ में घुसी। यह अपार दौलत! इस सब का भार अब भूपति भादुड़ी के सिर पर आ पड़ा। श्राद्ध-शान्ति की व्यवस्था भी उन्हें करना होगी। और क्या सिर्फ़ वही! अब तो सब उनका ही है। अपनी जायदाद!

भूपति भादुड़ी धीरे-धीरे ज़ीने से ऊपर चढ़ने लगे।

कल रात से सारा घर जैसे निस्पन्द, निष्प्राण हो गया था। माँ जी इतने दिनों तक यद्यपि जीवन्मृत अवस्था में जीवित थीं, फिर भी इंसान में प्राण तो था। इंसान जितने दिन ज़िन्दा था उतने दिन उसका अधिकार भी था। क़ानून के अनुसार पूरा-पूरा था। लेकिन अब सारा अधिकार भूपति भादुड़ी को था। इस सब-कुछ के मालिक भूपति भादुड़ी थे। भांजे के भाग्य से नहीं, नहीं तो क्या इस वक़्त उसकी फ़िक्र होती? अब सभी को घर से निकालना होगा।

ऊपर जाकर तरला का सामना हुआ।

भूपति भादुड़ी बोले, 'रो रही हो बेटी, रोती क्यों हो? मैं तो नहीं मर गया, मैं तो अभी ज़िन्दा हूँ।'

उसके बाद थोड़ा रुककर बोले, 'बादामी कैसी है, रे?'

तरला भरी आवाज़ से इतना ही बोली, 'उसी तरह...।'

कहकर चली गयी। भूपति भादुड़ी आहिस्ता-आहिस्ता माँ जी के कमरे की ओर गये। कल शाम तक कमरे में जान थी। अब वह नहीं है। बादामी और बूढ़ी हो गयी थी। कमरे के फ़र्श पर औंधी होकर लेटी थी।

भूपति भादुड़ी बोले, 'रो मत बादामी, उठकर बैठ। मैं हूँ, तुझे क्या फ़िक्र? मैं जब तक हूँ तब तक तुम कुछ फ़िक्र मत करो।'

उसके बाद इधर-उधर देखा। और कोई कहीं न था। चाभी कल रात ही भूपति भादुड़ी ने हथिया ली थी। लेकिन और भी तो कुछ बाक़ी हो सकता है।

सहसा मानो कुछ याद आया। कमरे से निकलकर बरामदे में आये। उसके बाद एकदम बरामदे के अन्त में एक कमरे के आगे जाकर पुकारने लगे, 'ओ सुखदा, सुखदा!'

सुखदा निकल आयी। 'मुझे पुकारा क्या ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाँ, कह रहा था कि जो होना था सो तो हो गया। अब और सोचने से क्या होगा ? अब अपना कोई रास्ता देखो।'

सुखदा का अन्तर थर-थर काँप उठा।

बोली, 'मैं कहाँ जाऊँगी ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'क्यों, तुम्हारे जाने की जगह की क्या कमी है ? कालीकान्त कहाँ गया ? वह कालीकान्त बाबाजी ? तुम तो उसकी ब्याहता पत्नी हो।'

'मुझे तो उसकी कोई खोज-खबर नहीं है, मैनेजर बाबू।'

भूपति भादुड़ी कोमल स्वर में बोलने लगे, 'यह कहने से तो नहीं चलेगा। अपना रास्ता तो तुम्हें ही देखना पड़ेगा। मैं तो बराबर तुम्हें खिला नहीं सकूँगा। और कहीं अगर जाने की जगह नहीं है तो तुम्हारी मौसी तो है ही।'

सुखदा समझ न सकी। बोली, 'कौन मौसी ?'

'मौसी को नहीं जानती ? मानदा मौसी। बहुत भलीमानस है। तुम्हें कितना लाड़-प्यार करती थी ! तुम उसका दुलार-प्यार पैरों से ठुकराकर चली आयी, तो क्या सोचा था कि इसमें तुम्हारा भला होगा ? भला नहीं होगा। और मैं भी तुम्हें बैठे-बिठाये खिला नहीं सकूँगा। मेरी जमींदारी नहीं है कि जमींदारी लुटाकर तुम्हें खिलाऊँगा—समझीं ?'

सुखदा पत्थर की तरह कुछ देर तक वहाँ खड़ी रही। बोली, 'लेकिन वहाँ क्या भली लड़कियों को जाना चाहिए ? आप ही बताइए न !'

सुखदा के आगे खड़े होकर हलकी बातें करने की भूपति भादुड़ी की उम्र चली गयी थी। फिर उसके सिवा जब माँ जी नहीं रहीं, तब अब कोई भी किसी पर उनका जिम्मा ही नहीं रहा। तब भूपति भादुड़ी जो चाहें सो करें। जिस किसी को जो तबीयत आये कहें। उससे कोई खुश हो या नाखुश हो, उनको कुछ आता-जाता नहीं।

चले जाने के पहले भूपति भादुड़ी बोले, 'मैंने बात कह दी, इसके बाद तुम्हारी जो तबीयत हो करो।'

कहकर नीचे उतर गये। सुखदा के साथ खड़े-खड़े बेकार बातें करने से तो उनका काम नहीं चलेगा। उन्हें बहुत काम है। नीचे आँगन में उतरकर सीधे रसोईघर की ओर चले गये।

वहाँ जाकर पुकारा, 'कहाँ हो जी, ठाकुर ! ठाकुर कहाँ गया ?'

ठाकुर उस दिन भी हमेशा की तरह रसोई-असोई में लगा था मैनेजर बाबू के बुलाने से झटपट हाथ पोंछते-पोंछते आ पहुँचा। बोल

'मुझे बुला रहे हैं, बाबू ?'

'हाँ, बुला रहा हूँ। देखो बापू, तुम्हारे काम-काज से मैं खुश नहीं हूँ। अच्छी तरह मन लगाकर काम न करने से तुम्हें इस घर से चला जाना पड़ेगा, यह तुमसे कहे देता हूँ।'

उसके बाद कुछ रुककर बोले, 'बूढ़े बाबू कहाँ हैं ?'

कहते-कहते एकदम सीधे आँगन में उतरकर सीधे कमरों की ओर चले गये ! वहाँ खड़े होकर चिल्लाने लगे, 'कहाँ हो जी, बूढ़े बाबू, कहाँ हो ?'

मैनेजर बाबू को सामने देखकर बूढ़े बाबू झर-झर कर रोने लगे।

'और झूठा रोना न रोना पड़ेगा। मेरी शिकायत अब किससे करोगे, करो। एक गमछे के लिए माँ जी के पास मेरे खिलाफ़ चुगली खायी थी, याद है ?'

बूढ़े बाबू बोले, 'मैं और ज़्यादा दिन का नहीं, मैनेजर बाबू; यह जितने दिन जिन्दा रहता हूँ, दया करके यहीं रहने दीजिये। मैं इस बुढ़ापे में कहाँ जाऊँगा ? कहाँ किसके पास अब जगह मिलेगी ?'

भूपति भादुड़ी गुर्रा उठे, 'ये सब बातें मैं नहीं सुनता। माँ जी जब थी तब थीं। अब मैं मालिक हूँ। मेरा हुक्म सभी को मानना होगा। मैं सबको बर्खास्त कर दूंगा।'

कहकर फिर वहाँ न रुके। माँ जी के मरने के बाद अभी एक या दो दिन बीते थे। अभी भी सबकी आँखों के आँसू अच्छी तरह सूखे न थे। इसी बीच सारे घर में इस तरह का उलट-फेर हो जायेगा, यह कोई सोच भी न सकता था। तिमंजिले की सुखदा से शुरू कर पहली मंजिल के अर्जुन तक सबका मुँह जैसे सूख गया। अब क्या होगा ? अब हम कहाँ जायेंगे ? माँ जी की जायदाद अब सब ही मैनेजर बाबू की है। अब मैनेजर बाबू मालिक हैं।

उस दिन रात को सहसा कालीकान्त विश्वास आ पहुंचा। बहादुरसिंह ने देखकर पहचान लिया। जमाई बाबू को एक सूखा सलाम किया।

कालीकान्त सलाम वापस कर सीधे अन्दर घुस गया। माँ जी नहीं हैं, अब कालीकान्त को किसका डर ? उसके बाद जीने से ऊपर चढ़ते ही धनंजय से भेंट हुई।

धनंजय जमाई बाबू को देखते ही खड़ा हो गया। बोला, 'सब-कुछ सुना न, जमाई बाबू ?'

कालीकान्त बोला, 'वह सुनकर ही तो आया हूँ। घर का हाल-चाल क्या है ?'

'भांजे बाबू को पुलिस पकड़कर ले गयी है, वह तो मालूम है ?'

'वह तो मालूम है। तुम्हारा भांजा बाबू ! आदमी तो अच्छा न था, धनंजय। सच बात कहने में क्या, किसी-न-किसी दिन वह पकड़ा ही जाता। जिस तरह भांजा बाबू पकड़ा गया, उसी तरह तुम्हारे मैनेजर बाबू भी पकड़े जायेंगे। यह कहे रखता हूँ। तो तुम्हारा मैनेजर है कहाँ ?'

धनंजय बोला, 'मैनेजर बाबू ने तो सबको नोटिस दे दिया है।'

'कैसा नोटिस ?'

'घर छोड़ने का नोटिस। सिर्फ तरला और बादामी बुढ़िया रहेगी। और सबको विदा होना होगा। बूढ़े बाबू को घर छोड़ने को कहा गया है, सुखदा दीदी को नोटिस मिला है। बहादुर, दुखमोचन, अर्जुन, ठाकुर, नौकरानी—सभी को कहा गया है। अब क्या होगा ?'

कालीकान्त बोला, 'क्यों ? मैनेजर नोटिस देने वाला कौन है ? यह क्या मैनेजर का मकान है कि वह नोटिस देगा ? यह शिवशम्भु चौधरी की जायदाद है। इसकी एकमात्र मालकिन थीं माँ जी। माँ जी के मरने के बाद अब मिल्कियत तुम्हारी सुखदा दीदी की है। नोटिस देना है तो सुखदा ही देगी, मैनेजर बैठा कौन है ?'

धनंजय को मानो कुछ उम्मीद बँधी। बोला, 'आपको ठीक मालूम है ?'

'मुझे ठीक मालूम है। सुखदा कहाँ है ?'

'ऊपर हैं।'

ऊपर हैं, सुनकर कालीकान्त वहाँ न रुका। एकदम सीधे जल्दी-जल्दी तिमंजिले पर चढ़ गया। सुखदा के कमरे के आगे जाकर पुकारा, 'सुखदा !'

सुखदा बाहर आते ही बोली, 'तुम ? तुम यहाँ क्यों आये ? कोई अगर देख ले तो ?'

कालीकान्त बोला, 'कौन साला देखेगा ? और देखकर क्या करेगा ? अब मैं किसकी परवाह करता हूँ ? यह घर तो तुम्हारा है ! तुम्हारा माने मेरा ही।'

'मेरा घर ?'

'हाँ, तुम्हारा घर नहीं तो किसका ? तुम्हीं तो माँ जी की एकमात्र उत्तरवर्ती हो। अपना कहने को तुम्हारे सिवा उनका और कोई नहीं है।'

'लेकिन मैनेजर बाबू ने अपने भांजे के नाम वसीयत करा ली थी।'

सहसा नीचे किसी के पैरों की आवाज होते ही कालीकान्त ने पीछे घूमकर देखा कि भूपति भादुड़ी आ रहे हैं। भूपति भादुड़ी किसी ओर न देखकर एकदम सीधे कालीकान्त की ओर बढ़ आये। बोले, 'तुम फिर इस घर में आये ? किसने तुम्हें आने दिया ? यहाँ क्यों आये ? तुम्हारा क्या मतलब है ?'

कहते-कहते एकदम कालीकान्त के सामने आकर खड़े हो गये।

कालीकान्त तैयार था। बोला, 'मेरी ख़ुशी, मैं आया। तुम टोकने वाले कौन हो ?'

भूपति भादुड़ी तब सचमुच बिगड़ उठे।

बोले, 'देखता हूँ कि छोटा मुंह, बड़ी बात ! अभी मेरे घर से निकल जाओ ! कहता हूँ, निकल जाओ।'

कालीकान्त भी वैसा ही था। बोला, 'नहीं जाऊँगा, तुम जो करना चाहो करो।'

'देखोगे ? तो देखो, क्या करता हूँ।'

भूपति भादुड़ी ने कहा तो, लेकिन क्या करें यह ठीक नहीं कर पाये। सहसा बोले, 'तो ठहरो, मैं आ रहा हूँ, अभी आया।'

शोर सुनकर उस समय सभी वहाँ आकर खड़े हो गये। धनंजय भी एक ओर खड़ा था। उसकी ओर देखकर भूपति भादुड़ी बोले, 'धनंजय, तू यहाँ रहना, जिससे यह बेटा भाग न जाये, मैं अभी आया।'

कहकर फ़ौरन तड़-तड़ फिर ज़ीने से नीचे उतर गये। किसी अनिश्चित भय से सारा घर साँय-साँय करने लगा।

मनुष्य की आशाओं का क्या अन्त है ? किसी दिन भूपति भादुड़ी ने चाहा था कि यह छः लाख रुपयों की जायदाद वे हड़प करेंगे। पूर्ण बाबू ने आशा की थी कि राइटर्स बिल्डिंग में मिनिस्टर बनकर बैठेंगे। सुरेन ने आशा की थी कि किसी दिन कलकत्ता शहर से सारी अशान्ति दूर हो जायेगी। सुखदा ने आशा की थी कि वह किसी दिन स्त्री बनेगी, माँ बनेगी, गृहिणी बनेगी। कलकत्ता के और कितने ही लोगों ने कितना कुछ चाहा था, क्या कलकत्ता को सब याद है ? न याद रखने पर क्या उनका काम चलता है ?

कितने लोगों की कितनी आशाएँ हर क्षण टूटकर चूर-चूर हो जाती हैं, उसका हिसाब कौन रखता है ? एक माधव कुंडू लेन के घर से यह कथा शुरू हुई थी। उसके बाद कितनी बड़ी राह पार कर आज यह क़िस्सा यहाँ पहुँचा है ! कितनी हँसी, रोना, षड्यंत्र और प्रतियोगिताओं को पीछे छोड़कर यह क़िस्सा मनुष्य के जीवन की तरह ही बढ़ता चला आया

है। कलकत्ता स्थापित होने के दिन से शुरू कर आज तक इसको लेकर अगर कोई उपन्यास लिखे तो क्या यह सब कहानी लिखी जायेगी ? हजारों परिच्छेद लिखने पर भी लगेगा कि इसका सब-कुछ जैसे समेटा नहीं गया। जैसे बहुत कुछ अनकहा रह गया।

हरनाथ वकील उस दिन बार-बार भूपति भादुड़ी से बोले, 'झटपट कुछ करो न भूपति, अन्त में कहीं कोई क्रिमिनल केस न खड़ा हो जाये।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'क्यों, क्रिमिनल केस कौन खड़ा करेगा ?'

'कोई भी कर सकता है। सुधन्य कर सकता है, या कालीकान्त। कौन करेगा, यह क्या कोई पहले से बता सकता है ? देखो, हिन्दू कोड बिल पास हो गया, अब तो पौ-बारह हैं। अब लड़कियाँ भी जायदाद में हिस्सा पायेंगी। अब कितने घर टूटते हैं, देखना।'

हरनाथ बाबू ने सारी बातें समझा दी थीं—'अब आपस में झगड़ा करके दिमाग खराब करने से नहीं होगा। जो करना होगा सब ठंडे दिमाग से करना होगा। अब किसी को सफा मत कर देना, भूपति। सबको खुश रखो। मिजाज ठंडा रखकर धीरे-धीरे सबको हटाना। अब जमाना बहुत खराब है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'लेकिन वकील बाबू, माँ जी मेरे सुरेन के नाम सब वसीयत कर गयी है।'

हरनाथ बाबू बोले, 'तो वह सुरेन तो इस वक्त खून का आसामी है। इसी बीच अगर उसे फाँसी हो जाये तो ? फाँसी हो जाने पर तुम झगड़े में पड़ोगे। तुम्हें फिर से विरासत तय करनी होगी। वह भी तो बड़ा झंझट है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'वही सलाह लेने तो आपके यहाँ आया हूँ, वह [illegible]

[illegible] घुस गया। इसके खिलाफ अनधिकार प्रवेश का अभियोग नहीं लगाया जा सकता ?'

हरनाथ बाबू बोले, 'अभी उस सब झंझट की जरूरत नहीं। अभी मीठी बातों से काम निकालना होगा। तुम्हारी वसीयत भी तो पक्की नहीं है, इससे मुकदमा करने से सब बेकार हो जायेगा।'

'क्यों, वसीयत पक्की क्यों नहीं है ?'

'अरे, तुमने वसीयत पक्की कब करवायी ? उस पर तो लावण्य बाला दासी के दस्तखत तक करा नहीं सके।'

'तब क्या होगा ?'

हरनाथ बाबू बोले, 'इसीलिए तो कहता हूँ, अभी चुपचाप जाकर दखल लो। खुद ऊपर ज़नाने में जाकर जम जाओ। उसके बाद तो मैं हूँ।'

सचमुच बड़ा झंझट है। दिमाग़ में हरनाथ बाबू की बातें अभी भी चक्कर काट रही थीं। इतने दिनों की इतनी योजनाएँ, इतने दिनों की इतनी तरकीबें क्या सब बेकार हो जायेंगी?

कलकत्ता की सड़कों पर आदमियों की भीड़ गिजगिजा रही थी। भूपति भादुड़ी अपनी ही चिन्ताओं में डूबे बढ़े जा रहे थे। बेकार में कालीकान्त के साथ गरमागरमी करना ग़लत हो गया था। सच ही तो इस तरह दिमाग़ गरम करने से कोई काम नहीं होता। उससे तो ज़्यादा मीठी बातों से बहुत काम निकलते हैं। अब मीठी बातों से ही काम निकालना होगा। मीठी बातों से ही सुखदा को फिर घर के बाहर भेजना होगा। उसके बाद जो भाग्य में लिखा है!

सड़क पर आते-आते भूपति भादुड़ी बायीं ओर की गली में घुसे। गली में से जाने से रास्ता कम होगा। यह छोटा रास्ता एकदम ठन-ठन की कालीबाड़ी के सामने निकल जाता है। गली होने से क्या, गली में भी आदमी किलबिल कर रहे हैं। इतने आदमी कहाँ पैदा होते हैं, यह सोचा भी नहीं जा सकता। मानो बिलकुल भेड़ों का रेवड़ हो!

काली मन्दिर में सामने सड़क पर उस समय सभी हाथ जोड़े व्याकुल दृष्टि से एकटक देख रहे थे। उन सबकी माँगें असंख्य थीं। उनकी कामनाएँ असंख्य थीं। धन दो, सुख दो, आरोग्य दो! सबकी सभी कामनाओं के साथ भूपति भादुड़ी ने भी एक ओर खड़े होकर अपनी गोपनीय प्रार्थना माँ के आगे रखी—'हे माँ काली, हे माँ जगद्धात्री, मेरे भांजे को छोड़ दो माँ, मेरा माधव कुंडू लेन का घर दिला दो, माँ। मैंने वसीयत ठीक कर ली थी। माँ जी भी राज़ी हो गयी थीं। माँ जी अपनी सारी जायदाद की मिल्कियत सुरेन को ही देना चाहती थीं। उसके बाद माँ जी के बीमार पड़ जाने से फिर उनके दस्तखत कराना सम्भव न हुआ। मेरी कामना पूरी करो माँ, मैं तुम्हारे नाम पर एक जोड़ा बकरे की मन्नत कर रहा हूँ, माँ। मेरा भाग्य लौटा दो।'

कहकर भूपति ने आगे के सफ़ेद पत्थर-जड़े बरामदे पर बड़ी देर तक सिर टिकाये रखा। देर तक न उठा। मन-ही-मन मनोकामनाओं को दुहराता रहा।

सवेरे बाकायदा पुण्यश्लोक बाबू जाग गये। चुनाव के दिन जितने नज़दीक आ रहे थे, काफी सवेरे पुण्यश्लोक बाबू की नींद टूट जाती। पहले ऐसा नहीं होता था। पिछली बार वे निश्चिन्त थे। वोट उन्हें ही मिलेंगे—यह बात मुहल्ले के लोगों ने उनसे साफ-साफ कह दी थी। लेकिन इस बार बात और थी। इस बार सभी ऊपरी तौर पर ही जवाब देते थे।

अच्छी नींद भी रात-भर पुण्यश्लोक बाबू को नहीं आयी। यही सब-कुछ सोच-सोचकर। सवेरे के वक्त उठकर बरामदे से होकर, जीने से उतरकर, अपने कमरे में बैठ गये। दिन-भर का प्रोग्राम उसी वक्त ठीक कर लेना होता। उसके बाद ही झुंड-के-झुंड वालंटियर आ जायेंगे। वे शोर करेंगे; उनमें से हरएक को हाथ-खर्च देना पड़ेगा। हाथ-खर्च की दर भी इस बार बढ़ा देना पड़ी थी। पहले पांच रुपया देने से काम चलता था। अब नकद दस रुपये तो हैं ही, उस पर चाय-नाश्ता अलग!

हरिलोचन मुंशी उस वक्त भी नहीं आये थे। सहसा पैरों की आवाज सुनते ही पुण्यश्लोक बाबू समझ गये कि हरिलोचन आ रहे हैं। हरिलोचन का काम भी बहुत बढ़ गया है।

सहसा गले की आवाज सुनकर पुण्यश्लोक बाबू चौंक पड़े, 'यह क्या तुम?'

सुव्रत उस वक्त भी हाँफ रहा था।

बोला, 'पमिली कैसे कर रही है, बाबा!'

'पमिली? क्या कर रही है?'

सुव्रत बोला, 'मैं सो रहा था, पास के कमरे से आवाज आयी थी।'

'कैसी आवाज?'

सुव्रत बोला, 'यह नहीं मालूम, पमिली के कमरे के दरवाजे पर जाकर धक्का दिया, लेकिन अन्दर से बन्द, दरवाजा न खुला। मुझे बहुत डर लग रहा है।'

'क्यों, डर की क्या बात हुई?'

सुव्रत बोला, 'मुझे लग रहा है कि पमिली कुछ मुसीबत में है, तुम जरा अभी चलो।'

मृत्यु शायद बहुत सहज नहीं आती। किन्तु कभी-कभी वह बहुत ही

अचानक आ जाती है। सहसा प्रकट होकर तब वह कहती है: मैं आ गयी...।

और साथ-ही-साथ मनुष्य के सब नियम, सब निषेध एकाकार हो जाते हैं। किसे मालूम था कि पमिली इस तरह अपनी सारी साधों, सारी कामनाओं का अन्त कर देगी? किसे पता था कि वह इस तरह पुण्यश्लोक बाबू को मुसीबत में डालकर चली जायेगी? कितनी लज्जा की बात है! उनके नाम पर पहले ही कलंक और बदनामी क्या कम हुई है? बिलकुल चुनाव के पहले पमिली उनका यह सत्यानास कर जायेगी, क्या वह कोई सोच सकता था?

नर्सिंग होम के डॉक्टर ने अन्त तक बहुत कोशिश की।

सुव्रत दिन-रात प्राय: हर वक़्त पास बैठा रहता। सुव्रत का एक दिन बीता। आज एक दिन बाद, वही सब बातें सोचते-सोचते सुव्रत बेचैन हो जाता। वह कैसी मर्मान्तिक पीड़ादायक अवस्था होगी! जब बीच-बीच में होश आ जाता तो मानो सारे नर्सिंग होम में चीखों की आवाज़ व्याप जाती। सुव्रत और एक दूसरी नर्स मिलकर पमिली को पकड़े रहते। पमिली यन्त्रणा से छटपटाती। कहती, 'सुव्रत मुझे बचाओ, बचाओ...।'

डॉक्टरों ने भी पमिली को बचाने की जी-जान से कोशिश की। लेकिन उसने नींद की बहुत-सी गोलियाँ एक-साथ खा ली थीं। उसे बचाने का काम डॉक्टरों के बस का नहीं रहा। एकमात्र ईश्वर के सिवा उसे कौन बचाये? लेकिन मानव का वह ईश्वर कहाँ रहता है? किस अदृश्य लोक में जाने पर वह मिलेगा? अगर वह मिलता तो सुव्रत के मन में उठता कि वह वहीं उसी के पास जाये!

पुण्यश्लोक बाबू बीच-बीच में आते रहते।

पूछते, 'आज पमिली कैसी है?'

सुव्रत कहता, 'अच्छी नहीं है।'

उसके बाद पुण्यश्लोक बाबू डॉक्टर साहब के पास जाते। तरह-तरह के सवाल बारीकी से पूछते। लेकिन डॉक्टर ही क्या करें? उनके साध्य की भी तो एक सीमा है। वे जीवन तो नहीं दे सकते हैं!

चौबीस घंटे बीते, अड़तालीस घंटे बीते। अन्त में शायद बहत्तर घंटे भी बीते। लेकिन पुण्यश्लोक बाबू को रुककर प्रतीक्षा करने के लिए इतना समय नहीं है। उन्हें बहुत काम हैं। काम, माने उनका वही असली काम। चारों ओर घूम-घूमकर भी वे समझ नहीं पा रहे थे कि हवा किधर बह रही है। कोई कहता, पूर्ण बाबू जीतेंगे। कोई कहता, पुण्यश्लोक बाबू जीतेंगे। वालंटियर लोग सारे मुहल्लों की खबर रखते। वे सहसा भागते-भागते

आकर कह जाते, 'सर, आप इस बार निश्चित रूप से जीत जायेंगे।'

पुण्यश्लोक बाबू पूछते, 'कैसे समझे ?'

एक वालंटियर लड़का कहता, 'सभी तो यही कहते हैं। हमसे सभी ने हलफ उठाकर ऐसा कहा है।'

पुण्यश्लोक बाबू वालंटियरों की बातों पर विशेष भरोसा नहीं रखते। वे अच्छा रुपया पाते थे, मीठी बात सुनाकर भुलावे में रखना चाहते थे। लेकिन असल में तो कलकत्ता के लोग सब-कुछ जान गये थे। वे जानते थे कि प्रवेश सेन की हत्या क्यों हुई, पमिली ने नींद की गोलियाँ क्यों खायी !

[illegible]

लेकिन पुण्यश्लोक बाबू ऐसी आसानी से निराश होने वाले आदमी नहीं थे। उन्हें बड़ी चालाकियों और बड़े कौशल करके आदमियों की भीड़ में सिर ऊँचा कर खड़ा होना पड़ा था। उन्होंने लाखों रुपये दोनों हाथों से खर्च भी किये। इतने दिनों में इतने रुपये खर्च करना, इतना जेल भुगतना क्या आज एकाएक बेकार हो जायेगा ?

पमिली नर्सिंग होम के बिस्तर पर लेटी जब छटपटाती, तब पुण्यश्लोक बाबू के लेक्चरों से कलकत्ता के पार्क गूंज उठते। तब वे प्रवेश की बात भूल जाते, पमिली की बात भूल जाते, दुनिया-भर की सारी बातें भूलकर सिर्फ अपनी बात याद रखते। याद रखते सिर्फ अपनी पार्टी की बात। सबसे अधिक याद रखते, पूर्ण बाबू को हराना है। उसे छोड़कर और कोई बात उस वक़्त उनके मन में न रहती।

अखबारों को पहले से कह दिया गया था। उधर से पुण्यश्लोक बाबू निश्चिन्त थे। उधर से उन्हें कोई डर न था। लेकिन उन लोगों के पक्ष में भी तो अखबार हैं। उनके अखबार कितने ही कम चलें, लेकिन कुछ-न-कुछ लोग तो उन्हें पढ़ते ही हैं।

उस दिन डॉक्टर राय ने पुण्यश्लोक बाबू को बुला भेजा।

बोले, 'पुण्य, तुम्हारे नाम पर यह सब क्या सुन रहा हूँ ? शहर में फैल रही बातें तो अब सुनी नहीं जाती।'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'यह सब विरोधियों का प्रोपेगंडा है।'

डॉक्टर राय बोले, 'तो तुम्हारी लड़की ने जहर खा लिया, यह भी क्या उनका प्रोपेगेंडा है ?'

इस बात के जवाब में पुण्यश्लोक बाबू कुछ न कह सके।

'तुमने क्या लड़की को डाँटा-डपटा था ?'

पुण्यश्लोक बाबू बोले, 'ऐसा ज्यादा तो कुछ भी नहीं कहा था।'

डॉक्टर राय गुस्सा हुए। बोले, 'ठीक चुनाव के पहले ही बदनामी की ये सब बातें हुई। इससे तुम्हारी अकेले ही नहीं, पार्टी की भी बदनामी होती है।'

सब के बाद वे बोले, 'अब घर-घर जाकर कनवैस करो। सारे वोटरों के पास खुद जाकर बातें कर आओ। वालंटियरों पर भरोसा मत करो... वे सिर्फ़ तुम्हारी खुशामद करके धोखा देंगे, और रुपया अलग से लूटेंगे।'

फमिली के लिए ही उन्हें चीफ़ मिनिस्टर से सख्त बातें सुनना पड़ीं। इससे ज्यादा शर्म की और क्या बात हो सकती है ?

उस दिन घर में घुसते ही भूपति भादुड़ी को कुछ शक-सा हुआ। गली के सिरे पर यह किसकी लॉरी है ! ठीक फाटक के सामने ही लॉरी खड़ी है। लॉरी पर दुनिया-भर की चीजें लदी थीं—चारपाई, अलमारी कुर्सी तो थीं ही, उस पर ये सूप, टोकरी-टोकरे, झाड़ू आदि। मानो कोई गृहस्थी लादकर चौधुरी-बाड़ी के सामने आ पहुँचा हो।

भूपति भादुड़ी पहले तो समझ न पाये। इस घर में कौन आ गया ? कालीकान्त है क्या ? कालीकान्त क्या अपनी गृहस्थी लेकर आ गया, इस घर में ? कालीकान्त इस मौक़े पर यहीं जमकर क्या बैठ जायेगा ?

कुली लोग एक-एक कर लॉरी से चीजें उतार रहे थे।

भूपति भादुड़ी घबराकर सामने आ खड़े हुए।

बोले, 'ए, यह किसका सामान है ? तुम लोग कौन हो ?'

भूपति भादुड़ी की बात पर किसी ने वैसा ध्यान न दिया। जैसे सामान उतर रहा था वैसे ही उतरता रहा। सब भारी-भारी सामान था। गृहस्थी की तमाम चीजें मानो कहीं से उखाड़कर यहाँ लायी गयी हों।

बहादुर चुपचाप एक ओर खड़ा हुआ था।

भूपति भादुड़ी ने उसके पास जाते ही पूछा, 'यह सब क्या है, बहादुर ? यह किसका सामान मेरे घर में घुसेड़ा जा रहा है ?'

बोला, 'हुजूर, सुवन्य बाबू का सामान है।'

सुधन्य बाबू ! सुधन्य का नाम सुनते ही भूपति भादुड़ी तेल के बैंगन की तरह जल उठे। उसकी इतनी बड़ी हिम्मत कि वह आकर मेरे घर में घुसे ? घर खाली मिला और वह सीधे माल-असबाब लेकर घुस गया !

'कहाँ है सुधन्य ? कहाँ गया ?'

बहादुर बोला, 'हुजूर, अन्दर जनानखाने में हैं।'

भूपति भादुड़ी फिर न रुके। एकदम सीधे आँगन के बीच आ गये। सारा आँगन सामान से ठसा पड़ा था। पैर रखने की भी जगह न थी।

जीने से भूपति भादुड़ी ऊपर गये। दो-मंज़िले पर बहुत-सी औरतों की आवाज़ सुनायी पड़ी। इतनी औरतें, बच्चे कहाँ से आ गये ?

भूपति भादुड़ी ने चीखकर पुकारा, 'धनंजय, धनंजय...!'

धनंजय ने दूर से जवाब दिया। ज़रा देर के बाद सामने आ गया।

भूपति भादुड़ी बोले, 'यह सब क्या हो रहा है ? ये सब कौन हैं ?'

धनंजय बोला, 'जी, सुधन्य बाबू की बहू, बेटी, बच्चे आ गये हैं।'

भूपति भादुड़ी बोल पड़े, 'क्यों ? सुधन्य इस घर का कौन है ? वह यहाँ किसकी इजाज़त लेकर घुसा है ? किसने उसे घुसने दिया ?'

धनंजय बोला, 'जी, वह तो नहीं मालूम।'

भूपति भादुड़ी और भी गुस्सा हो गये।

बोले, 'नहीं मालूम माने ? यह मेरा घर है या सुधन्य का ? मेरी इजाज़त के बिना वह इस घर में किस हिम्मत से घुसा ? कहाँ है वह ?'

धनंजय बोला, 'ऊपर है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'चल तो देखूँ, मैं उसका इस घर में घुसना अभी निकाले देता हूँ !'

कहकर खुद ही सीढ़ी से ऊपर चढ़ने लगे। धनंजय पीछे-पीछे चलने लगा।

भूपति भादुड़ी बोल उठे, 'कहाँ है सुधन्य—तुम्हारा भतीजा ?'

तभी लगा कि सुधन्य को पता चल गया था। वह भी शोर सुनकर आ पहुंचा।

बोला, 'कुछ कह रहे हैं क्या ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम कैसे सहसा माल-असबाब लेकर यहाँ आ गये ? किसने तुमसे यहाँ आने को कहा ? किसके हुक्म से ? बूढ़े बाबू को कौन यहाँ ले आया, तुम ?'

सुधन्य बोला, 'जी हाँ, जिसका घर, जिसकी जायदाद उसे क्या बाहर आँगन में पड़े रहना ठीक है ? या अच्छा लगता है ? लोग ही क्या कहेंगे ? इतने रुपयों की जायदाद रहते बूढ़ा आदमी क्या आँगन में पड़ा रहेगा ?'

भूपति भादुड़ी मानो आसमान से गिर पड़े।

बोले, 'किसकी बतलायी यह जायदाद ?'

'जी, बूढ़े बाबू की।'

भूपति भादुड़ी ने फिर पूछा, 'उसके मतलब ?'

सुधन्य बोला, 'जी, चाची के मरने के बाद सारी जायदाद तो काका बाबू को ही मिलेगी। इसीलिए काका बाबू को ऊपर ले आया।'

भूपति भादुड़ी चीख उठे, 'क्या कहा ? यह तुम्हारे काका बाबू की जायदाद है ? क्या यह तुम्हारे काका बाबू का घर है ?'

सुधन्य बोला, 'जी हाँ, मैंने जो कहा, ठीक ही कहा।'

भूपति भादुड़ी चिल्ला पड़े। बोले, 'मेरे घर से निकल जाओ ! कह रहा हूँ, निकल जाओ। अगर नहीं निकलोगे तो अभी पुलिस को बुलाऊँगा, निकल जाओ।'

सुधन्य हँसने लगा। भूपति भादुड़ी की बात से ज़रा भी न डरा।

बोला, 'अपने घर से कोई निकलता है, मैनेजर ? यह मेरे काका बाबू का मकान है। मैं यहाँ रहूँगा, इसीलिए सपरिवार आ गया हूँ। निकलना ही है तो आप निकल जाइये।'

'तो बहादुरसिंह को बुलाऊँ ?'

सुधन्य बोला, 'यह आपकी तबीयत है। पर इस महीने के बाद आपको नहीं रखूँगा। आपको आज से बर्खास्त कर दिया। भले-भले अभी चले जायें तो कुछ न कहूँगा, नहीं तो मैं अभी पुलिस बुलाऊँगा।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम्हें पता है, माँ जी सारी जायदाद मेरे भांजे के नाम वसीयत कर गयी हैं ?'

सुधन्य बोला, 'वह मैंने रजिस्ट्री-ऑफ़िस में जाकर सब पता लगा

ाया है। फिर उसके सिवा आपके भांजे पर तो अब खून का मुकदमा
ल रहा है। अगर निकाल सकें तो हम लोगों को निकाल दें। देखूं, आप
कितनी ताक़त है !'

अचानक शोर सुनकर सुखदा भी उधर से आ गयी। उसके पीछे
ालीकान्त था। वह भी अभी तक सुधन्य की कुल बात-चीत सुन रहा
ा। अब किसी नये ठिकाने के भरोसे एकदम पास आकर खड़ा हो गया।

सुधन्य ने सुखदा की ओर देखकर कहा, 'अरे, अभी तक तुम गये
ही ? अभी तक इस घर में ही हो ? जल्दी जाओ, हम किसी को अब यहाँ
ही रखेंगे। जाओ, सब चले जाओ।'

तब मामला ज़ोरों से बढ़ गया। माँ जी की मृत्यु के बाद कुछ थोड़े
ा दिन तो हुए है। मृत्यु के शोक की छाया उस समय भी अच्छी तरह
ट नहीं पायी थी। घर की ईंट मानो उस समय भी माँ जी के व्यर्थ
ीवन की स्मृति को भूल नहीं पायी था। और तभी जायदाद को लेकर
ुस्सेदारों में ज़ोरों का झगड़ा शुरू हो गया। फिर असली उत्तराधिकारी
ौन है, इसका भी ठीक-ठीक किसी को पता नहीं था।

कालीकान्त और न रुक सका। भूपति भादुड़ी और सुधन्य के बीच
ाकर खड़ा हो गया। बोला, 'देखिये, आप लोग बेकार झगड़ा कर रहे
। आखिर पुलिस को बुलाने पर आप लोग ही मुश्किल में पड़ेंगे। यह
कान मेरी पत्नी का है।'

'तुम्हारी पत्नी का ? तुम्हारी पत्नी इस घर की मालकिन है ? शराबी
ही का ! पत्नी का पैसा लेकर जम के शराब पीने का इरादा है क्या ?
ाकलो यहाँ से, निकलो...!'

सुधन्य घूँसा तानकर कालीकान्त की ओर बढ़ा। कालीकान्त भी
यार था। वह भी दो क़दम आगे बढ़कर खड़ा हो गया। 'मुझे मारेगा,
ाले ? आ, मार तो, देखूं कैसे मारता है ? देखूं, तुझमें कितनी ताकत
?'

सुधन्य ने सचमुच कालीकान्त को मारने को हाथ उठाया। लेकिन भूपति
ादुड़ी ने बीच में ही रोक लिया। सुधन्य को हाथ से पकड़कर खींचा।
ोले, 'तुम उसके बदन पर हाथ छोड़ने वाले कौन होते हो, जी ? और
कान मेरा है, हटाना होगा तो मैं उसे हटाऊँगा, तुम भला कौन हो ?'

उसके बाद कालीकान्त की ओर देखकर बोले, 'तुम भी निकल जाओ
ारे घर से। अभी निकल जाओ।'

कालीकान्त बोला, 'निकलना ही है तो तुम निकलो, मैं क्यों निकलूं ?'
ह मकान मेरी पत्नी का है।'

सुधन्य वोला, 'खबरदार, घर किसी का नहीं है, घर मेरे काका वावू का है। काका वावू जब तक ज़िन्दा रहेंगे तब तक इस मकान पर मेरा हक़ है। काका वावू मर जायें तो यह मकान मेरा हो जायेगा।'

भूपति भादुड़ी वोले, 'तुम्हारे काका वावू का है के क्या मतलव ? यह मकान तुम्हारे काका वावू का कैसे होगा ?'

सुधन्य वोला, 'माँ जी के साथ काका वावू का व्याह हुआ था न ! माँ जी तो मेरी चाची थीं। चाची के घर काका वावू नहीं रहेंगे तो कौन रहेगा ? आप रहेंगे ?'

भूपति भादुड़ी वोल उठे, 'वे सव पुरानी वातें फोड़ने से कुछ फ़ायदा नहीं। जव व्याह हुआ था तव हुआ था। तुम्हारे काका वावू के साथ माँ जी ने कितने दिन गृहस्थी चलायी थी ? सुहाग की रात भी क्या माँ जी ने तुम्हारे काका वावू के साथ सचमुच काटी थी कि आज तुम उनका गदले पानी को मथने आये हो ?'

सुधन्य वोला, 'रात काटी या नहीं काटी वह वात अलग है, लेकिन अग्नि को साक्षी रखकर व्याह तो हुआ ही था।'

'वह व्याह व्याह नहीं था। उसे व्याह मानने पर माँ जी माँग में हमेशा सिंदूर लगातीं, यह तो समझते हैं ?'

सुधन्य वोला, 'वह सव कहने से न मानूँगा। हज़ारों लोग उस व्याह में न्यौता खा गये थे। मैंने भी छुटपन में इस घर की छत पर पत्तल विछा-कर खाया था, खूव याद है। उसके वाद माँ जी वर के साथ शोभा-वाज़ार में हमारे घर 'नयी वहू' वनकर गयी थीं। वहाँ नयी वहू के साथ वह वादामी नौकरानी गयी थी। वहू-भात हुआ था। उसी शोभा-वाज़ार के दत्त-वाड़ी में कलकत्ता के सव वड़े-वड़े लोगों के घरों से लोगों ने आकर न्यौता खाया था। उसके वाद वाले दिन हुई थी सुहागरात।'

भूपति भादुड़ी ने चिल्लाकर वीच में टोका।

वोले, 'नहीं, सुहागरात नहीं हुई थी।'

सुधन्य और भी जोरों से चिल्लाकर वोला, 'ज़रूर सुहागरात हुई थी। फिर, शादी में सुहागरात तो इतनी वड़ी चीज़ नहीं होती। कन्यादान जव हो गया, तभी व्याह हो गया। सुहागरात हुई या नहीं, उससे क्या आता-जाता है ?'

'अच्छा, तो मैं वादामी को वुलाता हूँ।'

माँ जी के सूने घर के एक कोने में लेटे हुए वादामी उस समय भी रो रही थी। उसका रोना जैसे खत्म ही नहीं हो पा रहा था। माँ जी को किसी दिन वही ससुराल ले गयी थी। वही माँ जी का पहले-पहल ससुराल

जाना था। वह कैसे आनन्द का, कैसे रोमांच का दिन था ! उसे इस वक़्त बादामी के सिवा और कोई नहीं जानता।

'बादामी, ओ बादामी !'

बादामी हड़बड़ाकर उठ बैठी। चारों ओर देखकर जैसे कुछ असली हालत समझी।

बोली, 'मुझे बुला रहे हो क्या ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'हाँ, बुला रहा हूँ, तुम जरा बाहर तो आओ। बाहर आओ। आज ये सब कह रहे हैं कि माँ जी की सुहागरात हुई थी। तुम जरा आकर उनको सब हाल समझाकर बताओ तो।'

बादामी का अब पहले का-सा शरीर न था। बैठने में जितना वक़्त लगता था उठने में भी उतना ही वक़्त लगता। किसी तरह सारे शरीर को संभालकर उठी।

बोली, 'कहाँ आऊँ ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'आओ, बाहर आओ। सब लोग तुम्हारी बात सुनने को बाहर खड़े हैं। तुम तो ब्याह के बाद माँ जी के साथ ससुराल गयी थीं। गयी थीं न ?'

बादामी ने जैसे सब चीजों को याद करने की कोशिश की।

बोली, 'हाँ, गयी थी।'

'बहू-भात के दिन तो तुम शोभा-बाजार ही थीं ?'

बादामी बोली, 'हाँ, थी तो, मैनेजर बाबू।'

'बहू-भात के दिन रात को जब सुहागरात का मौका आया, तब भी तो तुम थीं ?'

'हाँ, थी तो।'

'उस समय की बातें तुम्हें सब याद तो हैं ?'

बादामी बोली, 'हाँ, कुछ-कुछ याद है।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तो तुम बाहर आओ। और इन लोगों को समझाकर बताओ। तुम्हें कोई डर नहीं है। मैं हूँ। तुमको किस बात का डर !'

'मैं क्या बताऊँ, समझ में नहीं आता, बाबा।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तुम्हें जो मालूम है वही बताना, तुम बताओ सुहागरात नहीं हुई थी। सुहागरात हुए बिना क्या ब्याह पक्का होता है ? आओ-आओ, बाहर आओ।'

भूपति भादुड़ी ने बादामी को दोनों हाथों से पकड़कर धीरे-धीरे बाहर लाने की कोशिश की।

लेकिन तभी कालीकान्त और सुधन्य में हाथापाई शुरू हो गयी।

सुधन्य तव 'तुम' से 'तू' पर उतर आया था। चिल्लाकर बोला, 'मेरे काका वावू के मकान में तू क्यों घुसा ? तू है कौन ?'

कालीकान्त भी बिगड़ा खड़ा था। वोला, 'खबरदार ! कहे देता हूँ, मुंह संभालकर वात कर, अपनी पत्नी की जायदाद भोगने का मुझे हक़ है।'

सुधन्य वोला, 'पत्नी नहीं, ठेंगा ! दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट की वेश्या और जायदाद के लालच में सती-साध्वी वन गयी !'

कालीकान्त वोला, 'खबरदार ! कहे देता हूँ, वहू को वीच में मत लाना।'

सुधन्य वोला, 'वहू को वीच में नहीं लाऊँगा तो क्या वाप को वीच में लाऊँगा ?'

'ओ हरामजादे...!'

कहकर कालीकान्त एकदम सुधन्य पर टूट पड़ा। और कहीं से साथ-ही-साथ वहुत-से वच्चे और औरतें रोते-रोते आ पहुंचे। 'ओ माँ, मार डाला, मार डाला।'

सुखदा अभी तक चुप थी। अव वह वढ़ आयी। वोली, 'अच्छा किया, मारा, मारेंगे नहीं ? मेरा घर, मैं क्यों छोड़कर जाऊँ, वताओ ? जाना हो तो तुम जाओ। तुम इस घर में क्यों आ गये ?'

एक कम-उम्र की औरत चिल्ला पड़ी, 'क्यों छोड़ें ? किसलिए यह घर छोड़ें ? हमारे चचिया-ससुर का मकान है, हम हजार वार यहाँ रहेंगे। तुम इस मकान की कौन हो कि इस घर से चिपटी पड़ी हो ? तुम यहाँ से चली जाओ न, किसने तुम्हें रोक रखा है ?'

सुखदा भी कम नहीं थी। वोली, 'अरे वाह, सुनो तो ! मकान मेरा नहीं तो तुम्हारा है ? तुम्हारी सात पीढ़ी के चचिया-ससुर का ? ऐसा ही चचिया-ससुर का था तो अभी तक कहाँ थीं ? किस चूल्हे में थीं ? तव चचिया-ससुर को खाने को मिल रहा है या वह भूखे रह रहे हैं, इसकी खोज-खवर लेने तो तुम में से कोई आया नहीं। अव माँ जी के मरने के वाद देखती हूँ कि चचिया-ससुर के लिए इतने लोगों की ममता एकदम उमड़ पड़ी !'

पास के कमरे से वूढ़े वावू के क्लान्त गले का स्वर सुनायी पड़ा। वोले, 'ओ सुधन्य, सुधन्य, वावा तू झगड़ा क्यों कर रहा है। मुझे घर-जायदाद की ज़रूरत नहीं है। इससे मेरा वही कोना अच्छा था।'

सुधन्य हांफते-हांफते वूढ़े वावू से वोला, 'तुम चुप रहो। तुम वकवक मत करो। तुम्हारे लिए ही तो सव गड़वड़ है। तुम अगर मजवूत रहे होते

तो आज तुम्हारी यह दुर्दशा होती ?'

बूढ़े बाबू बोले, 'जो समझ में आये तुम लोग करो। आखिर में पुलिस-कचहरी न करना पड़े। बुढ़ापे में वह सब न कर सकूँगा।'

सुधन्य बोल पड़ा, 'जायदाद रहने से पुलिस-कचहरी के भय से कैसे चलेगा ? ज़रूरत होगी तो पुलिस बुलाऊँगा, मुक़दमा करूँगा, जो कुछ करना होगा वही करूँगा, किसी के बाप का क्या ?'

भूपति भादुड़ी तब तक बादामी को पकड़-पकड़कर ले आये थे। बोले, 'सुनो, सब लोग इसके मुंह से सुनो। यह बादामी ही माँ जी के साथ शोभा-बाज़ार के घर गयी थी, इसके मुँह से तुम सब सुनो।'

कालीकान्त बोला, 'तो ब्याह हुआ या न हुआ, बूढ़े बाबू के साथ माँ जी का कोई सम्बन्ध ही नहीं था। माँ जी के साथ बूढ़े बाबू को एक दिन भी किसी ने लेटे देखा ?'

भूपति भादुड़ी बोले, 'तब ?'

सुधन्य उस समय उग्र हो रहा था। बोला, 'देखो, उन सब बेकार बातों को सुनने का मेरे पास वक़्त नहीं है। तुम लोग हमारे घर से निकल जाओ। नहीं तो पुलिस बुलाऊँगा, कहे देता हूँ।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'फिर पुलिस की धमकी दे रहे हो ? होशियार किये दे रहा हूँ—पुलिस हम भी बुला सकते हैं, हम भी पुलिस बुलाकर तुम्हें गिरफ्तार करा दे सकते हैं।'

सुधन्य बोल उठा, 'अगर इतनी ही ताक़त है तो गिरफ़्तार करा दो न, इतनी बड़बड़ क्यों कर रहे हो ? देखूँ न कि पचास रुपयों के मैनेजर की कितनी हैसियत है !'

'क्या ? इतनी हिम्मत ? मुझसे मज़ाक हो रहा है ?'

सुधन्य बिगड़ उठा। बोल पड़ा, 'मज़ाक ? मैंने मज़ाक की बात नहीं कही ? नौकरों से कोई मज़ाक करता है ? नौकर मज़ाक के काबिल होता है ?'

'क्या ! मुझे नौकर कहा, साले !'

कहकर भूपति भादुड़ी सुधन्य पर झपट पड़े। सुधन्य जवान लड़का। वह बुड्ढे आदमी से न डरा। उसने होशियारी से भूपति भादुड़ी का गला दबा दिया। बुड्ढे आदमी का गला। सुधन्य के दबाने से भूपति भादुड़ी का दम अटकने लगा। वे दर्द के मारे गों-गों-सी आवाज़ करने लगे।

तरला चिल्ला पड़ी, 'अरे, मैनेजर बाबू को मार डाला।'

घर में और जो औरतें थीं डर से चिल्लाने लगीं। लेकिन सुधन्य छोड़ने वाला न था। वह उस वक़्त भूपति भादुड़ी की [illegible]

शक हुआ। फिर अच्छी तरह देखने लगे। बोले, 'आपको पहले कहीं देखा है, परन्तु कहाँ, बताइये तो ?'

सुखदा ने कोई जवाब न दिया।

कालीकान्त बोला, 'उसे और कहाँ देखेंगे हुजूर, वे तो मेरी बहू हैं, घर में ही रहती हैं।'

भूपति भादुड़ी बोले, 'जी, उसे आपने पहले देखा है। उसे आप चोरी के अपराध में पकड़कर थाने में ले गये थे।'

'सर, और भी कहीं देखा है।'

'तो सर, दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट के एक वेश्या-घर में देखा होगा। वह कालीकान्त की पत्नी नहीं हुजूर, वह वेश्या है, वेश्या को बहू बनाकर लाया है।'

छोटे दारोग़ा बाबू ने जैसे कुछ देर कुछ सोचा। बड़ा उलझा केस है। उसके बाद बोले, 'आप सभी को थाने चलना होगा। मेरे साथ ही थाने चलें।'

भूपति भादुड़ी रो पड़े, 'हुज़ूर, मैंने क्या किया ?'

सुधन्य बोल उठा, 'हुज़ूर, मेरा क्या क़सूर ? यह मेरे काका बाबू का घर है।'

कालीकान्त भी और सबकी तरह विरोध करने जा रहा था। लेकिन छोटे दारोग़ा बाबू की धमकी से घबरा गया।

दारोग़ा बाबू बोले, 'सब थाने चलिये। सबका चालान कर दूंगा। वहाँ कचहरी में इसका जो हो फ़ैसला होगा। कीजिये, जल्दी कीजिये।'

बात सुनकर जनाने में रोने का शोर हुआ। सुखदा भी छोटे दारोग़ा बाबू के आगे रो पड़ी।

दारोग़ा बाबू के एक धमकी देते ही सब चुप हो गये। उसके बाद साथ के कांस्टेबिलों की ओर देखकर बोले, 'मिसिर, ले चलो।'

अब किसी के मुँह में कोई बात न थी। भूपति भादुड़ी, कालीकान्त, सुधन्य—सभी एक-दूसरे की ओर देखने लगे।

'चलिये, चलिये, देख क्या रहे हैं ? चलिये !'

सुखदा जा नहीं रही थी। छोटे दारोग़ा बाबू उसकी ओर देखकर बोले, 'क्या देख रही हैं, आप भी चलिये।'

सुखदा सहसा छोटे दारोग़ा बाबू के पैरों पर झुक गयी। बोली, 'मेरा कोई क़सूर नहीं है दारोग़ा बाबू, मुझे आप छोड़ दीजिये।'

छोटे दारोग़ा बाबू ने उस पर ध्यान न देकर कहा, 'मिसिर, इस औरत के हाथ में तो हथकड़ी लगा दो।'

मुखदा डरकर छोटे दारोगा के पैर छोड़ उठ खड़ी हुई। उसके बाद सबके पीछे-पीछे चलने लगी। जीने से उतरकर आँगन में, आँगन से फाटक, फाटक पार कर माधव कुंडू लेन। इतने दिनों के चौधुरी-वंश के अन्तिम वंशधर की मृत्यु के साथ-साथ ही मानो सारे पापों, सारे पुण्यों ने एक-साथ इस घर से विदा ले ली। पीछे अवाक् होकर खड़े-खड़े यह दृश्य केवल वेतन-भोगी कुछ लोग देखने लगे—बहादुरसिंह, धनंजय, दुखमोचन, अर्जुन, तरला, बादामी। और देखने लगे चौधुरी-वंश के भाग्य-देवता!

तीसरा पहर ढलकर संध्या हुई। सारे मकान में उस समय सन्नाटा था। रोने की एक दबी अस्फुट आवाज ने जैसे घर-भर को भर दिया। एक व्यक्ति की मृत्यु के साथ-साथ शायद इतिहास पहले कभी इस तरह स्तब्ध नहीं हुआ था।

बहादुरसिंह रोज की तरह क़ायदे के मुताबिक़ उस समय भी गूँगे की तरह फाटक पर पहरा दे रहा था। अचानक किसी के पैरों की आवाज से जैसे ध्यान टूटा। यन्त्र की तरह बोल उठा, 'कौन?'

'मैं भाजा बाबू, बहादुर।'

भाजे बाबू को देखकर बहादुरसिंह ने सलाम किया। लेकिन भाजे बाबू की नजर घर के अन्दर की ओर पड़ते ही वह अजब ढंग से ठिठक गया। आँगन में रोशनी क्यों नहीं हो रही है? सब लोग कहाँ गये? आँगन के भीतर जाकर कुछ सन्देह हुआ, कोई मुसीबत तो नहीं आ पड़ी है? कोई उलट-फेर तो नहीं हो गया है?

धीरे-धीरे अर्जुन, दुखमोचन—सभी सामने आकर खड़े हो गये। भाजे बाबू के भरमुँह दाढ़ी थी। इन कुछ दिनों में ही शक्ल कैसी बीमारी की-सी हो गयी थी। मानो किसी ने फाँसी के तख्ते से शरीर को उठाकर खड़ा कर दिया हो!

धनंजय जोरों से रोने लगा। बोला, 'भाजे बाबू, आप जिन्दा लौटेंगे, हमें तो इसका अन्दाज भी नहीं था। दो दिन पहले आते तो माँ जी को देख सकते थे।'

'माँ जी नहीं रहीं?'

'नहीं, भांजे बाबू।' कहकर फिर ज़ोरों से रोने लगा।

सुरेन ने पूछा, 'मेरे मामा ? मामा कहाँ हैं ?'

'मैनेजर बाबू को पुलिस पकड़ ले गयी है, भांजे बाबू। इस महीने हम लोगों को कैसे पैसे मिलेंगे, पता नहीं। मैनेजर बाबू, जमाई बाबू, सुधन्य बाबू, सुखदा दीदी—सबको पुलिस पकड़कर थाने ले गयी है।'

'क्यों ?'

धनंजय बोला, 'सभी मारपीट कर रहे थे। सभी कह रहे थे कि मकान हमारा है।'

'तो बूढ़े बाबू ? बूढ़े बाबू तो हैं ?'

धनंजय बोला, 'जी हाँ।'

'वे कहाँ हैं ?'

'जी, तिमंज़िले पर माँ जी की आराम-कुर्सी पर लेटे हैं।'

'सो वहाँ क्यों ?'

'जी, वही तो माँ जी के पति हैं। हम लोगों को तो अभी तक ये सब बातें मालूम ही न थीं। आज ही सुनीं। माँ जी सिर पर सिन्दूर न लगाती थीं, यह देखकर हम समझते थे कि माँ जी विधवा हैं। थोड़ी देर पहले ही बूढ़े बाबू आपके बारे में पूछ रहे थे।'

'वे क्या अकेले हैं ?'

धनंजय बोला, 'जी नहीं, सुधन्य बाबू की बहू, बाल-बच्चे, विधवा बहन सभी को लेकर ऊपर हैं। किसका घर, कौन भोगे—यही देखिये।'

सुरेन कुछ देर खड़े रहकर क्या कुछ आकाश-पाताल की सोचने लगा। उसके बाद पीछे घूमकर फाटक की ओर लौटने लगा।

धनंजय बोला, 'ऊपर नहीं जायेंगे, भांजे बाबू ?'

सुरेन बोला, 'नहीं।'

उसके बाद फिर न खड़ा रहा। सीधा फाटक पार कर माधव कुंडू लेन में जा पहुँचा। उसके बाद ट्राम की सड़क पर। उसके बाद कलकत्ता। सारा कलकत्ता जैसे उसे निगलने आया हो। किसी दिन उसकी यात्रा शुरू हुई थी बंगाल के किसी एक अज्ञात गाँव से। उसके बाद शहर। कलकत्ता शहर के माने ही इतिहास के एक परिच्छेद का टूटा टुकड़ा। लोगों की कुत्सा, कलह, प्यार, घृणा, लड़ाई, दलबन्दी—इसी सबको लेकर ही तो कलकत्ता शहर है। उसी कलकत्ता शहर की गन्दी आबहवा में ही अगणित मनुष्यों की तरह सुरेन धुएँ और अंधकार में मिल गया। स्वार्थ और दल-बन्दी का धुआँ, घृणा और हिंसा का अंधकार! जिसे लेकर अठारहवीं शताब्दी के मध्य भाग से इस शहर का आदमी जिन्दा है, उसी धुएँ और

अंधकार से मुक्ति पाने के लिए सुरेन लम्बे-लम्बे डग भरता अनिर्दिष्ट की ओर बढ़ने लगा। पीछे छूट गयी मनुष्यों के एक दल की कलह से भरी चीख़-पुकार, पीछे रह जाये कुछ लोगों की छीन-झपट कर जीवित रहने की कुत्सित आकांक्षा। सुरेन फिर भी चलता रहा। सामने की ओर चलता रहा।

इस तरह एक घर का इतिहास समाप्त हो गया—जिस वंश की [illegible] को लेकर इतना रोमांच, इतने षड्यन्त्र और इतनी ईर्ष्या हुई। लेकिन फिर सब समाप्त होकर भी कुछ समाप्त न हुआ। एक युग की सारी [illegible] मानो दूसरे युग में और भी भयावह होकर [illegible] हज़ार गुनी हो गयी।

जब एक दिन कलकत्ता की स्थापना हुई थी। [illegible] पहले के वे सब मनुष्य कल्पना भी नहीं कर सके कि किसी दिन इस शहर के स्वामित्व को लेकर पार्टियों में इस तरह मारपीट चलेगी। [illegible] न सोच सके थे कि यहाँ के एक-एक घर की एक-एक [illegible] बिरादरी में [illegible] शुरू हो जायेगा।

झण्डे के नीचे आ खड़े हों। हमारी जो सरकार होगी वह किसान-मजदूर-सर्वहारा लोगों की सरकार होगी। आप उसमें शामिल हों : 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद'।'

और देवेश ?

चुनाव के समय क्या देवेश के दल ने अथक परिश्रम नहीं किया था। इतनी मीटिंगें, इतना प्रचार, इतने जुलूस, इतना 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद'—किसी से मानो कुछ नहीं होता। किसी तरह सन्देह होता कि कांग्रेस ही जीतेगी। मानो पुण्यश्लोक बाबू को ही सब वोट दे रहे हैं।

एक-एक आदमी एक-दूसरे से कहता—आप लोग वोट देने के पहले एक बार अच्छी तरह सोच देखें, किसे वोट देंगे ? पुण्यश्लोक बाबू को या पूर्ण बाबू को ? याद रखें, किसकी लड़की ज़हर खाकर बाप पर ख़फ़ा हो मर गयी ! याद रखें, किसके लिए प्रवेश सेन की हत्या हुई ! और इधर याद रखेंगे—कौन देश के काम के लिए आजीवन ब्रह्मचारी रहा है ! ब्याह नहीं किया, घर-गृहस्थी नहीं की। कौन लोग देश के लोगों को अपने माँ, भाई-बहन समझकर देश का काम किये जा रहे हैं !

आदमी के लिए क्या एक मुसीबत है ? कलकत्ता का आदमी बहुत भुगतता है, बहुत सहता है। छिहत्तर का मन्वन्तर[1] मानो रूपान्तरित होकर बार-बार उनके जीवन में आया है। युद्ध, दंगे, बम—उनके जीवन में कुछ भी देखना-भुगतना बाक़ी नहीं रहा। जब अंग्रेज़ चले गये तब उन्होंने बहुत उम्मीदें की थीं। सोचा था, अब शायद उनके जीवन में नया सूर्योदय हुआ। अब कांग्रेस उनका सब दुख-दर्द दूर कर देगी।

उधर जाँच-कमीशन की रिपोर्ट निकल गयी। ऑफ़िसों में, बसों में, ट्रामों पर, चाय की दूकानों में सब जगह यही चर्चा थी।

एक ने कहा, 'इस बार कांग्रेस न जीत पायेगी, निश्चित हारेगी।'

एक दूसरा बोला, 'घर का दुश्मन विभीषण, पुण्यश्लोक बाबू की अपनी लड़की ने बाबा के बारह बजा दिये, मशाई।'

चारों ओर कैसी मज़ेदार चर्चाएँ होतीं, कहीं उनका कोई लेखा नहीं रहता, इसलिए कोई उन सब बातों को जान भी नहीं सकता। लेकिन इतिहास-विधाता के चित्रगुप्त कुछ नहीं भूलते। उनकी बही के पन्नों पर वह अक्षय बने रहते हैं, इसीलिए आज भी सूर्य और चन्द्रमा उदय होते हैं, आज भी सूर्य और चन्द्रमा अस्त होते हैं।

---

1. अकाल जो बंगाब्द 1176 (1769 ई०) में बंगाल तथा भारत के अन्य प्रान्तों में पड़ा था।

उपसंहार

मैं ये सब बातें न जानता था। मेरे जानने की बात भी नहीं थी। क्योंकि कलकत्ता से मेरा सम्बन्ध ही कितना है? मैंने सारा जीवन बाहर-ही-बाहर बिताया है। कभी बिहार, कभी महाराष्ट्र, कभी मध्य प्रदेश या और कहीं, कभी ही बंगाल में। जब लौटकर आया तो हावड़ा स्टेशन का पुल देखकर ही देश में लौटने के आनन्द में खो गया। उसके बाद कलकत्ता को अच्छी तरह देख सकने के पहले ही फिर बाहर चले जाना पड़ा।

ठीक इसी समय एक दिन गुरुदेवपुर नाम के एक नगर के बाहर के बाहर में इस कहानी के नायक से परिचय हुआ। यह सारी घटना शुरू से उनके मुँह से सुनी। वह सज्जन गुरुदेवपुर में जूनियर हाई स्कूल के हेड-मास्टर थे। बड़े सात्विक स्वभाव के आदमी। अविवाहित जीवन। विद्यार्थी ही उनके जीवन में सब-कुछ थे।

मैंने सारी घटना सुनकर पूछा, 'उसके बाद?'

सुरेन बाबू बोले, 'मैं जिस समय कलकत्ता में था उस समय आज की ये समस्याएँ इस तरह सिर पर सवार नहीं थीं। तभी मनुष्य इस तरह असहिष्णु होना शुरू हो गया था। अमेरिका ने उस समय छिपा-छिपाकर रुपयों को बाँटना शुरू कर दिया था। पुण्यश्लोक बाबू आदि उस समय गद्दी पर चिपककर बैठने के लिए चुनाव के वक्त दाहिने हाथ से लाखों रुपये बिखेरते थे, और दूसरी ओर बायें हाथ से लाखों रुपये कमाते। स्वेज नहर की मिल्कियत लेकर अंग्रेज और फ्रांसीसी सरकारें उस समय लड़ाई कर ईजिप्ट में हार गयी थीं। तभी कलकत्ता में रूस के ख्रुश्चेव पहुँचे। किसी भी मीटिंग में इतने आदमी इकट्ठे हो सकते हैं, उससे पहले इसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। और सबसे बड़ी घटना [illegible] हिन्दू कोड बिल का पास होना। तभी पहली बार विवाह-विच्छेद [illegible] से जायज हुआ। और उसी साल से लड़कों के साथ बहनें भी [illegible] जायदाद की अधिकारिणी हुईं। उसका परिणाम यह हुआ [illegible]

दह पीढ़ियों के परिवार की दीवार टूटकर तहस-नहस हो गयी। और
कि माधव कुंडू लेन का इतना वड़ा चौधुरी-वंश का मकान, उसे कुल-
-कुल भोग कर रहा है सुवन्य दत्त, बूढ़े वावू का भतीजा।'

उसके वाद याद है कि 1957 साल के शुरू में ही चुनाव हुए। उस
चुनाव के समय ही सुरेन ने देखा था कि किस तरह आदमी नक़ली आदमी
बनकर असली आदमी का वोट देने जाता है। वही क्या कम शिक्षा थी?
तो मैं किससे हाथ मिलाऊँ? पुण्यश्लोक वावू के दल के साथ या देवेश की
पार्टी के साथ? दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट से जो गाड़ी भर-भर कर हर बूथ
पर जाकर वोट दे गये, वे कौन थे? इसी बूथ पर जिसका नाम सान्त्वना
वोस था वह दूसरी पर फिर सुमित्रा राय थी। एक शकल, एक इंसान।
सिर्फ़ एक वार सिन्दूर लगाती, एक वार सिन्दूर पोंछ देती...।

'तुम?'

एक अचानक प्रश्न से सुखदा विलकुल सिहर उठी थी।

थोड़ा पहले ही जिस औरत को सान्त्वना वोस नाम से वोट देते देखा
था, उसी को सुरेन ने वाहर आकर पकड़ लिया।

'वताओ, तुम सुखदा हो या नहीं? वोलो? नहीं तो मैं अभी तुम्हें
पकड़वा दूंगा।'

औरत रोने लगी। सिर का घूंघट खिसक गया। चारों ओर आदमी-
औरतों की उत्तेजित भीड़ जमा हो गयी। एक बूढ़ी-सी औरत पीछे खड़ी
थी। उसके साथ और वहुत-सी औरतें थीं। सभी वोट देने आयी थीं।

'क्यों रे, किससे वातें कर रही है? वह कौन है?'

सुखदा ने उस वात का कोई जवाव नहीं दिया। सुरेन से कहा, 'वह
हमारी मौसी है, मानदा मौसी।'

उसके वाद एक किनारे हट गयी। वोली, 'तुम कैसे हो?'

सुरेन वोला, 'मेरी वात छोड़ दो। तुम कैसी हो?'

सुखदा हँसी। वोली, 'कैसी हूँ, वह तो देख ही रहे हो। एक-एक वोट
के लिए वीस रुपये मिल रहे हैं।'

'कहाँ हो?'

सुखदा उस वात का जवाव न देकर वोली, 'तुम कव छूटे?'

'यही कुछ दिनों पहले।'

'ज़रूर सव-कुछ सुन लिया होगा।'

'इसीलिए तो पूछ रहा हूँ कि कहाँ हो?'

'लेकिन पहले यह वताओ कि तुम कहाँ हो? वह मकान तो माँ जी
मर जाने के वाद बूढ़े वावू के अधिकार में है। वहाँ उनका भतीजा सु

'तो किस सुख के लिए तुम उसके साथ घर छोड़कर निकल गयी थीं ?'

'ग़लती से ।'

लेकिन तुमसे ऐसी भूल कैसे हुई ?'

'मतिभ्रम ! मतिभ्रम न होता तो माँ जी के साथ ही किसी दिन बूढ़े बाबू की इतनी धूम से शादी क्यों होती ? और वह न होता तो क्यों माँ जी को सारी जिन्दगी उस तरह विधवा की तरह बितानी पड़ती ? हम क्या कोई जानते थे कि माँ जी की इतनी बड़ी जायदाद के मालिक अन्त में बूढ़े बाबू निकलेंगे ?'

सुरेन बाबू ने कहा, 'सच ही ताज्जुब है !' उस दिन अगर वह हिन्दू-कोड बिल माँ जी के मरने के पहले पास हो जाता तो भूपति भादुड़ी निश्चय ही माँ जी से विवाह-विच्छेद करा लेते । लोगों को पहले तो मालूम ही न था कि बूढ़े बाबू कौन हैं, माँ जी के साथ उनका क्या सम्बन्ध है । माँ जी, जो किसी दिन नये वर के साथ शोभा-बाज़ार की ससुराल गयी थीं, उस दिन क्या कोई सोच सका था कि वह सुख बहुत देर तक न टिकेगा ? वह संध्या तो किसी तरह कट गयी । क्या चमक-दमक थी शोभा-बाज़ार के दत्त-बाड़ी में ! कलकत्ता के चारों ओर से आत्मीय स्वजनों ने आकर घर भर दिया था । नयी बहू लावण्यमयी को सभी बार-बार घूँघट उठाकर देख जाते थे । कहते थे, 'वाह, खूब बहू मिली है !'

क्या केवल रूप ही था ? उस समय लावण्यमयी का यौवन भी भरपूर था । चम्पा के फूल की तरह शरीर का रंग था और उस पर शिवशम्भु चौधरी ने सोना-हीरा, मणि-मुक्ता से जड़े आभूषण देकर पूरे शरीर को मढ़ दिया था । रोशन चौकी के बाजे की हर ताल पर उस समय नयी बहू के हृदय के अन्दर का रक्त उछल रहा था । जान नहीं, पहचान नहीं, किसी बिलकुल अनजान आदमी के साथ एक बिस्तर पर लेटना होगा । मुँह उठाकर बातें करना होंगी, यह कैसी रोमांचक बात है !

बासरघर में लावण्यमयी ने अच्छी तरह वर को देखा भी नहीं । लेकिन वर का क्या रूप था ! वर नहीं. एक खिलता कमल था । तभी से ब्याही लड़की ने बहुत कुछ कल्पना कर ली थी ।

गंगा मौसी, यानी यही सुखदा की माँ ने वर देखकर कहा था, 'बड़े भाग्य से ऐसा वर मिलता है, जमाई बाबू ।'

शिवशम्भु चौधरी भी मन-ही-मन खुश हुए थे । उनकी एकमात्र सन्तान ! उनकी सारी सम्पत्ति की एकमात्र अधिकारिणी ! उसी लड़की के सुखी रहने पर ही वे सुखी हैं । गहनों के अलावा नक़द एक लाख रुपये उन्होंने उस ज़माने में खर्च किये थे । लेकिन उसकी उन्हें परवाह नहीं थी ।

एकमात्र बेटी के लिए खर्च नहीं करेंगे तो वे किसके लिए खर्च करेंगे ? यह जो लाखों की जायदाद छोड़ जाऊँगा, यह तो सब मेरी लड़की और दामाद ही भविष्य में पायेंगे । उनको सुखी देखकर ही मैं सुखी रहूँगा, और उनका भविष्य ही मेरा भविष्य है ।

बादामी नयी बहू के साथ गयी थी । वह भी घर-भर का ऐश्वर्य देखकर अचम्भित थी । बड़ा भारी चौकोर मकान था । घर नहीं, यह तो महल था । महल की तरह ही राजाओं का-सा सम्मान । वर की माँ से लेकर वर की मौसी, बुआ, दीदी—सभी बादामी की बड़ी खातिर कर रहे थे ।

बोले, 'तुम ले-लेकर खाना बच्चा, नहीं तो आखिर में कहोगी कि लड़की की ससुराल जाकर पेट-भर खाने को भी नहीं मिला ।'

सचमुच उस दिन बादामी ने खूब खाया था । कितनी तरह की तरकारियाँ, कितनी मिठाइयाँ, कई किस्म की दही—तरह-तरह की सब चीज़ें बनी थीं । सब क्या एक ही दिन में खायी जा सकती हैं !

उसके बाद बहुत रात हो गयी थी । बहू-भात के दिन सवेरे से लोगों का आना-जाना लगा । बहू-भात हो जाने के बाद ही फूल-शैया थी । दिन-भर बादामी दीदी के पास-ही-पास रहती । शाम को सयानी ननदों और देवरानियों ने आकर नयी बहू को सजाया था । वह क्या सजावट थी ! जैसे जगद्धात्री की तस्वीर खींच दी हो ।

जो कोई देखने आया, उस दिन यही कह गया, 'वाह ! कुल-वंश में ऐसी बहू पहले कभी नहीं आयी ।'

लड़के-लड़के लोग छत पर चढ़ गये थे । केले के पत्ते पर सुन्दर चीज़ें लायी थीं । आयोजन भी बहुत बड़ा हुआ था ।

उसके बाद सब शान्त हो गया । कितनी रात थी, पता नहीं । बहू-भात के घर में जो लोग दिन-भर मेहनत करते-करते परेशान हो गये थे उन्हें भी उस वक्त जिसे जहाँ जगह मिली लेट गया था । नौबतखाने में नौबत वाला भी नींद में अचेत था ।

सहसा नयी बहू दरवाज़े की जंजीर खोलकर बाहर आयी । बादामी उधर कमरे के सामने ही बरामदे में गहरी नींद में सो रही थी ।

मालती ने आकर पुकारा, 'बादामी ओ बादामी !'

बादामी हड़बड़ाकर उठ बैठी । बोली, 'क्या, दीदीमणि ?'

'एक टैक्सी बुला । जा, अभी एक टैक्सी बुला ला, जहाँ से भी हो ।'

बादामी तो अवाक् रह गयी । बोली, 'कहाँ जाओगी, दीदीमणि ?'

'घर जाऊँगी, और कहाँ जाऊँगी ! जा, जल्दी कर ।'

उतनी रात में टैक्सी तलाश कर लाना क्या आसान बात थी ?

जो हो, आखिर एक टैक्सी मिल गयी। उस टैक्सी से माँ जी बादामी को लेकर सीधे माधव कुंडू लेन के घर आ पहुँचीं।

शिवशम्भु चौधरी रात के अन्त में ज़रा सो गये थे। खबर पाकर भागे हुए उतर आये। लड़की को देखकर ताज्जुब में पड़ गये।

बोले, 'क्यों बेटी, चली आयीं ? आज तो तुम्हारी सुहागरात थी ?'

लावण्यमयी बोली, 'मैं अब उस घर नहीं जाऊँगी, बाबा।'

'क्यों बेटी ? हुआ क्या ? क्या उन लोगों ने कुछ कहा ?'

लावण्य बोली, 'तुम्हारा दामाद मर्द नहीं है, बाबा।'

कहकर फिर वहाँ न रुकी। सीधे अपने कमरे के अन्दर जाकर बिस्तर पर लुढ़क गयी...।

उस दिन जो बरसों पहले शिवशम्भु चौधरी की बेटी जो बाप के घर लौट आयी, उसके बाद फिर कभी ससुराल न गयी। बेटी के मुँह की ओर अच्छी तरह देखने में भी शिवशम्भु चौधरी को डर लगता। उसके बाद से किसी ने शिवशम्भु चौधरी को हँसते नहीं देखा। वह अधिकतर समय अपने कमरे में चुपचाप बैठे रहते। भूपति भादुड़ी डरते-डरते हिसाब का खाता ले आता। शिवशम्भु चौधरी चिढ़ जाते। दस्तखत करते-करते कहते, 'वक़्त नहीं, बेवक़्त नहीं, तुम्हें बस हिसाब ही लगा रहता है। जाओ, फिर कभी बेवक़्त मत आना।'

लेकिन जायदाद का काम तो यह कहकर बन्द रखने से नहीं चलता। फिर किसी वक़्त शिवशम्भु चौधुरी के आगे जा पहुँचते।

चिल्ला उठते शिवशम्भु चौधरी।

कहते, 'फिर क्या ?'

'जी, यह हिसाब।'

शिवशम्भु चौधरी तब एकदम खफ़ा हो जाते। उठ खड़े होकर बोल पड़ते, 'निकलो, निकल जाओ अभी...!'

कहकर भूपति भादुड़ी की ओर झपटते। भूपति भादुड़ी डर के मारे जल्दी से ज़ीने से उतर आते। आकर अपने खज़ांचीखाने के तख्त पर बैठ जाते। पावनेदार उस समय आशा लगाये बेंच पर बैठे रहते।

उनकी ओर देखकर कहते, 'जाओ, आज कुछ न होगा। तुम्हारे लिए मुझे डाँट खानी पड़ी।'

वे कहते, 'जी, तो फिर कब आयें ?'

भूपति भादुड़ी कहते, 'कब आओ, यह मैं क्या जानूँ ? मैं क्या तुम्हारे

अधीश्वरी हो। मृत्यु को तुमने इतने सहज भाव से स्वीकार किया, इसीलिए आज तुमको अमृत मिला है। यहाँ से ही मैं तुमको नमस्कार करता हूँ। तुम्हारी तुलना में मैं मामूली आदमी हूँ। मुझमें डर है, यन्त्रणा है, विरह-वियोग की भावना है, लोभ है, साथ-ही-साथ संस्कार भी हैं। मुझे आघात लगता है, लेकिन मुझमें प्रतिवाद करने की शक्ति नहीं है। इसीलिए मैं तुमको निष्ठुर फाँसी की भयानकता के मुँह में डालकर यहाँ इस निर्द्वन्द्व निश्चिन्तता में भाग आ कर जीवित हूँ। मैं स्वार्थी हूँ, लज्जा मुझसे बेचैन है, घृणा मुझे जलाती है, लोभ मुझ पर व्यंग्य करता है। सुख चाहकर मुझे सुख नहीं मिला, इसीलिए मैंने सुख की विडम्बना से मुक्त होकर चैन पा ली है। लेकिन महान के प्रति श्रद्धा-नत हूँ; प्रणम्य को प्रणाम करने की स्पर्द्धा है; मनुष्यत्व का पूरा मूल्य चुकाता हूँ...।

कलकत्ता शहर के गली-कूचों में उस समय चुनाव का जोश था। कलकत्ता का आदमी उस वक़्त दीवाना हो गया था। एक-एक दिन बीतता और मनुष्य मानो और भी दीवाना हो जाता। चुनाव का नतीजा क्या होता है, क्या होता है! उसके बाद जिस दिन नतीजा निकला कि पुण्यश्लोक बाबू जीत गये, तब सारा उत्साह, सारा जोश, धीरे-धीरे ठण्डा होकर सारा शहर मानो शान्त हो गया। तब क्या फिर पाँच बरस के लिए कांग्रेस का अत्याचार बर्दाश्त करना पड़ेगा? तब फिर पमिली ने नींद की गोलियाँ क्यों खायीं? तब उसने जाँच-कमेटी के सामने खड़े होकर पिता के विरुद्ध, कांग्रेस के विरुद्ध गवाही क्यों दी?

याद है, पमिली के साथ जब वह जाँच-कमीशन के कमरे में जाकर बैठा था, उस समय भी उसे नहीं मालूम था कि उसके जीवन में कितना बड़ा उलट-फेर होने जा रहा है। लेकिन टुलू ने गड़बड़ कर दी। उसने शायद दूर से उन लोगों को देख लिया था। एक-एक गवाह की जिरह चल रही थी। सहसा चारों ओर शोर मच गया। क्या हुआ? क्या हुआ?

सुरेन ने एक आदमी से पूछा, 'क्या हुआ, कुछ पता है?'

किसी को कुछ पता न था; सिर्फ़ एक उत्तेजना सारे हॉल में व्याप गयी थी।

सिर्फ़ एक आदमी बता सका। बोला, 'एक लड़की बेहोश हो गयी है...।'

'क्यों? बेहोश क्यों हो गयी? लड़की कौन है?'

'कम्युनिस्ट पार्टी की एक लड़की है।'

तो क्या टुलू है? टुलू ही क्या बेहोश हो गयी है?

सुरेन बोला, 'चलो तो देखें, वहाँ क्या हुआ है ?'

तभी उस जगह भीड़ हो गयी। सुरेन अकेले ही उधर दौड़कर गया। कुछ देर बाद लौट आया। बोला, 'पद्मिनी, टुनू बेहोश हो गयी है। उसे अस्पताल ले चलना होगा। अपनी गाड़ी दोगी ?'

'मेरी गाड़ी ?'

'नहीं तो एँबुलेंस मँगवाने में देर हो जायेगी।'

असल में टुनू बेहोश नहीं हुई थी। उसके सिर में ही चक्कर आ गया था। सुरेन ने उसे गोदी में उठाकर गाड़ी में बैठाया। पद्मिनी ने झुककर सिर का निचला हिस्सा थाम लिया। चारों ओर तमाशबीन जनता की भीड़ थी। उनकी नजर से बचने के लिए भी स्टार्ट गाड़ी चलाना जरूरी था।

सुरेन ने टुनू को पीछे की सीट पर लिटा दिया। टुनू ने आँखें उठाकर देखा। सुरेन को देखा, उसके बाद पद्मिनी को भी देखा। जैसे पद्मिनी को देखते ही वह उठने को हुई।

सुरेन बोला, 'उठ क्यों रही हो ? लेटी रहो।'

टुनू बोली, 'मुझे कुछ नहीं हुआ है, मुझे गाड़ी से उतार दो... मैं उतर जाऊँगी... मुझे गाड़ी पर क्यों बिठाया ?'

कहकर बार-बार उठकर बैठने की कोशिश करने लगी।

सुरेन ने दोनों हाथों से टुनू को दबा रखा। पद्मिनी की ओर देखकर बोला, 'पद्मिनी, तुम इसे जरा समझा दो...।'

पद्मिनी उस वक्त एकटक टुनू को देख रही थी। यही वह लड़की है जिसने एक दिन उसका अपमान किया था !

लेकिन उस वक्त और देर करना ठीक न था। गाड़ी के चारों ओर लोगों की भीड़ धीरे-धीरे बढ़ रही थी।

सुरेन बोला, 'पद्मिनी, बैठो, गाड़ी चलाओ।'

पद्मिनी के और देर न कर गाड़ी में बैठने के साथ ही एक घटना हो गयी। सहसा उसके कपड़ों में से कोई सख्त-सी चीज पक्के रास्ते पर गिरकर ठक् की आवाज हुई।

सुरेन ने उस चीज की ओर देखा—रिवॉल्वर। किसी के देखने से पहले ही सुरेन ने उसे उठा लिया।

'यह क्या ? यह किसका है ?'

'दो, यह बाबा का है, दो।'

सुरेन बोला, 'नहीं।'

सुरेन को याद आया कि एक दिन यही पद्मिनी नींद की गोलियाँ लेकर

डायमण्ड हार्वर के मैदान में आत्महत्या करने के लिए गयी थी। उस दिन भी सुरेन ने उन्हें छीनकर अपनी जेब में रख लिया था। आज भी रिवॉल्वर लेकर उसने अपनी जेब में रख लिया।

बोला, 'यह तुमको नहीं दूंगा। मेरे पास रहेगा, चलो...।'

पमिली बोली, 'इसे लेकर तुम क्या करोगे ?'

सुरेन बोला, 'उसका मेरे पास रहना ठीक है। तुम्हारा भरोसा नहीं; तुम सब-कुछ कर सकती हो।'

पमिली बोली, 'मैं क्या कर सकती हूं ?'

'तुमसे सब-कुछ सम्भव है। तुम आदमी का खून भी कर सकती हो।'

'तुम्हें डर लग रहा है क्या ?'

'डर नहीं लगेगा ? नहीं तो कितने दिनों से तो तुम्हारे साथ घूमता था, किसी दिन भी तो तुम उसे साथ लेकर नहीं निकलीं !'

'लेकिन किसका खून करूंगी ?'

सुरेन बोला, 'कहा नहीं जा सकता। तुम्हारा मिजाज किस वक्त कैसा रहेगा, वह भगवान भी नहीं बता सकता। मैं तो मामूली आदमी हूं।'

पमिली बोली, 'तुम्हें कोई डर नहीं है। और जिसका भी हो मैं तुम्हारा खून नहीं करूंगी।'

'लेकिन तुम अपना भी तो खून कर सकती हो। कहा तो कि तुम्हारे लिए सब सम्भव है...मैं तुम्हें अभी वह नहीं दूंगा। कल दे दूंगा।'

पमिली बोली, 'कल तक अगर मैं जिन्दा न रही ?'

सुरेन बोला, 'जिन्दा न रहीं तो प्रवेश सेन के साथ तुम्हारी शादी कैसे होगी ?'

'इसके मतलब ?'

पमिली ने सहसा सड़क के एक किनारे गाड़ी रोक दी थी। रोककर बोली, 'किसने कहा कि मैं प्रवेश से शादी कर रही हूं ?'

'हां, तुम्हारी शादी की बात एक तरह से पक्की ही है। प्रवेश सेन ने ही मुझसे कहा था।'

'प्रवेश ने कहा था ? तुम सही कह रहे हो ?'

सुरेन बोला, 'मैं इस मामले में कोई झूठी बात क्यों कहूंगा ? तुम्हारी शादी के मामले में मेरा क्या स्वार्थ ?'

पमिली ने फिर पूछा, 'तुम सच कह रहे हो ?'

'हां सच ही कह रहा हूं।'

'स्काउंड्रल ने क्या सोचा है कि मेरे बाबा का केरियर बनाने वाले के सामने, मैं उसके लिए अपने को बलि चढ़ा दूंगी ? इतने दिनों तक क्या यही

मतलब लेकर वह मेरे बाबा के पीछे घूमता रहा ? बाबा की सुविधा के लिए मैं एक ऐसे पक्के शराबी से शादी करूँगी ?'

'लेकिन उसने तो यही बात कही थी।'

पमिली ने गाड़ी घुमा ली। बोली, 'चलो, अभी बदमाश के पास चलकर मैं चैलेंज करती हूँ।'

कहकर उल्टी तरफ की सड़क पकड़कर गाड़ी को बढ़ा दिया। पमिली उस वक्त गुस्से से जैसे भरी हुई थी।

सुरेन बोला, 'यह क्या किया, टुलू गाड़ी में है ! उसे अस्पताल ले चलना है।'

पमिली बोली, 'वह मर नहीं जायेगी, पहले मैं प्रवेश को तो सबक़ दे आऊँ।'

कहकर पमिली तीर की तेजी से भीड़ में गाड़ी चलाने लगी, मानो वह प्रवेश को सामने पाते ही तुरत चैलेंज करेगी।

ग्रे स्ट्रीट में उस वक्त गाड़ी जोरों से जा रही थी। सुरेन को डर लगने लगा। अगर कोई मर-दब जाये। क्यों वह सुव्रत की बात में आकर पमिली से मिलने गया था ? और अगर गया ही था तो वह पमिली के साथ ही क्यों निकला ?

ग्रे स्ट्रीट छोड़कर विद्याधर विश्वास गली में गाड़ी घुसी। उसके बाद प्रवेश सेन के घर के आगे आकर रुकी। गाड़ी से उतरते ही पमिली ने सीधे जाकर घर के दरवाजे की कुंडी खटखटायी। दरवाजा खोलते ही प्रवेश ने पमिली को देखा। बोल , 'तुम ?'

उसके बाद पीछे सुरेन को देखकर और भी ताज्जुब में पड़ गया।

बोला, 'तुम दोनों ही ? क्या सोचा है ? आओ, आओ...।'

सुरेन डर के मारे थर-थर काँप रहा था। गुस्से में भरी पमिली क्या कर डाले, किसे पता ! धीरे-धीरे दोनों के पीछे-पीछे चलने लगा। प्रवेश ने आगे बढ़ने की राह दिखायी और अपनी बैठक में पहुँचकर दोनों से बैठने को कहा।

लेकिन पमिली बैठी नहीं।

सीधे बोली, 'तुमने सुरेन से कहा है कि मैं तुमसे शादी करने को तैयार हूँ ?'

प्रवेश पहले यह सवाल सुनकर ही असमंजस में पड़ गया। एक बार सुरेन की ओर देखा। उसके बाद पमिली से बोला, 'तुम बैठो, बैठो तो। लगता है, बहुत गुस्सा हो गयी हो। बताओ, क्या पियोगी ? चाय; कॉफी ?'

बिलकुल सीधे खुले दरवाजे में से घर में घुस गयी। सामने का कमरा अँधेरा था। बाहर के एक बरामदे में एक बत्ती जलती दिखायी दी।

'तुम चली जाओ। जल्दी चली जाओ।'

आवाज सुरेन-दा की थी। टुलू फ़ौरन पास के कमरे में घुसते ही जड़ हो गयी। देखा कि सुरेन-दा के हाथ में एक रिवॉल्वर है। रिवॉल्वर के मुँह से उस वक्त भी थोड़ा-थोड़ा धुआँ निकल रहा था। और सामने ही एक सोफे पर एक आदमी औंधे मुँह पड़ा था, और उसकी छाती के पास से भलभलाकर खून निकल रहा है।

टुलू डर के मारे चीख उठी, 'यह क्या, तुमने खून कर दिया ?'

सुरेन की आँखें उस समय भी जैसे जल रही थीं।

बोला, 'टुलू, तुम यहाँ से चली जाओ, अभी चली जाओ, अभी-अभी पुलिस आ जायेगी।'

'लेकिन यह है कौन सज्जन ?'

'प्रवेश सेन। वह स्काउंड्रल था।'

सहसा इस बीच जैसे परिस्थिति के महत्त्व को टुलू समझ गयी। देखा, पद्मिनी कब की चुपचाप कमरे से गायब हो गयी।

सुरेन ने फिर कहा, 'चली जाओ, खड़ी क्यों हो ?'

'न, मैं नहीं जाऊँगी।'

कहकर झट से सुरेन के हाथ से रिवॉल्वर छीनकर बोली, 'तुम चले जाओ सुरेन-दा, अभी चले जाओ।'

सुरेन उस समय भौंचक्का रह गया। रिवॉल्वर टुलू के हाथ से छीनने चला। लेकिन टुलू ने हाथ हटा लिया। बोली, 'न, मैं किसी तरह न दूँगी। तुम चले जाओ, भाग जाओ।'

'लेकिन सब लोग देख लेंगे।'

टुलू की आवाज कठोर हो गयी।

बोली, 'देख लें।'

'पुलिस आकर तुम को ही पकड़ लेगी, टुलू।'

'पकड़ ले। मुझे फाँसी दे दे।'

'तुम कह क्या रही हो, टुलू ? तुम क्या पागल हो गयी हो ? यहाँ से भाग जाओ।'

'लेकिन तुमने उसका खून क्यों किया ? उसने क्या किया था ?'

सुरेन बोला, 'वह एक बदमाश है। वह जानवर है। वह अपराधी है।'

तभी बाहर से बहुत-से लोग आकर भड़भड़ाकर कमरे में घुस आये।

यह दृश्य देखकर अचम्भे में थे। उन्होंने ज़्यादा देर न लगायी। दोनों को ही अपराध करते पकड़ लिया गया था। उसके बाद पता नहीं किसने इसी बीच पुलिस को खबर दे दी। पुलिस ठीक वक़्त से आ गयी। उस समय भी टुलू के हाथों में रिवॉल्वर था। उसी हालत में उन्होंने दोनों को वैन में बन्द कर दिया। अखबार में वह समाचार विस्तार से छापा गया। सारे कलकत्ता में उस समाचार से शोर मच गया।
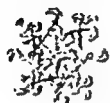
आपने जीवन देखा, मृत्यु भी देखी। मैंने भी जीवन देखा, फिर मृत्यु भी देखी। लेकिन अलग-अलग लोगों के देखने में भी तो अन्तर है। इसी देखने के अन्तर के लिए एक व्यक्ति मनुष्य और दूसरा मनुष्य से भिन्न होता है। अन्यथा बाहर से तो हम सभी एक जैसे दिखलायी पड़ते हैं। मैं जिस तरह एक दिन गाँव से कलकत्ता आया था, उसी तरह उन अँग्रेजों के शुरू के ज़माने में भी गाँव से बड़ी-बड़ी भीड़ बनाकर लोग आये थे। गाँव में वर्गी[1] लोगों के अत्याचार, मुसलमान नवाबों—हिन्दू ज़मींदारों के ज़ुल्म! उनके हाथों से मुक्ति पाने के लिए फ़िरंगियों[2] के आश्रय में आना ही अच्छा था। यहाँ जात जाने का डर नहीं था, धर्म गँवाने का डर नहीं था। उस पर नौकरी का भी सहारा मिल जाता था। उसके बाद कितने बरस कट गये। सारे गाँवों, सारे ज़िलों को हज़म कर इस दलदली ज़मीन पर एक और आश्चर्यजनक नगर बस गया। उसका नाम पड़ा कलकत्ता। उसके बाद फ़िरंगियों की दलाली करके नये-नये बड़े लोगों की जात पैदा हुई। वे सब अचानक बड़े लोग बन गये। कोई सेठ, कोई शील, कोई मल्लिक, और कोई लाहा, या कोई चौधुरी। शिवशम्भु चौधुरी इन्हीं में से एक थे। उसी वंश की मिल्कियत मिल गयी पथरिया घाट के दत्त लोगों को।

अब भी अगर वहाँ जायें तो देखेंगे कि मकान नयी शक्ल लिये वहीं खड़ा है। सुधन्य दत्त अपने काका बाबू के पास से उत्तराधिकार रूप में पाकर उस मकान का उपभोग कर रहा है। कई बरसों तक भूपति भादुड़ी

1 वर्गी—प्राचीन मराठे सैनिक जो गाँवों में लूटपाट करते घूमते थे।
2 फ़िरंगी—फ्रांसीसी, पुर्तगाली इत्यादि यूरोपीय लोग।

में मुकदमा चला। भूपति भादुड़ी भी बहुत सीधा आदमी नहीं था। वह भी पैरवी और मुकदमे करना जानता था। नीचे की कचहरी में पहले मुकदमा शुरू हुआ। वहाँ भूपति भादुड़ी हार गये। उसके बाद डिस्ट्रिक्ट जज का इजलास था। वहाँ भी भूपति भादुड़ी की हार हुई। उसके बाद हाई-कोर्ट। हाई-कोर्ट में मुकदमा अठारह बरस की चोट में गया। लेकिन यह चोट भूपति भादुड़ी न सम्भाल सके। उनका स्वास्थ्य गया, धन गया, सर्वस्व गया। उसके बाद चलते-चलते मुकदमा जब पूरी तौर पर चल रहा था उस समय भूपति भादुड़ी ने खुद ही टपू से मरकर पूरी तौर पर सब समस्याओं का समाधान कर दिया।

अब माधव कुंडू लेन के उस घर में घुसते वक्त गेट पर बहादुरसिंह नहीं मिलता। वह भी बुड्ढा हो गया था। उसकी जगह उसका बेटा नौकरी पर लग गया था। उसका नाम था खड्गसिंह।

खड्गसिंह बिलकुल बाप की तरह वैसे ही फाटक पर खड़े होकर पहरा देता था। किसी के जाते ही सलाम करता। उसके बाद फाटक खोल देता। भूपति भादुड़ी जिस कमरे में बैठकर हिसाब-किताब का काम करते, वहाँ ठीक उसी तरह एक दूसरा आदमी बैठकर हिसाब-किताब देखने लगा।

कभी नियमनु चौधरी के जमाने में जिस तरह काम चलता था, अब सुधन्य दत्त के जमाने में भी ठीक वैसे ही काम चलता है। माँ जी जिस खाट पर लेटतीं उसी पर बूढ़े बाबू लेटे रहते। और जब सवेरा होता तो हाथ के पास धनंजय हुक्के की नली बढ़ा देता। धनंजय उस पुराने काम पर ही लगा है। भाग्य के परिहास में वह किसी दिन माँ जी की खातिर-तवाजा करता था, अब वही खातिर-तवाजा बूढ़े बाबू की करता।

तमाखू पीने के बाद चाय आती।

आज बूढ़े बाबू की देखभाल करने वाले लोगों की भी कमी नहीं थी। रुपये-पैसे का अन्त नहीं। और कभी दिन था कि एक समधे के लिए भूपति भादुड़ी के अपमान-तिरस्कार का अन्त नहीं था!

लेकिन जीना किसलिए? किसके लिए जीते रहना है? क्या सिर्फ जिन्दगी बिताने के लिए?

कलकत्ता का इतिहास खोजने जाने में कितनी माँ जी, कितने बूढ़े बाबू, कितने भूपति भादुड़ी मिलेंगे—इसका क्या कोई ठिकाना है? कितने पुष्पस्लोर बाबू यहाँ राज करते हैं और कितने पूर्ण बाबू उनके पतन की कामना करते हैं! कितनी मुसदाएँ दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट में कितने नागरिकों का मन बहलाने का अभिनय करती रहती/ कौन

उनका पूर्व-इतिहास खोजकर देखता है ? कितने सुव्रत कितने पिताओं का त्याग कर फिर अमेरिका चले गये हैं...!

और टूलू ?

पुलिस टूलू से एक ही सवाल करती रहती, 'आपने क्यों प्रवेश सेन का खून किया ? उसने आपका क्या किया था ?'

टूलू का एक ही जवाब रहता ।

'मैंने उसे खत्म कर डालना चाहा था ।'

लेकिन जज जानना चाहते हैं, 'क्यों ? क्यों उसे खत्म करना चाहा था ?'

'वह हमारा दुश्मन था ।'

'उसने आप लोगों से क्या दुश्मनी की थी ?'

'हमारी पार्टी के मेम्बरों की उसने गुंडों से हत्या करवायी थी । पुलिस की गोलियाँ उन पर बरसवायीं थीं ।'

'लेकिन उसके लिए तो जाँच-कमीशन बैठा है । वहीं तो उसका विचार हो रहा है । आप अपने हाथ में क्यों क़ानून लेने गयीं ?'

टूलू बोली, 'जाँच-कमीशन तो एक तमाशा है । वह लोगों को धोखा देने के सिवा कुछ नहीं है ।'

'लेकिन पता है, आपकी इस स्वीकारोक्ति का क्या नतीजा होगा ?'

'हत्या करने का दंड तो फाँसी होता है । ज़्यादा-से-ज़्यादा मुझे फाँसी ही होगी ।'

इस तरह एक के बाद दूसरे दिन सुनवायी होती, टूलू सिर ऊँचा कर सवालों का जवाब देती जाती । मानो कलकत्ता के समस्त वंचित-उत्पीड़ित-बुभुक्षित लोगों की अन्तरात्मा की अन्तरंग बातें उसके मुँह से निकल रही हों । एक-एक बात निकलती और दूसरे दिन वह अखबारों में विस्तार के साथ छपती, और शहर-भर में शोर हो जाता ।

वह समाचार पढ़ते बूढ़े बाबू, पढ़ते पुण्यश्लोक बाबू, पढ़ते देवेश-दा, पढ़ती पुलिस, पढ़ते कलकत्ता के ऊँचे-नीचे और सर्वसाधारण ।

फिर दूसरे दिन सवाल होता, 'आपको यह पिस्तौल कहाँ से मिली ?'

'सुरेन सान्याल के पास से ।'

'सुरेन बाबू को वह पिस्तौल कहाँ मिला ?'

'वह सुरेन बाबू से ही पूछिये ।'

'सुरेन बाबू ने क्या यह पिस्तौल आपको खून करने के लिए दी थी ?'

'न, उनकी जेब में पिस्तौल थी, मैंने उसे चुपके-से निकालकर प्रदेश का खून कर दिया।'

इसके बाद उस दिन की कार्रवाई बन्द हो जाती।

कभी किसी भी आदमी के जीवन में कहाँ, कब, किस तरह प्रेम का एक अंकुर फूटकर और सिर उठाकर खड़ा हो जाता है, शायद उसको जानने का कहीं कोई साधन नहीं है। नहीं तो कहाँ के किस अख्यात, अज्ञात जनपद में जन्म लेकर, इतिहास की किस अचूक इच्छा के इशारे पर एक लड़की ने इस शहर के एक परित्यक्त भाग में आश्रय लिया, और साथ-ही-साथ घटनाओं की किस घनी घटाओं में एक दूसरे लड़के के जीवन के साथ परस्पर सबद्ध हो गयी, यह भी तो अपने में किसी औपन्यासिक घटना से कम नहीं है। उसे बहुत आशाएँ थीं—वह पार्टी के काम में अपने को लगाकर देश में साम्यवाद की स्थापना में मदद करेगी, उत्पीड़ितों की गरीबी दूर करने में सहायक होगी, सरकारी चक्रव्यूह और षड्यंत्र को तोड़कर वहाँ साधारण मनुष्यों के प्रतिनिधियों की प्रतिष्ठा करेगी। वह सब-कुछ भी न हुआ। उसके बदले मन को इस प्रकार के किसी व्यक्ति से बाँध दिया कि उसके किसी भी काम में न आया। और केवल मन का अर्पण ही नहीं, उसके लिए अपना जीवन भी उत्सर्ग कर अपने को उसने कृतार्थ माना।

उसके बाद प्रमाण के अभाव में सुरेन सान्याल को कचहरी ने छुटकारा दे दिया। लेकिन टुनू को सबसे बड़ा दंड मिला। जीवन-भर कारा-दंड-भोग! दंड को उसने सिर आँखों स्वीकार किया।

एक ओर इतिहास अपनी निजी गति से सामने की ओर लक्ष्य रखकर चला, और दूसरी ओर एक व्यक्ति लक्ष्य-भ्रष्ट होकर चहारदीवारी की छड़ों के अंधकार में अपने को अन्तराल में रखकर स्तब्ध रह गया। वह न तो आगे बढ़ेगा, न रुकेगा। आगे बढ़ना और रुके रहने के ऊपर जो एक दूसरी अलोक-स्थिति है उसके अलौकिक प्रकाश में वह आलोकित रहा।

कचहरी से रिहाई पाकर सुरेन आकर माधव कुंडू लेन के ——
आगे आकर खड़ा हो गया।

धनंजय देखकर जोरों से रो पड़ा।

बोला, 'भांजे बाबू, आप ज़िन्दा लौट आयेंगे, इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते थे।'

कहकर वह सारी घटनाएँ एक के बाद एक कहता गया। माँ जी मर गयीं, बूढ़े बाबू घर के मालिक हो गये। सुखदा कहीं चली गयी।

सुरेन कुछ देर खड़े-खड़े सब सुनता रहा। घनंजय बोला, 'ऊपर नहीं जाइयेगा, भांजे बाबू ?'

सुरेन बोला, 'नहीं।'

उसके बाद फिर न रुका। सीधे फाटक पार कर फिर माधव कुंडू लेन में निकल गया। उसके बाद ट्राम की सड़क पर। कलकत्ता शहर। सारा कलकत्ता मानो उसे मुंह फाड़कर निगलने को आ रहा है। किसी दिन उसकी यात्रा शुरू हुई थी बंगाल के किसी गुमनाम गाँव से। उसके बाद वह शहर आया। कलकत्ता शहर के अर्थ ही हैं इतिहास का एक टूटा टुकड़ा। मनुष्य की कुत्सा, कलह, प्रेम, घृणा, झगड़े, दलबन्दी—सब-कुछ लेकर ही तो कलकत्ता शहर बना है, जिसे लेकर अठारहवीं सदी के मध्य-भाग से इस शहर का आदमी अब तक जीवित है। उसी धुएँ, उसी सन्देह और उसी अंधकार से मुक्ति पाने के लिए सुरेन लम्बे-लम्बे डग भरते हुए चलने लगा। उसके पीछे पड़े रह गये, मनुष्यों के एक झुंड के कलह-क्लान्त-चीत्कार; पीछे गायब हो गया मनुष्यों के एक बड़े अंश की छीना-झपटी कर जीवित रहने की कुत्सित आकांक्षा। और, और भी पीछे छूट गयी चहार-दीवारी की छड़ों की ओट में एक और उज्ज्वल प्राणों की कातर कामना : 'मेरे लिए तुम कभी चिन्ता न करना, मेरे लिए कभी आँसू न बहाना, मेरे लिए कभी पीछे घूमकर न देखना। मैं अगर तुम्हारे लिए कुछ कर सकी तो वह तुमसे ही सीखा होगा, मेरा तो केवल सौभाग्य है। मेरे उस सौभाग्य को लेकर ही मुझमें शान्ति बसा दो। आज मुझे कोई दुख नहीं है। तुम्हें खोकर मैं तुम्हें और भी प्रगाढ़ रूप से प्राप्त करूँगी; तुम्हें पाकर ही उल्टे मैं तुम्हें बहुत-कुछ खो देती ! उससे तो मुझे यही भला लगा...तुम्हें खोकर मैंने तुमको पाया; तुम्हें पाकर भी मैंने बहुत कुछ खोया। तुम्हें पाने और खोने के ऊपर जो अमृतलोक है, वहीं मैं तुम्हें सचमुच पाऊँगी। यही आशा लेकर ही मैं चली। तुम मुझे आशीर्वाद दो !'

लेकिन वह किसे आशीर्वाद दे ? मृत्यु का जो चाहकर वरण करे उसे सुरेन सान्याल किस प्रकार आशीर्वाद दे ? वह यदि मृत्यु के बीच ही परमजीवन का स्वाद पा जाये तो उसे आशीर्वाद देना भी तो निरर्थक है। एक दिन अचानक खबर मिली कि किसी बीमारी में जेलखाने के अस्पताल में ही उसने अन्तिम साँस ली। घटना इतनी जल्दी हुई कि एक बार अन्तिम

बँट का मुख़बिर तक टुनू ने न दिया। उसके बाद कई बरस बीत गये। कितना परिवर्तन हुआ! देवेन की पार्टी टूटकर अब चार दलों में बँट गयी है। तमाम नयी-नयी पार्टियाँ देश में और बंगाल में पैदा हो गयी हैं। सब ने मिलकर मनुष्य की उन दिनों के समस्त आशाओं-विश्वासों को झूठा प्रमाणित कर दिया है। पुण्यश्लोक बाबू चुनाव में हार गये। उनकी हालत बहुत लाचार हो गयी है। बेटी तो पहले ही चली गयी। सुबन भी फिर अमेरिका चला गया है। उसने वहीं नौकरी कर ली है। उसके बाद पूर्ण बाबू चौदह पार्टियों के मोर्चे के मंत्री बने हैं। फिर भी पार्टियों के झगड़ों की सारी मुसीबतें झेलना पड़ती हैं साधारण गृहस्थ लोगों को। आज आदमी ही आदमी का सबसे बड़ा दुश्मन बन गया है। शायद इससे बड़ी कोई क्षति नहीं हुई, और न हो सकती थी।

उस समय बहुत रात थी। मेरे उठकर आने का वक्त था।

बोला, 'एक बात और। प्रवेश सेन की वास्तव में किसने हत्या की थी? आपने?'

वे सज्जन बोले, 'नहीं, पद्मिनी ने।'

मैं बात सुनकर स्तब्ध रह गया था। पुण्यश्लोक बाबू की लड़की पद्मिनी के पापों का दंड सुरेन सान्याल ने ही अपने सिर लेना चाहा था। लेकिन वहीं से कोई उस सुरेन का ओढ़ा हुआ अपराध अपने सिर पर लेने क्यों कूद पड़ा? यह कैसा त्याग है! यह कैसा प्रेम है! ऐसी घटना तो किसी उपन्यास में भी नहीं पढ़ी! क्या यह भी सम्भव है? बात करके वे फिर वहीं ■ रुके। मैं जैसे जीवन और मृत्यु के आमने-सामने खड़ा हो गया। मुझे लगा— मृत्यु मानो मृत्यु ही नहीं है, और जीवन भी मात्र जीवन नहीं है। जीवन-मृत्यु दोनों ही जैसे अमृत हैं। मृत्यु को जो अमृतरूप में देख सके, केवल वही जीवन को इस प्रकार निरासक्त, निस्पृह, निरुद्वेग और निश्चिन्त बना सकता है। चले आने के दिन इसीलिए अदृश्य आत्मा के प्रति मन-ही-मन सिर झुकाकर चला आया।

बोला, 'भांजे बाबू, आप जिन्दा लौट आयेंगे, इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते थे।'

कहकर वह सारी घटनाएँ एक के बाद एक कहता गया। माँ जी मर गयीं, बूढ़े बाबू घर के मालिक हो गये। सुखदा कहीं चली गयी।

सुरेन कुछ देर खड़े-खड़े सब सुनता रहा। धनंजय बोला, 'ऊपर नहीं जाइयेगा, भांजे बाबू?'

सुरेन बोला, 'नहीं।'

उसके बाद फिर न रुका। सीधे फाटक पार कर फिर माधव कुंडू लेन में निकल गया। उसके बाद ट्राम की सड़क पर। कलकत्ता शहर। सारा कलकत्ता मानो उसे मुँह फाड़कर निगलने को आ रहा है। किसी दिन उसकी यात्रा शुरू हुई थी बंगाल के किसी गुमनाम गाँव से। उसके बाद वह शहर आया। कलकत्ता शहर के अर्थ ही हैं इतिहास का एक टूटा टुकड़ा। मनुष्य की कुत्सा, कलह, प्रेम, घृणा, झगड़े, दलबन्दी—सब-कुछ लेकर ही तो कलकत्ता शहर बना है, जिसे लेकर अठारहवीं सदी के मध्य-भाग से इस शहर का आदमी अब तक जीवित है। उसी धुएँ, उसी सन्देह और उसी अंधकार से मुक्ति पाने के लिए सुरेन लम्बे-लम्बे डग भरते हुए चलने लगा। उसके पीछे पड़े रह गये, मनुष्यों के एक झुंड के कलह-क्लान्त-चीत्कार; पीछे गायब हो गया मनुष्यों के एक बड़े अंश की छीना-झपटी कर जीवित रहने की कुत्सित आकांक्षा। और, और भी पीछे छूट गयी चहार-दीवारी की छड़ों की ओट में एक और उज्ज्वल प्राणों की कातर कामना : 'मेरे लिए तुम कभी चिन्ता न करना, मेरे लिए कभी आँसू न बहाना, मेरे लिए कभी पीछे घूमकर न देखना। मैं अगर तुम्हारे लिए कुछ कर सकी तो वह तुमसे ही सीखा होगा, मेरा तो केवल सौभाग्य है। मेरे उस सौभाग्य को लेकर ही मुझमें शान्ति बसा दो। आज मुझे कोई दुख नहीं है। तुम्हें खोकर मैं तुम्हें और भी प्रगाढ़ रूप से प्राप्त करूँगी; तुम्हें पाकर ही उलटे मैं तुम्हें बहुत-कुछ खो देती! उससे तो मुझे यही भला लगा...तुम्हें खोकर मैंने तुमको पाया; तुम्हें पाकर भी मैंने बहुत कुछ खोया। तुम्हें पाने और खोने के ऊपर जो अमृतलोक है, वहीं मैं तुम्हें सचमुच पाऊँगी। यही आशा लेकर ही मैं चली। तुम मुझे आशीर्वाद दो!'

लेकिन वह किसे आशीर्वाद दे? मृत्यु का जो चाहकर वरण करे उसे सुरेन सान्याल किस प्रकार आशीर्वाद दे? वह यदि मृत्यु के बीच ही परमजीवन का स्वाद पा जाये तो उसे आशीर्वाद देना भी तो निरर्थक है। एक दिन अचानक खबर मिली कि किसी बीमारी में जेलखाने के अस्पताल में ही उसने अन्तिम साँस ली। घटना इतनी जल्दी हुई कि एक बार अन्तिम

भेंट का मुअवसर तक टलू ने न दिया। उसके बाद कई बरस बीत गये। कितना परिवर्तन हुआ ! देवेन की पार्टी टूटकर अब चार दलों में बँट गयी है। तमाम नयी-नयी पार्टियाँ देश में और बंगाल में पैदा हो गयी है। सब ने मिलकर मनुष्य की उन दिनों के समस्त आशाओं-विश्वासों को झूठा प्रमाणित कर दिया है। पुण्यश्लोक बाबू चुनाव में हार गये। उनकी हालत बहुत लाचार हो गयी है। बेटी तो पहले ही चली गयी। सुव्रत भी फिर अमेरिका चला गया है। उसने वहीं नौकरी कर ली है। उसके बाद पूर्ण बाबू चौदह पार्टियों के मोर्चे के मंत्री बने हैं। फिर भी पार्टियों के झगड़ों की सारी मुसीबतें झेलना पड़ती हैं साधारण गृहस्थ लोगों को। आज आदमी ही आदमी का सबसे बड़ा दुश्मन बन गया है। शायद इससे बड़ी कोई क्षति नहीं हुई, और न हो सकती थी।

उस समय बहुत रात थी। मेरे उठकर आने का वक़्त था।

बोला, 'एक बात और। प्रवेश सेन की वास्तव में किसने हत्या की थी ? आपने ?'

वे सज्जन बोले, 'नहीं, पमिली ने।'

मैं बात सुनकर स्तब्ध रह गया था। पुण्यश्लोक बाबू की लड़की पमिली के पापों का दंड सुरेन सान्याल ने ही अपने सिर लेना चाहा था। लेकिन कहीं से कोई उस सुरेन का ओढ़ा हुआ अपराध अपने सिर पर लेने क्यों कूद पड़ा ? यह कैसा त्याग है ! यह कैसा प्रेम है ! ऐसी घटना तो किसी उपन्यास में भी नहीं पढ़ी ! क्या यह भी सम्भव है ? बात करके वे फिर वहाँ न रुके। मैं जैसे जीवन और मृत्यु के आमने-सामने खड़ा हो गया। मुझे लगा—मृत्यु मानो मृत्यु ही नहीं है, और जीवन भी मात्र जीवन नहीं है। जीवन-मृत्यु दोनों ही जैसे अमृत हैं। मृत्यु को जो अमृतरूप में देख सके, केवल वही जीवन को इस प्रकार निरासक्त, निस्पृह, निरुद्वेग और निश्चिन्त बना सकता है। चले आने के दिन इसीलिए अदृश्य आत्मा के प्रति मन-ही-मन सिर झुकाकर चला आया।

कह आया—आपकी कहानी से एक चीज की शिक्षा मिली कि मानव के संसार में कोई किसी का पति नहीं, कोई किसी का गुरु भी नहीं। जिस मनुष्य ने कोई महान् उद्देश्य लेकर पृथ्वी पर जन्म लिया है, वह संसार में सदा निःसंग है। उसका कोई पराया नहीं। उस मानव को अकेले ही अपने जीवन का व्रत सार्थक करना होगा। अकेले चलना ही उसकी साधना है।

ओम् शुभाय भवतु !